शासन-पथ निदर्शन

[शासन-सम्बन्धी विषयों पर भाषण संग्रह]

पुरुषोत्तमदास टण्डन

आत्माराम एण्ड संस
प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता
काश्मीरी गेट, दिल्ली - ६

प्रकाशक
रामलाल पुरी, संचालक
आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली-६

मूल्य	छः रु
प्रथम संस्करण	१ ९
आवरण	योगेन्द्रकुमार
मुद्रक	सम्मेलन मुद्रणालय,

विषय-सूची

प्रकाशकीय

प्रयाग और दिल्ली के कुछ मित्रों द्वारा यह इच्छा प्रकट की गई कि राजर्षि श्री टण्डन जी के मार्ग-दर्शक भाषणों का एक संग्रह निकाला जाय। विचार उपयोगी प्रतीत हुआ और संग्रह प्रकाशित करने का प्रस्ताव बाबू जी ने स्वीकार कर लिया। फलतः आज यह पुस्तक हम भेंट करने में समर्थ हो रहे हैं।

इस पुस्तक में दिए गए सब भाषण प्रामाणिक 'रिकार्ड' से लिए गए हैं। अस्वस्थ होते हुए भी बाबू जी ने इनके देखने और सम्पादन करने का कार्य कर दिया है।

हिन्दी में भाषणों के प्रकाशन का कार्य बहुत ही कम हुआ है। राष्ट्र-भारती के भण्डार में इन भाषणों की अपनी उपयोगिता होगी। प्रशासकों, समाज-सेवकों और राजनीति के विद्यार्थियों को इनसे स्वतन्त्र भारत की समस्याओं का अध्ययन करने में सहायता मिलेगी। साथ-ही-साथ वे समाधान भी प्राप्त होंगे जो अपने पुराने अनुभवों से वह दे सकते थे। हमारा विश्वास है कि शासन के सम्बन्ध में आगे के विचारक नवीन भारत के निर्माण में इन पर ध्यान देंगे।

आमुख

शासन-सम्बन्धी विषयों पर मेरे कुछ भाषणों का यह संग्रह है। इस संग्रह के आरम्भ में संविधान सभा में दिए हुए दो भाषण हैं जिनमें से पहला संविधान सभा के पहले प्रस्ताव पर सन् १९४६ में और दूसरा राष्ट्रभाषा के प्रश्न पर सन् १९४९ में हुआ था। शेष संसद् की लोक-सभा में सन् १९५२ और सन् १९५७ के बीच दिए गए थे। संविधान सभा में राष्ट्रभाषा के प्रश्न पर १९४९ में दिया हुआ भाषण अंग्रेज़ी भाषा में था। इस संग्रह में उसका अनुवाद दिया गया है। इस संग्रह का अन्तिम भाषण भी, जो २८ मार्च सन् ५७ का है, अंग्रेज़ी में था। उसका भी अनुवाद दिया गया है। शेष सब भाषण हिन्दी में हुए थे। वे प्रायः उसी रूप में हैं जैसे वे संसद् के सरकारी प्रतिवेदनों में प्रकाशित हुए हैं। इने-गिने स्थानों में भाषा अथवा स्पष्टता की दृष्टि से शब्दों में बहुत कम अन्तर किया गया है। पढ़ने वालों की सुविधा के लिए भाषणों में एक एक मुख्य शीर्षक तथा प्रत्येक भाषण में कुछ छोटे शीर्षक इस संग्रह का सम्पादन करने में दिए गए हैं।

इन भाषणों में शासन-सम्बन्धी भिन्न-भिन्न विषयों पर विचार प्रगट किये गये हैं। उनमें से एक विचार की ओर मैंने एक से अधिक स्थान पर ध्यान आकर्षित किया है। वह है ग्राम-निर्माण के सम्बन्ध में वाटिका-गृह की योजना। इस योजना को मैं ग्रामोन्नति की आधार-शिला मानता हूँ।

देश के उत्थान के निमित्त प्रथम पंचवर्षीय योजना समाप्त हो चुकी है, दूसरी चल रही है और तीसरी तैयार हो रही है। ग्रामों की स्थिति में विशेष उन्नति हुई हो यह नहीं कहा जा सकता। मेरा सुझाव यह है कि ग्रामों के रहन-सहन में मौलिक परिवर्तन की आवश्यकता है। मैंने यह विचार रखा है कि गाँव के प्रत्येक घर के लिए लगभग आध एकड़ भूमि दी जाय। इस प्रकार एक घर दूसरे घर से बिलकुल अलग रहेगा। इस आध एकड़ भूमि में निवास-घर के चारो ओर वाटिका लगायी जाय। इस प्रकार स्वस्थ ग्राम बनेगा और छूत के रोगों से तथा आग लगने के भय से उसकी रक्षा होगी। मैंने यह भी सुझाव दिया है कि इस भूमि के भीतर ही कुटुम्ब का मलमूत्र दाबा जाय। एक या डेढ़ फुट भूमि के नीचे रह कर वह भूमि को उर्वरा करेगा। ग्राम में यदि प्रत्येक घर के साथ इस प्रकार वाटिका रहे तो स्वास्थ्य और सौन्दर्य तो होगा ही, काम करने की सुविधाओं में वृद्धि होगी। आध एकड़ भूमि छोटे बड़े सबके पास साधारणतः चाहिए। खेती की भूमि इससे

अलग रहेगी। यह भी सम्भव है कि किसान अपनी खेती की भूमि के भीतर ही अपना निवास बनाये। यह अच्छी योजना होगी परन्तु देश में केरल को छोड़कर प्रायः चलन यही है कि खेती अलग रहती है और निवास-गृह अलग रहता है। इस स्थिति में निवास घर के लिये, चाहे वह खेतिहर का हो चाहे मजूर का, चाहे व्यापारी का, उससे लगी हुई लगभग आध एकड़ भूमि मुझे ग्राम-व्यवस्था की दृष्टि से समाज के लिए अत्यन्त लाभकारी जान पड़ती है। समाजवादी संगठन में इस प्रकार की ग्राम-योजना मुझे नितांत आवश्यक लगती है। यह प्रशासकों के काम करने का विषय है। मुझे दुःख इस बात का है कि प्रशासन में मौलिक आधारों की नींव पर समाज-रचना का कार्य नहीं हो रहा है। उस ओर प्रशासकगण ध्यान दें यह मेरी कामना है।

प्रयाग, माघ कृ० १३, २०१५ / ५. २. १९५९

—पुरुषोत्तमदास टण्डन

शासन-पथ निदर्शन

१

भारतीय स्वतंत्रता का घोषणा-पत्र

भारतीय विधान परिषद्* की १३ दिसम्बर सन् १९४६ ई० की बैठक में श्री जवाहर लाल नेहरू ने नीचे दिये हुए घोषणा-पत्र की स्वीकृति का प्रस्ताव रखा था।

"यह विधान-परिषद् भारत को एक पूर्ण स्वतन्त्र जनतन्त्र घोषित करने का दृढ़ और गम्भीर संकल्प प्रकट करती है और निश्चय करती है कि उसके भावी शासन के लिये एक विधान बनाया जाय;

जिसमें उन सभी प्रदेशों का एक संघ रहेगा जो आज ब्रिटिश-भारत तथा देशी रियासतों के अन्तर्गत तथा इनके बाहर भी हैं और जो आगे स्वतंत्र भारत में सम्मिलित होना चाहते हों; और :

जिसमें उपर्युक्त सभी प्रदेशों को, जिनकी वर्तमान सीमा (चौहद्दी) चाहे क़ायम रहे या विधान सभा और बाद में विधान के नियमानुसार बने या बदले, एक स्वाधीन इकाई या प्रदेश का दर्जा मिलेगा और रहेगा और वे सब शेषाधिकार प्राप्त होंगे और रहेंगे जो संघ को नहीं सौंपे जायेंगे और वे शासन तथा प्रबंध सम्बन्धी सभी अधिकारों को बरतेंगे सिवाय उन अधिकारों और कामों के जो संघ को सौंपे जायेंगे अथवा जो संघ में स्वभावतः निहित या समाविष्ट होंगे या जो उससे फलित होंगे; और :

जिसमें सर्वतंत्र स्वतन्त्र भारत तथा उसके अंगभूत प्रदेशों और शासन के सभी अंगों की सारी शक्ति और सत्ता (अधिकार) जनता द्वारा प्राप्त होंगी; और :

---

* जो सभा भारत का संविधान बनाने के लिये बुलायी गयी थी और जिसने अपना कार्य ९ दिसम्बर १९४६ को आरम्भ किया उसका हिन्दी नाम पहले भारतीय विधान परिषद् पड़ा। उसके कार्य तथा वाद-विवाद के सरकारी विवरणों में भी यही नाम छपता था। १७ मई १९४९ तक के सरकारी हिन्दी विवरणों में यही नाम मिलता है। १८ मई के विवरण में 'भारतीय संविधान सभा' का शीर्षक आया है और तब से वही नाम हिन्दी में प्रचलित है। अंग्रेज़ी में इसे आरम्भ से अन्त तक 'Constituent Assembly of India' कहा गया था।

जिसमें भारत के सभी लोगों (जनता) को राजकीय नियमों और साधारण सदाचार के अनुकूल, निश्चित नियमों के आधार पर सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय के अधिकार, वैयक्तिक स्थिति और सुविधा की तथा मानवी समानता के अधिकार और विचारों की, विचारों को प्रकट करने की, विश्वास और धर्म की, ईश्वरोपासना की, काम धन्धे की, संघ बनाने और काम करने की स्वतंत्रता के अधिकार रहेंगे और माने जायेंगे; और :

जिसमें सभी अल्प-संख्यकों के लिये, पिछड़े और कबाइली प्रदेशों के लिये तथा दलित और पिछड़ी हुई जातियों के लिये पर्याप्त संरक्षण-विधि रहेगी; तथा :

जिसके द्वारा इस जनतंत्र के क्षेत्र की अक्षुण्णता (आन्तरिक एकता) रक्षित रहेगी और जल, थल और हवा पर उसके सब अधिकार, न्याय और सभ्य राष्ट्रों के नियमों के अनुसार रक्षित होंगे; और :

यह प्राचीन देश संसार में अपना योग्य और सम्मानित स्थान प्राप्त करने और संसार की शान्ति तथा मानव जाति का हित साधन करने में अपनी इच्छा से पूर्ण योग देगा।"

श्री जवाहरलाल नेहरू के भाषण के बाद सभापति जी ने श्री पुरुषोत्तमदास टंडन को प्रस्ताव का समर्थन करने के लिये बुलाया!

श्री पुरुषोत्तमदास टंडन ने प्रस्ताव का समर्थन करते हुए कहा—

सभापति महोदय! पं० जवाहरलाल नेहरू के प्रस्ताव का पूरी तरह से मैं समर्थन करता हूँ।"

ऐतिहासिक अवसर

विधान-परिषद् की आज की बैठक एक ऐतिहासिक अवसर है। शताब्दियों के बाद हमारे देश में ऐसी सभा समवेत हुई है। यह सभा हमें अपने वैभवशाली अतीत की याद दिलाती है, जब हम स्वतन्त्र थे और बड़ी प्रतिनिधि सभाएँ बैठती थीं जहाँ बड़े-बड़े विद्वान देश के महत्वपूर्ण विषयों पर विचार-विमर्श किया करते थे। यह हमें अशोककालीन सभाओं की याद दिलाती है। उन दिनों का एक धुंधला चित्र आज हमारी आँखों के सामने है। यह सभा हमें अमेरिका, फ्रांस और रूस प्रभृति अन्य देशों की परिषदों की याद दिलाती है। अन्य स्वतन्त्र देशों के विधान-निर्माण के लिए जो परिषदें बैठी थीं उनके साथ-साथ हमारी यह परिषद् भी सदा याद रखी जायगी। हम यहाँ एक ऐसा शासन विधान बनाने बैठे हैं, जिससे संसार को यह मालूम हो जाय कि भारत का यह पक्का विचार है कि वह संसार के साथ मिलकर ससम्मान रहेगा, उससे अलग नहीं। भारत सब देशों को सहयोग देगा और इनकी मुसीबतों में उन्हें सहायता देगा। वह उन सब

प्रयत्नों में साथ देगा जिनसे संसार का भला हो। हमें विश्वास है कि हम आज यहाँ जो कुछ भी कर रहे हैं वह ऐतिहासिक होगा और उसकी गणना भी उन ऐतिहासिक घटनाओं में होगी, जिनसे संसार की समुन्नति में सहायता मिली है।

ब्रिटेन की नीति—उसका विरोध

गत डेढ़ सौ वर्षों से हिन्दुस्तान ब्रिटेन के अधीन रहा है। हम उन बातों की चर्चा नहीं करना चाहते, जिनके विरुद्ध हमने ब्रिटिश हुकूमत के प्रारम्भ से ही लगातार आवाज़ उठाई है। इन डेढ़ सौ वर्षों के अन्दर हिन्दुस्तान को जो भी चोटें दी गई हैं, हम यहाँ उनकी चर्चा नहीं करेंगे। उन चोटों ने हमें न केवल अपनी आज़ादी से ही वंचित किया अपितु हममें एक आपसी भेद-भाव पैदा कर दिया। आज हम उन सब बातों की चर्चा न करेंगे। पर हम अपने नेताओं के त्याग और संघर्ष को नहीं भूल सकते। प्रारम्भ में हमारे नेताओं ने प्रस्ताव पास कर और उन्हें सव्याख्या सरकार के पास भेज कर स्वतन्त्रता की माँग की। हुकूमत ने खुल्लम-खुल्ला हमारे साथ ज़्यादती की और सब जगह अंग्रेज़ों का पक्ष लिया। हमने शासकों से हर तरह अपील की कि हमारे साथ न्याय का वर्ताव हो। हमारे नेताओं ने उनके ऊँचे आदर्शों की ओर महामना बर्क और मिल के बताये आदर्शों की ओर हुकूमत का ध्यान खींचा। हमारे नेता ब्रिटिश आदर्शों से प्रभावित थे और उन्हें पूरी आशा थी कि ब्रिटेन उनके साथ न्याय करेगा और उन्हें स्वतन्त्रता देगा। वह समय अब बीत गया। अनुभवों ने सिखाया कि स्वतन्त्रता अपील या प्रार्थना से नहीं मिल सकती, उसे पाने के लिये हमें अब साहसी पग उठाना आवश्यक है। हमारे इतिहास के पन्ने बताते हैं कि उसके बाद नये-नये आन्दोलन चलाये गये और ब्रिटेन का खुला विरोध किया गया। १९०५-६ के आन्दोलन ने देश को उन्नति की सीढ़ी पर कुछ और आगे बढ़ा दिया। उस समय हमारे वीर बंगाली नेताओं और युवकों ने ऐसे-ऐसे साहस के काम किये जो हमारे इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखे जायेंगे। हम आगे बढ़े। राष्ट्र के कर्णधार महात्मा गांधी राजनीति के मैदान में पहुँचे और उन्होंने हमारे युद्ध का ढंग ही बदल दिया। उन्होंने हमें एक नया पाठ पढ़ाया और हमने एक नये सिलसिले से लड़ाई शुरू की। ब्रिटिश कानूनों की न केवल अवहेलना ही की गई; किन्तु सरे-आम वह तोड़े जाने लगे और हमने तनिक भी परवाह न की कि इसका क्या कठोर परिणाम भुगतना होगा। हमारे हज़ारों देशवासियों ने कानून तोड़े और जेल गये। उन वीरों की तस्वीरें जिन्होंने संग्राम में जीवन बलिदान किया या वर्षों जेलों में सड़ते रहे, आज हमारी आँखों के

सामने हैं। वास्तव में अभी हाल का आन्दोलन, सन् १९४२ का आन्दोलन, ही इस सभा का जन्मदाता है। ब्रिटेन द्वारा इस सभा के बुलाये जाने में इस आन्दोलन का दृढ़ हाथ है। हमारी आगे की उन्नति के लिए इसने एक नई राह निकाल दी। ब्रिटिश हुकूमत अब भारत में टिक नहीं सकती, इस वास्तविकता को देख कर ब्रिटिश गवर्नमेंट की आँखें खुल गईं और संसार चकित हो गया। दूसरे देशों ने खुल कर तो हमारा साथ नहीं दिया पर हमें यह स्वीकार करना होगा कि हमने अपनी शक्ति का जो प्रमाण दिया उसके कारण वे हमें अपने लक्ष्य पर पहुँचने में सहायक हुए। उन बड़ी शक्तियों ने, जो आज दुनिया को एक करने में लगी हैं, हमें अवश्य सहायता दी। संसार ने यह समझ लिया है कि दुनिया के एक सुदूर कोने में भी जो अत्याचार किया जाता है, उसका व्यापक असर अत्याचारी के देश पर और उसके पड़ौसी देशों पर पड़ता है। गत दो महायुद्धों ने यह बात प्रमाणित कर दी है। आज संसार के बड़े-बड़े नेता उपाय ढूंढने मे लगे हैं कि विश्व को तृतीय महायुद्ध की बर्बादी से कैसे बचाया जाय। वे संसार को स्वर्ग बनाना चाहते हैं, जहाँ न नये युद्ध होंगे, न मनुष्य का रक्त बहाया जायगा, जहाँ अमीर और गरीब का भेद भाव न रह जायगा, जहाँ हर एक को भोजन और अन्न मिलेगा, जहाँ हर आदमी को यह स्वत्व हासिल होगा कि वह अपने आदर्शों के अनुसार जीवन यापन करे, जहाँ प्रत्येक बालक को शिक्षा पाने का अधिकार होगा, जहाँ आदर्श उच्च और उच्चतर होंगे और जहाँ निवासियों के बीच एक आत्मिक सम्बंध होगा।

भारत का अतीत—'वसुधैव कुटुम्बकम्'

बुद्धिमान लोग ऐसी विधि बनाने का यत्न कर रहे हैं, जिससे संसार उस दलदल से बाहर निकल सके जिसमें वह आज फंस गया है, जिससे सारे देशों को बराबरी का अधिकार मिल सके। समय तेजी से बदल रहा है और दुनिया की शक्तियाँ इन नए विचारों को अमली रूप देने के लिए पूरा प्रयत्न कर रही हैं। हम लोग भी जब इसी दुनिया में रहते हैं, उनसे बच नहीं सकते। इन नई शक्तियों का हम भी हृदय से स्वागत करते हैं। ये ही शक्तियाँ हमारी बड़ी-बड़ी आशाओं का आधार रही हैं। भारत के बारे में यह विशेष रीति से कहा जा सकता है कि उसके निवासियों ने "वसुधैव कुटुम्बकम्" का ऊँचा आदर्श सदा अपनाया है और संसार को एक देश समझा है। हमारे देश के महापुरुषों ने संसार के मनुष्यों में कोई भेद-भाव नहीं माना। बहुत से विदेशी हमारे देश में आये और हमने प्रसन्नता से उन्हें अपने गले लगाया। हमने यह नीति कभी भी अपनायी नहीं

जिसे कुछ मुल्कों ने आज भारतवासियों के विरुद्ध अपना रखा है। हमारा इतिहास बतलाता है कि हमने बाहरी देशों से आये हुए आदमियों का सदा स्वागत किया, जो भी सहायता आवश्यक थी, हमने उन्हें दी और यहाँ बसने में उनकी हर तरह मदद की। इंगलैंड के निवासी ही यहाँ पहले कैसे आये? उन्हें यहाँ शरण दी गई। भारत में झगड़े और लड़ाइयाँ भी हुई पर इतिहास साक्षी है कि हमने हमेशा मानव-अधिकारों की रक्षा की। भाई-भाई के बीच में भेद पैदा करना हम उचित नहीं समझते और न उनके राजनैतिक अधिकारों में ही भेद-भाव रखते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि हम में कमज़ोरियाँ थीं और आज भी हैं। हम उनकी उपेक्षा नहीं कर सकते परन्तु हमारा अतीत इतिहास हमें आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करता है। हमें अपनी मंज़िल पर पहुँचना है, जहाँ हम समानता के आदर्शों को न केवल अपने देशवासियों के सामने वरन् दुनिया के सामने रख सकें। इस ऐतिहासिक अवसर पर हमारा ध्यान अपने अतीत इतिहास की ओर, बीती हुई घटनाओं की ओर जाता है, हमारे संघर्ष और बलिदान की ओर जाता है, उस सहायता की ओर जाता है जो हमें दूसरे देशों से मिली है और जिसने आज हमें यहाँ समवेत किया है। इन सब से हमें बल प्राप्त करना है। हम एक ऐसा संविधान बनाने के लिए यहाँ समवेत हुए हैं जिससे देश को सुख-शांति मिल सके। अपनी मातृ-भूमि के प्रत्येक निवासी को समान अवसर देना हमारा लक्ष्य है।

समानता का सिद्धान्त

जो प्रस्ताव आपके सामने पेश किया गया है उसकी तह में समानता का ही सिद्धान्त है। देश के भिन्न-भिन्न प्रदेशों को स्वायत्त-शासन या शासन में स्वतन्त्रता मिली हुई है। और हिन्दुस्तान समूचा सर्वोपरि राजसत्ता या पूरे अधिकार रखता है। उन विषयों में, जिनमें हम एकता चाहते हैं, हम सब सम्मिलित रहेंगे। प्रस्ताव में सब से महत्वपूर्ण बात यह है कि इसमें भारत एक स्वतन्त्र मुल्क माना गया है। हमारा देश सम्मिलित रूप से एक है पर इसके भिन्न-भिन्न अंगों को आज़ादी हासिल है कि वे अपने लिए जैसी हुकूमत चाहें रखें। देश का वर्तमान प्रांतों में विभाजन बदल सकता है। हम सब सम्प्रदायों के साथ न्याय करेंगे और उनके धार्मिक और सामाजिक मामलों में उन्हें पूरी छूट देंगे।

स्थगित रखने का संशोधन

प्रस्ताव पर इस आशय का एक संशोधन पेश किया गया है कि प्रस्ताव तब तक मुल्तवी रखा जाय जब तक मुसलिम लीग विधान-परिषद् में

सम्मिलित नहीं होती। हमें यह न भूलना चाहिये कि हर एक काम के लिये समय हुआ करता है। अगर आज हम यह प्रस्ताव स्थगित रखते हैं तो फिर कब यह हमारे सामने आयेगा ? हम इस बारे में निश्चित नहीं हैं कि मुसलिम लीग कब विधान-परिषद् में शामिल होगी। हम आज यहाँ जब एकत्र हुए हैं तो क्या बिना कुछ किये धरे ही यहाँ से उठ जायँ ? क्या हमें कम से कम अपनी आगे की कार्यवाही के लिये आज एक लक्ष्य नहीं निश्चित कर लेना चाहिये ? हम केवल एक विधि-निर्माण कमेटी ही बना कर उठ जायँ ? हमारे बन्धु हमें यह राय देते हैं कि हम प्रस्ताव पर विचार अभी आगे के लिये स्थगित कर दें। अगर वे यही चाहते थे कि मुसलिम लीग की ग़ैर हाज़िरी में हम यहाँ कुछ न करें तो यहाँ आये किस लिये हैं ?

मुसलिम लीग

हम अवश्य चाहते हैं कि मुसलिम लीग हमें सहयोग दे। पर क्या हम आज उनकी वर्तमान अभिलाषाओं और उद्देश्यों की पूर्ति में कुछ भी हाथ बटा सकते हैं ? हम भरसक कोशिश करेंगे कि मुसलिम लीग को किसी तरह हानि न पहुँचे। प्रस्ताव में इस बात का ध्यान रखा गया है। हममें से बहुत ऐसे हैं जो इस बात के विरुद्ध हैं कि प्रान्तों को अवशिष्ट अधिकार दिये जायँ। व्यक्तिगत रूप से मैं स्वयं मुल्क की भलाई के लिये, हिन्दू-मुसलिम तनातनी के कारण प्रान्तों में उत्पन्न वर्तमान परिस्थिति को देखते हुए, प्रान्तों को अवशिष्ट अधिकार दिये जाने का विरोध करता हूँ। बंगाल तथा और प्रान्तों में क्या हुआ ? जो हुआ है, उसे हम भली भाँति जानते हैं। अवशिष्ट अधिकार और राजनीतिक अधिकार (Political Rights) जिनसे देश की उन्नति और एकता में मदद मिल सकती है, केन्द्रीय या संघ सरकार के पास ही होने चाहिये। पर यह प्रस्ताव अवशिष्ट अधिकार प्रान्तों को दे देता है, ताकि मुसलिम लीग यह न कहे कि उसकी ग़ैर-हाज़िरी में हमने मनमाने ढंग से काम किया। इसके अतिरिक्त ब्रिटिश मंत्रि-मंडल द्वारा प्रकाशित स्टेट पेपर ने भी जो इस परिषद् का आधार है अवशिष्ट अधिकारों (Residuary Powers) को प्रान्तों को देने की बात कही है। हमने इस व्यवस्था को इस आशा से स्वीकार कर लिया कि इससे मुसलिम लीग हमारे साथ मिल जुल कर काम कर सकेगी। मुसलिम-लीग हमें सहयोग दे, इस बात के लिये जहाँ तक साध्य था हम आगे बढ़े। बल्कि मैं तो यह कहूँगा कि इसके लिये हम जरूरत से ज्यादा आगे बढ़ गये। क्योंकि मुसलिम लीग का लक्ष्य हमारे लक्ष्यों से बिलकुल प्रतिकूल है। और इससे हमारे भविष्य में कठिनाइयाँ पैदा होंगी। लीग की सहयोग प्राप्ति के लिये हमने अपने आदर्शों के प्रतिकूल भी बहुत सी बातें मंजूर

कर ली हैं। अब हमें यह बन्द कर देना चाहिये और मुसलिम लीग के साथ समझौते के लिये अपने बुनियादी उसूलों को नहीं भूल जाना चाहिये। मैं प्रस्ताव को स्थगित रखने के विरुद्ध हूँ। मुझे विश्वास है कि प्रस्ताव के महत्व को यह सभा समझती है। दूसरे देशों की विधान परिषदों ने अपने लक्ष्यों को सामने रख कर ही अपना काम आरम्भ किया था। यदि आप प्रस्ताव को स्थगित रखते हैं तो दुनिया क्या सोचेगी? जब वे प्रस्ताव को जानेंगे तो समझेंगे कि भारत स्वतंत्र होने जा रहा है। ब्रिटेन के विरुद्ध सन् १९४२ की "भारत छोड़ो" की लड़ाई अब हम जीतने जा रहे हैं। यह प्रस्ताव स्वतन्त्रता-प्राप्ति के मार्ग में बड़ा सहायक होगा। इसको मुल्तवी रखना बुद्धिमानी का काम न होगा।

अन्य संशोधन

प्रस्ताव पर और दूसरे संशोधन भी हैं। प्रस्ताव में यह बात स्पष्ट कही गयी है कि समस्त सत्ता जनता के हाथ में होगी। कुछ लोगों का सुझाव है कि "जनता" की जगह "काम करने वाली जनता" रख दिया जाय। मैं इसके विरुद्ध हूँ। जनता शब्द से मतलब है तमाम निवासियों का। मैं स्वयं किसानों का एक सेवक हूँ। उनके साथ काम करना ही मेरे लिये एक बड़ा गौरव है। जनता शब्द बोधगम्य है और इसमें सभी लोग शामिल हैं। अतः मेरी राय में उसके पहले कोई विशेषण न रखा जाना चाहिए। ऐसे भी संशोधन लाये गए हैं जिनमें अनिवार्य शिक्षा की बात कही गई है। यह सब साधारण बातें हैं। ज़माना बदल चुका है और प्रान्तीय सरकारों ने ऐसी बातों के लिये क़ानून बना लिये हैं। इस समय बड़ी-बड़ी समस्याओं पर ही अपना ध्यान केन्द्रित रखना चाहिए। ये सब संशोधन बहुत ज़रूरी नहीं हैं और इन्हें उपस्थित न करना चाहिये।

हिन्दू-मुसलिम भेद की सृष्टि अंग्रेजों ने की

जैसा मैं कह चुका हूँ, बहुत सी विपत्तियाँ झेलने के बाद हमें संविधान बनाने का यह अवसर मिला है। सन् १९३५ में हमें कुछ रियायतें मिली थीं पर हमने अपनी लड़ाई सन् १९४२ तक जारी रखी। इन संघर्षों के फलस्वरूप आज हम यहाँ संविधान बनाने के लिए एकत्र हुए हैं। हमारे प्रयासों का क्या फल होगा हम नहीं जानते। हमारे पथ में अब भी बहुतेरी बाधायें हैं। लंदन से हमारे मित्र अब भी राय भेजा करते हैं। सर स्टैफ़ोर्ड क्रिप्स हमें परामर्श देते हैं कि हमें यह व्यवस्था (Formula) मंजूर कर लेनी चाहिये कि बहुमत को अपना विधान बनाना चाहिए और अल्पमत को हक़ है कि वह बहुमत द्वारा लगायी रुकावटों से विशेष संरक्षण मांगे।

मुझे यह कहते हुए दुःख होता है कि यद्यपि सर स्टैफ़ोर्ड क्रिप्स हमें मदद देने की बात कहते हैं पर उनका अभिप्राय है हमारी राह में रुकावटें डालना। ब्रिटेन के साथ हमारे लम्बे सम्बन्धों का इतिहास बतलाता है कि हिन्दू-मुसलिम भेद-भाव की सृष्टि अंग्रेजों ने की। हिन्दू-मुसलिम मन-मुटाव की समस्या जिसका राग अंग्रेज अलापते हैं, वह तो उन्हीं की पैदा की हुई है। उनके हिन्दुस्तान में पधारने के पहिले यहाँ इस मनमुटाव का नामोनिशां भी न था। दोनों की सभ्यता एक थी और दोनों ही मित्रवत् रहते थे। क्या कलेजे पर हाथ रखकर अंग्रेज़ कह सकते हैं कि वर्तमान भारतीय परिस्थिति को उन्होंने नहीं पैदा किया है और उन्होंने इसे बढ़ावा नहीं दिया है। जो लोग ब्रिटेन के बहकावे में आकर आज हमारा विरोध कर रहे है, वे हमारे ही भाई है। अवश्य ही हम उनका सहयोग चाहते हैं। परन्तु उनको अपने साथ लेने के लिए हम उन बुनियादी उसूलों को क़ुर्बान नहीं कर सकते जिन्हें आज तक हम अपनाये रहे और जिनसे राष्ट्र का निर्माण होता है। सर स्टैफ़ोर्ड हमें गृहयुद्ध से सावधान करते हैं और सीख देते है कि गृहयुद्ध बचाने के लिए हमें आपस में मिल जाना चाहिए। कोई भी देशभक्त यह न चाहेगा कि गृहयुद्ध हो और भाई भाई का खून बहाये। आजादी की लड़ाई लड़ने के लिए काँग्रेस ने देश के भिन्न-भिन्न वर्गों को मिलाने की सदा कोशिश की है। हमारे नेता साम्प्रदायिक झगड़ों में कभी नहीं पड़े। काँग्रेस ही एक मात्र ऐसा राजनैतिक संगठन है जिसमें हिन्दू, मुसलमान, पारसी, जैन, बौद्ध सभी संगठित हो सकते हैं। राजनैतिक क्षेत्र मे धर्म के आधार पर क़िसी तरह का भेद-भाव काँग्रेस नहीं मानती। यह कहना कि अमुक अमुक प्रांत या वर्ग धर्म की बिना पर देश से अलग कर दिये जायें, धर्म की बात नहीं है बल्कि कोरी राजनीति है, ऐसी राजनीति देश की एकता को नष्ट कर देती है। हम सर स्टैफ़ोर्ड क्रिप्स और अन्य ब्रिटिश नेताओं से पूछते है—यदि आज से १०० वर्ष पहले या २५ वर्ष ही पहले आपके देश के भिन्न-भिन्न वर्गों को पृथक् निर्वाचन का अधिकार दिया गया होता तो आज आप कैसी हुक़ूमत रखते? हम अमेरिका से भी पूछते है कि यदि आपके मुल्क में भिन्न-भिन्न ईसाई सम्प्रदायों को पृथक् निर्वाचन का अधिकार दिया गया होता तो क्या आपके यहाँ उसी प्रकार की गवर्नमेंट होती जो आज है? क्या फिर आपके मुल्क में निरन्तर गृहयुद्ध न हुआ होता? हमारे देश में गृहयुद्ध की सम्भावना तो ब्रिटिश हुक़ूमत ने पैदा की है। ब्रिटिश गवर्नमेंट अपनी पुरानी चाल चल रही है।

ब्रिटिश मंत्रि-मंडल की मनोवृत्ति

ब्रिटिश मंत्रि-मंडल में इसी मनोवृत्ति का आभास मिलता है। उनके द्वारा दिया हुआ भाष्य भी इसी बात पर जोर देता है कि भारतीय संघ के भिन्न-भिन्न वर्गों को अधिकार है कि वे अपने लिए जैसा संविधान चाहें बनावें। जैसा वे पहिले कहते थे, आज भी कहते हैं कि प्रांतों को अधिकार है कि वह चाहें तो किसी समूह (ग्रुप) में शामिल रहें या उससे बाहर हो जाएँ। पर साथ ही अपने वक्तव्य में वे एक ऐसी शर्त्त भी रख देते हैं, जो इस सम्भावना को——प्रांत अपने अधिकारों को काम में लावें——पहले से ही असम्भव कर देती है। आप एक प्रांत से यह तो कहते हैं कि उसे हक़ है कि चाहे तो किसी वर्ग में शामिल हो या नहीं। पर साथ ही यह भी कहते हैं कि ग्रुप के सभी लोग विधान बनाने के लिये सम्मिलित होंगे। पश्चिमोत्तर सूबा प्रांत, सिंध और बलूचिस्तान को पंजाब के साथ बंधना होगा और आसाम को बंगाल के साथ बंधना होगा। इन प्रांतों का संविधान ग्रुप बी और ग्रुप सी बनायेंगे। पंजाब, सिंध और बलूचिस्तान वाला गुट पश्चिमोत्तर सीमाप्रांत के लिये विधान बनायेगा और बंगाल आसाम के लिए, क्या यह ईमानदारी की बात है ? एक तरफ तो आप कहते हैं कि प्रांत को हक़ है कि वह ग्रुप में रहे या अलग हो जाय। पर आप विधान ऐसा बना देते हैं जो प्रांत के गुट से बाहर निकल जाने की सम्भावना को ही खारिज कर देता है। मंत्रि-मंडल के वक्तव्य में यह साफ़ कहा गया था कि गुट में शामिल होना प्रांतों की मर्ज़ी पर है। वक्तव्य के अंत में गुटों से बाहर निकलने की स्वतंत्रता दे दी गई। वक्तव्य के प्रथम भाग का अर्थ यह है कि गुटबंदी के समय प्रांत को आज़ादी है कि वह उसमें शामिल हो या नहीं। हमने तो यही अर्थ समझा और इसी लिए कांग्रेस ने उसे स्वीकार किया। पर अब यह कहा जाता है कि गुट बनते समय भी प्रांत को यह आज़ादी नहीं है कि वह गुट में शामिल न हो और न उसे यही अधिकार है कि वह अपना विधान स्वयं बनाये। विधान तो समूचे गुट के प्रतिनिधि मिलकर बनायेंगे। इसका मतलब यह हुआ कि हम हिन्दुस्तान का विभाजन मंजूर कर लें और पश्चिमोत्तर सीमाप्रांत और आसाम को उन लोगों के हवाले कर दें जो खुल्लमखुल्ला यह कहते हैं कि वे भारत को दो भागों में विभक्त करने पर तुले हैं। गृहयुद्ध यदि अनिवार्य ही हो गया है तो हो, पर गृहयुद्ध की धमकी से हम गलत काम करने पर लाचार नहीं किये जा सकते। बहुत सम्भव है कि भारत के एक कोने में गृहयुद्ध हो और हमें अंग्रेजों से भी लड़ना हो। वे गृहयुद्ध की धमकी देते हैं, चाहते हैं कि हम आपस में लड़ते रहें ताकि वे हम पर हुकूमत कर सकें——मुझे यह सब कहने में दुःख होता है।

ब्रिटिश जनता के लिये मेरे मन में बड़ा आदर है। वे राजनैतिक मैदान में बहुत उन्नति कर चुके हैं और बुद्धिमान एवं स्वातंत्र्य-प्रिय हैं। उनसे हमने बहुत कुछ सीखा है। मेरे मन में उनके लिये लेशमात्र भी घृणा नहीं है। मुझे इस बात पर बड़ी प्रसन्नता थी कि इंग्लैंड में एक नया ज़माना आया है, वहाँ की हुकूमत मजदूर दल के हाथ में आ गई है और यह दल पुरानी नीति बदल देगा। *गत सौ वर्षों से ब्रिटिश हुकूमत की नीति दूसरे मुल्कों के साथ स्वार्थ और* चातुरी की रही है। अपने देशवासियों के लाभ के लिये दूसरे राष्ट्रों को दबाना या खसोटना वे बुद्धिमत्ता की बात समझते रहे हैं। टोरियों और कट्टरवादियों की हार और नई हुकूमत के आ जाने से यह आशा थी कि ब्रिटेन की नीति बिलकुल बदल जायगी। और उनकी वैदेशिक नीति सच्चाई और ईमानदारी के आधार पर स्थित होगी। पर मुझे यह देख कर बड़ा दुःख होता है कि उनके हाल के कुछ वक्तव्यों का यही लक्ष्य रहा है कि भारतवासियों में मनमुटाव पैदा हो।

विधान परिषद् स्वतन्त्र मार्ग अपना सकती है

मैं यह मानता हूँ कि कांग्रेस केबिनेट-मिशन मंत्रि-मंडल की योजना को मंजूर करके ही, विधान परिषद् में सम्मिलित हुई है। पर मैं यह बता देना चाहता हूं कि विधान-परिषद् समवेत होने के बाद अपना बिलकुल भिन्न मार्ग पकड़ सकती है। राजा लूई के आमंत्रण पर फ्रांस में परिषद् समवेत हुई। जब प्रतिनिधियों ने देखा कि वे जो करना चाहते हैं, नहीं कर सकते तब उन्होंने अपनी स्वतंत्र कार्यवाही प्रारम्भ की। अपनी आर्थिक मांग स्वीकार कराने के लिये राजा ने उन्हें आमंत्रित किया था पर उनका इरादा समझ कर उसने परिषद् को भंग करना चाहा पर परिषद् ने विघटित होने से इनकार कर दिया। हमारी परिषद् ब्रिटिश हुकूमत के आमंत्रण पर समवेत हुई है पर हम स्वतंत्र हैं कि अपने इच्छानुसार कार्य संचालन करें। हममें से कुछ इसके विरुद्ध थे कि कांग्रेस परिषद् में शामिल हो। वे ब्रिटिश कूटनीति से डरते थे पर कांग्रेस को अपने ऊपर पूरा भरोसा था। मेरी विनम्र राय भी यही थी कि हमें इसमें शरीक होना चाहिये। मुझे अपने साथियों की शक्ति और दृढ़ता में विश्वास था। यह अवसर खोने का नहीं था। यदि ब्रिटेन की अड़ंगेबाज़ी के कारण हम सफल न हुए तो कम से कम दुनिया को तो हम यह बता सकेंगे कि हम कैसा संविधान चाहते हैं। हमारे सभापति ने अपने भाषण में बहुत सी सिद्धांत की बातें कही हैं। उनके मुख से यह सुनकर कि ब्रिटिश हुकूमत द्वारा लगाये गये प्रतिबंधों के हम पाबन्द न होंगे, हमारा हौसला बढ़ गया है।

इस सभा में ब्रिटिश हुकूमत के इस प्रस्ताव को हम स्वीकार नहीं

कर सकते कि भारत वर्गों में विभक्त कर दिया जाय और प्रान्तों का विधान बनाने का अधिकार उन्हें दे दिया जाय जो भारत को विभक्त करने पर तुले हुए हैं। मैं यह सब कहना नहीं चाहता था पर यह कह देना मुझे अपना फ़र्ज मालूम पड़ता है कि मुसलिम लीग की ओर से दावे पेश करने में ब्रिटिश हुकूमत अपनी सच्चाई की कमी जाहिर करती है।

मुसलिम लीग की आड़ में ब्रिटिश गवर्नमेंट तीर चला रही है

किसी ने यह ठीक कहा है कि लीग ब्रिटिश गवर्नमेंट का मोर्चा है। पंडित नेहरू ने अभी उस दिन कांग्रेस में कहा था कि दर्मियानी गवर्नमेंट में शामिल होने वाले लीगी-सदस्य सम्राट् की पार्टी की तरह आचरण कर रहे हैं। तथ्य यह है कि लीग को ब्रिटिश हुकूमत की ओर से धोखा दिया जा रहा है। वे हमारे देशवासी हैं, हमारे भाई हैं और उनके साथ समझौता करने के लिये हम हमेशा तैयार हैं। आज ब्रिटिश हुकूतम लीग को मोर्चा बना कर उसके पीछे से हम पर तीर चला रही है। हम ब्रिटिश वार को खूब समझते हैं और हमें अपनी रक्षा करनी है। जो विधान हम बनायेंगे उसमें यह कोशिश करेंगे कि हम उन तीरों से बच सकें। ऐसा करने में यदि हमें ब्रिटिश हुकूमत और उसके हिमायतियों से लड़ना पड़े तो हम उसके लिये तैयार हैं। हमें पक्का विश्वास है कि हम सब बाधाओं पर विजय पायेंगे। यह हमारे लिये परीक्षा का काल है। ज्यों-ज्यों सफलता सन्निकट आती जाती है तरह-तरह की कठिनाइयाँ पैदा होती जाती हैं। जब योगी योग के ऊँचे स्तर पर पहुँचता है तो प्रेतात्मायें उसे परेशान करती हैं। वे उसे धमकाती हैं और धोखा देने की कोशिश करती हैं। हम सफलता के निकट पहुँच गये हैं और भिन्न-भिन्न दुष्प्रवृत्तियाँ हमें अपने उद्देश्य से विचलित करने के लिये आज सर उठा रही हैं। हमारा कर्तव्य है कि उनके जाल में न पड़ें और न उनसे भयभीत हों।

भारत के विभाजन का विरोध

संविधान बनाने में यह स्मरण रखना चाहिये कि हम चाहे जो योजना बनायें, भारत को विभक्त करने का प्रस्ताव कभी स्वीकार न करेंगे। भारत एक रहना चाहिये। इस तरह अपनी प्राचीन सभ्यता की रक्षा करते हुए हम आगे बढ़ सकेंगे और विश्व की शान्ति-स्थापना में बड़ा हिस्सा ले सकेंगे।

२

हिन्दी—राष्ट्रभाषा

राष्ट्रभाषा के प्रश्न पर भारतीय संविधान सभा में सितम्बर १९४९ को दिये गये अंग्रेजी भाषण का अनुवाद।

अध्यक्ष महोदय! मैं उन सब विस्तृत विषयों पर नहीं बोलना चाहता जिन पर मेरे पूर्व वक्ताओं ने अपने मत प्रकट किए हैं। मैंने श्री गोपालस्वामी आयंगर द्वारा प्रस्तावित संशोधनों पर कुछ संशोधन उपस्थित किए हैं। मुझे जो कुछ भी कहना है, उसमें मैं अपने प्रस्तावों के उद्देश्य को ही यथासम्भव ध्यान में रखूँगा।

श्री आयंगर की तीन कल्पनाएँ

श्री गोपालस्वामी आयंगर के भाषण में उनके प्रस्तावों की आत्मा झलकती है। उनके अनुसार अंग्रेज़ी भाषा के बल पर ही हमें स्वतन्त्रता की प्राप्ति हुई है और अंग्रेज़ी का प्रशासन सम्बन्धी कार्यों के लिए उपयोग, उनके शब्दों में, आने वाले अनेक वर्षों तक बनाए रखना आवश्यक है। यद्यपि उनके प्रस्ताव के अनुसार १५ वर्ष तक भारतीय संघ की भाषा अंग्रेज़ी रहनी चाहिए वास्तव में १५ वर्षों से भी अधिक समय तक वह अंग्रेजी को बनाए रखने के पक्ष में हैं। उनका दूसरा मुख्य विचार यह है कि कोई भी प्रान्तीय भाषा, जिसमें हिन्दी भी सम्मिलित है, इतनी विकसित नहीं है कि वह ऐसी भाषा की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके, जिसे शासन के विविध अंगों का भार वहन करना हो, विशेषकर विधि सम्बन्धी आस्थाओं एवं गहन विचारों के क्षेत्र में। उनकी समस्त योजना के प्रस्ताव इन्हीं दो मुख्य धारणाओं पर निर्धारित हैं और उनसे ही रंजित हैं।

उनके प्रस्तावों में एक तीसरी विचित्र कल्पना यह है कि समय की गति के साथ भारत में अंग्रेजी भाषा का चाहे जो कुछ भविष्य हो; किन्तु अंग्रेज़ी भाषा से जिन गणित अंकों को हमने सीखा है और जो उनके प्रस्ताव में भारतीय अंकों के अन्तर्राष्ट्रीय रूप के नाम से पुकारे गए हैं, वे अवश्य ही बने रहें और नागरी लिपि के अविच्छिन्न अंग बन जायँ और वे हमारी देवनागरी लिपि के संस्कृत अंकों का स्थान ग्रहण करें—जहाँ कहीं भी और जब कभी भी भारतीय संघ के कार्यों में देवनागरी लिपि का प्रयोग हो।

मैं विनम्रतापूर्वक इस सभा के माननीय सदस्यों से अनुरोध करूँगा कि वे इन तीनों विषयों को यह स्मरण रखते हुए अधिक गहराई तक देखें

कि आज हम लोग जो कुछ कर रहे हैं उसका सम्बन्ध केवल हमसे ही नहीं है और न उन विभिन्न प्रान्त निवासी अल्पसंख्यक स्त्री-पुरुषों से ही है, जिनकी अंग्रेजी ढंग से शिक्षा हुई है और जिनका अंग्रेजी भाषा से ही पोषण तथा विकास हुआ है; वरन् हमारे इन निर्णयों का प्रभाव उन करोड़ों पुरुषों और स्त्रियों पर पड़ेगा, जिनका अंग्रेजी भाषा से कोई सम्पर्क नहीं रहा है, जिनके लिए अंग्रेजी भाषा से कोई सम्पर्क होना असम्भव है, और जिन्हें उनकी वर्तमान दशा से ऊपर उठाकर लोकतन्त्र तथा प्रशासन का प्रशिक्षण देना है। श्रीमन् ! हमें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि आज हम यहाँ जो कुछ निर्णय करते हैं उनका प्रभाव केवल वर्तमान पीढ़ी के लोगों पर ही नहीं पड़ेगा वरन् उनसे आने वाली पीढ़ियों के भाग्य का भी रूपांकण होगा।

वर्त्तमान अतीत से बद्ध

प्रधान मन्त्री जी ने अपने ढंग से हम लोगों को चेतावनी दी है कि हम पीछे की ओर न देखें और ऐसा कोई भी पग न उठावें जो हमें पीछे ले जाय। मैं सदैव इस विचार से पूर्णतया सहमत रहा हूँ और मैंने स्वयं भी अनेक अवसरों पर कहा है कि हमने विगतकाल में जो कुछ प्राप्त किया है उसी पर सन्तुष्ट नहीं रह सकते और न हम प्राचीन ढाँचों में अपने को पूर्णतया ढाल ही सकते हैं। मैंने लोगों के सम्मुख यह आदर्श रखे हैं—

समयभेदेन धर्मभेदः।
अवस्थाभेदेन धर्मभेदः॥

समय और परिस्थितियों के अनुसार हमारे धर्म और कर्तव्यों में परिवर्तन होता है। यह प्राचीन सूक्तियाँ हैं। हमें यह स्मरण रखना है कि हमारे जीवन-क्रम की साधारण प्रणालियाँ एक समय तक रहती हैं और फिर चली जाती हैं। संसार गतिशील है। आज की प्रणालियाँ कल नई प्रणालियों, रीतियों और विचारधाराओं को स्थान दे देती हैं। प्राचीन के पादमूल के पीछे एक नवीन सौंदर्य चलता रहता है। यदि हम चाहें तो भी जीवन के इस महान मूलभूत तत्त्व से अपना पीछा नहीं छुड़ा सकते।

श्रीमन् ! साथ ही साथ जैसा कि प्रधान मन्त्री जी ने भी कहा है, हमें यह स्मरण रखना है कि हमारी जड़ अतीत में है और उससे हम अपना सम्बन्ध-विच्छेद नहीं कर सकते। एक प्रकार से हम अतीत के संग एक सुदृढ़ किन्तु अदृश्य आकाशिक शृंखला से बंधे हुए हैं, जो समय के साथ निरन्तर बढ़ती चली जाती है, किन्तु न तो टूटती है और न तोड़ी ही जा सकती है। अतः हम जो कुछ भी करने का प्रयत्न करें हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि जैसे-जैसे हम अपनी भवितव्यता की ओर आगे बढ़ते जायं वैसे वैसे अतीत से हमको बांधने वाली वह लंबी और दृढ़ शृंखला दुर्बल न होने

पाये, वरन् होना तो यह चाहिए कि वह प्रत्येक पग पर और भी दृढ़ होती जाय। मेरा निवेदन है कि हमारा तात्विक राजनीतिक सिद्धांत यह होना चाहिए कि हमारा जीवन भूतकालिक न हो वरन् वह उस वर्तमान में हो, जो हमें अतीत से बांधे रखता है।

मैं उन सब गुणों अथवा अच्छाइयों को ग्रहण करने के पक्ष में हूं, जो पश्चिम हमें सिखा सकता है। परन्तु मैं यहाँ समुपस्थित सभी सज्जनों से यह निवेदन कर देना चाहता हूं कि वे इस बात को स्मरण रखें कि पश्चिम में चमकने वाली सभी वस्तुएँ सुवर्ण नहीं हैं। केवल पश्चिमी होने के कारण कोई वस्तु सर्वथा गुणप्रद नहीं हो जायगी। हमारे देश ने भी ऐसी उच्चकोटि की विचारशील संस्कृति को जन्म दिया है जो समय की गति के साथ, संभवतः सम्पूर्ण मानवजाति के भाग्य निर्माण पर अधिकाधिक प्रभाव डालेगी।

१५ वर्षों के लिये अंग्रेजी

मैं चाहता हूँ कि माननीय सदस्यगण उपर्युक्त सिद्धांतों को दृष्टि में रखते हुए उस प्रस्ताव पर विचार करें, जिसे हमारे मित्र श्री गोपालस्वामी आयंगर ने स्वीकृति के लिए उपस्थित किया है। मैं इसे पढ़ कर सुनाऊँगा नहीं। मैं मान लेता हूँ कि आप सब इसकी प्रत्येक महत्त्वपूर्ण धारा से परिचित हैं। यह प्रस्ताव अंग्रेजी भाषा के कम से कम १५ वर्षों तक बने रहने की कल्पना करता है—न केवल बने रहने की वरन् संघ के प्रत्येक कार्य में अंग्रेजी भाषा के प्रभुत्व को बनाए रखने की भी। मेरी मान्यता थी कि यद्यपि यह आवश्यक होगा कि आने वाले कुछ समय तक अंग्रेजी शासकीय कार्यों में चलती रहेगी तथापि वह अवधि इतनी लम्बी नहीं होगी। मैंने सोचा था कि इससे बहुत थोड़े समय में ही हम जनता के निकट पहुँच सकेंगे और जनता द्वारा समझी जाने वाली भाषा में कार्य कर सकेंगे। मैं यह बात भूल नहीं जाता कि हमारे दक्षिण के भाइयों के लिए जो यहाँ उपस्थित हैं हिन्दी, जिसे शासकीय भाषा बनाने का प्रस्ताव है, सीखने में अत्यन्त सरल न होगी। फिर भी मेरा निवेदन है कि दक्षिणवालों के लिए हिन्दी सर्वथा अपरिचित नहीं है। उन राष्ट्रपिता के आदेशों पर, जिनका नाम-स्मरण सदैव हमारे हृदय की सूक्ष्मतंत्री को स्पर्श करता है, दक्षिण भारत में १९१८ ई० में हिन्दी का कार्य आरम्भ किया गया था। इस अवधि में वहाँ के कई लाख पुरुषों और स्त्रियों ने हिन्दी सीख ली है। जैसा यहाँ उपस्थित मेरे मित्र श्री मोटूरि सत्यनारायण अच्छी तरह बतला सकते हैं प्रतिवर्ष लगभग ५५ से ६० हजार तक परीक्षार्थी दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा (जिसका नाम अभी हाल में हिन्दुस्तानी प्रचार सभा कर दिया गया है) की हिन्दी परीक्षाओं में बैठते हैं।

एक माननीय सदस्य—वे केवल लिख पढ़ सकते हैं। किन्तु अपना अभिप्राय व्यक्त नहीं कर सकते।

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—ऐसा सम्भव है। मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि इससे पता चलता है कि हिन्दी भाषा दक्षिण भारत के लिए कोई नई वस्तु न होगी। मेरी ऐसी धारणा थी कि हिन्दी को मद्रास की युवक पीढ़ी के निकट लाने के लिए १५ वर्ष जैसी लंबी अवधि की आवश्यकता न होगी। किन्तु जैसा पन्त जी ने कहा है, यह बात हमारे दक्षिण के भाइयों के कहने की है कि उन्हें कितने समय की आवश्यकता है और मैं इस विचार से पूर्णतया सहमत हूँ कि इस विषय में हमें उनके हाथ नहीं बांधना चाहिए। हम उनको अपनी सेवाएं अर्पित कर सकते हैं, परामर्श दे सकते हैं, किन्तु इस बात का फ़ैसला हम उन पर ही छोड़ते हैं कि उन्हें कितना समय चाहिए और वह कितने समय में अपनी जनता को संघ के प्रशासनिक कार्यों में हिन्दी का व्यवहार करने के लिए तैयार कर सकते हैं। हमने इसी बात को ध्यान में रखकर १५ वर्षों की अवधि स्वीकार की। पहले हमने ५ वर्ष, फिर बढ़ाकर १० वर्ष और अन्त में जब हमने देखा कि हमारे दक्षिण के भाई १५ वर्ष की अवधि चाहते हैं, तो हमने इसे स्वीकार कर लिया। किन्तु श्री आयंगर के प्रस्ताव में एक कठोर प्रतिबन्ध है। वह यह कि ५ वर्ष और उससे भी अधिक समय तक अंग्रेज़ी के साथ के अतिरिक्त हिन्दी का प्रयोग ही न हो, जब तक एक कमीशन सिपारिश नहीं करता और वह राष्ट्रपति द्वारा स्वीकृत नहीं होती। यह मुझे कठोर उपबन्ध लगता है। यह कुछ कोमल हो सकता था। यह क्यों आवश्यक है कि हिन्दी को उन शासकीय कार्यों से पूर्णतया पृथक् रखा जाय, जिनमें हिन्दी का प्रयोग हमारे दक्षिण के मित्रों को किसी प्रकार की असुविधा पहुँचाये बिना ही किया जा सकता है? वर्तमान उपधारा के अनुसार भारतीय संघ का कोई मन्त्री किसी भी सरकारी विषय पर किसी को हिन्दी में पत्र नहीं लिख सकता, जब तक कि उस पत्र के साथ अंग्रेज़ी अनुवाद न हो। स्पष्ट है कि ऐसी दशा में तो हिन्दी के प्रयोग की कोई आशा नहीं है। अतः स्थिति यह है कि ५ वर्ष या उससे अधिक समय तक, जब तक कमीशन सिपारिश नहीं करता और वह राष्ट्रपति द्वारा स्वीकृत नहीं होती, अंग्रेज़ी से अनुवाद करने के सिवा कोई कार्य हिन्दी में नहीं हो सकता। आप कोई पुस्तक अंग्रेज़ी में प्रकाशित कर सकते हैं और उसका हिन्दी में भी अनुवाद कर सकते हैं। बस, केवल इतना ही कार्य ५ वर्ष या उससे भी आगे तक हो सकता है। यह कठोर शर्त है। किन्तु फिर भी मैं इस बात को स्वीकार कर लेता हूँ कि अंग्रेज़ी के साथ के अतिरिक्त कोई काम ५ वर्षों तक हिन्दी में न हो।

आयोग की नियुक्ति, प्रस्तावित संशोधन

किन्तु मैं आपसे कहूँगा कि ५ वर्ष के वाद क्या होगा—इस वात पर विचार करें। श्री आयंगर के प्रस्ताव के अनुसार ५ वर्ष की समाप्ति पर एक कमीशन की नियुक्ति होगी, जो भाषा के प्रश्न पर विचार करेगा। निश्चय ही इसका तात्पर्य ५ वर्ष की इस अवधि को २ वर्ष तक और वढ़ाना होगा, क्योंकि कमीशन की नियुक्ति के वाद उसकी वैठकें होंगी और संभवतः वह समूचे देश का पर्यटन करने के वाद अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा। उसके बाद एक संसदीय समिति वैठेगी, जो इन कमीशन के सुझावों पर विचार करेगी और फिर अपनी अन्तिम रिपोर्ट देगी। मेरा निवेदन है कि कमीशन की नियुक्ति ५ वर्ष की समाप्ति के "पहले" ही की जाय। मैं कोई समय निर्धारित नहीं करता, मेरा तो संशोधन केवल यह है कि "५ वर्ष की समाप्ति पर" के स्थान में "५ वर्ष की समाप्ति के पहले" कर दिया जाय, जिससे रिपोर्ट समय पर तैयार रहे और सरकार ऐसी स्थिति में हो कि वह आदेश दे सके कि ५ वर्ष की समाप्ति के वाद हिन्दी-व्यवहार में जो परिवर्तन आवश्यक जान पड़ें उनको लागू किया जा सके। यह छोटा सा संशोधन मैंने प्रस्तुत किया है और मुझे आशा है कि वह स्वीकार कर लिया जायगा। इसका तात्पर्य केवल यह है कि ५ वर्ष की समाप्ति के पूर्व ही कमीशन की नियुक्ति हो जायगी। किन्तु मैंने अपने संशोधन में यह स्पष्ट कर दिया है कि जो कुछ भी सिपारिशें स्वीकृत होंगी, उन्हें ५ वर्ष की समाप्ति के वाद ही लागू किया जायगा। मैं इस पर संतोष करूँगा कि ५ वर्ष के भीतर हिन्दी में केवल वही काम होगा जो अंग्रेज़ी का अनुवाद हो।

इसी प्रकार कुछ अन्य उपवाक्यों में मैंने कुछ संशोधन प्रस्तावित किए हैं। जैसा अध्यक्ष महोदय ने निर्देश दिया है इन संशोधनों के विषय में यह मान लिया गया है कि वे पेश किए जा चुके हैं। अतः मैं उन्हें पढ़ूँगा नहीं, केवल उनका साधारण प्रयोजन वताऊंगा। एक संसदीय समिति का सुझाव दिया गया है और यह कहा गया है कि वह कमीशन की सिपारिशों पर रिपोर्ट देगी। मैंने एक छोटा उपवाक्य जोड़ दिया है कि यह समिति अपनी भी सिपारिशें दे सकती है, "ऐसी सिपारिशें, जिन्हें वह उपयुक्त समझे।" यह थोड़े से शब्द मैंने उस उपवाक्य में जोड़ दिए हैं, जिसका सम्बन्ध समिति की नियुक्ति और कमीशन की सिपारिशों पर उस समिति की रिपोर्ट से है। मेरी मांग केवल यह है कि यह संसदीय समिति भी, यदि उचित समझे तो, सिपारिशें करे और फिर सरकार समिति तथा कमीशन दोनों की सिपारिशों पर निर्णय करे।

३०१-ख में मैंने यह संशोधन प्रस्तावित किए हैं।

अन्य संशोधन

अब मैं प्रादेशिक भाषाओं सम्बन्धी अध्याय २, श्री आयंगर के प्रारूप की ३०१-ग धारा को लेता हूँ। इसमें कहा गया है कि—

"···कोई भी राज्य विधि द्वारा राज्य में व्यवहृत किसी भी भाषा को अथवा हिन्दी भाषा को राज्य के कुछ या समस्त शासकीय कार्यों में प्रयुक्त किए जाने की स्वीकृति दे सकता है।"

मैं इससे सहमत हूं। मैं उस उपबन्ध पर आपत्ति करता हूँ जिसमें कहा गया है—

"जब तक राज्य की विधान सभा कानून द्वारा कोई दूसरी व्यवस्था नहीं करती तब तक अंग्रेज़ी भाषा राज्य के उन शासकीय कार्यों में प्रयुक्त होती रहेगी जिनमें उनका प्रयोग संविधान के आरम्भ होने के समय हो रहा था।"

मेरी समझ में नहीं आता है कि राज्यों में अंग्रेज़ी के प्रयोग को प्रोत्साहित करने की क्या आवश्यकता है। हो सकता है कि संविधान के आरम्भ होने के समय उनमें कहीं कहीं अंग्रेजी भाषा का प्रयोग हो रहा हो, किन्तु इसमें वे परिवर्तन करना चाहते हों। मैं जानता हूँ कि आपने यह व्यवस्था की है कि वे कानून द्वारा परिवर्तन कर सकते हैं, किन्तु हो सकता है कि वे अंग्रेज़ी के अतिरिक्त अन्य भाषाओं का भी प्रयोग करते हों। अतः मैं इस उपबन्ध के स्थान पर यह वाक्य रखना चाहता हूँ—

"जब तक कि राज्य की विधान सभा कानून द्वारा कोई दूसरी व्यवस्था नहीं करती तब तक वह भाषा या भाषाएँ जो राज्य के शासकीय कार्यों में संविधान के आरम्भ होने के समय प्रयुक्त हो रही थीं, उसी प्रकार प्रयुक्त होती रहेंगी।"

मेरे अपने ही राज्य में शासकीय कार्यों में हम लोग हिन्दी का व्यवहार कर रहे हैं। बिहार और मध्य प्रदेश में भी, मैं समझता हूँ, उसी का प्रयोग हो रहा है। तब फिर हमारे लिए यह क्यों आवश्यक हो कि हम एक नया क़ानून बनाकर फिर से हिन्दी को स्वीकार करें। आजकल हम हिन्दी का व्यवहार सरकार के आदेश से कर रहे हैं, और इसलिए मेरे सुझाए हुए शब्द अधिक उपयुक्त होंगे।

फिर धारा ३०१–ई में कहा गया है कि "जब राष्ट्रपति को इस बात का सन्तोष हो जाय कि राज्य की जनता का एक बड़ा अंश किसी अन्य भाषा का प्रयोग चाहता है तो वह आदेश दे सकते हैं कि उस भाषा को भी राजकीय मान्यता दी जाय।" मैं इससे सहमत हूँ, परन्तु मुझे उचित लगता है कि इस सम्बन्ध में कांग्रेस कार्य समिति के निर्देश का अनुसरण किया जाय

और जनसंख्या का एक निश्चित अनुपात नियत कर दिया जाय, जिसकी माँग पर किसी भाषा को राजकीय मान्यता दी जा सके। मेरे विचार में कार्य समिति ने २० प्रतिशत निर्धारित किया है, जिसे हम भी स्वीकार कर सकते हैं। अन्यथा केन्द्रीय सरकार के लिए यह निर्णय करना कठिन हो जायगा कि वह किसे स्वीकृत करे और किसे अस्वीकृत। इस प्रकार से कुछ उलझन भी हो सकती है और कुछ प्रान्तों में कटुता भी बढ़ सकती है। यदि अनुपात स्थिर कर लिया जाता है तो केन्द्रीय सरकार का मार्ग स्पष्ट होगा।

और फिर अध्याय ३ में—"सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों की भाषा" के सम्बन्ध में उपस्थित प्रस्ताव—श्री आयंगर मुझे ऐसा कहने के लिए क्षमा करेंगे—स्पष्टतः प्रतिगामी है। आपने हिन्दी को राजकीय भाषा स्वीकार किया है। मैं मानता हूँ कि आप चाहते हैं कि हिन्दी शनैः शनैः अंग्रेज़ी का स्थान ग्रहण करे। किन्तु यह तभी संभव है जब आप हिन्दी को कम से कम हिन्दी भाषी राज्यों में अंग्रेज़ी का स्थान लेने का अवसर देंगे। मैं जानता हूँ अहिन्दी प्रान्तों को हिन्दी के प्रयोग में कठिनाइयाँ हैं, किन्तु हिन्दी प्रान्तों को तो हिन्दी के व्यवहार में कोई कठिनाई नहीं है। आप कठिनाइयों को और भी बढ़ा चढ़ा कर न रखें। यह कहा गया है कि हिन्दी में उपयुक्त मुहावरे, वाक्यांश तथा पारिभाषिक शब्दावली अप्राप्य है। अस्तु, यह बात आप उन पर छोड़ दीजिए जो हिन्दी में कार्य करेंगे। मेरे अपने ही प्रदेश में विधेयकों तथा अधिनियमों की मूल भाषा हिन्दी ही होती है। स्पष्ट ही हमारे दक्षिण के भाइयों के लिए हमारे इस कार्य से कोई कठिनाई नहीं होती। आप हमें अपना सब कार्य अंग्रेज़ी भाषा में करने के लिए क्यों विवश करें, जब हम पहले से ही उसे हिन्दी में कर रहे हैं।

फिर आप का कहना है कि जहाँ तक सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों का सम्बन्ध है, उनका कार्य भी १५ वर्षों तक अंग्रेज़ी भाषा में ही होना चाहिए। मैं इससे सहमत हूँ कि सर्वोच्च न्यायालय का कार्य १५ वर्षों तक अंग्रेज़ी में हो, किन्तु मेरा निवेदन है कि यह आवश्यक नहीं है कि उस काल में सब उच्च न्यायालय (हाई कोर्ट) भी अपना कार्य अंग्रेज़ी में करें। उच्च न्यायालय दो श्रेणियों में विभक्त हो सकते हैं। राज्यों में कुछ ऐसे उच्च न्यायालय हैं, जिनमें कुछ नये भी हैं, जहाँ कार्य हिन्दी में हो रहा है और परम्परा से होता आया है। उदाहरणार्थ ग्वालियर अथवा इन्दौर को ले लीजिए। मुझे मालूम है कि वहाँ अंग्रेज़ी का भी प्रयोग हुआ है, बाहर से आए हुए कुछ न्यायाधीशों ने अपना काम अंग्रेज़ी में किया और उसकी उन्हें अनुमति भी दे दी गई, किन्तु फिर भी बहुत सा कार्य साथ-साथ हिन्दी में होता रहा है। क्या आप उसे रोक देंगे ? इसी

प्रकार एक उच्च न्यायालय राजस्थान में है और कुछ अन्य राज्यों में भी हैं। क्या आप इन उच्च न्यायालयों को हिन्दी में कार्य करने से रोक देंगे? उपस्थित प्रस्ताव के अनुसार इन उच्च न्यायालयों का समस्त हिन्दी कार्य असम्भव हो जायगा। मेरा निवेदन है कि इसमें अवश्य ही परिवर्तन करना चाहिए।

साथ ही एक अन्य कोटि ऐसे उच्च न्यायालयों की है, जो अपना काम अंग्रेज़ी में करते रहे हैं, किन्तु जो १५ वर्ष से कहीं पहले ही हिन्दी को अपना सकते हैं। मेरे अपने प्रदेश के या बिहार अथवा मध्य प्रदेश के ही उच्च न्यायालयों को ले लीजिए। मेरे मन में यह बात स्पष्ट है कि हमारा उच्च न्यायालय पाँच वर्षों के पश्चात् पूर्णतया हिन्दी में कार्य करना आरम्भ कर सकता है। धीरे-धीरे आगामी ५ वर्षों में समस्त कार्य पद्धति निश्चित की जा सकती है और हिन्दी की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाई जा सकती है। पारिभाषिक शब्दावली कोई अड़चन नहीं उपस्थित करेगी। उसका निर्माण तो हो ही रहा है। बहुत कुछ शब्दावली तो है ही और फिर आवश्यक शब्दावली का निर्माण कोई बहुत कठिन कार्य नहीं है। हिन्दी कोई नयी भाषा नहीं है। जब आयरलैंड ने अपना संविधान बनाया तो उसने आयरिश भाषा को अपनाया था, जिसमें न तो अधिक साहित्य था और न पर्याप्त शब्दावली ही थी। किन्तु फिर भी आयरलैंड ने उसे ही अपनाया। हमारी भाषा हिन्दी तो अत्यन्त शक्तिशाली भाषा है। श्री आयंगर ने कहा है कि इस भाषा में आवश्यक पारिभाषिक शब्दावली का नितान्त अभाव है। मैं उनकी इस उक्ति पर क्या कहूँ? उन्होंने स्वयं ही कहा है कि वे इस भाषा से परिचित नहीं हैं और फिर भी वे इसके सम्बन्ध में अपना निर्णय दे रहे हैं! मेरा निवेदन है कि यह न्याय नहीं है। मैं तो कहता हूँ कि हिन्दी संस्कृत के साधनों सहित, जिस विषय में इस सदन में इतना कहा जा चुका है, जिसका मैं पूर्णरूप से समर्थन करता हूँ—हिन्दी संस्कृत की सहायता से पारिभाषिक शब्दावली की समस्त कठिनाइयों का सरलता से सामना कर सकती है। मुझे तो ऐसा लगता है कि ५ वर्ष की अवधि की समाप्ति के पूर्व ही हम उच्च न्यायालय का काम हिन्दी में चला सकते हैं। किन्तु मेरा तो कहना है कि ५ वर्ष का यह समय तो पर्याप्त है ही। हमें इसकी आवश्यकता नहीं है कि पन्द्रह वर्षों की अवधि तक हमारा कार्य अंग्रेज़ी में ही चले। फिर इतनी लंबी अवधि तक हमारे लिए यह अनिवार्य क्यों किया जाय कि हम अंग्रेज़ी में काम करते रहें? हमें विकास करने का यथेष्ट अवसर दीजिए और पन्द्रह वर्ष के बाद सभी प्रमुख कार्य, जैसे भारतीय संघ का कार्य, करना सरल हो जायगा, क्योंकि हिन्दी प्रदेश ऐसा वातावरण उत्पन्न कर देंगे, तथा वे

उस पारिभाषिक शब्दावली का निर्माण कर लेंगे जो समस्त देश के लिए सहायक होगी।

मौलाना हसरत मोहानी (युक्तप्रांत-मुस्लिम)—हिन्दी प्रान्तों से आपका क्या आशय है ?

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—मैं उन प्रान्तों की ओर संकेत कर रहा हूँ जिन्होंने हिन्दी को अपनी राजभाषा स्वीकार कर लिया है। उदाहरण के लिए युक्तप्रान्त ने औपचारिक रूप में हिन्दी को अपनी राजभाषा स्वीकार कर लिया है, इसी प्रकार विहार ने भी किया है....

मौलाना हसरत मोहानी—क्या युक्तप्रान्त उर्दू प्रान्त है या हिन्दुस्तानी प्रान्त ?

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—यह आपका विचार हो सकता है। मैं हिन्दी, हिन्दुस्तानी अथवा उर्दू के झमेले में नहीं पड़ना चाहता। मेरा तो इतना ही कहना है कि युक्तप्रान्त में हिन्दी राजकीय भाषा मान ली गई है और इसी भाषा में सभी सरकारी अधिनियम और विधिकार्य आजकल स्वीकार किए जा रहे है। निस्संदेह बहुत काम अब भी अंग्रेजी में हो रहा है, किन्तु क्रमशः वह भी हिन्दी भाषा के माध्यम द्वारा होने लगेगा।

अंकों का प्रश्न

यह मेरे सुझाए गए कुछ साधारण परिवर्तन हैं। अब मैं ३०१-क सम्बंधी अपने मुख्य संशोधन पर आता हूँ, जो अंकों के विषय में है। श्रीमन् ! मुझे ज्ञात है कि अंकों सम्बंधी विवाद से कुछ कटुता उत्पन्न हुई है। मैं उस कटुता को कदापि बढ़ाना नहीं चाहता, मैं यथासम्भव उसका निवारण करूँगा। मुझे ज्ञात है कि मेरे मद्रास के मित्र हिन्दी अंकों को वदलना चाहते हैं।

माननीय सदस्यगण—बंगाल भी।

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—मैं यदि अशुद्ध कहूँ तो आप उसे सुधार सकते हैं, परन्तु मैंने अपने बंगाली मित्रों से ऐसा कभी नहीं सुना।

माननीय सदस्यगण—बम्बई भी। वास्तव में सब अहिंदी भाषी लोग यही चाहते हैं।

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—मेरा निवेदन यह है कि कम से कम कहा जाय तो यह ठीक नहीं है कि सभी अहिंदी भाषी क्षेत्र यह परिवर्तन चाहते हैं। मैं शंकरराव देव और डा० अम्बेडकर से, जो यहाँ उपस्थित हैं, पूछता हूँ कि क्या महाराष्ट्र के लोग इसे स्वीकार करेंगे ?

श्री शंकरराव देव—मैं कहता हूँ कि जो मेरा मत है वही महाराष्ट्रियों का भी मत होगा।

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—महाराष्ट्र के विषय में मैं अपनी जानकारी से निवेदन करता हूँ कि लिपि समान होने के कारण यदि वहाँ जनमत संग्रह हो तो महाराष्ट्र के लोग तथाकथित अन्तर्राष्ट्रीय अंकों को स्वीकार नहीं करेंगे।

माननीय सदस्यगण—यदि भारत में इस विषय को लेकर जनमत संग्रह हो तो हिन्दी चली जायगी।

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—मैं माननीय सदस्यों से यह प्रार्थना करूँगा कि वे एक-एक करके मुझे टोकें और एक ही समय में अनेक लोग न बोलें। मुझे श्री शंकरराव देव और डा० अम्बेडकर का कथन सुनकर प्रसन्नता होगी।

माननीय डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी—इस विषय पर जनमत संग्रह क्यों न किया जाय ?

श्री एच० जे० खाण्डेकर—(मध्य प्रदेश तथा बरार : साधारण) मैं भी महाराष्ट्रीय हूँ, और मैं कह सकता हूँ कि वे अन्तराष्ट्रीय अकों को स्वीकार नहीं करेंगे।

डा० पी० एस० देशमुख—(मध्य प्रदेश तथा बरार : साधारण) मैं भी महाराष्ट्रीय हूँ और मैं कहता हूँ कि वे अन्तर्राष्ट्रीय अंकों को स्वीकार नहीं करेंगे।

अध्यक्ष—यह आवश्यक नहीं है कि किसी प्रस्ताव विशेष पर सदस्यगण अपना व्यक्तिगत मत प्रकट करें।

माननीय डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी—माननीय सदस्य मत पूछ रहे हैं।

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—मैंने अपना विचार उपस्थित किया, आप उससे सहमत हों या न हों। मैंने डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी से अपना मत प्रकट करने को नहीं कहा है। मैंने तो यह कहा था और यही बात अब भी मैं यहाँ कहता हूँ कि यदि यह विषय महाराष्ट्र के लोगों के सम्मुख रखा जाय तो वे इसे स्वीकार नहीं करेंगे। मेरा भी उस प्रान्त से सम्पर्क है। और मेरे मित्र श्री मुनशी चाहे कुछ भी कहें, मैं तो यही कहता हूँ कि यदि यह प्रश्न गुजरातियों के सम्मुख रखा जाय तो वे भी इसे स्वीकार नहीं करेंगे। **(कई माननीय सदस्यों द्वारा अन्तर्बाधा)** क्या यह आवश्यक है कि इतने अधिक लोग एक ही साथ बोलें ? यदि एक व्यक्ति बाधा डाले तो मैं उसे सुन सकता हूँ किन्तु जब चार-पाँच व्यक्ति एक ही साथ बोल पड़ते हैं तो मैं किसी को भी नहीं सुन पाता।

मैंने श्री शंकरराव देव की बात सुनी। वे कहते हैं कि यदि सम्पूर्ण

संविधान जनता के सम्मुख रखा जाय तो वे उसे स्वीकार नहीं करेंगे।

श्री शंकरराव देव—उनमें से अधिकांश।

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—यदि ऐसा है तो इसका अधिकांश रद्दी की टोकरी में फेंक देने योग्य है। यदि संविधान का कोई भी भाग देश की जनता को स्वीकार नहीं होगा तो उसको यहाँ स्वीकृत नहीं होना चाहिए। मैं अत्यन्त विनम्रतापूर्वक यह निवेदन करता हूँ कि मैं समूचे देश में इस विषय पर जनमत गणना को सहर्ष स्वीकार कर लूँगा। यदि प्रान्त हिन्दी को स्वीकार नहीं करते तो मैं वहां के लोगों पर हिन्दी को कभी नहीं लादूँगा। फिर तो मैं तत्काल कहूँगा कि हिन्दी को राष्ट्रभाषा नहीं होना चाहिए। हिन्दी को किसी प्रान्त पर क्यों थोपा जाय? यह तो प्रान्तों को निर्णय करना है कि वे हिन्दी को स्वीकार करते हैं या नहीं; वे चाहें तो अंग्रेज़ी को ही चालू रख सकते हैं अथवा वे एसपेरैण्टो ऐसी किसी कृत्रिम भाषा को अपना सकते हैं। यदि उनका ऐसा विचार है तो मैं उसे स्वीकार करूँगा। किन्तु जनता की इच्छा को जानने का कोई मार्ग तो निकालना ही चाहिए। विद्यार्थियों की एक संस्था द्वारा हाल में एक परीक्षण मत-संग्रह हुआ है। हम लोगों ने उसके विषय में पढ़ा है। समस्त देश में जनता के विचारों को संगृहीत करने का कोई दूसरा उपाय भी अपनाया जा सकता है। ऐसा मद्रास में भी हो। यहाँ मेरे मित्र चाहे कुछ भी कहें मुझे तो आशा हैं कि मद्रास की बहुसंख्यक जनता हिन्दी चाहेगी।

कई माननीय सदस्य—नहीं, नहीं।

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—किन्तु यदि कोई जनमत ग्रहण संभव न हो तो मैं उन सब से प्रार्थना करूँगा जिनके हाथ में आज सत्ता है कि वे अपने हृदय की क्षीण वाणी को सुनें और कोई ऐसी छोटी भी बात स्वीकार न करें जो उन्हें लगता है कि जनता स्वीकार न करेगी।

मौलाना हसरत मोहानी—मैं युक्तप्रान्त में जनमत संग्रह की मांग करता हूँ कि वहाँ हिन्दी हो वा हिन्दुस्तानी। वहाँ एक भी व्यक्ति संस्कृत-निष्ठ हिन्दी नहीं बोलता।

अध्यक्ष—क्या मुझे यह बताना आवश्यक है कि इस संविधान सभा पर देश के संविधान बनाने का कर्त्तव्य सौंपा गया है। इस सभा के संविधान में जनमत संग्रह कराने का कोई उपबन्ध नहीं है, अतः सम्पूर्ण संविधान या किसी भी अंश पर जनमत गणना का कोई प्रश्न नहीं है। अतः इस प्रश्न पर कोई विवाद नहीं होना चाहिए, क्योंकि वह व्यर्थ होगा।

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—मैं उन व्यक्तियों से जिनके हाथ में आज सत्ता है इस विषय पर विचार करने का अनुरोध करता हूँ। मेरा यह प्रस्ताव नहीं है कि इस विषय पर अब प्रत्यक्ष जनमत लिया जाय।

जनमत संग्रह है क्या ? उसका सीधा तात्पर्य है जनता की इच्छा। यदि यह जनता पर छोड़ दिया गया होता तो वे क्या कहते ?……

अध्यक्ष—जहाँ तक इस संविधान सभा का सम्बन्ध है, वह जनता की इच्छा को प्रतिबिम्बित करता है।

माननीय श्री आर० आर० दिवाकर (बम्बई, साधारण)—श्रीमन्! माननीय सदस्य जो कुछ कह रहे हैं वह इस सभा के सदस्यों पर आक्षेप है।

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—यदि प्रत्येक बार, जब भी हम जनता की इच्छा की ओर निर्देश करें, उस पर यह आपत्ति की जाय कि यह इस सदन के सदस्यों पर आक्षेप है तो आगे बढ़ना असंभव हो जायगा। कभी-कभी सदन के विचार जनता के विचार से भिन्न हो सकते हैं। जहाँ तक अंकों का सम्बन्ध है, मेरा कहना है कि आप उस पर मनन करें। संभवत. आपने अपने मत स्थिर कर लिए हैं। फिर भी मैं आपसे कहता हूँ कि आप मेरी बात सुनें। अंकों के प्रश्न पर उत्तेजित न हों।

माननीय डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी—यह हमारे लिए चेतावनी है।

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—आपने अपने विचार स्थिर कर लिए हैं, और आप अपने विरोधियों की हंसी उड़ाना चाहते हैं। यह आपको शोभा नहीं देता। मैं इस प्रश्न पर गंभीर हूँ। मैं जानता हूँ कि श्री आयंगर इस प्रश्न पर गंभीर हैं। यह विषय हमारी जनता के भविष्य से सम्बन्ध रखता है।

हम लोग कई वर्षों से राष्ट्रभाषा की बात करते आये हैं। सदन के समक्ष यह कोई नया विषय नहीं है। यह उन्नीसवीं शताब्दी की बात है कि राष्ट्रभाषा सम्बन्धी भावना ने बंगाल में रूप धारण किया, युक्तप्रान्त या बिहार में नहीं। मैं आपको उद्धरण दे सकता हूँ किन्तु मैं सदन का समय नहीं लेना चाहता। बंकिमचन्द्र चटर्जी का मूल लेख मेरे पास है। इस विषय पर मेरे पास केशवचन्द्र सेन का मूल कथन है। सन् १९०८ ई० में "वंदेमातरम्" में—जिसके सम्पादक श्री अरविन्द घोष थे—जो कुछ छपा था, उसका मूल मेरे पास है……।

पं० लक्ष्मीकान्त मैत्र (पश्चिमी बंगाल, साधारण)—उस सबके लिए हमें पर्याप्त पुरस्कार मिल चुका है।

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—इस विचार को वहाँ रूप मिला और फिर तिलक ने उसका समर्थन किया तथा राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने इसे उठा लिया। मेरा अभिप्राय यह है कि यह आन्दोलन वर्षों से चला आ रहा है और लोगों ने कुछ निश्चित विचारधारा के अनुसार हिन्दी को राष्ट्रभाषा स्वीकार करने के निमित्त कार्य किया है। यह बात लगभग मान ली गई है कि हिन्दी राष्ट्रभाषा है और विभिन्न प्रान्तों में इसी धारणा

पर कार्य होता रहा है। कुछ ही क्षण पहले मैंने मद्रास में होने वाले कार्यों का उल्लेख किया है। मैं यह भी निवेदन कर दूं कि बंगाल, आसाम, महाराष्ट्र, गुजरात तथा उड़ीसा में यह कार्य वर्षों से चल रहा है। आजकल वर्धा से हिन्दी में परीक्षाएँ संचालित होती हैं और लगभग १,४०,००० युवक और युवतियाँ, जो हिन्दी भाषी प्रान्तों के नहीं हैं, वरन् जो अहिन्दी भाषी क्षेत्रों के हैं, प्रतिवर्ष उनमें बैठते हैं। इससे पता चलता है कि यह नवीन विचार नहीं है और इस विचार के आधार पर देश में कार्य होता रहा है। क्या मैं यह पूछ सकता हूँ कि यह अंकों सम्बन्धी विचार देश में कब से उत्पन्न हुआ है? यदि हिन्दी भाषा को लोगों ने अनेक वर्षों से प्रायः स्वीकार न कर लिया होता तो किसी भी सदस्य का साहस न होता कि उस भाषा की स्वीकृति के सम्बन्ध में कोई प्रस्ताव इस सदन के सम्मुख प्रस्तुत करता। उसी आधार पर संविधान के प्रारूप के भाषा सम्बन्धी खण्ड की रचना की गई। किन्तु लोगों में इन अंकों के सम्बन्ध में कितने समय से वाद-विवाद उठा? केवल दो तीन सप्ताहों से।

माननीय श्री के० सन्तानम् (मद्रास, जनरल)—मैं माननीय सदस्य को सूचना देना चाहता हूँ कि यह प्रश्न दक्षिण में हमारे सम्मुख कम से कम १५ वर्ष पूर्व हिन्दी प्रचार सभा के सम्बन्ध में उठा था और हम लोगों ने निर्णय किया था कि दक्षिण में हिन्दी का प्रचार अंतर्राष्ट्रीय अंकों के साथ होना चाहिए।

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—मैं श्री सन्तानम् के कथन को ठीक मानता हूँ। मुझे इसका कभी ज्ञान ही नहीं था। परन्तु न तो श्री सन्तानम् ने और न मद्रास की हिन्दी प्रचार सभा ने ही कभी यह प्रश्न देश के सम्मुख उपस्थित किया।

श्री एम० सत्यनारायण (मद्रास, जनरल)—आप स्वयं १५ वर्ष पूर्व हिन्दी प्रचार सभा में थे।

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—जब हिन्दी प्रचार सभा से मेरा सम्बन्ध था तब नागरी अंकों का प्रयोग होता था। मैं यह सूचना अपने मित्र श्री सत्यनारायण को दे दूँ, जिनका उस सभा से सम्पर्क मेरे बहुत बाद में आरम्भ हुआ। जब मेरा उस सभा से सम्बन्ध था, जब उस सभा का मार्ग-निर्देशन इलाहाबाद से होता था, तब सभी कार्य हिन्दी अंकों द्वारा किया जाता था। संभवतः अंग्रेजी अंकों को वे बाद में लाए और आज भी मैं इन्हें स्मरण दिला दूँ कि इनकी प्रकाशित कम से कम कुछ हिन्दी पुस्तकों में नागरी अंक हैं। मैंने उनमें से कम से कम एक तो देखी है।

श्री एम० सत्यनारायण—यह सन् १९२७ की बात है।

माननीय श्री आर० आर० दिवाकर—हिन्दी, पंजाबी, उर्दू की क्या

स्थिति होगी जिनमें आजकल इन अंकों का प्रयोग हो रहा है ?

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन--जब आपने भाषा के रूप में हिन्दी को स्वीकार किया है तब उसके अंकों को भी स्वीकार कीजिए। मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि इस विषय पर विचार कीजिए कि क्या हिन्दी पर अंग्रेज़ी अंक लादने का यह उपयुक्त समय है, जबकि देश इस विषय में किन्हीं विचारों से तैयार नहीं है। मैंने अनेक बार कहा है कि मैं हिन्दी को किसी प्रांत पर लादूँगा नहीं, परन्तु आप विधान द्वारा इस लिपि को समस्त राजकीय कार्यों के लिए उन सब पर प्राय: लादे जा रहे हैं, जो नागरी लिपि द्वारा अपना कार्य करते हैं। मैं आपसे कहता हूँ कि आप अपना हाथ वहीं रोक लें। प्रधान मंत्री ने बारम्बार कहा है कि भाषाएँ स्वयं विकसित होती हैं और उनका जन्म एक दिन में नहीं होता। यह उन्होंने अनेक बार कहा है। (**एक कण्ठध्वनि**--वे ठीक हैं।) वे ठीक कहते हैं। भाषाएँ विकसित होती हैं। परन्तु अंक भी विकसित होते हैं। (**अंतर्बाधा**) अंक भी स्वयं विकसित होते हैं और विकसित हुए हैं। (**अंतर्बाधा**) अंक लिपि के साथ ही विकसित हुए हैं। लिपि भी उसी भाषा के समान ही विकसित होती है, जिसमें उसका प्रयोग होता है। लिपि का जन्म एक दिन में नहीं होता। उसका सर्वांगीण विकास हुआ है--स्वर, व्यंजन और अंकों के साथ। वह एक कलापूर्ण सम्पूर्ण वस्तु है। आप इस सम्पूर्णता के मुख पर कोई चिप्पी नहीं लगा सकते। आज आप कहते हैं कि नागरी अंकों को निकाल दो। आप यह भी कह सकते हैं--यद्यपि आज आप यह नहीं कह रहे हैं--स्वरों को निकाल दो, अंग्रेज़ी स्वरों का प्रयोग करो और केवल हिन्दी व्यंजनों को ही रहने दो। मैं कहता हूँ कि आप अप्राकृतिक कुरूपता उत्पन्न करेंगे।

माननीय श्री एन० गोपाल स्वामी आयंगर--यह तो हास्य-चित्र है।

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन--मेरे मित्र कहते हैं कि यह तो हास्य-चित्र है। स्वरों को हटाने की अनर्गलता को वह देख रहे हैं। जहाँ तक हम लोगों का सम्बंध है, हमें अंकों के हटाने में भी अनर्गलता दिखलाई पड़ती है। इससे किसी को कोई लाभ नहीं होता। आप हमसे ऐसी वस्तु छीन रहे हैं जिससे आप धनी नहीं होते, किन्तु हम निश्चय ही निर्धन हो जाते हैं।

हमारे अंक हमारी प्राचीन सम्पत्ति हैं। यह भी कभी कहा गया है कि अंग्रेज़ी के यह अंक हमारे अंक हैं और यह प्रश्न किया गया है कि हम उन्हें फिर क्यों न अपना लें ? मानो हमारे अंक खो गए थे और हम उन्हें फिर से प्राप्त करने जा रहे हैं ! ऐसी कोई बात नहीं है। इन अंकों का ज्ञान निश्चय ही हमारे देश से अरब द्वारा यूरोप पहुँचा। हम सब को इसका गर्व है। अन्य कई बातों में भी यूरोप हमारा ऋणी है। परन्तु इसका

यह आशय नहीं कि जो वस्तु हमारे बीच विकसित हुई है, उसका हम परित्याग कर दें और उन वस्तुओं को, जो मूलरूप से यहाँ से गई हैं, उनके परिवर्तित स्वरूप में पुनः ग्रहण कर लें। अपनी आवश्यकताओं के अनुसार उन्होंने उनके स्वरूप में परिवर्तन किए हैं और हमने भी अपने रूपों में अपनी बौद्धिक प्रणाली के अनुकूल परिवर्तन किये हैं। परिस्थितियों और वातावरण के अनुसार सर्वत्र परिवर्तन होते हैं। हमारे देश में भी परिवर्तन हुए हैं। जैसा कि मैंने कहा हमारे अंकों का भी विकास हुआ है। वैदिककाल में वे एक विशेष प्रकार से लिखे जाते थे। फिर परिवर्तन हुए और लगभग १६ शताब्दियों से वे वर्तमान रूप में लिखे जा रहे हैं। क्या हम इन रूपों को छोड़ दें जो इतने लम्बे समय से प्रयोग में आ रहे हैं? मैं कहता हूँ कि अन्तर्राष्ट्रीयतावाद कोई तर्क नहीं है और यह न्याय नहीं है कि इस प्रकार हम अपने लोगों से सहसा उनके अंकों को छोड़ने के लिए कहें।

माननीय श्री आर० आर० दिवाकर—आजकल हम लोग दक्षिण में उनका प्रयोग कर रहे हैं।

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—मैं श्री दिवाकर से यह प्रार्थना करूँगा कि वे धैर्य रखें। उन्हें फिर बाद में बोलने का अवसर मिल सकता है।

देवनागरी की पूर्णता

देवनागरी लिपि के सम्बन्ध में, जिसमें अंक भी सम्मिलित हैं, यह अधिकृत रूप से कहा गया है कि हमारी प्रणाली संसार की वर्तमान सभी प्रणालियों में सबसे अधिक पूर्ण है। मैं आपको एक दो उद्धरण सुनाऊँगा, यद्यपि मेरे पास कई हैं। यह एक, प्रोफेसर मोनियर विलियम्स का, उपस्थित करता हूँ—

"और अब कुछ शब्द देवनागरी अथवा हिन्दू-प्रणाली के सम्बन्ध में कहता हूँ। इसमें यद्यपि दो महत्वपूर्ण वर्णों की कमी है, जो रोमन लिपि में Z (ज़ेड) और F (एफ़) द्वारा प्रगट किए जाते हैं, ...(जिस अभाव की पूर्ति, जैसा कि आपको विदित है, बिंदुओं द्वारा की गई है।) .... तथापि वह कुल मिलाकर सबसे अधिक पूर्ण तथा समस्त ज्ञात वर्णमालाओं में सुडौल है। हिन्दुओं का विश्वास है कि यह सीधे देवताओं से मिली है। अतः उसका नाम देवनागरी है। और वास्तव में पुनीत संस्कृत की सुडौलता के साथ अद्भुत समन्वय इसे मानवीय आविष्कार के स्तर से ऊँचा उठा देता है।"

स्वर्गीय सर आइज़क पिटमैन ने, जो 'ध्वनि-शास्त्र' के बड़े आंग्ल-आविष्कारक थे, कहा है:

"यदि संसार में कोई भी वर्णमाला सर्वाधिक पूर्ण है, तो यह हिन्दी की है।"

मैं अन्य उद्धरणों को नहीं पढ़ूंगा।

कुछ मित्रों का सुझाव था कि रोमन लिपि अपनायी जाय। उनके लिए यह उचित है कि वह उन उद्धरणों पर विचार करें जो मैंने अभी पढ़े हैं। मेरा विचार है कि सम्भवतः, जब हमारा देश शक्तिशाली बनेगा, यूरोपीय जातियाँ स्वतः हमारी वर्णमाला के विशेष गुण को जानने की ओर आकर्षित होंगी। हमारी भाषा को रोमन लिपि देने का प्रश्न १९वीं शताब्दी में भी उठाया गया था। इंगलैंड के कुछ विद्वान यहाँ के लोगों को रोमन लिपि के माध्यम से शिक्षा देना चाहते थे। इस पर लम्बा विवाद चला था और अन्त में ब्रिटिश सरकार ने निर्णय किया कि रोमन लिपि का प्रयोग इस देश में लाभकारी न हो सकेगा और नागरी लिपि सबसे अधिक उपयुक्त है। अब हमारी भाषा को रोमन रूप देने के विचार करने के दिन चले गए। मुझे आशा है कि इस प्रश्न पर अधिक बल न दिया जायगा।

संस्कृत—एक भाषा

संस्कृत के स्वीकार किये जाने के सम्बंध में भी, श्रीमन्! कुछ कहा गया है। मैं संस्कृत-प्रेमियों के सम्मुख अपना शीश झुकाता हूँ। मैं भी उनमें से एक हूँ। मेरी संस्कृत से अनुरक्ति है। मेरा विचार है कि इस देश में जन्म लेने वाले प्रत्येक भारतवासी को संस्कृत सीखनी चाहिये। संस्कृत में हमारी पुरातन परम्परागत सम्पत्ति सुरक्षित है। किन्तु आज मुझे ऐसा प्रतीत होता है—यदि उसे अपनाया जा सके तो मुझे प्रसन्नता होगी और मैं उसके पक्ष में मत दूंगा—किन्तु मुझे प्रतीत होता है कि यह व्यावहारिक प्रस्थापना नहीं है कि संस्कृत को राजकीय भाषा स्वीकृत किया जाय।

श्री लक्ष्मीकान्त मैत्र—पन्द्रह वर्ष के पश्चात् यह बिल्कुल ठीक हो जायगी यद्यपि आज नहीं है।

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—मैं नहीं समझता कि आज हमारे लिए अपने संविधान में यह कहना संभव होगा कि हिन्दी के स्थान पर संस्कृत को रखना चाहिए। मैं समझता हूँ कि सबसे व्यावहारिक विचार हिन्दी को राजकीय कार्यों की भाषा स्वीकार करना है।

श्री महावीर त्यागी—श्रीमन्! अंकों के सम्बंध में आपका क्या संशोधन है?

मध्य मार्ग

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—अतएव मेरा निवेदन है कि इस सर्वांगपूर्ण देवनागरी लिपि में, जो अनादिकाल से चली आ रही है, हमें हिन्दी को राजकीय भाषा बनाना चाहिए। यह उचित नहीं है कि एकाएक, जबकि जनता को इस विषय का ज्ञान नहीं है, और न यह विषय ही पर्याप्त समय तक उसके सामने रहा है, संविधान सभा यह निर्णय करदे कि उस लिपि से नागरी अंक पृथक् कर दिये जायँ और उनके स्थान पर तथा-कथित अन्तर्राष्ट्रीय अंक अथवा अंग्रेजी अंक रख दिए जायँ। दक्षिण भारत के सदस्य अंग्रेज़ी अंकों के प्रयोग के प्रति कुछ भावुक हैं, क्योंकि वे उन्हें अपनी भाषाओं में प्रयुक्त करते हैं। मैं शान्तिप्रिय व्यक्ति हूँ। मैं यथासंभव कोई झगड़ा नहीं करना चाहता।

मेरे मित्र डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी ने मुझसे एक प्रकार की व्यक्तिगत अपील की है। मैं इसके लिए उनका आभारी हूँ। मेरी भी इच्छा है कि हमारा भाषा सम्बन्धी प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हो सके। इसी अभिप्राय से, यद्यपि मेरी प्रबल भावना है कि देवनागरी अंकों के विषय में किसी प्रकार का हस्तक्षेप न किया जाय तथापि अपने दक्षिण के मित्रों की इच्छा पूर्ति के लिए एक सुझाव प्रस्तुत करता हूँ। मुझे आशा है कि आपके लिए उसे स्वीकार करना संभव होगा। मैं कहता हूँ, पन्द्रह वर्षों तक देवनागरी लिपि के भारतीय और अन्तर्राष्ट्रीय दोनों प्रकार के अंकों को मान्यता दे दी जाय और फिर राष्ट्रपति, अथवा सरकार, समय-समय पर निर्णय करें कि किस कार्य में एक प्रकार के अंकों का प्रयोग हो और किस कार्य में दूसरे प्रकार के अंकों का प्रयोग हो। सरकारी कार्य कई वर्षों तक अंग्रेज़ी में होगा। कुछ मित्रों ने, विशेषकर श्री टी० टी० कृष्ण-माचारी ने, सुझाया है कि सांख्यिकी, हिसाब की वहियों तथा बैंकों के कार्यों के लिय अन्तर्राष्ट्रीय अकों के प्रयोग की अनुमति दी जाय। मैंने देखा कि वे इस सम्बंध में बहुत उत्सुक थे। अतएव मैंने एक उपवाक्य में यह रखा है कि जहाँ तक इन विषयों का सम्बन्ध है, इनमें १५ वर्ष की पूरी अवधि तक केवल अंग्रेज़ी भाषा का प्रयोग हो। इस प्रकार अन्त-र्राष्ट्रीय अंकों को रखने का मुख्य प्रयोजन अंग्रेज़ी भाषा के प्रयोग से ही सिद्ध हो जायगा, जिसमें अंग्रेज़ी अंकों का प्रयोग तो होगा ही। मैं नहीं समझता कि कोई भी यह चाहता है कि साधारण हिन्दी पुस्तकों के प्रकाशन में अंग्रेज़ी अंकों का प्रयोग हो। पर यह भी मैंने सरकार पर छोड़ दिया है। यदि सरकार किसी कार्य विशेष के लिए अंग्रेजी अंकों का प्रयोग करना चाहती है तो वह ऐसा कर सकती है। आवश्यकता पड़ने पर ही

वह केवल हिन्दी अंकों का प्रयोग करें। मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप इस मध्य मार्ग को स्वीकार कर लीजिए और यह आग्रह मत कीजिए कि सदा सर्वदा के लिए देवनागरी अंकों के स्थान पर अन्तर्राष्ट्रीय अंकों का ही प्रयोग होना चाहिए। (अन्तर्बाधा) मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि उस प्रस्ताव को यहाँ स्वीकार न कीजिए; क्योंकि ऐसा करके आप हिन्दी के व्यवहार करने वालों के प्रति बहुत कठोरता करेंगे। उनके मन इस प्रकार के परिवर्तन के लिए तनिक भी तैयार नहीं हैं। (अन्तर्बाधा) देवनागरी को राष्ट्रलिपि और हिन्दी को राष्ट्रभाषा स्वीकार कर लेने के अनन्तर हम सब लोगों के लिए सम्भव होगा कि सम्मेलनों में भाग लेकर निश्चय करें कि देवनागरी लिपि में किन परिवर्तनों की आवश्यकता है। हमारी पद्धति पूर्ण है, किन्तु कुछ अक्षरों के रूपों में परिवर्तन करने की आवश्यकता है। और कुछ नए अक्षर भी जोड़ने पड़ेंगे। मेरा निवेदन है कि हम सबके लिए वर्तमान नागरी लिपि को स्वीकार कर लेने के बाद यह सम्भव होगा और विशेषकर भारत सरकार के लिए यह आवश्यक होगा कि वह लिपि और अंकों में वर्तमान समय की आवश्यकताओं के अनुसार परिवर्तनों पर विचार करने के लिए सम्मेलन बुलावे। प्रधान मन्त्री जी ने यह कहा कि छापे की सामग्री, कम्पोज़ करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय अंक अधिक उपयुक्त हैं। उनके प्रति आदर प्रकट करते हुए मेरा कथन है कि उनको प्रेस के कामों के बारे की जानकारी नहीं है। छापे के काम करने वालों में से जिन लोगों के सम्पर्क में मैं आया हूँ, उनका कहना है कि उनके लिए हिन्दी या अंतर्राष्ट्रीय अंकों के प्रयोग में कोई अन्तर नहीं पड़ता। कम्पोज़ करने का सबसे अच्छा काम मोनोटाइप या लीनोटाइप यंत्रों पर होता है। मेरा तो निवेदन है कि हमारे अंक अधिक कलापूर्ण हैं और हमारे अक्षरों के स्वरूप के अनुरूप हैं। मैं आपसे इस मध्यम मार्ग को उसी भावना से स्वीकार करने की प्रार्थना करता हूँ जिससे प्रेरित होकर मैंने यह प्रस्ताव आपके सम्मुख रखा है। मैं आपसे और अधिक कटुता बचाने का अनुरोध करता हूँ। अन्यथा यह बात यहीं पर समाप्त नहीं हो सकती क्या आप समझते हैं कि इस बात पर आन्दोलन नहीं होगा? यह बात उन लोगों के हृदयों में अवश्य खटकेगी जो इन अंकों का प्रयोग करते आए हैं। और उनसे प्रेम करते हैं—चाहे वे हिन्दी भाषी हों या मराठी भाषी हों या गुजराती भाषी हों। हम आपको तमिल या तेलुगू लिपियों में तनिक भी हस्तक्षेप नहीं कर रहे हैं, किन्तु आप यहाँ हमारी नागरी लिपि में हस्तक्षेप कर रहे हैं।

श्री एल० कृष्णस्वामी भारती (मद्रास, साधारण)—यह तो केवल राजकीय प्रयोजनों के लिए ही है।

माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन—मैं जानता हूँ कि यह केवल

भारत सरकार के शासकीय प्रयोजनों के लिए है। किन्तु यदि एक बार भारत सरकार यह आरम्भ कर देती है तब यह निश्चय ही निचले स्तरों में उतरेगी क्योंकि सरकार समस्त कार्यवाहियों का केन्द्र है। इसी कारण से हम इस पर आपत्ति करते हैं। यदि आप कृपया मेरी बात सुनेंगे तो अत्यन्त विनम्रता से मैं आपसे प्रार्थना करूँगा कि मैंने जो मध्यम मार्ग आपके सम्मुख उपस्थित किया है, उसे आप स्वीकार करें और मेरे संशोधनों को मान लें।

३

खाद्य स्थिति

१८ नवम्बर १९५२ को लोकसभा में तात्कालिक खाद्य मन्त्री श्री रफी अहमद किदवई के इस प्रस्ताव पर बोलते हुए कि खाद्य स्थिति पर विचार किया जाय।

उपाध्यक्ष महोदय! मैं इस प्रश्न पर उसी रास्ते से बहस नहीं करूँगा जिस रास्ते को हमारे अधिक सदस्यों ने अपनाया है। उस रास्ते पर भी मैं चलने का प्रयत्न करता, परन्तु उसमें इतना समय लग जायगा कि मैं जो मुख्य मौलिक बात निवेदन करना चाहता हूँ उसके ऊपर बल नहीं आ सकेगा। इसलिये मैं एक दो प्रश्नों की ओर ही आपका ध्यान दिलाना चाहता हूँ।

बूढ़ी दादी की गृहस्थी

हमारे प्रधान मन्त्री ने आज एक कुछ मज़ेदार बात कही। उन्होंने अंग्रेज़ी में बोलते हुए कहा कि हम देश भर के लिये 'हाउस कीपिंग' (गृहस्थी संचालन) कर रहे हैं। बात सुनने में बड़ी अच्छी लगी। देश भर के लिये हाउस कीपिंग करना अच्छा आदर्श है। बूढ़ी दादी कहती है कि हमारा तो बड़ा भारी कुटुम्ब है, हम सब कुटुम्ब को रोटी देंगी, सब कुटुम्ब की रसोई की चिन्ता करेंगी। देश भर की हाउस कीपिंग ऐसी ही बात है। कुटुम्ब भर की, इस देश भर के कुटुम्ब के चूल्हों की चिन्ता यदि यह गवर्नमेंट कर सकती तब तो बहुत ही सुन्दर व्यवस्था होती। परन्तु वास्तविकता यह है कि वह सब चूल्हों की चिन्ता नहीं कर सकती है। और वह इस बात का दायित्व, इस बात की ज़िम्मेदारी, भी नहीं लेती कि हम हर पुरुष को और हर स्त्री को रोटी पहुँचायेंगी। आज तक उसने कभी दायित्व नहीं लिया। वह प्रयत्न करेगी यह कहा, परन्तु हमारे देश में कोई आदमी भूखा नहीं रहने पायेगा इसका कोई दायित्व गवर्नमेंट ने नहीं लिया। यह आप भूलिये नहीं। यह मौलिक बात है। जब लोग इस तरह का चित्र खींचते हैं कि लोग इधर भूखों मर रहे हैं, उधर मर रहे हैं, उसके यह मानी नहीं हो सकते कि नियन्त्रण या विनियन्त्रण की नीति के कारण ऐसा है। उस स्थिति के दूसरे कारण हैं। अगर यह गवर्नमेंट यह ज़िम्मेदारी लेने के लिये तैयार होती कि हम हर एक की चिन्ता करेंगे, किसी को बेकार नहीं रहने देंगे, तब तो उन दलीलों में वर्तमान विषय से कोई सम्बन्ध होता, नहीं तो वह असंगत हैं, उनका उस प्रश्न से कोई

सम्बन्ध नहीं है जो इस समय विचाराधीन हैं।

मूल्य-नियन्त्रण से अनैतिकता

मैं इस कंट्रोल या डीकंट्रोल के प्रश्न को या कहाँ तक नियंत्रण हो, किस अंश तक अनियंत्रण रहे—इसको इस दृष्टि से देखता हूँ कि हमारी योजना हमारे समाज के स्तर को ऊँचा करती है या उस को नीचा करती है। मेरे सामने यह मुख्य प्रश्न होता है। हमें एक रोटी की जगह सवा रोटी मिलती है, इसको मैं जीवन के लिये गौण मानता हूँ। यह सही है कि हम रोटी खाते हैं और रोटी की बदौलत जीते हैं। लेकिन रोटी, रोटी, सुबह से शाम तक रोटी, यह क्या है ? हम मनुष्य हैं या पशु हैं कि कुत्ते की तरह जहाँ भी रोटी मिली दुम हिलाने लगे। हमारे और भी काम हैं। हमें देखना है कि गवर्नमेंट जो काम करती है उससे हमारा नैतिक तल गिरने तो नहीं पाता है। मैं इसका विरोधी नहीं हूँ कि गवर्नमेंट बूढ़ी दादी बन कर सब के चूल्हों की चिंता करे। आप इसे उठाइये, अगर आप में शक्ति है। लेकिन आप बूढ़ी दादी तो बनें और साथ ही साथ आप ऐसे गुमाश्तों को रखें जो आप की मंशा पूरी करने के बजाय समाज के स्तर को अधिक नीचा करें इससे देश गिरता है। मैंने जो देखा है, वह मैं अपने अनुभव की बात कहता हूँ। आप की जो पुरानी नियन्त्रण की नीति थी उसमें आप ने मूल्यों को बांधा था। अमुक वस्तु आपके निश्चित मूल्य से अधिक पर न बिके, यह आप की नीति थी। उसका क्या परिणाम हुआ ? चारों ओर बेईमानी, न केवल बेचने वालों की तरफ़ से—वह तो उसके आदी हैं लेकिन खरीदने वालों की तरफ़ से भी होने लगी।

मैं अपने अनुभव की एक मिसाल देता हूँ। मैं एक संस्था का अध्यक्ष हूँ। उस संस्था के पास कुछ भूमि है, उस भूमि में कुछ चना बोया गया। वह भूमि पंजाब में पानीपत के पास है। हमारे प्रबन्धक ने आकर मुझ से कहा कि हमारे पास चना हुआ है, उसे हमें बेचना है। चारों ओर हमारा चना १७ रुपये मन मांगा जा रहा है और चना १७ रुपये मन बिक रहा है। पंजाब के बड़े-बड़े खेतिहर लोग हैं, उन में एक एम० एल० ए० भी हैं, वह सब १७ रुपये मन चना बेच रहे हैं। वह बता कर कि हम से भी खेत के ऊपर १७ रुपये मन मांगा जा रहा है, मेरे प्रबन्धक ने पूछा कि क्या मैं उसको इस भाव पर बेच दूं। उस समय गवर्नमेंट का निर्ख़ १२ रुपये मन का था। दिल्ली, पंजाब और उत्तर प्रदेश में शायद दो चार आने का फ़र्क रहा हो। मैंने उससे कहा कि अगर तुम १७ रु० मन बेचोगे तो वह तो गवर्नमेंट के नियम के विरुद्ध होगा। तुम हम को भी ब्लैक मार्केटयर बना दोगे; तब उसने कहा कि फिर पाँच रुपये प्रति मन घाटा

उठा कर आप खेती तो नहीं कर सकते। मैंने उससे कहा कि खेती हो या न हो, लेकिन हमारी संस्था एक अनैतिक काम करे मैं इसकी इजाज़त नहीं दे सकता। मैंने कहा कि तुम गरीबों को १२ रुपये मन के हिसाब से ही अपना चना बेचो। उसने १२ रुपये मन के हिसाब से बहुत से गरीबों को चना दिया। हां ! इससे हमारी संस्था को घाटा जरूर हुआ। वह दूसरी बात है। वह फिर मेरे पास आया और उसने कहा कि इस तरह से तो काम नहीं चलेगा, आप हमको भैंस खरीद दीजिए, तो हम उसको १२ रुपया मन का चना खिला सकेंगे और हम अपना दूध बिक्री के वास्ते दिल्ली भेज देंगे। उसने मुझे बतलाया कि इस तरह कुछ बचत हो जायगी और मैंने उसके सुझाव को स्वीकार कर लिया। यह मैं आपको एक उदाहरण दे रहा हूँ, जो स्वयं अपने ऊपर बीती बात है। चारों तरफ़ तो १७ रुपये चने का भाव है, खेत के ऊपर १७ रुपये का भाव है और खेतिहर खेत पर १७ रुपये के हिसाब से चना बेच रहे हैं परन्तु दिल्ली में केन्द्रीय गवर्नमेंट यह आशा करती है कि चना १२ रुपये मन पर बिकेगा ! यह क्या कोई अक़्ल की बात है ? मेरी तो इस बारे में कुछ मिनिस्टरों से भी बात हुई। एक ने कहा कि हम भी उसी भाव खरीदते हैं जिस भाव पर बाज़ार में चना बिक रहा है। बाज़ार भाव उस समय यहाँ पर २०-२१ रुपये मन का था।

मैं एक दूसरी संस्था को जानता हूँ। वहाँ छात्रों को चना खिलाना पड़ता था, वहाँ के प्रबन्धक २०-२१ रुपये मन चना लेते थे, क्योंकि राशन में केवल ६ छटांक था और छः छटांक में वहाँ के तगड़े लड़कों का गुज़ारा नही होता था। लड़के लगभग ८-९ छटांक खाते हैं, पूरा भोजन देने को संस्था के प्रबन्धक चना बाज़ार भाव पर खरीदते थे। कुछ दिनों बाद मैंने उनसे कहा कि यह चना आप कैसे खरीदते हैं, यह तो अनुचित और नियम विरुद्ध है। वह इस प्रश्न में कुछ घुसे तब मालूम हुआ कि वह बाज़ार में चना खरीदते हैं परन्तु किताबों में मटर लिखी जाती है। व्यापारी अपनी इस तरह बचत करते थे, क्योंकि मटर के ऊपर आपका कोई दाम नियत नहीं था। यह बात मैंने आपको मिसाल के तौर पर बतलाई।

ऐसे ही गुड़ के बारे में हालत थी। गुड़ का भाव गवर्नमेंट ने उस समय १९ रुपये मन निश्चित किया था। आज तो उसका भाव बहुत गिर गया है। मैं उस समय की बात बतलाना चाहता हूँ जब गुड़ का भाव १९ रुपया मन निश्चित था। एक रोज़ मुझे लखनऊ में खांसी आ रही थी, मैं चीनी नहीं खाया करता और न ही चाय का सेवन करता हूँ। मेरे आदमी ने कहा कि आपके लिए तुलसी और

अदरक की चाय बनाई जाय, उसमें गुड़ पड़ता है। नौकर बाज़ार से चार आने का पाव गुड़ ले आया, मुझे जब गुड़ का भाव मालूम हुआ तो मैंने अपने नौकर से कहा कि तुमने चार आने पाव के भाव से गुड़ खरीद कर मुझ को ब्लैक मार्केटयर बना दिया, क्योंकि इस तरह तो गुड़ का भाव चालीस रुपये मन का पड़ा।

श्री किदवई : आपने बेचा नहीं, खाया।

श्री टण्डन : मगर खाने वाला भी तो ब्लैक मार्केटयर हो जाता है। मैंने उस समय के जो मिनिस्टर थे उनको यह बात बतलाई और कहा कि हालत यह है, यह मेरा पाप है और आप मेरे ऊपर मुकदमा चलायें। नौकर की भूल के कारण मैं इस पाप में लिप्त हो गया। मैं यह बात इसलिये कह रहा हूँ कि इस प्रकार के कंट्रोल और नियन्त्रण से समाज गिरता है और उसका भलीं नह होता। गवर्नमेंट जब किसी वस्तु पर कोई सीलिंग प्राइस (अधिकतम दाम) लगाती है तो उसको इतनी बुद्धि तो होनी चाहिए कि वह प्राइस (दाम) ऐसी हो जो चल सके। मुझे ख़ुशी है कि बाद को हमारे मिनिस्टर ने वह सीलिंग प्राइस उड़ा दी। मेरे कहने का मतलब यह है कि जब आप किसी चीज़ का अधिकतम मूल्य निश्चित करते हैं तो आपमें इतनी बुद्धि तो होनी चाहिए कि बैठ कर यह समझें कि किस भाव में यह चीज़ वाक़ई बिक सकती है। आप को इतना तो समझना चाहिये था कि बनिया जो छोटी दुकान लेकर बैठा है, वह हाथरस की मंडी के भाव से तो नहीं बेच सकता। आपने तो १६ रुपये का गुड़ का भाव नियत कर दिया। सम्भव है कि हाथरस में आपको १६ रुपये के हिसाब से मिल जाता, लेकिन वह बनिया जो सड़क के किनारे पर बैठकर बेचता है, वह तो हाथरस की मंडी के भाव से नहीं बेच सकता। नतीजा यह होता है कि वह कुछ बढ़े हुए भाव पर बेचता है और उसकी दुकान से जितने आदमी ख़रीदते हैं वह सब ब्लैक मार्केटयर बन जाते हैं क्योंकि उसकी दुकान से ख़रीदने में १६ रुपये के भाव से ज्यादा देना पड़ता है। मैं कहता हूँ कि आपकी यह नीति देश को बर्बाद करने वाली है, यह कोई नीति नहीं है और जो लोग इस नीति का समर्थन करते हैं, उनको सोचना चाहिए और देश को सम्भालना चाहिए। कोई भी कंट्रोल अथवा नियंत्रण जिसका आप अच्छी तरह से पालन नहीं कर सकते, नहीं रखना चाहिए। मेरी समझ में १००, २००, १०००, २००० या लाख दो लाख आदमियों का भूखा मर जाना अच्छा है इसकी अपेक्षा कि आप चोरी करके लायें और खायें खिलायें। यह देश का पतन है। जो मन्त्रिगण नियन्त्रण के पक्ष में हैं, उनसे मैं कहना चाहता हूँ कि अगर आप बूढ़ी दादी का इन्तज़ाम करते हैं तो उसके लिये आपके हाथों में शक्ति होनी चाहिए।

लेकिन आपके तो हाथ कांप रहे हैं और आपके आदमी बराबर बेईमानी करते रहते हैं। इस कंट्रोल की बदौलत आपके एक एक राशनिंग इंस्पेक्टर को बेईमानी और रिश्वत लेने का अवसर मिलता है। मैं इलाहाबाद की एक छोटी सी मंडी का हाल जानता हूँ। हमारे एक बड़े विश्वसनीय कांग्रेसी कार्यकर्ता ने मुझे कई बार बताया कि हमारे जिले की एक छोटी सी मंडी में एक इंस्पेक्टर रोज लगभग १०० रुपया ऊपर से पैदा कर लेता है। उसकी माहवारी तनख्वाह मुश्किल से सवा सौ या डेढ़ सौ रुपया रही होगी। वह आठ आने प्रति बोरे के हिसाब से, जो मंडी में आता है, व्यापारियों से वसूल करता है। बोरे लाने वाले तो आखिर हमारे व्यापारी भाई होते हैं, जो कहीं भी पैसा देने को तैयार रहते हैं, जहाँ पर उनको पैसा मिलने का रास्ता दिखाई पड़े। लेकिन साथ ही आपके जो आदमी हैं, जिनको आप इस कंट्रोल व्यवस्था को चलाने के लिये नौकर रखते हैं, राशनिंग इन्सपेक्टर्स, प्रोक्योरमेंट इंसपेक्टर्स वह भी बेईमानी करते हैं और नतीजा यह होता है कि भ्रष्टाचार बहुत फैल जाता है। मैं आपसे केवल इतना ही कहना चाहता हूँ और यह सब बतलाने का मेरा उद्देश्य यही है कि आप जो कुछ भी करें, यह सदा ध्यान में रखें कि उससे समाज पर क्या असर पड़ता है और आपका वह क़दम समाज के नैतिक स्तर को किधर ले जा रहा है।

सप्लाई विभाग में रिश्वत

यह ठीक है कि बेईमानी संसार भर में है, बेईमानी हमारे देश में भी है। पुलिस का विभाग सबसे अधिक रिश्वत लेने में मशहूर था, हम यह भी जानते थे कि अदालतों में मुंसरिम और डिग्री नवीस खुला हुआ पैसा लिया करते हैं और हमारे वकीलों को इसका खूब अनुभव है, लेकिन जब से यह सप्लाई विभाग खुला है, मेरा तो अपना यह अनुमान है कि रिश्वत-खोरी में इसने सबको मात कर दिया है।

बहुत आप पक्ष करते हैं कंट्रोल का ! कंट्रोल का मैं हर सूरत में विरोध नहीं करता। लेकिन आप समझें कि जो आप चाहते हैं उसको पूरा करा सकें। अगर आप अधिक सख्ती से दाम बांधेंगे तो आपका बांधा हुआ दाम चलेगा नहीं। मैं मिनिस्टरों से पूछना चाहता हूँ कि अपने हृदय पर हाथ रख क्या वह कह सकते हैं कि उनके घरों में, जिस समय गवर्नमेंट का मूल्य चने के लिए १२ रुपये मन था वह १८ रुपये और १९ रुपये मन नहीं आया ? वह पूछें अपने घर में जा कर, अपने हाउस कीपर से पूछें, अपने यहाँ की औरतों से पूछें।

श्री सी. डी. देशमुख—मैं तो चना खाता नहीं।

श्री टंडन—आप ज़रा अपनी पत्नी से भी पूछिये, आप नहीं खाते तो क्या हुआ।

श्री अलगूराय शास्त्री (जिला आजमगढ़-पूर्व तथा वलिया जिला-पश्चिम)—वेसन के पकोड़े खाते हैं या नहीं ?

श्री टंडन—आपके नौकर हैं, रिश्तेदार हैं, वह खाते हैं या नहीं ? हां ! मैं असम्भव नहीं मानता, मैं मानता हूँ कि वहुत ध्यान अगर आप रखें तो यह ग़लत चीज नहीं होने पायेगी और आप सफल होंगे। परन्तु इतना ध्यान कौन देता है ? जो महत्व के धंधों में लगा हुआ है, वह देखे कि नौकर क्या भाव सामान लाता है यह साधारण रीति से होता नहीं। वास्तविकता यह है कि घर घर में मंहगा खरीदने वाले पड़े हुए हैं। हम केवल व्यापारियों को दोष देते हैं, लेकिन जिन लोगों को खाने का शौक है—जिन्हें खाने के विषय में उदासीनता है उनकी वात और है—लेकिन जो लोग खाने पीने के शौकीन हैं, जो चाहते हैं कि उनको दस चीजें खाने को मिलें, आपको मालूम है कि प्रायः उन सवके यहाँ ग़लत तरीके से सौदा आता है। मैं तो यह निवेदन करता हूँ कि आप व्यापारियों को वहुत अवसर न दें वेईमानी करने का और जो माल के खरीदने वाले हैं उनकी भी संभाल कीजिये। आप उनको लाचार न करें। सव मनुष्य इतनी सख्ती के साथ अपने जीवन विताने के आदी नहीं हैं कि वह हर समय इस वात का ध्यान रखें कि निश्चित मूल्य से अधिक पर कोई वस्तु मोल न ली जाय। वस मैं इस एक दृष्टिकोण पर आपका ध्यान दिलाना चाहता हूँ।

नीति परिवर्तन का स्वागत

आपकी नीति चाहे जो कुछ भी हो, आप कंट्रोल रखना चाहते हों या नहीं, लेकिन आज की नीति में मुझ को यह वात अच्छी लगी कि हमारे देश में जो वेईमानी करने का दस्तूर पड़ गया था उस में इस नीति से कुछ कमी हुई है। यह फ़ायदा तो मैं देख सकता हूँ। हो सकता है कि कहीं कुछ चीजें मंहगी हो गई हों, जैसा कि मेरे कुछ भाई कहते हैं लेकिन यह लाभ मैं प्रत्यक्ष देखता हूँ कि आज अगर हमें किसी चीज़ की ज़रूरत हो तो हम कुछ ज़्यादा पैसा दे कर खरीद सकते हैं—विना किसी सरकारी नियम को तोड़े हुए। फ़ेयर प्राइस दुकानों से वजाय ज़वर्दस्त राशनिंग करने के काम चल जाना चाहिए। जो ग़रीव हैं उनके लिए आप शहरों में वरावर इन्तज़ाम रखेंगे। लेकिन हम सव भूलते हैं कि जिन लोगों को हम राशन के द्वारा मदद देते हैं उनकी तादाद कुल जनता को देखते हुए कितनी कम है। देहातों में तो आप पहुँच ही नहीं पाते। उनकी तादाद वहुत बड़ी है जो लोग देहातों में रहते हैं। जैसा प्रधान मन्त्री ने कहा था एक तरफ़ आप शहर के राशन

की चिन्ता करते हैं, दूसरी तरफ ऐसे लोग हैं जो खुद अनाज बो लेते हैं, यानी किसान। ठीक है, लेकिन जो तीसरी श्रेणी है जिसके पास ज़मीन नहीं है, किसानी नहीं करते और जो शहरों में रह कर तनख्वाह नहीं पाते और मजदूरी नहीं करते उनकी तादाद बहुत बड़ी है। किसानों की अपेक्षा भी कहीं ज़्यादा है। उनकी आप ने क्या चिन्ता की ? उनके पास तो आप पहुँच भी नहीं सकते, उनका इन्तज़ाम भी नहीं कर सकते !

मेरे कहने का सार है कि आप इस एक सिद्धात को न भूलें चाहे कुछ भी हो। मरना जीना तो लगा ही रहता है, जिनकी आप रक्षा कर सकें अवश्य करें, लेकिन यह ध्यान रखें कि आपकी कोई नीति इस तरह की न हो, जिससे समाज का स्तर नीचा हो और जिससे बेचने वालों में बेईमानी बढ़े या जिसमें यह प्रवृत्ति हो कि खरीदार बेईमानी करे। बस, यही मेरा सुझाव है।

●

४

अनुसूचित तथा आदिम जातियाँ

१३ दिसम्बर सन् १९५२ को अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम जातियों के आयुक्त की रिपोर्ट के सम्बन्ध में विचार प्रकट करते हुए

महोदय ! एक पुराने हरिजन सेवक के नाते और कुछ अपने हरिजन सहयोगियों की प्रेरणा से मैं इस रिपोर्ट के विषय पर बोलने खड़ा हुआ हूँ, जिसे परिगणित जातियों और आदिवासियों के विशेष अफ़सर ने उपस्थित की है। स्वभावत: यह रिपोर्ट एक प्रारम्भिक रिपोर्ट है, यह एक चलती हुई वस्तु है, वहुत गहराई न इसमें है और न हम इसकी आशा ही कर सकते हैं । मैं इन विशेष कमिश्नर को, जितना परिश्रम उन्होंने किया है और जिस रीति से उन्होंने प्रश्न को रक्खा है, उसके लिये बधाई देता हूँ । परन्तु यह स्पष्ट है कि अभी हमें प्रतीक्षा क़रनी पड़ेगी और गहरी जांच की आवश्यकता पड़ेगी । इस विषय में, मैंने अभी हाल में पढ़ा है कि एक कमीशन की, जो संविधान के अन्तर्गत बनने वाला है, नियुक्ति शीघ्र होने वाली है । उससे अवश्य हम आशा करेंगे कि वह गहरी दृष्टि से अपने विचार उपस्थित करेगा ।

अछूतपन में सुधार

इस रिपोर्ट से इतना तो मुझे संतोष मिला कि जो मुख्य राज्य हमारे देश में हैं, जिनको भाग क के राज्य कहते हैं उनमें अछूतपन के विषय में सुधार हुआ है । वह होना ही था । इसमें कोई संदेह नहीं है कि हमारे संविधान ने अछूतपन को समाप्त करके एक युग परिवर्तक काम किया है । सुधार तो होना ही था, मैं तो और अधिक सुधार और परिवर्तन की आशा करता था । इसमें कोई संदेह नहीं कि आज हमारे हरिजन कहलाने वाले भाइयों की स्थिति में सुधार हुआ है, उसको देख कर हमारा हृदय प्रसन्न होता है, प्रफुल्लित होता है, परन्तु फिर भी आप जानते हैं और मैं जानता हूँ कि कहीं-कहीं वहुत अनुचित घटनायें अव भी हो रही हैं । वे घटनायें साक्षी हैं इस वात की कि अभी हमारे देश ने अच्छी तरह से संविधान के सिद्धान्त को अपनाया नहीं है । हम आशा करते हैं कि कुछ दिनों वाद वह हमारे देश के अंग में घुस जायगा । परन्तु जान पड़ता है कि अभी उसमें समय लगेगा । उस समय को पास लाना हम सवों का कर्तव्य है ।

हरिजनों के लिए स्वच्छ घर

इस रिपोर्ट में भिन्न-भिन्न प्रदेशों के लिये कुछ छोटे-छोटे सुझाव हैं। मुझे भी एक सुझाव देना है। मैं देख रहा था कि इस ओर किसी का ध्यान गया या नहीं। नौकरी आदि की बात हमारे भाइयों ने की है। कुओं की चर्चा इस रिपोर्ट में भी है। कुओं के बारे में बड़ी असुविधा है, यह मैं जानता हूँ। जो बातें कही गयी हैं मुझे उनको दोहराना नहीं है। उनके बारे में तो केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि हमारी गवर्नमेंट सहानुभूति के साथ उन बातों पर ध्यान देगी। शिक्षा के विषय में अधिक सहायता की आवश्यकता है। जितनी भी सहायता हम दे सकें दिल खोल कर दें।

मुझे जो सुझाव देना है वह हरिजनों के रहन-सहन के बारे में है। बहुत कुछ अछूतपन रहन-सहन के कारण होता है। एक समय था जब मैं स्वयं हरिजनों के बीच काम करता था। तब मैं अपने कार्यकर्त्ताओं से कहा करता था कि वस्त्र की गन्दगी आधा अछूतपन उपस्थित करती है। साबुन अगर हर हरिजन के घर में हो तो आधा अछूतपन तो वैसे ही दूर हो जाय। आज यह पुरानी बात हो चुकी है। यह बात आज से पच्चीस या छब्बीस वर्ष पहले की है। आज कार्यकर्त्ताओं से मैं वही बात दुहराऊंगा नहीं। आज मैं गवर्नमेंट को और कार्यकर्त्ताओं को भी दूसरा सुझाव दे रहा हूँ। नगरों और गांवों में जो रहन-सहन की व्यवस्था है वह बहुत गिरी हुई है, अब उस पर ध्यान देने की आवश्यकता है। अछूतपन को हटाने का एक यह मुख्य रास्ता है। इस रिपोर्ट में मुझे इसकी चर्चा नहीं दिखाई दी। मैं गांवों में देखता हूँ किस प्रकार से हरिजन रहते हैं। बस्तियों में और नगरों में देखता हूँ कि जहाँ गंदी से गंदी जगह है, जहाँ सर्वसाधारण के लिए शौचालय बने हुए हैं उनके पास हमारे उन हरिजनों को, जो भंगी का काम करते हैं, बसाया जाता है। कौन नगर ऐसा है जहाँ पर यह नहीं हो रहा है ? इसकी जानकारी के लिए किसी रिपोर्ट की आवश्यकता नहीं है, किसी विशेषज्ञ की आवश्यकता नहीं है, केवल काम करने की आवश्यकता है। गवर्नमेंट को हमें मजबूर करना है कि वह इस स्थिति को सुधारे। मेरा सुझाव यह है कि तुरन्त ही, जब तक आप देश भर के घरों की स्थिति को ठीक कर पायें उसके भी पहले, हरिजनों की स्थिति को संभालिए। अर्थात् हर ग्राम में हर हरिजन कुटुम्ब को निश्चित रूप से घर के लिए जगह दीजिये। मैं कह सकता हूँ कि हर गांव में जमीन है। अगर कोई यह कहे कि ज़मीन नहीं है तो यह झूठी बात होगी। मैं देश को गवर्नमेंट के अफ़सरों से अधिक जानता हूँ। मैं कह सकता हूँ कि आज प्रायः कोई भी ऐसा गांव नहीं है जहाँ हरिजनों

के वसाने के लिये भूमि न मिल सके। आपको चार सौ, पांच सौ वर्ग गज भूमि हर कुटुम्ब के लिये देनी चाहिये। इस विषय में मेरा यह विशेष कहना है कि हर घर के साथ इतनी भूमि हो जहां छोटी सी वाटिका लग सके। मैं चाहता हूँ कि हरिजन कुटुम्ब अच्छी तरह से रहें। बराबरी के साथ रहें। इसके लिये यह जरूरी है कि आप हर गांव के भीतर उनको वसा दें। यह नहीं कि उनके लिये अलग वस्तियां हों। मैं उनको अलग रखना नहीं चाहता। आप उनको वरावर में ज़मीन दें जिसमें सुन्दर घर बन सकें और अच्छी सफ़ाई रहे। नगरों में भी ऐसा ही हो सकता है। अगर नगर के वहुत भीतर भूमि न दे सकें तो थोड़ा हट कर दीजिये। लेकिन साफ़ सुथरी इतनी ज़मीन दीजिये, जिसमें वह रह सकें और छोटी वाटिका रख सकें।

हमारे देश ने अवश्य ही इन हरिजनों के साथ न्याय नहीं किया है। गांधी जी किस तरह से इनके लिये आंसू वहाया करते थे, यह वे लोग जानते हैं जो उनके पास रहते थे। जैसा इस रिपोर्ट में दर्ज है, उन्होंने कहा था कि मुझे मोक्ष नहीं चाहिये, मैं तो बार बार जन्म लेना चाहता हूँ इसलिये कि मैं हरिजनों में आकर रहूँ, मैं हरिजन होऊँ, मैं ब्राह्मण नहीं बनना चाहता, ठाकुर नहीं बनना चाहता, मैं केवल हरिजन बनना चाहता हूँ, हरिजन के घर में मेरा जन्म हो। एक ओर उनकी यह आकांक्षा थी, दूसरी ओर उनका यह कहना था कि हिन्दू समाज ने, हिन्दू जाति ने उनके साथ वहुत बुरा वर्ताव किया है। उसको इस पाप का प्रायश्चित करना चाहिये। यह सिद्धान्त उनके काम करने के थे।

युग परिवर्त्तन—हमारा कर्त्तव्य

जैसा डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी ने कहा सिद्धान्त रूप से हमारे यहाँ सब बराबर माने गये हैं लेकिन व्यवहार में हरिजनों के साथ बुरा सलूक हुआ है, कम से कम इधर हज़ार दो हज़ार वर्ष में। उसका हम लोगों को प्रायश्चित करना है। उनको ऊँचा उठाना है। हमारे समाज में एक ओर जन्म से वर्ण व्यवस्था को मानने वाले लोग हुए हैं, उनका सिद्धान्त है 'जन्मना वर्णः' अर्थात् जन्म से ही वर्ण होता है, जो जिस जाति में पैदा होता है वहीं रहता है। जहाँ एक ओर यह सिद्धान्त रहा है वहाँ दूसरी ओर वहुत से संतों ने, महात्माओं ने, ऋषियों ने 'कर्मणा वर्णः' के सिद्धान्त को माना है। इस सिद्धान्त का अनुमोदन किया है कि कर्म से ही ब्राह्मण होता है। ब्राह्मण बाप का बालक ब्राह्मण हो—यह आवश्यक नहीं है। हमारे यहाँ कबीर और रविदास की जो इज्जत है, जनता में और पढ़े लिखे लोगों में, वह ऋषियों की इज्ज़त से कम नहीं है। दोनों सिद्धान्त हमारे यहाँ रहे हैं। आज आवश्यकता यह है कि इस दूसरे सिद्धान्त को, बराबरी के

सिद्धान्त को, हम ऊँचा करें। गीता में भी यह वाक्य आता है कि सब बराबर हैं। इस सम्बन्ध में पौराणिक कथायें भी हैं। एक कथा है महाभारत के सम्बन्ध में, कि युधिष्ठिर ने यज्ञ किया, लेकिन यज्ञ का घंटा नहीं बजता था। घंटा इसलिये नहीं बजता था कि एक हरिजन भक्त नहीं आया था। उसके आने पर घंटा बजा। इस प्रकार से हमारे यहाँ दोनों सिद्धान्त हैं। दोनों प्रकार की कथायें चली हैं। आज युग परिवर्तन का समय है। हमें एक नया युग उपस्थित करना है। हम सबों को मिल कर काम करना है। हमें जनता को उत्साह दिलाना है। गवर्नमेंट इस विषय में बहुत कुछ काम कर सकती है। हरिजनों के लिये वह रुपया दे सकती है। बजट में जो रुपया रखा गया है उसको यदि दूना तिगुना कर दिया जाय तो मेरा विश्वास है कि कहीं भी कोई आपत्ति करने वाला नहीं होगा। उनके बच्चों को शिक्षा देने के लिये, उनको घर देने के लिये गांव-गांव में, देश भर में, आप ध्यान दें। इस प्रकार से चतुर्मुखी कार्य करके उनके जीवन को ऊँचा करना हमारा कर्तव्य है।

मैं फिर रिपोर्ट लिखने वाले अफ़सर महोदय को बधाई देता हूँ। मैं समझता हूँ कि इससे कई गुना कार्य वह कमीशन करेगा जो नियुक्त होने वाला है। तब गवर्नमेंट को अधिक अवसर मिलेगा। लेकिन इस अवसर की प्रतीक्षा आप तीन वर्ष तक न करें। यह मैं नहीं चाहता कि आपको एक बहाना मिल जाय कि कमीशन बना है, वह कमीशन डेढ़, दो, ढाई वर्ष के बाद रिपोर्ट दे तब आप कार्य आरम्भ करें। इन तीन वर्षों में आप कमीशन की रिपोर्ट आने की राह न देखें। आवश्यकता है कि हम तुरन्त काम आरम्भ करें। जो कार्य हमारे सामने है, उसके लिये किसी रिपोर्ट की ज़रूरत नहीं है, आप उसको तुरन्त अपने हाथ में ले लें।

●

५

प्रथम पंचवर्षीय योजना

१८ दिसम्बर सन् १९५२ को लोकसभा में स्वतंत्र भारत की प्रथम पंचवर्षीय योजना के प्रतिवेदन पर अपने विचार प्रकट करते हुए

महोदय ! जो रिपोर्ट पंचवर्षीय योजना के सम्बन्ध में उपस्थित की गई है उस पर परिश्रम किया गया है और उसमें देशभक्ति और देश की चिन्ता अच्छी तरह से प्रकट हो रही है। परन्तु मेरे ऊपर यह प्रभाव पड़ा है कि देशभक्ति और बुद्धि की कमी न होते हुए भी जिस दिशा में रिपोर्ट दी गई है उससे हमारे देश में कोई नई सृष्टि, नई सुन्दर रचना, जिसको हम देखना चाहते हैं, नहीं आने वाली है।

नव ग्राम-निर्माण

मैं यह आशा करता था और अब भी मैं, अपने इन भाइयों को जिन्होंने यह रिपोर्ट लिखी है, यह सुझाव देता हूँ कि वे गांवों की तरफ अधिक ध्यान देंगे, गांवों की एक नई रचना करेंगे। मैंने पहले एक बार यह रखा था और इस समय यह सुझाव देता हूँ कि सबसे बड़ी आवश्यकता इस समय यह है कि नये गांव बसाये जायें, या पुराने गांव इस प्रकार से ठीक किये जायें, कि वहाँ आप से आप एक सौन्दर्य हमें दिखाई पड़े। गांव में मैं कहीं भी जाता हूँ, विशेषकर उत्तरी भारत में, तो मुझे बस्तियां गन्दी दिखाई पड़ती हैं। बड़े मकान भी हैं, बहुत बड़े-बड़े मकान भी हैं—बिहार के जमींदारों के—और उत्तर प्रदेश के जमींदारों के—परन्तु चारों तरफ़ गांव गन्दे बसे हुए हैं। मैं तो सबसे पहले इधर ध्यान देना चाहता हूँ। आप उद्योगों की तरफ ध्यान देते हैं तो दें। लेकिन जहाँ पहले और पीछे का क्रम आता है, वहाँ सबसे पहले मैं इस प्रश्न को रखता हूँ कि आप गांवों को अच्छा बनावें, सुन्दर बनावें। ये गांव जो आज बसे हुए हैं वे, ऐसा मालूम होता है, तीन-तीन सौ चार-चार सौ वर्ष पहले के बने हुए हैं, उस समय के बसे हुए हैं जब लोग डाकुओं से डरते थे, जब वे घुस-घुस कर पास में रहना चाहते थे। उस समय बक्स जैसे मकान या बक्स जैसे मोहल्ले अच्छे समझे जाते थे। यह मुहावरा उत्तर प्रदेश में प्रचलित है कि यह मोहल्ला क्या है बक्स है, यानी मकान घुसे-घुसे पास-पास बसे हुए हैं। इसका परिणाम यह है कि अगर एक घर में बीमारी है तो वह आगे फैलती है। एक घर में अगर आग लगे तो गांव का गांव जलता है। कहीं गलियां

ठीक नहीं हैं। जो छोटी-छोटी गलियां हैं उनमें बच्चे शौच करते हैं, गन्दगी चारों ओर दिखाई देती है। यह स्थिति है। इस स्थिति को तीव्रता के साथ ठीक करने की आवश्यकता है और अगर इस कार्य के लिए हमने दो चार अरब रुपया अलग कर दिया होता तो ठीक होता। आपने, अर्थात् इस रिपोर्ट को तैयार करने वालों ने, २० अरब और ६९ करोड़ रुपये के व्यय की योजना बनाई है। मेरा सुझाव है कि इस २० अरब, ६९ करोड़ रुपये में से अगर आप दो चार अरब रुपया इस काम के लिए दें कि गांव की नई रचना हो तो उसका कहीं अधिक अपेक्षाकृत लाभ होगा। इधर आपने ध्यान ही नहीं दिया। मेरा सुझाव है कि अब भी उधर ध्यान दिया जाय।

वाटिका-गृह

मैं सुझाव देता हूं कि गाँव के प्रत्येक घर के लिए, जो नये गाँव बसते हैं उन में प्रत्येक कुटुम्ब के लिये—पांच सात आदमियों के कुटुम्ब के लिये—आप आधा एकड़ भूमि दें। मेरा सुझाव है कि आधा एकड़ भूमि, लगभग २,४०० वर्ग गज़ भूमि, एक एक घर को आप दें। फिर आप देखें कि कैसी सुन्दर बस्ती बसती है। तब यह आप का क्षय रोग और मलेरिया का प्रश्न ही गांवों में नहीं रहेगा और यह चीज़ें फिर सुनाई नहीं देंगी। दवाइयों पर रुपये खर्च करना बुद्धिमानी नहीं है। बुद्धिमानी यह है कि बस्तियां ऐसी बनाइये कि लोग स्वास्थ्य से रहें और बीमारी का प्रश्न ही न आये। सफ़ाई आप से आप होगी। वहां सड़कें हों, कुछ क़तारें हों, इस तरह से गांव बसाइये। एक-एक घर के बीच में आधा एकड़ जमीन हो। उस घर के चारों ओर वाटिका हो, वृक्ष हों, जिससे सौंदर्य का रूप दिखाई पड़े। सुन्दरता वृक्षों से आती है, हरियाली से आती है, यह तो सब का अनुभव है। हमारे कवि लोग भी जब गान करते हैं सुन्दरता का, बिना हरियाली के वर्णन के उनकी कविता पूरी नहीं हो पाती। मैं स्वप्न देखता हूँ कि हमारे यहाँ इस तरह के घर हों जिनमें हर एक में हरियाली और वाटिका हो। मैंने इस तरह की चीज़ कुछ दक्षिण में तो देखी। घूमते हुए मुझे त्रावनकोर-कोचीन में कुछ ऐसे दृश्य दिखाई दिये। परन्तु उत्तरी भारत में यह नहीं है। क्या बिहार, क्या बंगाल, और क्या उत्तर प्रदेश, कहीं नहीं है। मैं सुझाव देता हूँ कि इस तरह से नई सृष्टि की जाय।

इस क्रम में एक दूसरा गुण और है। आज मेरा कथन यह है कि हमारे देश में वस्तुओं की बरबादी कई दिशाओं में बहुत हैं। वेस्ट-फ़ुलनेस केवल शासन में ही नहीं है। मैं एक मिनट बाद उसकी बात करता हूँ। परन्तु जिन उपयोगी चीज़ों की हम रक्षा कर सकते हैं वह रक्षा हम नहीं

कर रहे हैं। आपका ध्यान भी देश के मल-मूत्र की तरफ़ नहीं जाता; आपका रुपयों पैसों पर ध्यान जाता है, सोने चांदी पर ध्यान जाता है, मगर देश के मल-मूत्र पर ध्यान नहीं जाता। आवश्यकता है कि देश के मल-मूत्र की हम रक्षा करें। उसमें बड़ी सम्पत्ति है। अगर हर एक घर में आप आधा एकड़ भूमि देंगे, जैसा मेरा सुझाव है, तो उस घर का मल-मूत्र वहाँ की मिट्टी में जायगा। छः इंच मिट्टी के नीचे मल-मूत्र सुवर्ण होता है।

मेरा यही सुझाव नगरों के लिए भी है। आज की तरह उनको न रखिये। आधा एकड़ आप वहाँ नहीं दे सकेंगे। परन्तु यह सिद्धान्त स्मरण रखने के योग्य है कि प्रत्येक घर के साथ वाटिका हो। यह कहना कि भूमि कहाँ है बिलकुल व्यर्थ की बात है।

भूमि है हर जगह पर, हर गांव के साथ। रास्ता निकालने की बात है। हर गांव के साथ भूमि मिल सकेगी।

अधिकतम मूल्य निर्धारण—बेईमानी का उत्पादन

बहुत ब्यौरों में तो मैं जा नहीं सकता, यह इतनी बड़ी रिपोर्ट है। परन्तु दूसरा मोटा सुझाव मेरा यह है कि आपने इस रिपोर्ट में फिर कंट्रोल की चर्चा की है और कंट्रोल की चर्चा करते हुए **सीलिंग प्राइसेज** (यह रिपोर्ट के शब्द हैं) रखने की बात की है। **सीलिंग प्राइसेज** अर्थात् निश्चित अधिकतम मूल्य बांधने के क्रम का हमें खूब अनुभव हो चुका है और कौन ऐसा बचा होगा जिसको इसका अनुभव न हुआ हो। घर-घर में बेईमानी हुई है **सीलिंग प्राइसेज** की वजह से। जाति की जाति और नगर के नगर बेईमान बनाये गये हैं। मैंने एक रोज उदाहरण दिया था कि खुले बाज़ार में चना जिसकी सीलिंग प्राइस गवर्नमेंट की ओर से १२ रुपये मन है वह १९ और २० रुपये मन बिक रहा था। इसी तरह गुड़ का भी मैं यहां पर उदाहरण दे चुका हूँ। और भी कितने ही उदाहरण मैं आपको दे सकता हूँ कि आप ने एक वस्तु की सीलिंग प्राइस रख दी, अर्थात् इससे अधिक भाव पर वह वस्तु न बिक पायेगी, परन्तु परिणाम उसका यह हुआ है कि उससे अधिक भाव पर वह खुले बाज़ार में बिकी। आपकी आंखों के सामने बिकी लेकिन आप में साहस नहीं है कि आप उस अपराध करने वाले के विरुद्ध कोई मुकदमा चला सकें। दो मिनिस्टर जो यहाँ इस समय बैठे हुए हैं, मैं उन से पूछता हूँ कि उनको इस चीज का अनुभव है या नहीं। मैं चाहता था कि इस वक़्त फ़ाइनेंस मिनिस्टर (वित्त-मंत्री) यहां पर मौजूद होते। मैं जो बात कह रहा हूँ, वह ठीक है या नहीं, उसकी छान-बीन गवर्नमेंट करे, उसकी नाक के नीचे सीलिंग प्राइस से

ज्यादा ऊँचे दाम पर वस्तुएं बिकती हैं, परन्तु अपराध करने वालों के विरुद्ध वह मुकदमा नहीं चला सकती। मैंने इस चीज़ की तरफ एक मिनिस्टर का ध्यान खींचा था। उन्होंने मुझे जवाब दिया कि हमें भी तो इसी बाज़ार भाव पर खरीदना पड़ता है। आखिर यह क्या तमाशा है, क्या शासन है?

बाबू रामनारायण सिंह (हजारीबाग पश्चिम)—तमाशा है।

श्री टंडन—आप जानते हैं कि जो कार्यवाही आप कर रहे हैं, उससे बेईमानी फैलती है, लेकिन फिर भी आप वही कार्यवाही करते हैं। आप को लोगों की रोटी और भौतिक चीज़ों का तो ख्याल है, लेकिन लोगों की आत्मा कहाँ जा रही है, गड्ढे में गिर रही है, उधर बिल्कुल आप का ध्यान नहीं है। गांधीजी चले गये, आप आज गांधीजी से लाखों कोस दूर बहते चले जा रहे हैं। शासन-कर्त्ताओं के लिये गांधीजी का नाम लेना असत्य है। गांधीजी सत्य को सब से ऊपर रखते थे, क्या आप आज जो कुछ कर रहे हैं, वह सत्य की रक्षा करेगा? मैं चाहता हूँ कि योजना बनाने वाले यह देखें कि सीलिंग प्राइस और सत्य दोनों अलग-अलग वस्तुएं हैं, सीलिंग प्राइस और सत्य का मेल नहीं हो सकता। अपने अनुभव के बाद सीलिंग प्राइस के क्रम को फिर रखना सिवाय अशुद्ध स्वप्न देखने के और कुछ नहीं है। मेरा सुझाव हैं कि अब तो आपको उसका स्वप्न नहीं देखना चाहिए और प्राप्त किये गये अनुभव से आपको लाभ उठाना चाहिये।

कन्ट्रोल—शासन पर

कंट्रोल की बात आप करते हैं, कंट्रोल होना चाहिए, इसे मैं भी जानता हूं, नियंत्रण होना चाहिए। लेकिन केवल क़ीमत पर ही नहीं, मुख्य चीज़ तो यह होनी चाहिए कि जीवन पर एक कंट्रोल और नियन्त्रण हो लेकिन आज जीवन पर वह कंट्रोल कहाँ है? कंट्रोल अपने ऊपर और अपने शासन पर और अपने कार्यकर्ताओं पर होना चाहिये। पहला कंट्रोल यह है। अगर आपका कंट्रोल अपने एडमिनिस्ट्रेशन और अपने आदमियों पर नहीं है, तो यह सारी योजना, जो कमीशन की आपने बनाई है वह ढह जायगी और ठहरेगी नहीं। मैं इधर आपका ध्यान दिलाना चाहता हूँ और आपको साफ-साफ बतला देना चाहता हूँ कि अगर आप सरकारी कार्यकर्ताओं का ठीक मसाला तैयार नहीं करते और ऐसे आदमी नहीं ला सकते जो आपके भावों को ठीक तरह समझ कर उन पर अमल करें, तब फिर यह जितनी रिपोर्ट और योजना है, शेख़चिल्ली की कहानी रह जायगी। शेख़चिल्ली ने भी बड़ी एक योजना बनाई थी कि मेरे कुटुम्ब में यह होगा और वह होगा। अपने मन में बहुत लम्बा चौड़ा ढाँचा उसने बनाया था, लेकिन जो सिर से उसके हांडी

लुढ़की तो सब ढाँचा ढह गया (हंसी)। मैं यह हंसी के लिए नहीं कहता, यह गहरी चीज़ है। अगर आप के आदमी ठीक नहीं चल सकेंगे तो आप की यह सारी रिपोर्ट ढह जायगी। आदमी अर्थात् मसाला आपके पास जैसा है वह आप जानते हैं और मैं भी जानता हूँ। इसको यहीं छोड़ कर अब मैं एक दूसरी बात पर आता हूँ।

सरकारी विभागों में भ्रष्टाचार

आप ने बीस अरब का खर्चा इसमें कूता है और आपको चिन्ता है कि वह रुपया किसी प्रकार आये। आप ने अनुमान किया है कि आप टैक्सों के द्वारा और जनता की बचत से बारह अरब रुपया प्राप्त कर लेंगे। आप ने आपनी आमदनी से भी अधिक खर्चा कूता है। आपने डिफ़िसिट बजटिंग की बात कही है। मैं इतने बड़े डिफ़िसिट बजट के पक्ष में नहीं हूँ। छोटी-मोटी डिफ़िसिट एक अलग चीज़ होती है। मैं इस समय ब्यौरे में नहीं जाता, लेकिन मैं यह कहना चाहता हूँ कि अगर आप रुपया बचाना चाहें तो बचाने की बहुत गुंजायश है। आपके खर्च में बहुत रुपया बर्बाद हो रहा है। अभी उस रोज़ मैंने पढ़ा था कि हमारे भाई नन्दा जी ने इंजीनियरों से बात करते हुये कहा था कि आप लोग अपना नैतिक स्तर ऊंचा करें। मुझको अपने भाई की वह बात अच्छी लगी थी, इसलिये अच्छी लगी थी कि यह इंजीनियरिंग विभाग बहुत अधिक रुपया व्यय करने वाला विभाग है। उसमें खूब रिश्वतखोरी चलती है और यह किसी से छिपा नहीं है। यह एक मशहूर बात है।

श्री सी० डी० पांडे (जिला नैनीताल व जिला अलमोड़ा—दक्षिण पश्चिम व जिला बरेली-उत्तर)—हमारे फ़ीरोज भाई कहते हैं कि उधर हीराकुड में बहुत है।

श्री टण्डन—इस प्रकार का काम ज्यादा है और उसमें इंजीनियरों का ही हाथ होगा। श्री नन्दाजी बहुत करेंगे तो कहीं-कहीं चले जायेंगे, लेकिन क्या उनकी बात चल पायेगी? मुझे तो सन्देह कि इस विषय में गवर्नमेंट के अफ़सरों की सृष्टि इतनी जल्द बदलने वाली नहीं है। मैं तो देख रहा हूँ कि आज सरकारी आदमियों में ईमानदारी मुश्किल से मिल रही है। मैं यह बात खूब नाप तोल कर कह रहा हूँ कि नौकरी में अधिकतर आदमी जहाँ उनको अवसर मिलता है, बेईमानी करते हैं और रिश्वत लेने को तैयार रहते हैं और यह कोई छिपी बात नहीं है। जुडीशरी में नीचे का जो अमला है, जजों के ऊपर मैं आक्षेप नहीं कर रहा हूँ, नीचे के अमले में रिश्वतखोरी खुली चलती है। सप्लाई विभाग का लगभग एक-एक इंस्पैक्टर खुली तौर पर रुपया खाता है। इंजीनियरिंग विभाग में जो ठेकेदार हैं उनके ऊँचे-ऊँचे

महल उठे हुए हैं। ये क्या उन्होंने सही तरीके से रुपया पैदा करके बनाये हैं? इंजीनियरिंग विभाग के आदमियों का एक निश्चित कमीशन बंधा हुआ होता है। इंजीनियर और ओवरसियर इस तरह नाजायज़ तौर से रुपया कमाते हैं। अगर आप बजाय प्राइस कंट्रोल करने के रुपया बचाने के हेतु कंट्रोल करते तो इस रिपोर्ट के सफल होने की अधिक आशा होती।

सरकारी रुपयों की चोरी—प्रमाण

मैं अपने अनुभव से यह बात कह रहा हूँ कि सरकारी विभागों में किस तरह से रुपया **लीकेज** होने के कारण बर्बाद हो रहा है। सिर्फ़ लीकेज से ही नहीं, उसमें तो एक छोटा सा सूराख होता है, लेकिन मेरा अनुमान है कि रुपया वहाँ बड़े पाइप के ज़रिये बहाया जाता है। मैं जानता हूँ कि जल्दी उसका अनुभव लोगों को नहीं होता है। मैं आपको अपने अनुभव की बात बतलाता हूँ। मैं यह बात अपने मित्र वित्त विभाग के राज्य मंत्री को बता चुका था। मैं चाहता था कि आज श्री देशमुख जी यहां पर होते और वह इसको सुनते। अभी कल की ही तो बात है जब उन्होंने औद्योगिक वित्त निगम के लिए कमेटी की स्थापना की घोषणा की थी, अर्थात् अंग्रेज़ी में जिसको इंडस्ट्रियल फ़ाइनैन्स कारपोरेशन कहते हैं, उसके सम्बन्ध में एक जांच कमेटी की नियुक्ति करने की उन्होंने कल घोषणा की थी, क्योंकि यहाँ पर यह आक्षेप किया गया था कि उसमें व्यापारियों ने रुपया उचित रीति से उधार नहीं लिया है। यह घोषणा करके उन्होंने साहस का काम किया और मैं उन्हें इसके लिए बधाई देता हूँ।

मैं उनके सामने अब दूसरी बात रखने जा रहा हूँ। पहली तो सन्देह की बात हो सकती थी, लेकिन जो मैं अब बतलाऊँगा यह प्रमाण की बात है। मैं वह बात आपके सामने रखने जा रहा हूं जो अभी तक अखबारों में आई नहीं है और जिसके बारे में पालियामेंट के मेम्बरों को भी नहीं मालूम है।

एक माननीय सदस्य—आपको तो मालूम है।

श्री टंडन—मुझ को तो मालूम है ही, और मैं कह रहा हूँ। मैं तो कभी अनुमान नहीं कर सकता था कि किसी भी शासन में मुझे यह अनुभव होगा। मुझ को तो अन्धेर नगरी की बात याद आने लगी।

श्रीमती सुचेता कृपालानी (नई दिल्ली)—चौपट राजा। (हंसी)

श्री टंडन—आप हंसिये नहीं तो मेरे ऊपर बड़ी कृपा होगी। यह एक गम्भीर विषय है, मेरे लिये तो रोने का है हंसने का नहीं। मैं सन् १९४८ की बात कह रहा हूँ। मैं यहाँ पर कांस्टीटुएन्ट एसेम्बली का सदस्य था। कानपुर में एक मेरे जाने हुए बड़े अच्छे कांग्रेस के कार्यकर्त्ता हैं।

उनके भाई यहाँ रहते हैं, दिल्ली में। उन सज्जनों से मेरा अच्छा परिचय है। उनके एक भाई मेरे पास आये। उन्होंने मुझ से अपनी कथा कही कि उन को अपना १६ हजार रुपया बक़ाया सेन्ट्रल रेवेन्यूज़ के एकाउण्टेण्ट जनरल के कार्यालय से मिलना था। वह बहुत रोज़ तक पड़ा रहा। यहाँ जो लड़ाई का बचा हुआ मलवा बिकता है उसका एक विभाग है जिसको **डिस्पोज़ल्स** विभाग कहते हैं, उसमें से वह साहब कुछ ख़रीदने वाले थे और उसके वास्ते उन्होंने वह रुपया जमा किया था। जब काम ख़तम हो गया तो उन्होंने चाहा कि ज़मानत का रुपया मिले। वह मुश्किल से उन्हें मिला जिसमें लगभग दो वर्ष लगे।

एक क्लर्क ने आकर उनके हाथ में एक चैक दिया और कहा कि यह आपका चैक है लीजिये। उस चैक के देने के बाद उस क्लर्क ने उनसे कहा कि यही चैक मैं आपको फिर दे सकता हूँ। आपका जितना रुपया था वह तो आपको मिल गया, लेकिन अब मैं इसके बाद फिर आपको १६ हजार का चैक देने को तैयार हूँ, और कई बार देने को तैयार हूँ, शर्त यह है कि आप आधा हम को दें।

उस व्यापारी ने आकर यह बात मुझ से कही। मैं तो दंग रह गया कि आखिर यह क्या बात है। उसने मुझसे कहा कि, "बाबू जी, क्या सरकारी काम इसी तरह से चलेगा?" वह केवल इसीलिये मेरे पास आया कि आखिर इस गवर्नमेंट में हो क्या रहा है। सन् १९४८ की बात थी, नई-नई स्वतंत्रता मिली थी और लोगों में जोश था कि हम अपनी गवर्नमेंट की सेवा करें। मैंने भी सोचा कि यह बात क्या है। इसी बीच में उसके कानपुर वाले भाई भी आ गये, जो कानपुर के जाने हुये और प्रतिष्ठित कांग्रेसी हैं। उन्होंने भी आकर इसी तरह की बात दोहराई कि उन को भी यह अनुभव है कि इस प्रकार की बात वह क्लर्क कह रहा है। उन्होंने पूछा कि क्या मैं इस चैक को ले लूँ, जो १६ हजार का वह देने को तैयार है। एक चैक तो मैं ले चुका हूँ, अगर मैं दुबारा ले लूँ तब बता सकता हूँ कि यह बात ग़लत है या सही है। कहिये तो मैं प्रमाण के लिये ले लूँ। मैंने उन्हें सलाह दी कि तुम उस क्लर्क से पूछो कि डिस्पोज़ल्स में तो बहुत से चैक उसको देने पड़ते हैं, क्या किसी दूसरे का चैक भी, जो अदा हो चुका है, वह तुमको फिर दे सकता है। दो एक दिन बाद उन्होंने मुझे आकर जवाब दिया कि वह दे सकता है, दूसरे का चैक भी दे सकता है। तब मैंने उन मित्र से कहा कि दूसरा चैक तुम ले लो। चार पांच दिन के बाद एक चैक २८०० रुपये का ला कर उन्होंने मेरे सामने धर दिया। वह चैक उनको ड्यू नहीं था। लेकिन वह चैक उनके पक्ष में था, जिसका रुपया उनको मिलना वाजिब नहीं था। उन्होंने

उसको मेरे सामने धर दिया और मुझसे कहा कि, "बाबूजी, आप बताइये कि यही आपकी गवर्नमेंट है कि जितनी बार आदमी चाहे जा कर चेक ले आये।" मैंने उन मित्र से कहा कि अभी तुम इसको भुनाना नहीं, ऐसे ही पड़ा रहने दो। मैं सोचने लगा कि आख़िर यह सब क्या हो रहा है। मैंने फ़ाइनेन्स विभाग के एक अधिकारी को यह चेक दिखाया और मैं उन व्यापारियों को ले गया, मैं उन आदमियों के नाम भी बता सकता हूँ। अधिकारी ने उस चेक को देखा। वह भी परेशान हुए और थोड़ी बहुत उन्होंने इधर-उधर जांच की। इसके बाद एक बहुत ऊंचे अधिकारी, जो फ़ाइनेन्स विभाग के थे, आडिट विभाग के शायद दूसरे नम्बर पर थे, बिल्कुल ऊपर के नहीं, वे मेरे पास आये। मैंने उनसे बात की। मैंने हिसाब रखने का क्रम समझना चाहा, क्योंकि मैं भी थोड़ा बहुत हिसाबिया हूँ, और जानता हूँ कि किस तरह से एकाउण्ट्स रखे जाते हैं। मुझको हिसाब का कुछ अनुभव है। मैंने उनसे समझना चाहा कि यह सब कैसे सम्भव है, आपकी चेकिंग का क्या तरीक़ा है जो चेक इस तरह से किसी को भी दिया जा सके। मुझे ऐसा लगा वह ख़ुद समझ नहीं पा रहे थे और न मुझे वह कुछ समझा सके। फिर मुझको यही चारा दिखाई पड़ा कि मैं होम विभाग की शरण लूँ। मैंने उन व्यापारियों को ले जा कर सरदार वल्लभभाई पटेल के सामने पेश किया। उन्होंने वह चेक उनके सामने रखा। मैंने उनसे कहा कि यह चेक जाली नहीं है, सही है, इसका रुपया मिल सकेगा। लेकिन यह एक ऐसा चेक है जिसके बारे में पाने वाला कह रहा है कि रुपया मेरा नहीं है और यह चेक उसी को दिया गया है। यह तो एक ही चेक है, लेकिन इस तरह के हज़ारों चेक हो सकते हैं। आप रुपया इकट्ठा कर रहे हैं, लेकिन रुपया इस बड़े सूराख़ से बह रहा है। मैंने उनसे निवेदन किया कि एक आदमी को गिरफ़्तार करने से कोई फ़ायदा नहीं होगा। आपको यह समझना है कि यह कैसे हो रहा है, इस हिसाब का क्रम क्या है, जिसमें ऐसी बात हो सकती है। मगर वह बेचारे क्या करते। उनके सामने चारा ही क्या था। उनका तो होम डिपार्टमेंट था, उन्होंने अपने सेक्रेटरी श्री शंकर को आज्ञा दी कि इंटेलिजेन्स ब्रांच के सुपुर्द यह काम किया जाय। उन्होंने जो कुछ भी लिखा हो मैं नहीं जानता, उसके कुछ दिनों बाद मैंने यह सुना कि पुलिस वालों ने उस क्लर्क को गिरफ़्तार कर लिया। मैं जानता नहीं, लेकिन मैंने सुना कि पुलिस वालों ने उस आदमी को भी मांगा था जिसने चेक पर दस्तखत किये थे। लेकिन फ़ाइनेन्स विभाग ने या गवर्नमेंट के लोगों ने उसको गिरफ़्तार नहीं होने दिया। और वह छोटा क्लर्क, जो सौ पचास रुपया का नौकर था, गिरफ़्तार कर लिया गया। मेरे पास पुलिस के एक अफ़सर आये और उन्होंने कहा कि बताइये कि बात क्या है। यह

सन् १९४९ की बात है। मैंने उनको अपना बयान लिखा दिया। वह जो दोनों व्यापारी थे, उन्होंने भी अपने बयान दिये। उसके बाद मुकदमा चला। मुकदमा चला उस छोटे क्लर्क के ऊपर। लेकिन जिसने चेक पर दस्तखत किये थे वह गिरफ़्तार नहीं हुआ—आज तक नहीं हुआ। मेरे पास गवाही के लिये सम्मन आया। मैं गवाही में गया और गवाही मैंने दी। मेरी लिखित गवाही मिसल पर है। मेरी यह गवाही सन् १९५१ में हुई थी। मैंने समझा था कि केस आगे चलेगा और बात आगे बढ़ेगी। मुख्य बात तो जांच थी। अब मुझे उन व्यापारियों में से एक के द्वारा, जिनके कहने से यह मामला चला था, पता चला है कि उनके पास फ़ाइनेन्स विभाग से ख़त पहुँचा है कि वह मुकदमा वापस ले लिया गया है और दफ़्तर की कार्यवाही, जिसको डिपार्टमेंटल जांच कहते हैं, होगी। यह ख़त इसी अक्टूबर सन् १९५२ का है। मैं नहीं जानता कि इस तरह के कितने लाखों और करोड़ों रुपये गये होंगे। यह आदमी ईमानदार था, उसको दर्द था, वह मेरे पास दौड़ा आया। लेकिन जो बेईमानी करते हैं वे तो मेरे पास आने वाले नहीं हैं। न मालूम कितने लाखों और करोड़ों आपके रुपये इस सूराख़ से निकल गये, इसका आपको पता नहीं है और आज तक उसकी जांच नहीं हुई है।

उचित आयोजन

फाइनेन्स (वित्त) विभाग के मंत्री यहाँ नहीं हैं। उन्होंने कल एक कमेटी बनाई थी। मैं चाहता हूँ कि उनको साहस हो कि वे एक ऐसे स्वतंत्र कमीशन को बनावें, जिसमें आडिट और हिसाब जानने वाले आदमी हों। आपके आडिटर लोग पकड़ नहीं सके कि रुपया किस तरह से गया है। आडिटर जनरल हैं, डिप्टी आडिटर जनरल हैं, लेकिन उनको जानकारी नहीं थी कि क्या हो रहा है। यह शिकायत चार बरस की है और जान पड़ता है कि चार बरस में उनकी यह समझ में नहीं आया कि रुपया किस तरह से गया है। आप होशियार लोगों का कमीशन बनावें। यह चेक इम्पीरियल बैंक के नाम है। यह कमीशन यह देखे कि किस तरह के हिसाब रखने से रुपया जाता है।

यह इतनी बड़ी रिपोर्ट है। मैं इसके एक ही अंग पर बोल सकता था। मैंने इतना समय ले लिया इस बात के दिखाने में कि आपका रुपया किस तरह बह रहा है। आप बीस अरब की फ़िक्र में हैं पर न मालूम इस तरह से आपका कितना रुपया गया है। मैं सुझाव देता हूँ कि जब तक आपका दफ़्तर, आपका इन्तजाम इस तरह का है, आप बड़ी-बड़ी प्लानें (योजनाएँ) न बनावें, आप छोटी योजनाएँ बनायें, अपने दफ़्तर को संभालें और कुल शासक वर्ग को संभालें। इन बेईमानों को, जो आपके पास इकट्ठे हैं, ठीक करें तब योजना में सफलता की आशा हो सकती है।

६

रेलवे विभाग का प्रबन्ध

५ जून सन् ५२ को रेलवे आय व्ययक के वाद विवाद में रेलवे बोर्ड शीर्षक अनुदान की मांग पर लोक सभा में बोलते हुये

सभापति महोदय ! मैं इस रेलवे विभाग के विषय में बड़ा व्याख्यान देने नहीं खड़ा हुआ हूँ। दो तीन बातें मुझ को सूझी हैं उनको इसलिये निवेदन करना चाहता हूँ कि इस विभाग के मन्त्री महोदय सोचें कि क्या वह उनकी ओर से कुछ काम कर सकते हैं।

रेलवे कर्मचारियों में भ्रष्टाचार

मेरा अनुभव यह है और मेरा विश्वास है कि वर्तमान मन्त्री महोदय का भी अनुभव होगा कि रेल विभाग में, जो हमारे देश की सब से बड़ी व्यापारी संस्था है, सबसे अधिक भ्रष्टाचार है। साधारण रीति से बड़े बड़े स्टेशनों पर तो नहीं किन्तु छोटे स्टेशनों पर टिकट बाबू टिकट के मूल्य से अधिक पैसा वसूल करते हैं और क्या बड़े क्या छोटे स्टेशनों पर, क्या कलकत्ता और क्या इलाहाबाद और क्या दिल्ली में पार्सल और लगेज (Luggage) और माल का प्रबन्ध जिनके हाथ में है वे तो हजारों रुपये बनाया करते हैं। मैं कहता हूँ कि यह हम लोगों का साधारण अनुभव है। मैं तो व्यापारी नहीं, लेकिन व्यापारियों से हर एक आदमी को इसका पता लग सकता है। मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि एक मानी हुई गन्दगी, एक छिपी हुई गन्दगी इस गवर्नमेंट के हर विभाग में सब जगह मौजूद है। मैं चाहता हूँ कि सबसे बड़ी व्यापारी संस्था के रूप में रेल विभाग यह यत्न करे कि हमारे देश के चतुर्मुखी व्यापार में कुछ अधिक नैतिकता दिखायी पड़े। आज हमारे देश का दुर्भाग्य है कि हमारे व्यापार तथा उद्योग में, क्या मिल मालिकों में, क्या कलकत्ता और बम्बई के बड़े बड़े व्यापारियों में, ऊँचे दर्जे की नैतिकता, शुद्धता बहुत कम दिखायी देती है। व्यापार का कुछ ऐसा रूप हो गया है कि जब किसी व्यापारी से बात करो तो वह कहता है कि अगर हमें व्यापार करना है तो बिना घूस दिये हुए हमारा काम चल ही नहीं सकता, या तो हम व्यापार छोड़ दें या हम घूस दें, बिना इसके काम नहीं चल सकता। मुझे एक सार्वजनिक सेवक होने के नाते व्यापारियों से बराबर सम्पर्क रहता है और इस प्रकार का उत्तर मुझको मिलता

है। मैं सुझाव देता हूँ मन्त्री जी को कि उनके सामने बड़ा भारी अवसर है। यदि यह जो सबसे बड़ी व्यापारी संस्था हमारे देश की है, उसमें नैतिकता आये, उसमें से घूस खाना हट जाय तब हम दूसरे व्यापारियों से यह आशा कर सकते हैं कि उनके व्यापार का नैतिक स्तर ऊँचा हो। मैं जानता हूँ कि यह काम बहुत आसान नहीं है। सब विभागों में जहाँ जहाँ घूसखोरी चलती है, उसे हटाना आसान नहीं है, किन्तु फिर भी मेरी यह धारणा है कि यह असम्भव नहीं है। केवल इसमें लगने की आवश्यकता है। शक्ति के साथ, मुरौवत छोड़कर हमें इस विभाग के प्रबन्ध को ऊँचा करना होगा। इस प्रतिज्ञा से, इस धारणा से, यदि मन्त्री महोदय लगें तो हमारे देश की कृतज्ञता के पात्र होंगे।

वर्गहीन रेलवे

एक दूसरा सुझाव है। हमारी राष्ट्रीय कांग्रेस ने अपने सामने यह ध्येय रखा है, और सभापति जी आप जानते हैं कि मैं उसका एक छोटा सेवक हूँ, हम लोगों ने अपने सामने एक ध्येय रखा है कि समाज वर्गहीन हो। अंग्रेज़ी भाषा में, हमारे मन्तव्य में, क्लासलेस (Classless) शब्द रखा गया है। हम क्लासलेस सोसाइटी (Classless Society) बनाना चाहते हैं। मेरा विश्वास है कि इसमें विरोधीदल और कांग्रेसदल में कोई मतभेद नहीं होगा। यह रेल विभाग हमारे देश का इतना बड़ा विभाग है कि इसके कामों का हमारे समाज के निर्माण पर बराबर असर पड़ता है। यदि हमारी गवर्नमेण्ट इस ओर झुकना आरम्भ करे कि हम समाज को वर्गहीन बनायें तो इसके लिए बहुत अच्छा अवसर है कि वह कम से कम रेल गाड़ियों को तो वर्गहीन कर दे, अर्थात् उसमें जो क्लास एक, क्लास दो, इन्टरमीडिएट और क्लास तीन—यह चार दर्जे हैं उन्हें हटाकर रेलगाड़ियों को क्लासलेस (Classless) बना दे। वर्गहीन समाज का जो हमारे सामने ध्येय है उसको पूरा करने की ओर हम सचमुच झुकना चाहते हैं तो यह एक व्यावहारिक सुझाव है। हां, यह एक दिन में नहीं हो सकता, कोई भी बड़ा काम एक दिन में नहीं होता, कुछ समय लेता है। सम्भव है कि बहुत से भाइयों को सुनने में यह लगे कि अजीब बात कह दी, यह व्यावहारिक नहीं है। जो लोग ऐसा सोचते हैं उनको एक क्लासलेस सोसाइटी (Classless Society) का स्वप्न भी नहीं हो सकता। जो एक क्लासलेस सोसाइटी की बात करे, वर्गहीन समाज की बात करे, उसको इसका स्वागत करना होगा कि हमारी गवर्नमेंट यह काम आरम्भ करे। कम से कम रेलगाड़ियों में एक दर्जा हो, केवल एक दर्जा। और जो दर्जे हैं वह हट जायें। हमारे एक भाई ने जो तीसरे दर्जे के बारे में शिकायत की थी

वह बहुत कुछ तब हट जायगी जब हम सब तीसरे दर्जे में चलेंगे। तब स्वभावतः उसके प्रबन्ध में बहुत अन्तर हो जायगा! यह मेरा मुख्य सुझाव है।

दूसरे विषयों में मुझे इस समय अधिक कहना नहीं है। मैं बिलकुल व्यावहारिक रूप से मंत्री महोदय के सामने रख रहा हूं कि इन दोनों सुझावों पर वह गहरी दृष्टि से विचार करें और उन पर अमल करें।

रेलवे पुनः संगठन

हाँ, चलते हुए मुझे उस विषय पर भी दो चार शब्द कहने हैं जिनकी चर्चा कई बार यहाँ हुई है। यह पुनः संगठन के सम्बन्ध में हैं। मुझको ऐसा भास रहा है कि इसमें कुछ प्रदेशीय भावनाओं ने बल पकड़ा है। मेरा निवेदन है कि जहाँ तक सम्भव हो हम ऐसे प्रश्नों को केवल प्रदेशीय भावनाओं से न देखें। मुझको सब बातों पर विचार करके यह लगा कि जो नया प्रबन्ध हुआ है, जिसका एक केन्द्र कलकत्ता में रहेगा, एक बिहार और उत्तरप्रदेश के कार्यकर्त्ताओं का ध्यान रखकर गोरखपुर में रखा गया और एक दिल्ली में रखा गया—मुझको ऐसा लगता है कि यह प्रबन्ध इस प्रकार का नहीं है कि उसके विरुद्ध हम सब कड़वी बातें कहें। सुझाव दिये जायं। लेकिन कोई ऐसी बात इसमें नहीं है कि जिसमें हम एक दूसरे के ऊपर ईर्ष्या और द्वेष का आक्षेप करें। मैं और अधिक नहीं कहना चाहता।

इन तीनों बातों पर मेरे मन में जो कुछ आया, उपाध्यक्ष महोदय, मैंने आपसे निवेदन किया।

श्री नन्दलाल शर्मा : मैं टंडन जी से पूछना चाहता हूँ कि वह इस सदन की जानकारी के लिये बतलायें कि रेलवे में जो क्लासलैस नियम बना रहे हैं उसका आर्थिक संतुलन कैसे होगा। ग़रीबों के लिए और धनवानों के लिए किस तरह से इसमें प्रबन्ध होगा। इस पर वह प्रकाश डालें।

उपाध्यक्ष महोदय : यह जवाब मिनिस्टर साहब देंगे।

श्री पुरुषोत्तम दास टंडन : मुझे सवाल का जवाब देने का यहाँ अधिकार नहीं है। उपाध्यक्ष जी की अनुमति से मैं इतना मेम्बर साहब से निवेदन करता हूँ कि वह अगर चाहें तो मुझसे इस विषय में घर पर बात कर सकते हैं।

७

अन्न का उत्पादन और वितरण

३० जून सन् ५२ को लोक सभा में सामान्य आय व्ययक के वाद-विवाद में खाद्य और कृषि के अनुदान की मांग पर बोलते हुए :

उपाध्यक्ष महोदय ! मुझे हिन्दी में ही कुछ कहना है और शायद यह वही हिन्दी हो जिसको हमारे दो बंगाली दोस्तों ने "परन्तु हिन्दी" कहा है । मैं ऐसा समझता था कि उनकी मादरी जबान उनको "परन्तु" गवारा कराती है । लेकिन अब ऐसा मालूम होता है कि "परन्तु" से वह घबराते हैं । मैं चकित हुआ कि इन दो बंगाली मित्रों के मुख से "परन्तु" पर कैसे आपत्ति हुई, क्योंकि उनकी भाषा तो "परन्तु" से भरी हुई है । परन्तु अब मैं अपने विषय पर कुछ कहूँगा ।

बड़ी योजनाओं में अपव्यय

भोजन की सामग्री का मसला दो तरह से देखा जा सकता है । पहिले तो हमारा ध्यान इस बात पर जाना है कि जितनी सामग्री हमारे देश में है, जितनी हमारे देश में उपज होती है, वह किस तरह से बढ़े । उस उपज का बढ़ाना हमारा पहला कर्तव्य है । इस विषय के ऊपर कि वह कैसे बढ़ाई जाय, गवर्नमेंट का भी ध्यान है । यह बात स्पष्ट है कि यह जो बड़ी-बड़ी योजनायें हैं जिन पर करोड़ों रुपये लगने वाले हैं, यह सब इसी विचार से हैं । हां, उन योजनाओं में जो पैसा खर्च होगा वह ठीक ही खर्च होगा, उस पैसे का सबसे अधिक उपयोग होगा—इसमें अवश्य मतभेद हो सकता है । मेरा कुछ अनुभव यह है कि गवर्नमेंट की जो बड़ी बड़ी लम्बी चौड़ी योजनायें होती हैं, उनमें रुपया बरबाद बहुत हुआ करता है, विशेष कर यह जो इंजीनियरिंग का विभाग है, इसके द्वारा जो बड़े-बड़े काम उठाये जाते हैं वे ठेकेदारों द्वारा होते हैं; इनमें ठेकेदारों और सरकारी नौकरों के बीच में रुपया खाया बहुत जाता है । यह कहते हुए मुझे खेद होता है । परन्तु है यही बात । जो मिनिस्टर लोग बैठे हुए हैं उनसे मैं पूछता हूँ कि क्या उनमें साहस है, क्या उनमें यह हिम्मत है कि वह यह कह सकें कि ऐसा नहीं है !

बाबू रामनारायण सिंह : नहीं है ।

श्री टंडन : आप मिनिस्टरों की पंक्ति में नहीं हैं । मेरा तो कहना अपने माननीय मंत्रियों से है । अगर उन्होंने जीवन में घुस करके कुछ

जनता का और सरकारी कार्यकर्त्ताओं का अनुभव किया है तो उनको यह मानना होगा कि इस रुपये में से बहुत अधिक बरबाद होता है। मैं उन योजनाओं का विरोधी नहीं हूँ, लेकिन जब हमारे पास रुपये की कमी है, बंधा हुआ रुपया है, तो उस रुपये से हम अधिक से अधिक काम कर सकें, इस पर हमारा पहला ध्यान होना चाहिए। हमारे पैसे की अधिक से अधिक उपयोगिता हो यह हमारा पहला कर्तव्य है। इस लिये मुझको ऐसा लगता है कि अधिक से अधिक उपयोगिता इस बात में होगी कि हम छोटी छोटी योजनायें उठायें, किसान के पास जायें, और किसान को उसके काम में सहूलियतें दें। इस समय मेरे लिए ब्योरों में जाना संभव नहीं है। एक उदाहरण लेता हूँ।

नये क्रम के ग्राम

यह बात ठीक है कि किसान को पानी चाहिए। पानी के लिए नहरों का आना आवश्यक बताया जाता है। लेकिन नहरों में तो करोड़ों रुपये लगेंगे और समय लगेगा। मुझ को ऐसा लगता है कि अगर हम गांव को नये ढंग से बसाने की बात सोचें और उनको कुओं और तालाबों की अधिक से अधिक सुविधा दें तो उसमें इतना रुपया बरबाद नहीं होगा और हम को परिणाम भी जल्दी मिलेगा। एक नया भारत बसाना आप का और हम सब का कर्तव्य है। नयी सृष्टि, सुन्दर सृष्टि हम करें इसमें हम सब एकमत हैं। कैसे हो, यह विचार करने की बात है। आज जो गांव हमारे देश में बसे हैं, वह अक्सर गन्दे हैं, घर वहाँ किसी काम के नहीं हैं और वहाँ उचित सुविधाएं नहीं हैं। मैं यह सुझाव देता हूँ—वैसे मैंने निजी तौर पर पहले दिया भी है—कि हमें एक नये ढंग से गांव बसाने चाहिये। मैं जो सुझाव देता हूँ उसे पूरा करना बहुत सम्भव है। और उसमें जो रुपया लगाया जायगा उसका हमें तुरन्त परिणाम मिल सकता है। हम अपनी आंखों के सामने उसका नतीजा देखा सकते हैं, हम सुन्दर गाँव बसते हुए देख सकते हैं। हम उपज जो बढ़ाना चाहते हैं इसके लिए हमारा यह ध्यान होना चाहिए कि एक एक पुरुष और एक एक स्त्री जितना परिश्रम वे कर सकते हैं उनको परिश्रम करने का अवसर हम दें। आज घर के दो एक प्राणी खेती पर चले जाते हैं, स्त्रियां घर में रहती हैं, उनका खेती के काम में कहीं कहीं तो उपयोग होता है, लेकिन अधिक नही। मैं जो अपने माननीय मंत्रियों को सुझाव देता हूँ इस में जो बेजमीन लोग हैं, जो भूमिहीन हैं, उनका भी मसला पूरी हद तक तो नहीं लेकिन कुछ हद तक तो हल होगा। मेरा सुझाव है कि हमारे जो गांव बसाये जायं उनमें हर घर में रहने के लिए लगभग आधा एकड़ या एक

बीघा जमीन आप दें । यह एक नई सी बात सुन कर लोगों को शायद ताज्जुब हो । लेकिन मैं कहता हूँ कि कोई वहाँ घर न बनाने पाये जब तक कि उस घर में आधा एकड़ जमीन न हो ।

श्री किदवई : कहते हैं कि नीलोखेरी में ऐसा ही किया गया है ।

श्री टंडन : आधे एकड़ से कम जमीन में, जो एक बीघा के करीब होती है, कोई घर न बनने पाये । देखिये इसका क्या परिणाम होता है । आप को कोई सैनिटेशन का मसला नहीं उठाना पड़ेगा । बीच में सड़क होगी , आमने सामने घरों की पंक्तियां होंगी । हर एक के पास आधा एकड़ ज़मीन है, उसमें सुन्दर वृक्ष लगेंगे । उसमें तरकारी हो सकेगी । उसमें कोई जुलाहा या कोई लुहार रहता है तो उसको अवसर होगा कि फैला कर अपना काम करे । वहाँ गाय भैंस बांधने की जगह है, खाद जितनी होगी वह उस भूमि के अन्दर चली जायगी ।

'नरवर' की हानि

उपाध्यक्ष जी, इस खाद की चर्चा करते हुए मेरा ध्यान इस बात पर जाता है कि हम बात तो करते हैं अधिक उपज करने की, लेकिन सबसे अधिक उपज करने की जो शक्ति खाद है उस खाद का नाश मेरे विचार में हमारे देश के बराबर और कहीं नहीं है । हमारे इधर के एक सदस्य ने गोबर के विषय में विचार रखा है। लेकिन मैं चर्चा करता हूँ (यदि मैं एक नया शब्द गढ़ दूँ) 'नरवर' की, अर्थात मनुष्य के मल-मूत्र की । यह मनुष्य का मल-मूत्र गोबर से कहीं अधिक शक्तिवान खाद है, उसकी आप क्या रक्षा करते हैं ? यह एक नया सा शब्द मैंने बना दिया है । मनुष्य के मल 'नरवर' की आप इज्ज़त नहीं करते । किंतु यह बड़ी शक्तिवान चीज़ ह । इससे अधिक अच्छी खाद संसार में नहीं है । आज इसको संसार समझ रहा है । यह जो फर्टीलाइज़र है, सिन्दरी आदि में उत्पन्न, उसके सम्बन्ध में आज अमेरिका के लोग भी समझ रहे हैं कि उससे अधिक शक्ति तो आ जाती है लेकिन अंततोगत्वा वह भूमि की शक्ति का नाश करने वाली वस्तु होती है ।

डाक्टर लोग जानते हैं कि कुछ दवायें अंग्रेज़ी भाषा में (Aphrodisiac) कहलाती हैं जो इन्द्रियों को बल देने के लिए खाई जाती हैं, उनसे शक्ति नहीं बढ़ती, परन्तु उनके प्रयोग से क्षणिक तौर पर इन्द्रियों को बल मिलता है। ऐसे ही यह फर्टीलाइजर्स क्षणिक तौर पर एक शक्ति दे देते हैं, परन्तु कुछ समय में यह भूमि को नपुंसक बना देते हैं। इस लिए मैं तो यह सुझाव देता हूँ कि यदि यह आधा एकड़ ज़मीन हर कुटुम्ब को हम देने की योजना करें तो उस कुटुम्ब का मल-मूत्र वहीं भूमि के भीतर

रह जायगा और उपज बढ़ायेगा। आज उस मल-मूत्र के अधिकांश का नाश होता है और वह उपयोग में नहीं आता। अस्तु अब मैं इस विषय में अधिक न कह कर इसको यहीं छोड़ता हूँ।

बड़े 'फ़ार्म' का मूढ़ाग्रह

एक बात जिसकी आज बहुत चर्चा होती है यह है कि बड़े बड़े फार्म बनाये जायें। उपाध्यक्ष जी, हम लोग देहात के लोगों को मूढ़ाग्रही (Superstitious) कहते हैं और उनके सुपरस्टीशनस (Superstitions) की हंसी उड़ाते है, लेकिन पढ़े लिखे लोगों के सुपरस्टीशनस (Superstitions) अधिक निन्दनीय और हानिकारक होते हैं। उनमें आज एक यह सुपरस्टीशन अथवा मूढ़ाग्रह और अन्धविश्वास फैला हुआ है कि बड़े फार्मों में अधिक पैदा होगा। एक भाई ने अभी बताया और मैं भी आपसे कहता हूँ कि ऐसी कोई बात नहीं है। आप गज़ लेकर भूमि नाप लीजिये, और खेती करके देख लीजिये, कोई आप बड़ा फार्म बनाकर उसमें से अधिक उपज निकालेंगे बनिस्बत एक छोटे फार्म के, ऐसी कोई बात नहीं है, पैदावार तो इस पर निर्भर करती है कि आप भूमि में आवश्यक जल कितना देते हैं और खाद कितनी देते हैं। जो खेतिहर इन बातों का ध्यान रखते हैं, वह अपनी भूमि में बहुत अच्छी पैदावार करते हैं। आज जो हम को यह सुझाव दिया जा रहा है कि हम बड़े-बड़े फ़ार्म बनायें, यह अच्छी उपज के लिये कोई आवश्यक साधन नहीं है।

अन्न का वितरण—कंट्रोल

अब मैं दूसरी बात पर आता हूँ, क्योंकि मैं घड़ी की सुई को देख रहा हूँ कि वह तेजी से बढ़ रही है। मैं आपसे अन्न वितरण के बारे में भी कुछ कहना चाहता हूँ। उपज पहली चीज़ है जिसकी ओर हमें ध्यान देना है, और फिर उसका वितरण बंटवारा कैसे हो, उसका हमें ठीक प्रबन्ध करना है। अन्न के बंटवारे के बारे में हमने कुछ विलायती तरीकों को अपनाया है और कंट्रोल के क्रय को अपने यहाँ जारी किया है। कह कं ेल का क्रम ऐसा है जिसका एकदम तो हम बहिष्कार नहीं कर सकते। क्योंकि कुछ न कुछ कंट्रोल और नियमन हमें समाज में करना ही पड़ता है, लेकिन हमें यह भी देखना चाहिये कि नियंत्रण अथवा नियमन से हमें लाभ है अथवा हानि है। यह जो नियमन हमारे देश में हुआ है, उससे क्या आपका लाभ हुआ है? आपने वस्तुओं के सीलिंग प्राइस अधिकतम मूल्य नियत किये, लेकिन मैं पूछता हूँ कि कितने मिनिस्टर्स और दूसरे लोग हैं जो ईमानदारी से कह सकते हैं कि उन्होंने इस नियन्त्रण का पालन किया है।

उनके घरों में सीलिंग प्राइस के बावजूद ज्यादा दाम पर चीजें मंगाई जाती रही हैं। मैं मिसाल देता हूं, चने को ही ले लीजिये, १२ रुपये मन चने की सीलिंग प्राइस गवर्नमेंट ने बांधी जो थोड़े दिन पहले तक तो थी ही, और शायद आज भी वही १२ रुपये मन चने का दाम गवर्नमेंट की तरफ़ से बंधा हैं।

श्री किदवई : अब कोई सीलिंग प्राइस नहीं है।

श्री टंडन : आपने हाल में हटा दी होगी। लेकिन एक महीने पहले तक की बात मैं आपको बतलाता हूँ। चने की सीलिंग प्राइस दिल्ली में १२ रुपये मन थी। लेकिन लोग चना १९ रुपये, २१ और २२ रुपये के भाव से खरीदते थे। इस बारे में एक मन्त्री महोदय से चर्चा आई, मुझे उनका नाम लेने की जरूरत नहीं। उन्होंने बताया कि मैं भी तो इसी भाव पर खरीदता हूँ, यह आप के सेंटर के एक मंत्री की बात कहता हूँ। मेरे एक मित्र लड़कों को पढ़ाने की एक संस्था इंस्टीट्यूशन के चलाने वाले हैं। वहाँ लगभग १५० लड़के रहते हैं। उन्होंने एक मन्त्री महोदय से कहा कि देखिए यह जो छः छटांक का राशन लड़कों को मिलता है उसमें उनका गुजारा नहीं होता और एक लड़के के खाने का औसत करीब करीब ९ छटांक पड़ता है, राशन को सप्लीमेंट या पूरा करने के लिए हमें चना खरीदना पड़ता है और वह हमें २२ रुपये और २१ रुपये के भाव से मिलता है जब कि उसकी सीलिंग प्राइस गवर्नमेंट ने १२ रुपये बाँधी है। इसके लिए कोई रास्ता अथवा हल निकालिये, क्या हम चने की जगह मूंग अथवा उड़द की दाल लड़कों को देने के लिए खरीदें ? उसका वह मन्त्री महोदय जवाब देते हैं कि यह सब ऐसे ही चलता है, तुम क्यों घबड़ाते हो, हम भी तो इसी भाव पर खरीदते हैं। मेरा कहना यह है कि यह अनैतिकता समाज में ऊपर से फैलाई जा रही है, गवर्नमेंट की तरफ से फैलाई जा रही है।

चु कुफ्र अज काबा बरखेजद कुजा मानद मुसलमानी !

मैं नहीं कह सकता कि इस भाषा को मेरे "परन्तु हिन्दी" न समझने वाले भाई समझ सके होंगे ! यह कुफ्र ! अनैतिकता, सरकारी आदमियों के घर में चले, तब फिर जनता का क्या ठिकाना !

बाबू रामनारायण सिंह : बहुत ठीक।

गवर्नमेंट ने अनैतिकता बढ़ाई

श्री टंडन : इस अनैतिकता को बढ़ाने में गवर्नमेंट का हाथ रहा है। मैं अपने अनुभव से आपको कहता हूँ मेरा जनता से गहरा सम्पर्क रहा है, मैं जन-पुरुष हूँ, मुझे यह दिखलाई पड़ा है कि इन पिछले चार, पाँच वर्षों में और इस समाज में अनैतिकता बहुत बढ़ गई है और आज हमारे

लिए यह कहना कि कौन पुरुष नैतिक रीति से जीवन व्यतीत करता है कठिन हो गया है। कितने आदमी ऐसे होंगे जो इन नियन्त्रणों के रहते हुए अनैतिकता से बच पाये हैं। इन चार, पाँच वर्षों में अनैतिकता जो फैली है उसमें ५० फी सदी अंश गवर्नमेंट के सप्लाई और फूड विभाग का रहा है। चाहे वह सेन्टर के हों, अथवा राज्यों के। उन सभी ने मिल कर इस अनैतिकता को फैलाया है।

पं० ठाकुर दास भार्गव : स्टेट्स खुद ब्लैक मार्केटिंग करती रहती है।

सरकारी नौकरों में बेईमानी

श्री टंडन : बेईमानी आफिशियल्स यानी सरकारी नौकरों में बढ़ी है। मुझे इलाहाबाद जिले की एक बात मालूम हुई। एक कांग्रेस कार्यकर्त्ता ने जो बिल्कुल विश्वसनीय हैं, बताया कि एक इंसपेक्टर की जिसकी तनख्वाह १०० या १२५ रुपये के लगभग है, एक छोटो सी मण्डी में लगभग १०० रुपये रोजाना की आमदनी है। जितना माल उस मण्डी में आता है उस पर आठ आने प्रति बोरा वह वसूल करता है।

इस कन्ट्रोल और नियन्त्रण का यह परिणाम हुआ कि चारों ओर नैतिक स्तर गिर गया है। मैं अपने भाइयों से जो कन्ट्रोल के पक्ष में हैं पूछता हूँ कि क्या इस अवस्था के ऊपर आप का ध्यान नहीं जाता? हो सकता है कि कन्ट्रोल हटाने से कुछ थोड़े से लोगों को असुविधाओं का सामना करना पड़े। लेकिन उसके साथ ही आप इस अनैतिकता को जो फैली हुई है देखें। मैं अपने भाई श्री रफी अहमद किदवई को इस पर बधाई देता हूँ कि उन्होंने इस मसले के ऊपर ध्यान दिया है और मैं आशा करता हूँ कि आगे को यह चीज़ खत्म हो जायगी। मैंने तो एक जगह कहा था कि यह तो अनैतिकता की जड़ है और इसकी जितनी जल्दी समाप्ति हो सके की जाये। इसके हटने पर ही मैं अपने देश में भलाई की आशा करूंगा कुछ लोग इसके पक्ष में कहते हैं कि इससे एक्युटेबल डिस्ट्रीब्यूशन (Equitable distribution) होता है, लेकिन ऐसा है नहीं, आप मजदूरों से पूछिये जिनको ६ छटाँक खाने के लिए मिलता है, जो उनके लिए बिल्कुल ना काफी होता है। उनको अपना पेट भरने के लिए ब्लैक मार्केट से अनाज खरीदना पड़ता है। यहाँ आपकी दिल्ली में अनाज ब्लैक मार्केट में मिलता है, लखनऊ शहर के कुछ बाहर एक जगह है, जहाँ मुझे मालूम है, लोग जाते हैं और वहाँ मे अनाज खरीद कर शहर में ले आते हैं, हर वक्त कोई जांच पड़ताल नहीं करता। यह बात बिल्कुल ग़लत है कि कंट्रोल से अन्न का उचित बटवारा होता है। हमने इस देश में कंट्रोल का प्रयोग, एक्सपैरीमेंट किया। वह प्रयोग यहाँ असफल साबित हुआ। अब इस कंट्रोल के प्रयोग को समाप्त करने में ही हमारी बुद्धिमानी है।

भाषावार राज्य

१२ जुलाई सन् ५२ को लोकसभा में भाषावार राज्य सम्बन्धी अशासकीय संकल्प पर बोलते हुए

उपाध्यक्ष महोदय ! राजनीति में भी मेरी यह मान्यता है कि जो वचन दिया जाय उसकी रक्षा की जाय। आज ही सवेरे मैं एक समाचार पढ़ रहा था जिसमें अमरीका की कुछ चर्चा थी और लेखक ने यह टिप्पणी की थी कि चुनाव में जो वचन दिये जाते हैं उनका प्रायः यह मतलब नहीं होता कि उनके अनुसार काम किया जाय। यह पश्चिमी राजनीति का क्रम हो सकता है। मैं जानता हूँ कि आजकल हम पश्चिम की नक़ल करने में बहुत लगे हैं लेकिन फिर भी मेरा यह निवेदन है कि जहाँ तक नैतिकता का और वचन पालने का सम्बन्ध है हमें अपने इस प्राचीन क्रम पर रहना चाहिए कि "प्राण जाहिं बरु वचन न जाहीं।"

कांग्रेस वचनबद्ध

मैं यह केवल वैयक्तिक कर्त्तव्य नहीं किन्तु दलों का कर्त्तव्य भी समझता हूं। कांग्रेस ने इस विषय में वचन दिया है। मैं एक कांग्रेसी के रूप में आज भी अंगद के पैर की भांति उस पर डटा रहना चाहता हूँ। मेरा पैर आज उससे खिसकने वाला नहीं है। जो वचन हमने दिया है और कई वर्षों में हमने अच्छी तरह से विचार करके जो नीति स्थिर की है कि हम भाषावार प्रदेश बनायेंगे, उससे अणु मात्र भी, एक इंच भर भी, हटना मुझको उचित नहीं लगता। मैं तो अपने को एक कांग्रेसी होने के नाते वचन से बंधा पाता हूँ। इस कारण से जो मांग कि आंध्र प्रदेश की या कन्नड़ प्रदेश की रही है मेरी उसके साथ पूरी सहानुभूति है। मैं स्वयं उनको वचन दे चुका हूँ। कन्नड़ प्रदेश के भाई मुझको जानते हैं। कांग्रेस के सभापति की हैसियत से आंध्र में जाने का अवसर तो मुझे नहीं पड़ा था परन्तु मैं कन्नड़ प्रदेश में घूमा था। मैंने वहाँ देखा कि कितनी दृढ़ता के साथ वहाँ के भाइयों की यह इच्छा है कि वह प्रदेश अलग किया जाय और मैसूर के साथ उनका मेल हो।

मैंने सभापति होने के नाते उनको पूरा आश्वासन इस बात का दिया था कि उनकी मांग को कांग्रेस ठीक समझती है। आज भी हमें वहीं रहना है और मेरा विश्वास है कि कांग्रेस वहीं है। परन्तु यह प्रस्ताव जो आया

है उसको तो कांग्रेस दल स्वीकार नहीं करेगा। जिन भाई ने यह प्रस्ताव दिया है जिस पर हमने इतनी चर्चा की है उनको एक मित्र के नाते एक सुझाव देना चाहता हूँ। जो कुछ उनकी मांग है उसके साथ पूरी सहानुभूति रखने वाले के नाते उनसे यह कहूंगा कि वह जो चाहते थे कि इस विषय पर सरकार का ध्यान खींचा जाय वह बात लगभग पूरी हो गई और इस विषय पर बहस हुई लेकिन वह इस विषय पर मत लिये जाने का यत्न न करें। बहस होने के बाद प्रस्ताव को वापिस ले लें। जहाँ तक कांग्रेस दल का सम्बन्ध है, वह पुराने वचन से बंधा हुआ है, वह भाग नहीं सकता। लेकिन इस समय वह इस प्रस्ताव का पक्ष नहीं करेगा, यह आपको मालूम है। इसलिए मैं आपको यह सलाह दूंगा कि आप इस समय उससे नहीं न करायें।

गवर्नमेंट विलम्ब न करे

मैं गवर्नमेंट को भी सलाह देता हूँ कि इस मामले में अधिक देर नहीं होनी चाहिए। मेरा तो विश्वास भी है कि वह इस विषय पर विचार कर रही है किन्तु मैं उसके अन्दर की बात जानता नहीं, मैं उसको यह सलाह देना चाहता हूँ कि जितनी भी जल्दी हो सके, वह इस प्रश्न को उठावे। मुझको ऐसा लगता है कि इसमें बहुत अधिक कठिनाइयां नहीं हैं। कुछ होंगी, कुछ न कुछ कठिनाइयां तो सब प्रश्नों के साथ होती हैं। उनका वह सामना करे और उनको वह हल करे।

मेरे पास बैठे हुए भाई श्री गोविन्ददास ने इस बात की चर्चा की कि मराठी भाषा प्रान्त को बनाने में, सम्भव है, मध्यप्रदेश को उत्तर प्रदेश के कुछ जिलों के लेने की आवश्यकता पड़े और कुछ सदस्यों की ओर से नहीं की आवाज आई। इस प्रकार की कुछ बातें कभी-कभी होती रहती हैं, लेकिन मैं श्री गोविन्ददास को आश्वासन देता हूँ कि हम अपने उत्तर प्रदेश में कभी इस बात के इच्छुक नहीं रहे हैं कि हमारा प्रदेश बढ़ता चला जाय। उनको मैं इतना बतला सकता हूँ कि उत्तर प्रदेश में कुछ ऐसी बात है, कुछ उसमें ऐसा तिलिस्म है जिसके कारण लोग स्वयं ही उसमें आना चाहते हैं। उदाहरणार्थ थोड़ा समय हुआ एक प्रश्न उठा था कि विन्ध्यप्रदेश, जो एक छोटा सा प्रदेश है, समाप्त हो जाय और उसकी पृथक स्थिति न रहे। मुझे यह पता है कि विन्ध्यप्रदेश के लोगों की इच्छा थी कि हम अलग रहें लेकिन अगर हम समाप्त होते हैं तो हमारा अधिक अंश उत्तर प्रदेश के साथ जाय। इस इच्छा की कभी भी आप जांच कर सकते हैं। वहाँ के जो मुखिया लोग थे बुन्देलखंड रीवा आदि के उनकी यह इच्छा थी कि यदि किसी दूसरे प्रदेश में उन्हें जाना है तो उत्तर प्रदेश

में जायँ। अगर वह मध्यप्रदेश के साथ जाते हैं तो हम उनको आश्वासन देते हैं कि हमारे उत्तर प्रदेश वालों की तरफ़ से उनको रोकने के लिए कोई यत्न नहीं होगा।

श्री आर० एस० तिवारी : मैंने कहा था कि विन्ध्यप्रदेश ही एक बड़ा प्रदेश बनाया जाय।

सांस्कृतिक एकता की इच्छा

श्री टंडन : हमारे भाई श्री राजबहादुर जो आज गवर्नमेंट के एक अंग हैं इस समय दिखाई नहीं देते उनको यह मालूम है कि जब राजस्थान के बनाने का विषय आया और अलवर और भरतपुर के राजस्थान अथवा उत्तर प्रदेश में जाने का सवाल पेश हुआ तब अलवर और भरतपुर इन दोनों स्थानों के मुखिया लोगों की यह इच्छा थी कि वे उत्तर प्रदेश के साथ जायँ। इन दोनों की निश्चित इच्छा की बात मुझे मालूम है। अलवर उस समय मुझे कांग्रेस के काम के सिलसिले में जाना पड़ा था और वहाँ के भाई और भरतपुर के भाइयों ने मुझ से सलाह मांगी और अपनी स्थिति बताई कि उनके व्यापारी लोग राजस्थान के साथ नहीं जाना चाहते और उत्तर प्रदेश के साथ आना चाहते हैं क्योंकि उत्तर प्रदेश से उनका पुराना सम्बन्ध है। मैंने यह बात उस समय फैलाई नहीं लेकिन अब बता सकता हूँ कि मैंने उनको यह सलाह दी और बहुत बलपूर्वक सलाह दी कि आप उत्तर प्रदेश में जाने का यत्न न करें, वरन् आप राजस्थान में जायँ। मेरा उनको ऐसी सलाह देना अर्थपूर्ण था। मैं चाहता था कि जिन लोगों में सांस्कृतिक दृष्टि है और जिन्होंने उत्तर प्रदेश के सम्पर्क में आकर कुछ भारतीय संस्कृति के अंगों में प्रगति की है, वे राजस्थान के साथ जायँ और उस प्रदेश को सांस्कृतिक सहायता दें।

मेरी अत्यधिक इच्छा यह है कि हमारी एक केन्द्रीय संस्कृति, भारतीय संस्कृति, का फैलाव हो। मेरी यह दृष्टि नहीं है कि हमारे उत्तर प्रदेश की जो सीमा है उसको कुछ और बढ़ा लें। यदि इसमें से दो ज़िले दूसरे प्रदेश में जाते हैं तो मैं इसमें बाधक होने वाला नहीं हूँ। मैं इसका पोषक हूँ कि भारत की जो अपनी संस्कृति है जिसको मैं भारतीय संस्कृति कहा करता हूँ वह चारों ओर फैले वह दृढ़ हो और भारत की एकता की भावना दिन पर दिन हमारे देश में बढ़े। यह मुख्य बात है।

यदि मैं यह समझता कि इन भाषावार प्रदेशों के कारण इस कार्य में कुछ आघात पहुँचेगा, एकता की भावना को कुछ चोट पहुँचेगी तो मैं भाषावार प्रदेश का पक्ष कदापि न लेता। लेकिन मेरा हृदय कहता है कि आज छोटी बातों में कई प्रदेशों को जो कठिनाइयाँ हो रही हैं वे हट

जायँगी और उनके लिए रास्ता आसान हो जायगा। मैं अनुभव करता हूँ कि मध्यप्रदेश में मराठी और हिन्दी का प्रश्न खड़ा हुआ है, मैं अनुभव करता हूँ कि मद्रास प्रदेश में प्रतिदिन भाषा सम्बन्धी कठिनाइयाँ होती हैं, आप चाहते हैं कि अंग्रेजी भाषा हटे, हिन्दी फैले, लेकिन हिन्दी द्वारा काम करने में उन्हें कठिनाई है। तामिल में बोलें तो उनके लिये कठिनाई है क्योंकि बहुत से लोग उसको नहीं समझेंगे, तेलगू बोली जाय तो दूसरे लोग नहीं समझेंगे, इसी प्रकार कन्नड़ और मलयालम में कठिनाई होती है। परिणाम यह होता है कि अंग्रेजी चली आती है। इसी प्रकार और स्थानों में कठिनाई है। बम्बई वालों ने कहा कि जो उनकी भाषायें हैं वे ज़िलों के स्तर पर चलें और ऊपर के स्तर पर हिन्दी चले। यह स्वाभाविक ही था। मैं चाहता हूँ कि जहाँ तक हो हम यह सुविधा दें कि जनता अपनी अपनी विधान सभाओं में अपनी भाषा में बोल सकें। हमको अपने उत्तर प्रदेश में तनिक भी कठिनाई नहीं है। फ़ारसी लिपि हम पर अंग्रेज़ों की कृपा से लाद दी गई थी, कुछ पहले से भी थी। हम उससे छुटकारा पा गये। हम ईश्वर को धन्यवाद देते हैं कि वहाँ हिन्दू, मुसलमान सब मिलकर हिन्दी भाषा में और एक भारतीय लिपि अर्थात् नागरी लिपि में अपना कार्य कर रहे हैं। मैं चाहता हूँ कि जो लाभ हमको है वही लाभ हमारी भाषा की जो बहनें हैं वह उठायें और दूसरे प्रदेशों के रहने वाले भाई भी स्वाधीन होकर उसी ढंग से एक भाषा में अपना काम कर सकें।

मेरी पूरी सहानुभूति उन लोगों के साथ है जो इस काम में शीघ्रता कराना चाहते हैं। लेकिन आज इस प्रस्ताव के स्वीकार न करने के पक्ष में हमारे दल का निश्चय है। मैं भी उसके साथ हूँ। किन्तु मैं अपने माननीय मन्त्री जी को और गवर्नमेंट को यह सुझाव देता हूँ कि जहाँ तक हो सके इस मामले में देरी न करें। उससे हमारे देश को हानि पहुँचेगी ऐसा कोई भय न करें। इससे लाभ ही होगा और लोगों की भावनाएँ हमारे साथ आयेंगी। जितनी जल्दी हो सके गवर्नमेंट इस कार्य को उठा ले यही मेरा कहना है।

९

रेलवे विभाग में सुधार

२५ फ़रवरी सन् १९५३ को उस वर्ष के रेलवे आय-व्ययक पर सामान्य चर्चा के प्रसंग में बोलते हुये

उपाध्यक्ष महोदय ! जो अनुमान पत्र मंत्री महोदय ने इस भवन के सामने उपस्थित किया है उसमें मुझे कुछ सन्तुलन, नापतौल दिखाई पड़ी और स्वभावतः मुझे वह अच्छा लगा। इसका यह अर्थ नहीं है कि उसमें जो आवश्यकताएँ हैं, वह सभी पूरी हो गई हैं। उसमें कमियाँ हैं और कुछ ऐसी कमियाँ हैं जो संभवतः मंत्री महोदय के अधिकार के बाहर हैं किन्तु हमारा कर्त्तव्य है कि हम उनका ध्यान उन कमियों की ओर दिलाते जायँ। साथ ही इसमें कोई सन्देह नहीं कि पिछले कुछ वर्षों में रेल यात्रा में अधिक सुविधाएँ दी गई हैं, रेल का प्रबन्ध कुछ अच्छा हुआ है और इसके लिये जो हमारे पुराने स्वर्गीय मंत्री गोपालस्वामी आयंगर थे, वह बहुत कुछ हमारी कृतज्ञता के अधिकारी थे। आज वह हमारे बीच में नहीं हैं। हम सबों को इसका खेद है और मैं भी इस अवसर पर स्वर्गीय आत्मा के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करता हूँ।

तीसरे दर्जे में भीड़

रेल यात्रा में जो सुविधाएँ हुई हैं, जो उन्नति हुई है, उनमें से मुझे दो एक तो प्रत्यक्ष दिखाई देती हैं जैसे गाड़ियों का ठीक समय पर चलना। निश्चय ही इस विषय में पहले की अपेक्षा उन्नति हुई है। भीड़ों के सम्बन्ध में जो कुप्रबन्ध पहले देखने में आता था उसमें भी कुछ अच्छापन है। हम देखा करते थे कि किस प्रकार से गाड़ियों में लोग लटके हुए चलते थे, आज वह तमाशा बहुत अधिक देखने को नहीं मिलता, कभी-कभी दिखाई देता है। परन्तु साथ ही इसमें कोई सन्देह नहीं कि तीसरे दर्जे में भीड़ रोकने की व्यवस्था अभी समुचित नहीं हुई है। यह त्रुटि है। सम्भव है यह बात मंत्री महोदय के हाथ से बाहर हो क्योंकि गाड़ियों की संख्या कम है। परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि एक-एक डिब्बे में जितनी संख्या बैठने के लिये लिखी रहती है उससे साधारण रीति से ड्योढ़े और कभी-कभी दूने व्यक्ति घुसे रहते हैं। मैंने स्वयं एक दो बार गिना है। यह दशा शोचनीय है और मेरा तो यह कहना है कि इस

ओर बहुत ही शीघ्र ध्यान देने की आवश्यकता है।

वर्गहीन रेलवे

मैंने पिछले वर्ष एक सुझाव दिया था कि रेलवे वर्गहीन बनाई जाय। उसमें से दर्जे हटा दिये जायँ। मुझे कुछ थोड़ा सा संतोष है कि मंत्री महोदय ने इधर दो चार पैर आगे रखे हैं। किन्तु उनकी चाल बहुत डर डर कर बढ़ रही है। सम्भव है वह दूसरी शक्तियों के कारण तेज़ नहीं चल पाते। उन्होंने कुछ आगे बढ़ने का यत्न किया और, जैसा उन्होंने बताया, उन्होंने जनता नाम की गाड़ियाँ कुछ अधिक की हैं। कुछ शाखाओं से उन्होंने पहले दर्जे हटा दिये हैं। मेरा सुझाव यह है कि इसमें बहुत तीव्रता हो सकती है, इसमे घाटे का कोई प्रश्न नहीं है, शायद इसमें सरकार को कुछ फ़ायदा ही होगा, हम मेम्बरों को सरकार जो किराया देती है वह ऐसा करने से बहुत कम हो जायगा।

डा० रामसुभग सिंह (शाहाबाद-दक्षिण) : एयर-कंडीशंड गाड़ियाँ तो हैं।

श्री टंडन : एयर-कंडीशंड गाड़ियाँ आपको गवर्नमेंट देने वाली नहीं है।

श्री एन०सी० चटर्जी अध्यक्ष पद पर आसीन हुए]

जब वह फ़र्स्ट क्लास को हटायेंगे तो स्वभावतः सेकेंड क्लास को फ़र्स्ट क्लास का नाम देकर किराया घटायेंगे, ऐसी मैं आशा करता हूँ। उनका खर्च तो घटेगा ही। परन्तु यह बहुत बड़ी बात नहीं है। मैं तो इस बात पर ध्यान दे रहा हूँ कि हम भविष्य में जो समाज की रूपरेखा बनाना चाहते हैं उसमें रेल वाले सहायक बनें। मेरा सुझाव है कि इस समय भी वह बात कुछ इस तरह से हो सकती है। शायद बिल्कुल अन्तर हटा देना मंत्री महोदय को कठिन मालूम पड़े। मैं सुझाव देता हूँ कि वह दो वर्ग रखने की व्यवस्था करें, एक साधारण वर्ग रक्खें और एक अधिक सुविधा वाला ऊपरी वर्ग। अभी दो रक्खें फिर जब समय आये तब एक ही वर्ग रक्खें। अभी वह और दर्जों को हटाने की ओर नहीं बढ़ रहे हैं। मुझे ऐसा लगता है कि कुछ शक्तियाँ उनको रोक रही हैं। सम्भव है कि वह कैबिनेट के कारण ऐसा न कर सकते हों। अस्तु, मुझे इस विषय में कुछ अधिक नहीं कहना है। यही चेतावनी देनी है कि जहाँ तक सम्भव हो वह इस ओर यत्नवान हों।

एटा में रेल

मैं उत्तर प्रदेश का रहने वाला हूँ। हमारे एक बहुत पुराने जनपद का जो मुख्य स्थान है, जिले का हेडक्वार्टर है, वहाँ अभी तक रेल

नहीं है, अर्थात् एटा में। अब की बार मंत्री जी ने उसको देखभाल की सूची में रक्खा है। मुझे आशा है कि इस देखभाल का नतीजा ठीक निकलेगा और वहाँ वह रेल पहुँचायेंगे। जहाँ तक नाप करने की बात है, मेरी आशा है कि वह इस काम को बहुत लम्बायमान नहीं करेंगे और दो चार महीनों में ही नाप खत्म हो जायगी और नाप खत्म कर लेने के बाद फिर वहाँ वह काम लगा देंगे। बजट में उन्होंने इसको बनवाने की बात तो रक्खी नहीं है, केवल नाप कराने की बात रक्खी है, लेकिन मैं आशा करता हूँ कि सप्लीमेंटरी (अनुपूरक) बजट में लाकर वह उस व्यय को पूरा कर लेंगे।

रेल विभाग में अनैतिकता

इस रेल विभाग की चर्चा करते हुए मेरा ध्यान स्वभावतः रेल में प्रचलित अनैतिकता की ओर जाता है। अब वह इतनी साधारण बात हो गई है कि उसे हर आदमी जानता है, रास्ते का बच्चा-बच्चा जानता है और मेरा विश्वास है कि मंत्री महोदय स्वयं जानते हैं और कैबिनेट के भी हर एक मंत्री जानते हैं। जो अनैतिकता रेल में तमाम प्रकार की और बड़े-बड़े अधिकारियों से लेकर माल बाबू तक फैली है वह छिपी नहीं है। अभी तीन या चार दिन की बात है, मेरे पास रेल के एक अधिकारी आये—बहुत ऊंचे नहीं परन्तु वह अधिकारी वर्ग में हैं। शिकायत करने नहीं आये थे, किन्तु रेल में जो भ्रष्टाचार है उसकी बात छिड़ी। मैंने उनसे कहा कि मुझको ऐसा लगता है कि ऊपर के लोग जो बहुत ऊंचे अधिकारी हैं सबसे ऊंचे, वह तो शुद्ध होंगे, मुझको तो लगता है कि नीचे के दर्जे में भ्रष्टाचार फैला है। वह मुस्कराये। उस मुस्कराहट में इन्कार था, फर मैंने विशेषकर एक बहुत ऊंचे अफ़सर का नाम लिया और पूछा कि क्या आप उनको शुद्ध नहीं समझते, मैं उनको शुद्ध समझता हूँ। वह बहुत ऊंचे ज़ोन के, बिलकुल ऊंचे पद के अधिकारी हैं। मैंने उनसे कहा कि मैं ऐसा अनुमान करता हूँ कि वह तो शुद्ध होंगे। तब उन्होंने साफ़ साफ़ कहा कि नहीं मैं ऐसा नहीं समझता। मुझको अचम्भा हुआ और धक्का भी लगा कि जहाँ इस प्रकार से धुरी के लोग, ऊंचे अधिकारी भ्रष्ट हैं तब फिर नीचे के लोगों की क्या बात हो!

तब तो 'ई खानदान तमाम आफ़ताबस्त'। मालूम होता है कि यह रेलवे का खानदान का खानदान कलुषित हो गया है। हाँ, थोड़े बहुत तो अच्छे होंगे ही। ऐसा लगता है कि बहुत घोर प्रयत्न की ज़रूरत है, और जैसा किसी सदस्य ने कहा था, मुझे भी उनके स्वर में अपना स्वर मिला कर कहना पड़ता है कि शायद इस बात की जरूरत है कि ऊपर की श्रेणी में सख्ती की जाय। मेरा एक सुझाव है। आपके जो ज़ोन के मैनेजर

आदि हैं, वह पुराने पुराने अधिकारी हैं और यह नीचे से आते हैं। उनकी आदतें नीचे से पड़ी रहती हैं। जैसे जब तहसीलदार और नायब तहसीलदार डिप्टी कलक्टर हुआ करते थे तो डिप्टी कलक्टरों में भी भ्रष्टाचार होता ही था। मेरा सुझाव है कि आप इन बहुत ऊंची जगहों पर रेलवे विभाग के नीचे के आदमियों को न लें। बाहर के ऊंचे आदमियों को रखें। सार्वजनिक कामों में जिनकी साख हो और जो समझे हुए और जाने हुए हों, उनको रखें।

बाबू रामनारायण सिंह (हजारीबाग--पश्चिम) : लेकिन पार्टी का आदमी न हो।

श्री टंडन : इस प्रकार की नीति में पार्टी का प्रश्न ही नहीं उठता। ऐसा कोई प्रश्न आना ही नहीं चाहिये। मैं आप से बिल्कुल सहमत हूँ और मेरा विश्वास है कि अगर मंत्री महोदय इस तरह पर सोचंगे तो देश में उनको ऐसे ऊचे नैतिक लोग मिल जायँगे जिनको पैसा मोल नहीं ले सकता और जिनके लिए विश्वास किया जा सकता है कि उनको पैसा मोल नहीं ले सकेगा। ऐसे आदमियों को आप रखें और जो सुधार के काम आप चलाना चाहते हैं उनको चलाने का यत्न करें। जो पुराने लोग बैठे हैं उनमें से ऐसा कोई आदमी नहीं है जो यह न जानता हो कि माल बाबू क्या करता है और स्टेशन मास्टर क्या करता है। य लोग आपकी तरकीबों को चलाने में बाधक होंगे। आपने यह जो कमेटी बनाई है उसके लिये मैं आप को बधाई देता हूँ। जो यह रेलवे के अफ़सर मुझसे मिलने आये थे उनसे जब मैंने इस कमेटी की चर्चा की तो उन्होंने कहा कि यह कमेटी कुछ करने वाली नहीं है। वह मुझको अच्छे आदमी लगे। सज्जन आदमी थे और यह मेरी निजी बातचीत थी। स्वभावतः मैं यहाँ नामों की तो चर्चा नहीं कर सकता। मैं यह सुझाव देता हूँ कि आप इस प्रकार से बहुत ऊंचे पदों पर नीचे से आदमियों को लाना रोकें और तब देखें कि किस प्रकार से सुधार होता है।

रेलवे में हिन्दी

मुझे एक आध बात और कहनी है। अभी हाल में अलीगढ़ में उत्तर प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन हुआ था, १७, १८ तारीख को। उत्तर प्रदेश के राज्यपाल ने उसका उद्घाटन किया था। उस अधिवेशन में हिन्दी के दृष्टिकोण से कुछ प्रस्ताव रेलवे के बारे में रखे गये थे। मैं उनकी ओर आप का ध्यान दिलाना चाहता हूँ, मैं उन प्रस्तावों को पढ़ूँगा नहीं। उनमें कहा गया था कि कई ऐसी बातें हैं जहाँ हिन्दी आसानी के साथ चलाई जा सकती है लेकिन उसके चलाने पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है। जैसे

रेलवे के जो डब्बे हैं उनके ऊपर सूचना की बातें आप आसानी से नागरी अक्षरों में लिखवा सकते हैं। इसमें बहुत भाषा का प्रश्न नहीं है। प्लैटफ़ार्मों पर आपने बहुत जगह बदलाव किया है। उस पर मैं आपको बधाई देता हूँ परन्तु अब भी बहुत सी जगहों में आसानी से नागरी को बढ़ाया जा सकता है। आप प्लैटफार्मों पर हिन्दी भाषा और नागरी अक्षर और अंकों को और भी बढ़ावें और शुद्धता की तरफ़ भी ध्यान रखें, यह मेरा सुझाव है।

मैं आपको एक सुझाव और देना चाहता हूँ। मैंने देखा है कि यह जो कालपत्रक आप छापते हैं, जिसको अंगरेज़ी में टाइम टेबल कहा जाता है, उनका उतना प्रचार नहीं किया जाता जितना अंग्रेजी टाइम टेबलों का है। यह जो नागरी में कालपत्रक छापे गये हैं, उनके मिलने में कठिनाई होती है। शायद वे कम छापे गये हैं। मुझे स्वयं उसे प्राप्त करने में कठिनाई हुई। दूसरी बात यह है कि आपने इनको नागरी में तो छपवाया है परन्तु जहाँ अंक हैं वह अंग्रेजी के हैं। आपने उनमें अंक अंग्रेज़ी के या, जो भाषा संविधान में प्रयुक्त हुई है उसके अनुसार, अन्तर्राष्ट्रीय अंक छापे हैं। यहाँ अन्तर्राष्ट्रीयता की कोई अपेक्षा नहीं है। मेरा सुझाव है कि आप इनमें नागरी अंकों का उपयोग करें। आप यह हिन्दी कालपत्रक जो छापते हैं वह किसके लिये ? जो अंग्रेजीदां लोग हैं उनके लिये तो आप अंग्रेजी में चलाते हैं लेकिन यह जो हिन्दी में छपते हैं यह तो साधारण जनता के लिये हैं। और जनता की सुविधा इसमें होगी कि आप अंग्रेजी अंकों या अन्तर्राष्ट्रीय अंकों को न छाप कर नागरी अंकों को छापें।

श्री के० के० वसु (डायमण्ड हार्बर) : जनता तो पढ़ना ही नहीं जानती। आठ परसेंट लिटरेसी (साक्षरता) है।

श्री टंडन : यदि जनता पढ़ना नहीं जानती तो क्या अंग्रेज़ी का अंक वह ज्यादा समझेगी ? ज़रा विचार करिये। ऐसी बड़ी जनता है जो अंग्रेजी नहीं जानती लेकिन हिन्दी जानती है। हिन्दी भी छोड़ दीजिये, बंगला जानने वाली जनता है. जो अंग्रेजी अंक नहीं जानती किन्तु नागरी अंक जानती है। आपने क्या बात कही है ! यह कितनी ग़ैर-जिम्मेदारी की बात है। जनता बहुत पढ़ी नहीं है लेकिन जनता में ऐसे बहुत हैं जो अपनी भाषा जानते हैं, हिन्दी जानते हैं, बंगला जानते हैं, बंगाली अंक जानते हैं, अंग्रेजी नहीं जानते, किन्तु नागरी जानते हैं, नागरी अंक पढ़ते हैं। उनकी संख्या आप ऐसे आदमियों से सौ गुना अधिक है, मेरा मतलब वैयक्तिक नहीं है, मेरा मतलब अंग्रेजी जानने वालों से है। उस जनता के लिये जो इस कालपत्रक को देख सकती है, और उससे लाभ उठा सकती है, उसके लिये मेरा यह कथन है कि नागरी अंकों का प्रयोग होना चाहिये।

सम्भव है कि हमारे मंत्री जी यह आपत्ति उठावें कि यहाँ तो हम संविधान से बंधे हैं। संविधान ने यह कहा है कि जो प्रकाशन यूनियन की तरफ से हो उसमें अन्तर्राष्ट्रीय अंकों का प्रयोग किया जाय। सम्भव है यह आपत्ति मंत्री जी न उठावें तो उनके सचिवगण उठावें, क्योंकि मैं जानता हूँ कि आज गवर्नमेंट आफ इंडिया का जो सचिवालय है, वह हिन्दी का पक्षपाती नहीं है। सम्भव है कि वहाँ से यह आपत्ति उठाई जाय। मेरा उत्तर यह है कि आप संविधान में ही देखेंगे कि जहाँ पर उसमें यह रखा गया कि साधारण रीति से अन्तर्राष्ट्रीय अंकों का प्रयोग होगा, वहाँ यह भी है कि राष्ट्रपति को अधिकार है कि जहाँ मुनासिब समझें वहाँ वे नागरी अंकों का प्रयोग करें। आप अगर चाहें तो जब तक १५ वर्ष तक अंग्रेजी है, अंग्रेजी अंकों का प्रयोग कर लें। लेकिन अगर आप चाहें तो आप नागरी के अंकों का प्रयोग कर सकते हैं। अगर आप ऐसा प्रबन्ध करेंगे तो मैं समझता हूँ कि आपकी कैबिनट को इसमें कोई आपत्ति नहीं होगी क्योंकि यह तो केवल सुविधा की बात है कि नागरी अंक छपवाये जायँ। मैं आपको सुझाव देता हूँ कि जो आपके ६ जोन या विभाग हैं उनमें आप दक्षिणी भाग को छोड़ दें, मैं उसके लिये नहीं कहता क्योंकि जब संविधान सभा में यह प्रश्न उठा था तब हमारे दक्षिणी भाइयों ने कहा था कि हमारे यहाँ यही अंक चलते हैं, विशेषकर तामिल भाइयों ने कहा था कि हमारे यहाँ यही अंक चलते हैं। अगर तामिल के भाई या अन्य दक्षिणी भाई चाहते हैं तो आप सदर्न रेलवे में, दक्षिणी रेलवे में, अंग्रेजी में ही टाइम टेबल छापें। मुझे आपत्ति नहीं है। लेकिन जो शेष पाँच ज़ोन हैं उन सब में हिन्दी भाषा और नागरी अंक आने चाहियें, क्योंकि उनमें एक ओर तो महाराष्ट्र और गुजरात हैं और दूसरी ओर बंगाल, उत्तर प्रदेश, विहार और पंजाब हैं। इस तरह आप देखेंगे कि पाँचों विभागों में आप आसानी से नागरी अंक चला सकेंगे और मेरा कथन है कि इससे सबको सुविधा होगी।

एक कलङ्क

मैं अधिक समय नहीं लेना चाहता। मेरा निवेदन है कि यह एक आवश्यक विषय है। आज मैं संविधान को दुरुस्त करने नहीं बैठा हूँ। मेरी आशा अवश्य है कि यह जो अन्तर्राष्ट्रीय अंक के नाम से हमारे देश के संविधान पर कलंक है, वह अवश्य हटेगा। इन अन्तर्राष्ट्रीय अंकों को मैं आज कलंक मानता हूँ। हमारे लिये लज्जा का विषय है कि हमारी भाषा में, नागरी में, हमारे अपने सुन्दर अंक न रखे जाकर यह अन्तर्राष्ट्रीय अंक रखे गये हैं। इस कलंक से संविधान को भविष्य में ठीक करना होगा। मेरी

आशा है कि आने वाली संतान हम लोगों से अधिक बुद्धिमान होगी और अधिक शक्तिवान होगी। वह इस कलंक को संविधान से निकालेगी। परन्तु आज मेरी आप से यह मांग नहीं है। मैं जानता हूँ कि आपके हाथ बंधे हुए हैं, संविधान ने आपके हाथ बाँधे हुए हैं। मेरे सुझाव के अनुसार आज के संविधान में भी सम्भव है कि नागरी के अंकों को राष्ट्रपति जी की आज्ञा से आप चलावें और इस प्रकार से हिन्दी को दिन दिन आप आगे बढ़ाने का यत्न करें। बस मुझे अधिक नहीं कहना है।

●

कुशल प्रशासन

११ मार्च सन् १९५३ को उस वर्ष के सामान्य
आय-व्ययक पर अपने विचार प्रकट करते हुए

अध्यक्ष महोदय ! मेरे बोलने के सम्बन्ध में थोड़ी सी चहक उठ गयी मुझे वह अच्छी लगी, इसलिए कि एक अवसर मुझे मिला कि मैं आपक और इस भवन का ध्यान एक कार्यक्रम के सम्बन्ध में यानी पार्लियामेंटर्र प्रोसीड्योर के सम्बन्ध में दिला दूं।

संसदीय क्रम

साधारण रीति से कुल जगह विधान सभाओं और संसदों का यह नियम है कि कोई आदमी जब तक वह खड़ा नहीं होता बुलाया नहीं जाता। मैंने बाहर जाकर आपके पास स्लिप भेजी, मैं ढूंढ़ रहा था कि मुझे कोई आदमी मिले जिसके ज़रिए वह स्लिप भेजूं। जब मैंने व्हिप महोदय को ढूंढ़ निकाला तो उनके हाथ में मैंने वह पर्चा आपकी सेवा में उपस्थित करने के लिए दे दिया। उसी समय एक सज्जन मुझसे खड़े खड़े बातें करने लगे, व्हिप महोदय ने कहा कि आप तुरन्त अन्दर जायँ। मैं तुरन्त अन्दर आया, तो मालूम हुआ कि मेरा नाम पुकार लिया गया। आज मुझे इस बात के कहने का अवसर मिला कि यहाँ जो यह पर्ची देने का क्रम चल रहा है, वह ठीक नहीं है। अगर यह बात न उठी होती, तो शायद मैं इस तरफ़ आपका ध्यान न खींचता। मैं बजट पर बोलना चाहता था, लेकिन इस समय उचित है कि मैं इस सम्बन्ध में कुछ ज़रूर कह दूं। मुझको इन सभाओं का काम कैसे होना चाहिए इसका कुछ अनुभव है और अपने उस अनुभव के भरोसे पर मेरा निवेदन है, बहुत नम्र निवेदन है, कि यहाँ जो क्रम है कि लोग बैठे हुए हैं खड़े भी नहीं होते और स्लिप मात्र दे कर बैठे रहते हैं, उनका नाम बुलाया जाता है, यह तरीक़ा संसद के उपयुक्त नहीं है।

उचित रास्ता यह है कि जिसको बोलना हो वह खड़ा हो, पर्चे या सूची का असर केवल यह होना चाहिए कि आप समझ लें कि अमुक दल के लोग अमुक को बुलवाना चाहते हैं। परन्तु जो खड़ा होता है उसका फिर से नाम पुकारा जाता है, यह साधारण विधान सभाओं का और ब्रिटिश हाउस आफ कामन्स का, जिससे हमने बहुत शिक्षा पाई है, तरीक़ा है। बस, मैं इस विषय में और अधिक नहीं कहूँगा। अध्यक्ष महोदय, मैं जानता हूँ कि यह आपके हाथ में नहीं है मगर मैं आपके द्वारा इस भवन के जो

मुख्य स्पीकर हैं उन तक अपनी आवाज़ पहुँचाना चाहता हूँ कि आज के क्रम को मैं बिल्कुल ग़लत समझता हूँ। यह उस प्रकार का है जैसे किसी स्कूल के दर्जे में लड़के बुलाये जायें और कहा जाय कि अब वह बोले और अब अमुक बोले। यह क्या है? यह उचित नहीं है। उचित तो यह है कि दोनों पक्ष के लोग अपने अपने स्थानों पर खड़े हों और जिसको आप के जी में आये उसको बोलने के लिए कहें। यह साधारण क्रम है और इसी क्रम के अनुसार यहाँ पर काम होना चाहिए। अब मैं इस पर और अधिक न कह कर बजट पर आना चाहता हूँ।

ब्याज की दर

यह जो अनुमानपत्र, बजट, आपने उपस्थित किया है, उस पर मुझे कुछ थोड़े से अपने विचार प्रकट करने हैं। जैसा कि स्वयं फ़ाइनेंस मिनिस्टर (वित्त मंत्री) ने स्वीकार किया है, यह अनुमानपत्र पंचवर्षीय योजना की छाया में बनाया गया है। इस बजट पर उस योजना का पूरा प्रभाव हो यह स्वाभाविक है, ऋण लेने की बात इसमें आई है और बड़े बलपूर्वक आयी है। हमारा देश अपनी योजना की पूर्ति के लिए कर्ज़ा लेगा। जो कुछ कर्ज़े लिए गये हैं वे भी सामने रक्खे गये हैं। मुझे उस विषय पर अधिक दूर तक जाना नहीं है, मगर ऐसा मुझको लगा कि बाहर से कर्ज़ा लेने में ब्याज बहुत बढ़ा दिया गया है, आपने चार रुपये चौदह आने तक की दरें खोली हैं, इस ब्याज की दर पर बाहर से आपको रुपया आया है, मुझे वह बहुत ज्यादा लगता है। जहाँ तक मेरी जानकारी है, कोई भी सरकारी लोन (ऋण) जो इस समय देश में प्रचलित है, इस दर पर नहीं है। पुराने समय की बात मैं नहीं कह रहा हूँ, बहुत पहले हमने इतना ब्याज दिया है, परन्तु इस समय जहाँ तक मुझको याद पड़ता है देश में प्रचलित सूद की जो दर है वह कम है और यह चार रुपया चौदह आने का ब्याज जो आज लोन लेने के लिए दिया जा रहा है अब तक की ब्याज की दरों से बढ़ कर है। यह कहाँ तक उचित है कि बाहर से तो ऋण प्राप्त करने के लिए आप इतना ब्याज देने को राज़ी हो जायँ लेकिन यहाँ देने में इतनी सख़्ती करें? वित्त मंत्री स्वयं इस विषय में चतुर हैं। इस बढ़ी हुई ब्याज की दर को मंजूर करने में कुछ कारण तो हैं ही। मैं भी अनुमान करता हूँ कि इसके लिए कुछ कारण हो सकते हैं। हो सकता है कि वह ऐसा समझते हों कि हमें रुपया बाहर से लाना चाहिए, क्योंकि अगर हम यहाँ से रुपया घसीट लेंगे तो दूसरे व्यापारियों को कठिनता होगी, या वह समझते हों कि अगर यहाँ साढ़े चार या पौने पाँच देंगे तो सिक्यूरिटीज के भाव गिर जायंगे। वह तो गिर ही जायंगे परन्तु

गिराव चढ़ाव तो लगा ही रहता है । जब हम व्याज नये ऋण पर कम देंगे तो पुराने ऋणों का भाव चढ़ जायगा और जब कुछ ज्यादा भाव पर नया लोन निकालेंगे तो पुरानों का भाव गिर जायगा, यह बराबर चला आया है। लेकिन इस समय हम बाहर तो बहुत व्याज दें और अपने यहाँ सख्ती करें, इसका एक परिणाम यह हुआ कि जो जो आपने लोन निकाले उनमें कुछ बहुत सफलता नहीं मिली। मेरा अपना अनुमान है कि हम यहाँ का व्याज बढ़ा देते तो बहुत अधिक रुपया आ सकता था। पर अनुमान पत्र में जो व्याज की बात आई है पौने पाँच रुपये और चार रुपये चौदह आने की, उस में कुल साढ़े पच्चीस करोड़ रुपये आपको बाहर से मिले हैं। क़रीब ५१ लाख डालर। मेरा तो अनुमान है कि यदि यहाँ के व्याज की दर बढ़ा दी जाती तो यहाँ भी इतना रुपया आ जाता। लेकिन मुझे इस व्याज के प्रश्न पर बहुत अधिक नहीं कहना है। मेरा विशेष निवेदन दो तीन और विषयों में है।

भ्रष्टाचार का रोकना

पंचवर्षीय योजना पर वित्तमंत्री जी ने ठीक ही बल दिया। उन का कहना है—

"आयोजित आर्थिक विकास के कार्यक्रम की पूर्ति न केवल नीति-निर्धारण तथा धनोपलब्धि पर निर्भर है अपितु कुशल प्रशासन तथा जन सहयोग पर भी है।"

यह दो शब्द **"पब्लिक्क कोआपरेशन"** और **"एफिशेण्ट ऐडमिनिस्ट्रेशन"** ही कुंजी हैं इस योजना की सफलता की। **पब्लिक कोआपरेशन** अर्थात् सार्वजनिक सहयोग आपको तभी मिलेगा जब आप, जैसा अभी कुछ भाइयों ने भी कहा, जनता से अधिक सम्पर्क फैलायें, जनता का स्नेह खींचें और जनता में भरोसा पैदा करें। एफिशेंट ऐडमिनिस्ट्रेशन अर्थात् अच्छा प्रशासन उस विश्वास को आकर्षित करेगा। मेरे ऊपर असर यह है कि एफिशेंट ऐडमिनिस्ट्रेशन की कमी है। जो बात कि ऐडमिनिस्ट्रेशन में सब जगह चाहिये, मेरी बौछार किसी एक के ऊपर नहीं है, वह नहीं है। मुझे ऐसा लगता है कि केन्द्रीय विभागों में रुपये की बचत के लिए खर्च में जितनी रोक थाम चाहिए उसकी भी कमी है। मैंने उस दिन उदाहरण दिया था उस विभाग का जिसका काम है कि वह दूसरों की जांच करे, यानी जो आडिट एंड एकाउन्टस का विभाग है। उस एकाउन्टस विभाग में किस प्रकार से जाली चेक एक कार्यकर्ता ने बनायी और उसने यह कहा कि चाहे जितने रुपये का चेक हम से लो, मैं दे दूंगा, हिन्दुस्तान के किसी भाग में इम्पीरियल बैंक के ऊपर; कैसे उसकी हिम्मत पड़ी? मुझको

तो आश्चर्य हुआ। त्यागी जी ने मुझे फ़ाइल दिखलाई। मैं उनको धन्यवाद देता हूँ। प्रधान मंत्री जी ने उस दिन एलान किया था कि वह फ़ाइल दिखलायेंगे। मैंने उसे देखा। फ़ाइल देखने के बाद मुझे कुछ नयी बातें अवश्य मालूम हो गईं। लेकिन मेरे ऊपर यह असर नहीं पड़ा कि मुकदमा उठा लेने की जो आज्ञा दी गई थी वह सही थी। इतना मुझे पता लगा कि उस आज्ञा में वित्त मंत्री जी का हाथ नहीं था, त्यागी जी का हाथ नहीं था, सेन्ट्रल रेवेन्यू वालों ने उसे नहीं दिया था। परन्तु आज्ञा दी गई, और जैसा मैंने उस दिन कहा यह बड़ी अजीब आज्ञा थी। ऐसे जालसाज़ी के मुकदमे में आज्ञा दी जाय कि मुकदमा उठा लो, बिना उस आदमी का बयान लिये हुए यह मुझे बड़ा अद्भुत लगा। उस आदमी का बयान होता तो बातें खुलतीं कि क्या हुआ, कौन उसमें शरीक हैं, और वह स्वयं कैसे उसमें शामिल हुआ। कहा गया कि वह बेचारा बीमार पड़ा है, त्यागी जी ने बयान दिया था कि नहीं मालूम वह ज़िन्दा भी है या मर गया है। मैं त्यागी जी से निवेदन करूँगा कि उसके घर से पुछवा लें कि उसके स्वास्थ्य का क्या हाल है। मैंने सुना है कि वह बहुत तगड़ा है। यह जो उन्होंने समझा कि वह खाट पर पड़ा हुआ मरने वाला है, और हमारे गवर्नमेंट के विभाग को करुणा आ गई, वह ठीक नहीं था। वह करुणा शासन के योग्य नहीं थी। जब भीष्म पितामह शरशैया पर पड़े थे तब शासकों को एक सलाह उन्होंने दी थी, कहा था कि जो दुष्टों के ऊपर दया करता है और जो दीनों की रक्षा नहीं करता यह दोनों नर्क में जाते हैं। यह एक जीवित उदाहरण था जो मैंने सरकार के सामने लाकर धरा था। ऐसा तो हर एक को मौक़ा भी नहीं मिल सकता। मैं आप से कहता हूँ कि केन्द्रीय गवर्नमेंट की छाया में भ्रष्टाचार बहुत बढ़ा हुआ है। जो राज्यों की गवर्नमेंटें हैं वहाँ भी खूब फैला है, मगर केन्द्रीय शासन से जिन लोगों का सम्बन्ध है, उनमें बहुत अधिक फैला है। चेतावनी की आवश्यकता है। मैं वित्त मंत्री से और क्या कह सकता हूँ। वह तो सब जगह पहुँच नहीं पाते। लेकिन कड़ाई की जरूरत है। सोचने की ज़रूरत है। त्यागी जी ने बड़ी चतुरता से सोचकर रास्ता बनाया कि जो छिपे हुए इनकम टैक्स हैं उनको निकालें। मैं उनको बधाई देता हूँ। वह यह सोचें कि यह भ्रष्टाचार जो लोगों के भीतर घुसा हुआ है उससे वह कैसे अपनी रक्षा करें।

सुन्दर ग्राम—योजना का आधार हो

जो बात इस योजना के सम्बन्ध में उस दिन ज़ैदी जी ने कही थी वह मुझको अच्छी लगी थी, हमारा सम्पर्क जनता से इस प्रकार से होना चाहिये कि हम उनकी आवश्यकता को देख कर अपनी योजना बनावें,

बजाय इसके कि थोड़े से आदमियों ने यह तय किया कि हम ऊपर से कुछ योजनायें जनता पर लादें। उससे अच्छा यह होता कि हम जनता के सहयोग से योजना बनायें। मेरा खुद यह ध्यान रहा है कि हमारी योजना के मुख्य कामों में हमें गाँवों की तरफ़ ज़्यादा ध्यान देना चाहिये। यह जो बड़ी-बड़ी योजनायें हैं वह अन्त में आकर शायद कुछ लाभ करेंगी परन्तु चाहिये यह था कि हम आरम्भ में ही जनता के उत्साह को बढ़ाते, गाँवों के अन्दर जा कर उनके लिए रास्ता निकालते, उनके लिए उद्योग सोचते। कितनी बेकारी चारो तरफ़ फैली है। लोगों की यह बेकारी बढ़ती जाती है। लोग गाँव को छोड़-छोड़ कर शहरों में आ रहे हैं। इसको रोकने की आवश्यकता है। पहली योजना यह होनी चाहिए थी। गाँवों को ऐसा बना कर आप बड़ी बड़ी करोड़ों रुपये की स्कीमें बाद में सोचते। पहले गाँवों में जाकर कुछ आदर्श गाँव बसा देते। हर राज्य के अन्दर, और हो सके तो हर ज़िले के अन्दर दो-दो चार-चार ऐसे गाँव बसा दें। सुन्दर गाँव। आज के गाँव गन्दे हैं। घर ऐसे हों कि उसके साथ बगीचा हो। मैंने एक विचार पहले दिया था, फिर इसको रखता हूँ। हर घर वाटिका-गृह हो, देखिये तो कि इस से कितनी सुन्दरता फैल सकती है। ऐसे घर न बनने देवें जिनमें आधा एकड़ भूमि न हो। आधे एकड़ भूमि के साथ हर घर बनाइए, देखिये कितना सौन्दर्य फैलता है और देखिये कि किस तरह से लोग इसकी तरफ़ खिचते हैं। हमारे घर गन्दे हैं, गाँवों में जा कर ठहरिये तो थोड़ी देर में भागने की आवश्यकता मालूम होती है। गाँवों को सुन्दर बनाइए। स्वास्थ्य की समस्या को हल कीजिये। आज दवा लिये हुए लोग पुकारते फिरते हैं कि टीका लगवा लो। व्यर्थ की बात है। उससे कोई स्वास्थ्य सुधरने वाला है? यह तो चौपट करने वाला है। यह रास्ता नहीं है। गाँवों को स्वच्छ बनाइए, यही स्वास्थ्य रक्षा का मार्ग है।

देश का विभाजन एक भूल

अब मैं थोड़े से शब्द उस विषय पर कहना चाहता हूँ जो हमारे भाई डा० महमूद ने छेड़ा था। बड़ा अजीब विषय उन्होंने छेड़ा। जब विभाजन हो रहा था, हमारे भाइयों को मालूम है कि मेरी कठोर ध्वनि उसके विरुद्ध उठी थी। मैंने विभाजन का घोर विरोध किया था। मैं जानता था कि कांग्रेस वर्किंग कमेटी ने उसके पक्ष में राय दी थी। गांधी जी से मेरी बातें हुई। गांधी जी ने मुझ से कहा कि वे इसको ठीक नहीं समझते, वह इसके विरुद्ध हैं। मैंने निवेदन किया कि बापू जी मैं आपके साथ हूँ। उन्होंने तय किया कि वह उसका विरोध करेंगे। परन्तु मैं तो

दिल्ली से चला गया था। फिर जब आल इंडिया कांग्रेस कमेटी की बैठक हुई और उसमें वह प्रश्न आया तो उन्होंने कहा कि मैं क्या करूँ मैं नई वर्किंग कमेटी कहाँ से लाऊँ। यह कह कर उन्होंने इसको छोड़ दिया। परन्तु उस विषय को मुझे यहाँ नहीं लेना है। पाकिस्तान बन गया। मैं इतना ही कह सकता हूँ कि बहुत बड़ी भूल हुई—कांग्रेस की, जिसमें मैं भी शामिल था, यद्यपि मैंने कठोर विरोध किया था और मैंने कहा था कि गांधी जी भूल कर रहे हैं और मेरा हृदय आज भी कह रहा है कि गांधी जी ने भूल की, कुल वर्किंग कमेटी ने भूल की। परन्तु अब वह हो गया। आज उसको छेड़ना व्यर्थ है। डाक्टर महमूद ने उस विषय को छेड़ा और कहा कि पाकिस्तान और हिन्दुस्तान कुछ विषयों में मिल जायँ। मैं उसका स्वागत करूँगा, इस समय मैं इतना ही कह सकता हूँ। उन्होंने यह विषय छेड़ दिया तो मैं यह कहता हूँ कि मुसलमानों को इस विभाजन से फ़ायदा नहीं हुआ, अगर वह साथ रहते तो अच्छा था। लेकिन मैं इस विषय को यहीं छोड़ता हूँ। मैं इसका स्वागत करता हूँ और मैं समझता हूँ कि गवर्नमेंट भी इसका स्वागत करेगी कि अगर सम्भव हो सके तो डिफ़ेंस के मामले में और कुछ और मामलों में हम मिल कर काम करें।

उचित शिक्षा क्रम

इसके अतिरिक्त मुझे कुछ शिक्षा के विषय में कहना है। आज की शिक्षा के विषय में कई बार डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद यह मत प्रकट कर चुके हैं कि इसे बदलना चाहिए। कई मंत्रियों ने भी यह विचार प्रकट किया है कि यह शिक्षा उचित नहीं है इसे बदलना चाहिए। मैं देखना चाहता हूँ कि किस प्रकार का परिवर्तन होता है। आवश्यकता यह है कि जो लड़के हजारों की तादाद में हर साल निकलते हैं वह इस लायक बनाये जायँ कि वह अपनी जीविका प्राप्त कर सकें। ऐसा न हो कि वह गाँव छोड़कर शहरों में आने का प्रयत्न करें। इस विषय में मुझे केवल इतना ही कहना है।

हिन्दी-योजना

एक विषय और है, वह है हिन्दी का विषय, जो मुझे प्रिय है। मैं जानता हूँ कि कुछ मिनिस्टरों का उस तरफ़ ध्यान है। मेरा एक सुझाव है। शिक्षा विभाग ने एक हिन्दी समिति बनायी है। मेरा सुझाव है कि एक ऐसी योजना बना दीजिये, त्रिवर्षीय या पंचवर्षीय, कि वह समिति हर साल इतने ग्रन्थ निकाला करेगी। मैं चाहता हूँ कि यह समिति कम से कम पचास ग्रन्थ हर साल छापे।

श्री त्यागी : किस सिलसिले के ग्रन्थ ?

श्री टंडन : उन विषयों के जिनकी आवश्यकता आज हमारे देश में है। यह ग्रन्थ भिन्न भिन्न विषयों पर होने चाहिये, जैसे अर्थशास्त्र पर, राजनीति पर, वैज्ञानिक विषयों पर, रसायनशास्त्र पर, और रसायन शास्त्र के भिन्न भिन्न अंगों पर, पदार्थ विज्ञान के भिन्न भिन्न अंगों पर, इलेक्ट्रीसिटी पर, साउण्ड पर, लाइट पर। इन विषयों पर ऊँचे ऊँचे ग्रन्थ होने चाहिये। अगर आज आप इलेक्ट्रीसिटी पर कोई ऊंचा ग्रन्थ निकालें तो उसकी बहुत आवश्यकता है। ऐस्ट्रानामी पर, गणित पर, गणित के एक एक विभाग पर ग्रन्थ निकालिए। इन विषयों पर हिन्दी साहित्य सम्मेलन के परिश्रम से कुछ ग्रन्थ निकले हैं। लेकिन किसी भी संस्था के पास अधिक रुपया नहीं है। उसके पास रुपये की कमी है। आपके पास रुपये की कमी नहीं हैं, आप एक करोड़ रुपया ग्रन्थ छापने के लिए अलग रख दीजिये, यह कोई बड़ी रकम नहीं है। यहाँ तो अरबों का खेल है। पेनी वाइज़ और पाउण्ड फूलिश नहीं बनिये। यह आपको बहुत बड़ा ब्याज देगा। आप यह काम उस समिति के सुपुर्द कीजिये और उस समिति में पार्लियामेण्ट के सदस्यों को रखिये, केवल सरकारी नौकरों को नहीं। कुछ ऐसे लोगों को रखिये जो जाने हुए विद्वान् हैं, जिनमें यह ज्ञान है कि किन किन विषयों पर ग्रन्थों की आवश्यकता है। और इन ग्रन्थों को तेजी से लिखवाइये। जिस अच्छे लेखक का पता चले उसको रखिये। मैंने सुना है कि आप के यहाँ एक डिक्शनरी बनायी गई है। मैंने सुना है कि यह एक छोटा-सा कोश है और उस पर हजारों रुपया खर्च हो गया है। हिंदी साहित्य सम्मेलन ने भी बहुत से कोश बनाये हैं पर हमारा इतना रुपया खर्च नहीं हुआ। हमारे भी लगभग ३० हज़ार रुपये खर्च हुए मगर गवर्नमेण्ट का सा खर्च नहीं हुआ। हमने कोई १४ या १५ कोश छपवाये हैं। मगर आपका इसमें ख़र्च बहुत हुआ है, पूरी देखभाल नहीं है। मेरा सुझाव है कि इस ओर अधिक ध्यान दें।

सरकारी विभागों में हिन्दी

दूसरे मेरा उन मंत्रियों से, जो यहाँ बैठे हुए हैं, यह निवेदन है कि वह हिन्दी को अपने विभागों में चलाने का यत्न करें। मैं यह नहीं कहता कि संविधान के विरुद्ध ऐसा किया जाय। मैं वैधानिक हूँ। मैं संविधान के विरुद्ध आप से कुछ नहीं कहूँगा। मेरा कथन है कि वित्त मंत्री जी का भाषण हमारे सामने है। क्या यह भाषण हिन्दी में भी नहीं छप सकता था? माननीय लालबहादुर जी ने अपना भाषण हिन्दी में भी छपवा दिया था। मेरा निवेदन है कि आप अंग्रेजी में रखिये किन्तु जो आपका सरकारी साहित्य निकले वह अगर हिन्दी में भी आये तो इसमें भी हिन्दी

बढ़ेगी। मैं मानता हूँ कि इसमें कुछ ज्यादा रुपया खर्च होगा। मेरा तात्पर्य इन थोड़े से पन्नों से ही नहीं है। यह जो आप बड़े बड़े पोथे छपवाते हैं, यह जो चार वाल्यूम में आपने **बजट डिमांड** छपवाये हैं, इनको अंग्रेजी के साथ साथ हिंदी में भी छपवा सकते थे।

श्री त्यागी : बहुत देर लगती।

श्री टण्डन : यह ठीक है। लेकिन क्या आपको मालूम है कि हमारी उत्तर प्रदेश गवर्नमेण्ट ने कई वर्षों से यह करके दिखा दिया है? कई वर्षो से अंग्रेज़ी में और हिन्दी में भी बजट छपे हैं, और मेरा अनुमान है कि आज भी हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में वहाँ बजट छपता है।

श्री सी० डी० देशमुख : विधान के अनुसार तो वह रोमन में होना चाहिए।

श्री टण्डन : जी नहीं। आप थोड़ी देर के लिए भूल गए। आपको याद नही है। विधान नहीं, संविधान के अनुसार वह नागरी में छपेगा, नागरी अक्षरों में, परन्तु आप विलायती अंकों का प्रयोग कर सकते हैं। उसमें यह है कि नागरी अक्षर होंगे, हिन्दी भाषा होगी, परन्तु आप अंग्रेजी अंकों का प्रयोग कर सकते हैं। इसके लिए भी संविधान में यह शर्त है कि आप राष्ट्रपति से आज्ञा लेकर जिसके अर्थ आप खुद हैं, अर्थात् गवर्नमेण्ट से आज्ञा लेकर नागरी अंकों का भी प्रयोग कर सकते हैं। मैं आपको सुझाव देता हूँ कि आप इसको हिन्दी भाषा, नागरी अक्षरों और नागरी अंकों में छापें। नागरी में अंग्रेजी अंकों की कोई ज़रूरत नहीं है। क्योंकि जो हिन्दी नहीं जानते हैं उनके लिए तो आप अंग्रेज़ी में छापते ही हैं। आप उस समय संविधान सभा में नहीं थे। शायद इसलिए आपको यह याद नहीं है।

श्री त्यागी : मैं तो आपके साथ ही लड़ा हूँ।

श्री टण्डन : यह जो अंकों का मामला है यह तो एकाउंटेण्ट जनरल के आफ़िस की वजह से उठा था। उस समय यह ख़्याल था कि अगर नागरी अंक आ गए तो उनके दफ्तर में मुश्किल पड़ेगी। लेकिन जो चीज अंग्रेज़ी में छपती है अगर उसको हिन्दी में भी छापा जाय तो इस तरह का झगड़ा नहीं पड़ सकता। यह थोड़े से खर्च की बात है। उस दिन मैंने रेलवे विभाग को इस विषय में सुझाव दिया था। आज मैं और सारे विभागों को यह सुझाव देना चाहता हूँ। मैं बराबर देखता हूँ कि हर विभाग का जो भी साहित्य हमारे पढ़ने के लिए छपता है वह अंग्रेज़ी में छपता है। इसको आप १५ वर्ष तक अंग्रेज़ी में छापें लेकिन कृपया हिन्दी में भी छापें। आप देखेंगे कि इससे हिन्दी का प्रचार बढ़ेगा। यह मेरा आप को सुझाव है। इस तरह आप अपनी ओर से हिन्दी को चलाने में सहायक होंगे।

११

मुस्लिम वक्फ़ों के प्रबन्ध में सुधार

१३ मार्च १९५३ को अशासकीय मुस्लिम वक़्फ़ विधेयक पर बोलते हुए

अध्यक्ष महोदय, मैं इस बिल पर अधिकार के साथ तो कुछ कह नहीं सकता। लेकिन जो बातें मैंने अभी सुनीं, उनके आधार पर मुझे कोई ऐसी बात नहीं लगती कि हम इस बिल के सेलेक्ट कमेटी, प्रवर समिति, के पास जाने में बाधक हों। यह ठीक है और मैं भी इसका स्वागत करूंगा कि एक ऐसा बिल आये कि जो देश भर के सब दानों के लिए लागू हो, लेकिन मैं अपने दोस्त डाक्टर महमूद से सहमत हूँ, उनसे इत्तिफाक करता हूँ कि मुमकिन है कि इस तरह का बिल आने में बहुत वर्ष लगें। मुझको अपने सूबे का यह तजुर्बा है कि वहाँ इस बात की जब कोशिशें हुईं कि धर्मादे और मठों आदि के पास जो रक़में हैं, जो सम्पत्ति है, उसका ठीक ठीक उपयोग किया जाय तब हमारे रास्ते में बहुत कठिनाई आई। अगर हमारे मुसलमान भाइयों ने अपने अन्दर वक़्फ़ों का ठीक इन्तज़ाम कराने के लिए एक रास्ता सोचा है, तो महज़ इस वजह से नहीं कि वह मुसलमान हैं और उसमें सब शामिल नहीं हैं। हम उसमें कोई रुकावट डालें यह बात मुझको बिल्कुल ग़लत मालूम होती है। आखिर मज़हबी रास्ते पर काम पुराने चले आते हैं, वह बहुत जल्दी तो नही बदल जायँगे। हिन्दुओं के लिए भी तो आप ब्याह, शादी के मुताल्लिक एक अलग कानून ला रहे हैं। वह हिन्दू नाम से आ रहा है, कुछ हिन्दू शादियों के लिए एक बिल की जरूरत पड़ जाती है। वैसे मैं पसन्द करूंगा कि जहाँ तक हो सके अलग अलग मज़हबों के ऊपर हमारे क़ानून न बनें, लेकिन वह चीज़ एक बारगी तो हो नहीं जायगी। मुस्लिम वक़्फ़ बहुत पुराने समय से चले आ रहे हैं। यह भी मुझको अन्दाजा हो रहा है कि मुतवल्ली लोग इनका ठीक इन्तज़ाम नहीं कर रहे हैं और उनका विरोध इस बिल के बारे में ठीक उसी प्रकार है जैसे हमारे महंतों ने अपने जाती फ़ायदे के लिए हमारा विरोध किया था। इस बिल के पास होने से यह लाभ होगा कि वह पैसा जो अब तक मुतवल्लियों के द्वारा ज़ाया होता रहा है वह दूसरे ग़रीब भाइयों के काम में आयेगा। मुझे तो कोई ऐसी वजह नहीं मालूम होती कि हम महज़ इस बिना पर कि यह मुस्लिम वक्फ़ के लिये है इसका विरोध करें। जब एक मिली-जुली चीज़ हमारे सामने

आयेगी तब हम उसका स्वागत करेंगे।

अभी मौलाना अबुल कलाम आजाद साहब ने फ़रमाया था कि यह चीज़ उसमें कोई रुकावट नहीं डालेगी। मुझको भी कोई बुरी बात इसमें दिखाई नहीं पड़ती। हमारे एक भाई ने बतलाया कि बम्बई में कोई इस तरह की चीज़ है जो दोनों पर लागू होती है और शायद उस पर इसका असर अच्छा न पड़े। अगर यह चीज होगी तो सेलेक्ट कमेटी में इस पर गौर कर लिया जायगा। मगर हम इस बिल को सेलेक्ट कमेटी में न जाने दें यह बात तो मुझको सही नहीं मालूम होती। मैं इस बिल के मुआफ़िक़ हूं। मैं इसको सहारा देना चाहता हूँ। यह बिल सेलेक्ट कमेटी के हवाले किया जाय और वहाँ पर इसमें जो परिवर्तन जरूरी समझे जायँ किये जायँ।

१२

निर्वाचन के नियम

४ अगस्त १९५३ को लोकसभा में जन-प्रति-
निधित्व (संशोधन) विधेयक पर बोलते हुए

उपाध्यक्ष महोदय ! यह जो पैप्सू का चुनाव सामने है केवल उसी को ध्यान में रख कर हमें परिवर्तन इस ऐक्ट में करना है ऐसा तो मंशा हमारे मंत्री महोदय का नहीं जान पड़ता है। वह इस प्रकार के भी परिवर्तन चाहते हैं जो अनुभव से आवश्यक हो गये हैं, और उन्होंने जो कहा उससे यह जान पड़ता है कि इस परिवर्तन का लाभ वह नये पैप्सू सम्बन्धी चुनावों में उठाना चाहते हैं। मुझको यह ठीक जान पड़ता है। साथ ही मुझको जो बात श्री ठाकुर दास जी भार्गव ने कही थी वह भी ठीक जान पड़ती है कि जब हम इस ऐक्ट में परिवर्तन करने की बात सोच रहे हैं तब यह अच्छा होगा कि हम अपने अनुभव से जो भी आवश्यक समझें उन परिवर्तनों को ला सकें।

चुनावों में नैतिकता का आधार

मुझे बहुत ब्यौरे में इस समय जाना नहीं है। आपने अभी जो छोटा सा भाषण किया उसमें मैंने एक सुझाव यह समझा कि यह अच्छा होगा कि हममें से कुछ अपने अनुभवों को मंत्री महोदय के सामने रख दें जिस में वह जहाँ आवश्यक परिवर्तन समझें अभी करके तब सिलेक्ट कमेटी में जायँ। मुझको बहुत बड़ा अनुभव, ब्यौरों के सम्बन्ध में इन चुनावों का नहीं है। कुछ ऐसा हुआ कि जब जब मैं चुना गया तब बहुत आसानी से आ गया। परन्तु अपने साथियों के सम्बन्ध में मुझको कुछ अनुभव हुआ है। मेरा ध्यान सदा शासन के कामों में अथवा वैयक्तिक जीवन के कामों में नैतिकता के ऊपर रहा है। मेरा ध्यान इस बात पर रहता है कि हमारा शासन नतिकता में सहायक है और उसकी प्रवृत्ति दैविक अथवा उसकी प्रवृत्ति आसुरिक है। चुनावों का जो आज क्रम है उसमें मुझको यह दिखाई पड़ रहा है कि शासन के प्रारम्भ होने के पहले ही जब हम इस इच्छा से सामने आते हैं कि चुने जायँ तभी नैतिकता के बरतने में महा कठिनता सामने आती है। मैं चुनाव के सम्बन्ध में आपके अनुभव का और जितने यहाँ बैठे हैं उन सबके अनुभव का उद्बोधन करना चाहता हूँ।

मैं बहुत नम्रता से अपील करता हूँ। मेरा निवेदन है कि हमको जो

जो अनुभव हुए हैं उन अनुभवों से लाभ उठाकर हम इस ऐक्ट को ऐसा बनायें कि जिससे देश में अधिक नैतिकता उत्पन्न हो।

मैंने पहले ही कहा कि मुझको बहुत गहरा अनुभव नहीं है। हमारे इस ऐक्ट के जो नियम हैं उनमें से एक ही विषय पर मैं कुछ कहना चाहता हूँ। वह विषय है 'इलैक्शन ऐक्सपेंसेज' (चुनाव के व्यय) का। जो इलैक्शन ऐक्सपेंसेज दाखिल होते हैं, केवल मैं उनकी चर्चा कर रहा हूँ। जैसा मैंने पहले ही कहा कि मैं हर एक मैम्बर के अनुभव से लाभ उठाना चाहूँगा। जो मैम्बर मेरे साथी रहे हैं, चाहे वह कांग्रेस दल के हों चाहे गैर कांग्रेस दल के हों, उनके अनुभव का मेरे ऊपर यह असर है कि यह जो इलैक्शन ऐक्सपेंसेज दाखिल होते हैं यह सही नहीं होते हैं। इनके सही रखने में बड़ी कठिनता है।

[इस अवसर पर उपाध्यक्ष जी ने इस बात पर ध्यान दिलाया कि अभी विवाद का विषय केवल यह है कि क्या प्रवर समिति को यह निदेश दिया जाय कि वह मूल अधिनियम के केवल उन उपबन्धों को न देखे जो इस विधेयक में आये हैं परन्तु वह मूल अधिनियम की दूसरी धाराओं पर भी विचार कर सकती है।

इस पर कुछ सदस्य बोले और विधि मंत्री ने विधेयक के क्षेत्र पर अपनी सम्मति विस्तार के साथ प्रकट की।]

निर्वाचनों के व्यय का व्यौरा देना आवश्यक न हो

श्री टंडन : सभापति महोदय, मैं जो कुछ माननीय मंत्री जी के बोलने के पहले कह रहा था उसी को समाप्त करूँगा। मैं उनको यह सुझाव देता हूँ कि वह इस इलैक्शन ऐक्सपेंसेज, चुनाव-व्यय, के विषय में ध्यान दें। चुनाव अदालतों ने भी इधर ध्यान दिया है। उनका ध्यान इस ओर जाना ही पड़ता है, क्योंकि प्रायः इस प्रकार की आपत्तियाँ चुनाव में की जाती हैं कि जो व्यौरा खर्चे का दाखिल हुआ है वह ठीक नहीं है। प्रायः अधिक चुनावों में इस प्रकार की आपत्तियाँ की जाती हैं। मेरा निवेदन है कि हमारे सदस्यगण अनुभव से जानते हैं कि कितनी कठिनता होती है ठीक ठीक हिसाब रखने में। जब तक कि स्वयं जो मताभिलाषी है, कैण्डिडेट है, वह अधिक चौकन्ना न हो एक एक व्यौरे के बारे में, तब तक बहुत सम्भावना होती है कि उसमें भूल हो जाय। पीछे होता यह है कि अनुमान से और अन्दाज़ से तमाम इलैक्शन ऐक्सपेंसेज, चुनाव व्यय, के व्यौरे भरे जाते हैं। स्वभावतः जब अनुमान चलता है तब सत्य से हटना पड़ता है। मैं यह भी जानता हूँ कि बहुत से लोग बताये हुए खर्चे से बहुत अधिक खर्च करते हैं और उसका पता पाना बहुत कठिन होता है। मैंने

पहले ही निवेदन किया कि जिन लोगों को शासन का भार लेना है, या जो इस सभा में या राज्यों की सभाओं में आते हैं उनके ऊपर बड़ा दायित्व है, वे देश का नेतृत्व करते हैं। चुनावों में जितने ही स्वच्छ रहेंगे उतने ही वे अधिक आदर के पात्र होंगे। मेरा यह सुझाव है कि यह जो चुनाव व्यय के दाख़िल करने का नियम है उसके अनुसार वास्तव में आज की स्थिति में व्यय का कागज तो आ जाता है, लेकिन वास्तविक व्यय का पता उससे नहीं लगता। मुझे इस विषय में दूसरे देशों से सीखना नहीं है। मेरा निवेदन यह है कि यह जो इलैक्शन ऐक्सपेंसेज, चुनाव व्यय, दाखिल करने का नियम है यह बिलकुल उड़ा दिया जाय तब स्थिति कहीं अच्छी होगी। जिसका मन जो चाहे ख़र्च करे। हाँ यह अवश्य ऐक्ट अथवा नियमों में रहे कि किन किन प्रयोजनों में रुपया खर्च नहीं हो सकता। जैसे गाड़ी घोड़ा देना आदि। जिसके पास रुपया अधिक नहीं है वह इसका प्रबन्ध नहीं कर सकेगा। परन्तु इलैक्शन ऐक्सपेंसेज के उपस्थित करने की प्रथा न रहे। आप एक सूची दे सकते हैं कि मताभिलाषीगण यह काम न करें और अगर नियम का भंग होता है तो उनके विरुद्ध मुकदमा चल सके और गवाही आ सके परन्तु इलैक्शन ऐक्सपेंसेज मांगने का क्रम उठा दिया जाय। मैं जानता हूँ कि यह क्रांतिकारी परिवर्तन होगा।

श्री अलगूराय शास्त्री (जिला आजमगढ़ पूर्व व बलिया जिला पश्चिम) : यह जरूर होना चाहिए।

श्री टंडन : सम्भव है हमारे मंत्री महोदय हवाला देंगे इंग्लैण्ड का, और दूसरे देशों का, लेकिन पहले ही निवेदन किया कि मैं अनुभवों को, अपने साथियों के अपने अनुभवों को अधिक महत्व देता हूँ, दूसरों के क्रम की अपेक्षा; दूसरी जगहों में भी भूलें हो रही हैं। अमेरिका में चुनावों के बारे में क्या होता है? मैंने भी इस सम्बन्ध में कुछ पढ़ा है। मैंने सुना है कि वहाँ के चुनावों में सत्य का आदर होता हो ऐसा नहीं है। इंग्लैण्ड शायद अच्छा है। यह मेरा ध्यान है, परन्तु कुल बातों को समझ बूझकर मैं यह चाहता हूँ कि हमारी गवर्नमेंट और हमारे मंत्री जिनके सामने आज परिवर्तन का विषय उपस्थित है, गहरी दृष्टि से सोचें कि इलैक्शन ऐक्सपेंसेज, चुनाव व्यय, के सम्बन्ध का जो नियम है बिलकुल हटा दिया जाय। किसने क्या ख़र्च किया बीस हजार या एक लाख इसके जानने की आवश्यक़ता न रहे। यह तो रहे कि चुनावों में अमुक काम कोई आदमी कर नहीं सकेगा। जो काम वर्जित है यदि उसके करने की शहादत आती है तो उसका चुनाव गलत समझा जाय, परन्तु हर आदमी अपने चुनाव का खर्चा दाखिल करे, यह नियम इस ऐक्ट के भीतर से हटा दिया जाय, यह मेरा निवेदन है। बस, इस समय मुझे यही कहना है।

१३

नूतन आंध्र-निर्माण

२७ अगस्त सन् १९५३ को नूतन आंध्र राज्य के निर्माण सम्बन्धी विधेयक पर बोलते हुए

उपाध्यक्ष महोदय ! हम एक नये युग में आज प्रवेश कर रहे हैं। मैं इसीलिए खड़ा हुआ हूँ कि जो आंध्र प्रदेश बनने वाला है उसके संचालकों को अपनी शुभकामना अर्पण करूँ।

शासन का विभाजन भाषा के आधार पर

हमारे मित्र श्री एंथनी जी ने कुछ गहरी चेतावनी दी है। मैं उनको बहुत ध्यान से सुनता था। उन्होंने निश्चय ही एक साहस का काम किया है कि जब बहुत अधिक लोग इस विधेयक के पक्ष में हैं तब उन्होंने उसके बारे में एक चेतावनी दी है। उनको भविष्य के लिये तरह तरह की कठिनाइयाँ दिखाई पड़ रही हैं। उनको यह भय है, यह अंदेशा है कि इस प्रकार से देश का विभाजन देश के हित में नहीं है और इससे अलग अलग टुकड़े बनने की प्रवृत्ति उत्पन्न होगी, और साथ ही उन्होंने कहा कि साम्प्रदायिक प्रवृत्ति भी बढ़ेगी। इसमें साम्प्रदायिकता की बात वह कहाँ से ले आये वह तो कुछ समझ में नहीं आया। लेकिन हाँ, यह अवश्य विचारने का प्रश्न है कि अलग अलग इस तरह से विभाजन करना कहाँ तक देशहित में है और कहाँ तक उसमें पृथकता की प्रवृत्ति पैदा हो सकती है। यह एक बात विचार की अवश्य है। लेकिन जब हम कोई भी काम जीवन में करते है तो उसकी नाप तोल करते हैं उसके लाभ हानि को देखते है। एक बड़े देश का शासन कुछ न कुछ विभाजन ही द्वारा तो हो सकता है। लोग तो गाँव गाँव में पंचायत की मांग करते है। हमें तो गाँव गाँव तक जाना पड़ता है। इतने बड़े देश का शासन अधिकार को बांटने से ही चल सकता है और अधिकार जब बांटना है तब हम यह अपने अनुभव से देखते है कि अगर एक शासन के भीतर एक से अधिक भाषाएँ चलें तो कितनी असुविधा होती है। इसकी कठिनाई को हमारे मध्य प्रदेश के भाई देख रहे है यद्यपि वहाँ केवल दो ही भाषाएँ है। मुझे तो आश्चर्य होता है कि मद्रास वाले किस तरह से अपना काम करते हैं क्योंकि वहाँ चार चार भाषाएँ है। उसका परिणाम यह होता है

कि शासन और विधान के कामों में अपनी भापा में साधारणत: कोई नहीं बोल सकता है। सबको यह भय रहता है कि हम जो कुछ अपनी भापा में बोलेंगे उसको दूसरे नहीं समझ पायेंगे और इस कारण से उन्हें झख मार कर एक पर-भापा की, अंग्रेज़ी भापा की, शरण लेनी पड़ती है। यह एक बड़ी कठिनाई है। जब हमें शासन बंटवारा करके ही करना है तो भापा के आधार पर करें यह तो, मुझको ऐसा लगता है, उचित रीति है। मैं यह मानता हूँ कि हमको और बातों का भी ध्यान रखना पड़ेगा, व्यय आदि का, लेकिन कुल मिलाकर एक उचित रीति यही है कि जहाँ पर शासन की एक इकाई एक भापा बोलने वाली हमें मिल सके वहाँ हम उसे स्वीकार करें। आंध्र की मांग एक बहुत प्रबल और पुरानी मांग रही है। मुझको तो आंध्र-निर्माण की बात ठीक लगती है।

हिन्दी की हानि नहीं

उत्साह तो एंथनी साहब ने बहुत दिखलाया। लेकिन मुझको ऐसा लगा कि यह उत्साह और साहस भी सर्वथा उचित नहीं था। मुझे अंग्रेज़ी की वह कहावत याद आ गई कि एक प्रकार के ऐसे जीव होते हैं 'Who rush in where angels fear to tread'। मुझको ऐसा लगा। मुझको उनकी बात में कुछ तथ्य भी लगा, लेकिन बहुत अधिक जो उन्होंने इसके विरोध में उत्साह दिखाया वह कुछ उचित नहीं दिखाई दिया। उन्होंने सेठ गोविन्ददास जी को चेतावनी दी कि इसमें हिन्दी का हित नहीं है। वह जानते हैं कि गोविन्ददास जी में एक दुर्बलता है, हिन्दी के पक्ष में। उसको ध्यान में रखकर उन्होंने कहा कि इस तरह से हिन्दी का भला होने वाला नहीं है। वह जानते हैं कि वह दुर्बलता मेरी भी है। लेकिन वह दुर्बलता राष्ट्रीय कारणों से है। मैंने सदा ही माना है कि हिन्दी ही हमारे देश को एक सूत्र में बांध सकती है। मैं जानता हूँ कि हमारे भाई अंग्रेज़ी पक्षपाती हैं और ऐसे दस बीस और भी हैं जिनका ऐसा विचार है। लेकिन अंग्रेज़ी से हमारा देश एक सूत्र में बंध सके, यह बिल्कुल ग़लत है, असम्भव है। उसको बांधने के लिये हमारे देश की ही भापा रखनी होगी। आज उसका विवाद नहीं है, वह हमारा संविधान निश्चित कर चुका है। उसमें कोई अन्तर इस कारण से पड़ेगा कि अलग कुछ इकाइयाँ शासन की भापावार बनेंगी, ऐसा मेरा विचार नहीं है। मैं यह उचित समझता हूँ कि यह प्रयोग किया जाय। यह एक एक्सपेरीमेंट है। हमको जीवन में बहुत से प्रयोग करने पड़ते हैं। शासन में भी प्रयोग करने पड़ते हैं। मैं इस प्रयोग के, एक्सपेरीमेंट के, पक्ष में हूँ। आज केवल आंध्र बन रहा है। हमारी सद्भावनाएँ उनके साथ हैं। केन्द्रीय शासन की

सद्‌भावना भी उनके साथ है। उनकी वास्तविक सहायता, आर्थिक सहायता, भी कुछ दिनों होनी चाहिये।

साथ ही मै तो यह भी कहूँगा कि अन्य प्रदेशों के सम्वन्ध में अधिक विलम्व नहीं होना चाहिये। मैं जानता हूँ कि हमारे कन्नड़ भाषी लोग कितने इच्छुक हैं, उत्सुक हैं। मैसूर उसके सम्वन्ध में तैयार है। मुझे तो कोई कारण नहीं दिखाई पड़ता कि इसमें विलम्ब किया जाय। कांग्रेस अध्यक्ष की हैसियत से जव मैं कन्नड़ में घूमा और मैंने वहाँ इतनी गहरी मांग देखी तव मैने तो स्पष्ट उनसे कहा था कि मैं उनके पक्ष में हूँ। कन्नड़ भाइयों को तो मैं आश्वासन दे चुका था कि मैं इसके पक्ष में हूँ कि कन्नड़ भाषी प्रदेश वनाया जाय, ऐसे राज्य की स्थापना हो। मेरे विचार में उनकी मांग के ऊपर भी, जैसे ही कुछ अवसर मिले, सुविधा मिले, केन्द्रीय शासन को ध्यान देना चाहिये। मैं और अधिक समय नहीं लेना चाहता। इसी प्रकार से अन्य भी प्रदेश जो भाषा के सूत्र के ऊपर वनना चाहते हैं, जैसे महाराष्ट्र, केरल, जिनकी मांगें हैं और हम सुविधा के साथ जिनकी इकाई स्वीकार कर सकते हैं—मेरा अपना कथन है कि उसमें हमें अव बहुत विलम्व नहीं करना चाहिये। कुछ समय तो स्वाभाविक रीति से लगेगा ही। परन्तु यह मांग जो जनता की ओर से आती है उसके लिये यह कहना कि उसमें कुछ थोड़े से लोगों का स्वार्थ है, थोड़े से लोग पद चाहते हैं, यह उचित समालोचना नहीं है। मैं तो इस भाषावार क्रम के पक्ष में हूँ। जो विधेयक डाक्टर काटजू ने रखा है मैं उसका समर्थन करता हूँ और अपने आंध्र के भाइयों को अपना आशीर्वाद देता हूँ।

१४

भाग 'ग' राज्यों में हिन्दी

१६ फरवरी १९५४ को भारतीय लोकसभा में भाग 'ग'
राज्य शासन विधेयक पर हिन्दी के सम्बन्ध में बोलते हुए

महोदय! मेरा इस विधेयक पर बोलने का कोई विचार नहीं था। परन्तु अभी मैंने, जो विधेयक सामने है उसमें, हिन्दी सम्बन्धी धारा जो पढ़ी तो मुझको जान पड़ा कि इसमें संशोधन की आवश्यकता है। यह तो मैं मानता हूँ कि पन्द्रह वर्ष तक हमारे संविधान के अन्दर अंग्रेज़ी को अवसर दिया गया है।

डा० एन० बी० खरे (ग्वालियर): उसमें से चार साल निकल गये।

हिन्दी को सहारा देना—केन्द्र का कर्त्तव्य

श्री टंडन: परन्तु यह बात भी स्पष्ट है और केन्द्रीय सरकार भी यह मानती आई है, कि उसका कर्त्तव्य है कि अपने शासन के कामों में जहाँ तक संभव हो हिन्दी को सहारा दे।

संविधान की किसी धारा को तोड़ने का या उसका अतिक्रमण करने का कोई प्रश्न मैं नहीं उठाता। मैं स्वयं अपने को संविधान से, जब तक वह है, बंधा हुआ मानता हूँ। मैं उसके बदलवाने का प्रश्न उठा सकता हूँ, यत्नवान भी हूँगा। मैं संविधान में हिन्दी के बारे में जो अनुच्छेद हैं उन में से कई एक को ग़लत मानता हूँ। परन्तु आज वह प्रश्न नहीं है, मैं उससे उतना ही बंधा हुआ हूँ जितने कि हमारे मंत्रिगण बंधे हैं। इस कारण मैं कोई अनर्गल प्रश्न नहीं उठाऊँगा कि जिसमें संविधान के विरुद्ध कोई बात कही जाय या करने को कही जाय। परन्तु मैं यह चेतावनी देता हूँ कि अनावश्यक रीति से कोई धारा रखना जब उसकी आवश्यकता नहीं है, अंग्रेज़ी के ऊपर बल और उसकी ओर बार बार झुकाव देना, यह नीति के और संविधान की मंशा के भी विरुद्ध है। आपको हिन्दी को सहारा देना है संविधान के भीतर। मैं मंत्री महोदय से पूछता हूँ, जिन्होंने बिल सामने रखा है, कि आज यह जो धारा उन्होंने रखी सो क्यों? क्या कोई मामले ऐसे आये किसी सी-क्लास स्टेट से, जिसके कारण उनको यह रखनी पड़ी?

राज्य का अधिकार

संविधान स्पष्ट है इस बात में कि हर राज्य को अधिकार है कि वह

अपनी भाषा में काम करें। हमारे मंत्री जी ने सिर हिलाया इसलिये मुझ को संविधान का अनुच्छेद पढ़ना पड़ता है। (अनुच्छेद) ३४५ में है :

"अनुच्छेद ३४६ और ३४७ के उपबन्धों के अधीन रहते हुये राज्य का विधान-मंडल विधि द्वारा उस राज्य के राजकीय प्रयोजनों में से सब या किसी के लिये प्रयोग के अर्थ उस राज्य में प्रयुक्त होने वाली भाषाओं में से किसी एक या अनेक को या हिन्दी को अंगीकार कर सकेगा।"

उसके साथ 'प्राविज़न' भी है। यह स्पष्ट है कि हर एक राज्य को अपने यहाँ अपनी भाषा द्वारा काम करने का अधिकार है।

यह प्राविज़न तो सिर्फ़ वहाँ के लिये है जहाँ पर कोई ला स्वीकृत नहीं हुआ। परन्तु स्पष्ट है कि हर एक राज्य को अधिकार है कि वह अपनी क्षेत्रीय भाषा के सम्बन्ध में अपना निश्चय करे। इसके अनुसार कुछ प्रदेश तथा कुछ राज्य कर भी चुके हैं। मेरा अनुमान है कि बहुतों ने कर लिया है। मैं अपने उत्तर प्रदेश की बात तो जानता हूँ जहाँ मैं स्वयं विधान-सभा का अध्यक्ष था। वहाँ मेरी अध्यक्षता में ही इस प्रकार की विधि निश्चित हो चुकी थी, क़ानून मंजूर हो चुका था।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : आपने पहले ही से कर दिया था।

श्री टंडन : मेरी अध्यक्षता में वह स्वीकार हुआ। इस प्रकार का अधिकार हर एक राज्य को है। संविधान में यह भी स्पष्ट है कि जहाँ अपनी भाषा के बारे में कोई कानून पास भी हो गया हो वहाँ भी अधिनियमों, आज्ञाओं, आदेशों आदि का अंग्रेजी अनुवाद उस शासन को प्रकाशित करना होगा। जो अनुवाद प्रकाशित होगा अंग्रेजी में वह संविधान के शब्दों में 'अथारिटेटिव टेक्स्ट' माना जायगा। आज आपको क्या आवश्यकता पड़ी कि संविधान के एक अनुच्छेद के अंश को इस विधेयक में आपने रक्खा ?

अंग्रेजी पर बल देना अशुद्ध

अगर रखना ही है तो मेरा सुझाव है कि आप देखिये ३३ए की भाषा को। आपने इसमें 'प्राविज़न' देकर कुछ सहारा तो क्षेत्रीय भाषा को दिया है लेकिन जो असली अनुच्छेद है, जो मुख्य वाक्य है, उसमें आपने कहा है कि हर एक बिल इत्यादि, आर्डर इत्यादि अंग्रेजी भाषा में होगा। यह तो अशुद्ध भी है। यह सही है कि इस अशुद्ध चीज को लिख कर "प्रोवाइडेड दैट" कह कर, एक अपवाद देकर उसे संभाला है। परन्तु प्रारम्भ आपने किया एक अशुद्ध बात से। वह बात अपने में अशुद्ध है, अनर्गल है, संविधान के विरुद्ध है। एक ग़लत चीज़ को रख कर, विधान के अन्दर 'प्रोवाइडेड दैट' लिख कर.........

श्री नन्दलाल शर्मा (सीकर) : 'प्रोवाइडेड दैट' रीजनल लैंग्वेज

के लिये है। हिन्दी के लिए नहीं।

श्री टंडन : मैं आप से कहता हूँ कि यह चीज ठीक नहीं है क्योंकि इस "प्रोवाइडेड दैट" में जैसा मेरे भाई ने अभी कहा हिन्दी के लिये नहीं कहा है। अगर हिन्दी नहीं है तो वह धारा संविधान के अनुच्छेद ३४५ के विरुद्ध जाती है, क्योंकि हर एक स्टेट को अधिकार है, ट्रावनकोर तक को अधिकार है कि वह अपने यहाँ हिन्दी रखे। मैं आप से यह कहता हूँ कि इसका अर्थ यह है। वह हिन्दी रखेगा नहीं, परन्तु हिन्दी रखने का अधिकार ट्रावनकोर कोचीन को है। मैसूर को अधिकार है कि वह चाहे तो हिन्दी को अपने यहाँ की भाषा रख सकता है। आपने इस धारा से इसको रोक दिया है।

सुझाव

मैं आपको एक सुझाव देता हूँ कि आपको केवल यह देखना है कि क्या कोई, 'लैक्यूना' जैसा आपने कहा था, कोई कमी रह गई है। मेरा कहना है कि किसी कमी का प्रश्न नहीं उठता। संविधान सबके ऊपर है। और अगर कहीं पर आपको कोई कमी दिखलाई पड़ती है तो मेरा कथन यह है कि आप इस पहले वाक्य को हटा दें। जहाँ आपने कहा है :

"धारा ३३ में किसी बात के होते हुये भी, जब तक संसद् विधि द्वारा अन्यथा उपबन्ध न करे,

(क) किसी राज्य की विधान-सभा में पुरःस्थापित किये जाने वाले विधेयकों या उन पर प्रस्तुत किये जाने वाले संशोधनों के प्राधिकृत पाठ;

(ख) किसी राज्य की विधान-सभा द्वारा पारित सभी अधिनियमों के अधिकृत पाठ; तथा

(ग) किसी राज्य की विधान-सभा द्वारा बनाई गई किसी विधि के अधीन जारी किये गये सभी आदेशों, नियमों, विनियमों तथा उपविधियों के प्राधिकृत पाठ अंग्रेज़ी भाषा में होंगे।"

मैं कहता हूँ कि इसको आप हटा दें। हाँ, जो आपका प्राविज़न इसमें है उसको मेन टेक्स्ट बनाइये, जिसको आपने "प्रोवाइडेड दैट" करके लिखा है।

श्री एम० एल० द्विवेदी : मेरा संशोधन इसी भांति है।

श्री टंडन : आप यह स्पष्ट कर दें कि बिल्स का, रेगुलेशन्स का, आर्डर्स का अथारिटेटिव टेक्स्ट अंग्रेज़ी में होगा।

यह संविधान कांस्टीट्यूशन में भी है। आप उसको इसमें धर दें। ३४५ के अन्दर जो अधिकार है उसको आप मानकर आगे चलें। यदि

आप इस कानून में भाषा सम्बन्धी धारा आवश्यक समझते हैं तो कुछ शब्दों में आप ३४५ का हवाला दें कि हर राज्य को अधिकार है कि वह अपने यहाँ हिन्दी अथवा क्षेत्रीय भाषा रखे और आप यह भी हवाला दे दें कि 'अथारिटेटिव टेक्स्ट' अंग्रेज़ी में हो जैसा कि संविधान की धारा ३४८ में कहा गया है। इसमें आपका कुछ बिगड़ता नहीं है। मैं अपने माननीय मंत्री महोदय से पूछता हूँ कि मेरे इस सुझाव के अन्दर क्या 'लेक्यूना' रह जायगा। यह मैं जानना चाहूँगा। मेरा विचार है कि मेरे सुझाव के अनुसार काम ठीक होगा। अपने मसौदे में आप अंग्रेज़ी को चढ़ा रहे हैं, सहारा दे रहे हैं। हर रियासत को मजबूर कर रहे हैं कि वह अंग्रेज़ी में काम करे। जिस रियासत में दम है वह आपकी बात फेंक देगी। अगर मैं कहीं चीफ मिनिस्टर होऊं तो मैं तो उस 'प्रोवाइज़ो' के अन्दर हिन्दी को रखूँगा। बात स्पष्ट है। मगर मैं जानता हूँ कि राज्यों के साधारण मिनिस्टर कमज़ोर होते हैं। वह यह समझेंगे कि आपने जो यह लिख दिया है कि, "शैल बी इन दी इंगलिश लैंग्वेज" यह उनको दाब रहा है। वह "प्रोवाइज़ो" का पूरा लाभ नहीं उठायेंगे। जैसा कि अभी मालूम हुआ, कई जगह अंग्रेज़ी चल रही है। आवश्यकता नहीं है चलने की। उत्तर प्रदेश में अंग्रेजी नहीं है। मैंने अपने सामने सही रूप देकर स्पीकरी छोड़ी थी। वहाँ आज भी वही है। वहाँ अंग्रेज़ी नहीं चल पाई है। कांस्टीट्यूशन की मजबूरी की वजह से अंग्रेज़ी में बिलों, आदेशों आदि का अनुवाद अवश्य हो जाता है। परन्तु वहाँ का काम हिन्दी में होता है। मंत्री महोदय से मेरा निवेदन है कि वह ऐसा रूप दें कि लोगों को यह बहकावा न हो, यह धारणा न हो कि जो कुछ वह काम करें वह अंग्रेज़ी में हो। "शैल बी इन दी इंगलिश लैंग्वेज़" यह न रखिये। जितना संविधान के अन्दर आवश्यक है उतना ही आप अंग्रेज़ी का बचाव करें। मेरा यह नम्रता से सुझाव है।

१५

कुम्भ मेला

२२ फरवरी १९५४ को भारतीय लोकसभा में राष्ट्रपति के भाषण के प्रसंग पर प्रयाग की कुम्भ दुर्घटना के सम्बन्ध में बोलते हुए

अध्यक्षा जी ! मैं इस विषय के केवल एक अंश पर बोलना चाहता हूँ। उसका सम्बन्ध कुम्भ मेले से है। वह प्रयाग का एक दृश्य था। मैं प्रयाग का रहने वाला हूँ और जब यह दुर्घटना हुई उस समय मैं मेले के भीतर था, यद्यपि उस दुर्घटना के स्थान से लगभग दो मील पर। मैं वहाँ भारतीय संस्कृति सम्मेलन के अधिवेशन में व्यस्त था, जिसका उद्घाटन एक दिन पहले, अर्थात् दो फरवरी को राष्ट्रपति जी ने किया था। वह अधिवेशन तीन और चार फरवरी को भी था। मुझे मेले में इस दुर्घटना की बहुत हल्की सी सूचना मिली थी। सच बात यह है कि इस दुर्घटना का गम्भीर चित्र मेरे सामने दूसरे दिन सवेरे आया। इस समय मैं उस दुर्घटना के ब्यौरों पर कुछ कहने वाला नहीं हूँ। आजकल वहाँ जाँच करने वाली समिति बैठी है। उसके सामने बयान आ रहे हैं, कई प्रकार के बयान आए हैं और बहुत विश्वसनीय भाइयों के बयान इस बात पर आए हैं कि मौतें कितनी हुईं और किन कारणों से हुईं। जो भूल प्रबन्ध की हुई उसके ऊपर मुझे कोई टीका टिप्पणी भी नहीं करनी है। उसका ठीक पता कमेटी की रिपोर्ट आने पर लगेगा और तभी टीका टिप्पणी का समय होगा। परन्तु यह तो स्पष्ट है कि कहीं न कहीं कुछ गहरी कमी और त्रुटि थी, नहीं तो इतनी कल्पना तो होनी ही चाहिए थी कि जब लोग ऊपर से जा रहे हैं तो ढाल के नीचे कोई जबरदस्ती बैठाला न जाय, जैसा कि स्पष्ट है कि लोग बैठाले गए। पुलिस ने मार मार कर बैठाला, गवाही में भी है, यह बहुत स्पष्ट बात है। कल्पना की कमी और फिर पुलिस के आदमियों की कमी—कहीं न कहीं त्रुटि है। २०० फीट लम्बा एक गड्ढा ढाल के नीचे उसके पास बना रहे जिसमें कि कीचड़ हो, यह भी प्रबन्ध की कमी है। यह बातें स्पष्ट हैं। मगर मुझे कुछ दूसरी बातों पर कुछ कहना है।

मेला मनोभावना का प्रतीक

यह मेला एक प्रतीक है, हमारे देश की मनोभावना का। किस प्रकार से लोग वहाँ दौड़ते हैं? उनके अन्दर भावना होती है कि हम

गगा जी में दो डुबकी लगा कर स्वर्ग में चित्रगुप्त जी के खाते में जमा की ओर एक कलम लिखवा लेंगे, एक क्रेडिट एंट्री वहाँ पर हमारी हो जायगी।

श्री पी० एन० राजभोज (शोलापुर—रक्षित—अनुसूचित जातियां): पुराना ख़याल छोड़ देना चाहिए।

श्री टंडन : मैं पुराने चित्रों को, विचित्र चित्रों को और चित्रगुप्त जी की जो काव्य-कल्पना है, उसको छोड़ देने में कोई बहुत लाभ नहीं देखता।

भारतीय वा पश्चिमी मूढ़ग्राह दोनों त्याज्य

मगर जो छोड़ने की बात है इस मेले के सम्बन्ध में वह है यह मूढ़-ग्राह कि दो डुबकी लगाने से हमारी मुक्ति हो जायगी, यह गहरा मूढ़ग्राह है। यह सहारा देने की, प्रोत्साहन देने की बात नहीं है।

आज दो रास्ते हैं जो हमारे लिये भयावह हैं, डर के रास्ते हैं। मैं भारतीय संस्कृति का उपासक हूँ परन्तु भारतीय संस्कृति को दो रास्तों से बचाना है। एक रास्ता वह है जिस पर हमारे पश्चिम की नक़ल करने वाले भाई चलते हैं। पश्चिमी ढंग की चीजों को, रीति रिवाज को, उसकी भापा को अपनाकर पश्चिम की नक़ल करना या उसकी प्रतिलिपि बनना यह हमारे देश को शोभा नहीं देता। मैं उसका रूप नई दिल्ली में देखता हूँ। देश को नई दिल्ली का मानसिक रूप नहीं देना है क्योंकि वह भी एक मूढ़ग्राह है। यह मत समझिये कि मूढ़ग्राह, सुपर्स्टिशन, बेपढ़े लिखे लोगों में ही होता है। अंग्रेजीदां लोगों में मुझे बड़ा गहरा सुपर्स्टिशन दिखाई देता है, वह भरे हुए हैं मूढ़ग्राह से। कपड़े पहिनने में मूढ़ग्राह है कि ऐसे कपड़े पहिनेंगे तो हमारी ज़्यादा इज्ज़त होगी। खाने-पीने में, रहन-सहन में मुझे सुपर्स्टिशन दिखाई देता है। उस मूढ़ग्राह से हमें देश को बचाना है। भारतीय संस्कृति की रक्षा हमें करनी है। इसका यह मत-लब नहीं कि हम अच्छी बातों को भी विचारपूर्वक न लें।

हमारा देश बौद्धिक

मेरी मान्यता है कि हमारा देश बौद्धिक रहा है, मैं इस पर बल देता हूँ। बहुत से अंग्रेज़ इतिहासकारों ने कहा है कि हमारे यहाँ परिपाटी को पूजने वाले बहुत हैं। कंजर्वेटिज्म बहुत है। इसमें आंशिक सत्य है, लेकिन पूरा सत्य नहीं है। हमारा देश अपने आन्तरिक तल में बौद्धिक रहा है, बुद्धि का पुजारी रहा है, बुद्धि के ऊपर उसने किसी किताब को नहीं रक्खा है। 'यो बुद्धेः परतस्तु सः'। बुद्धि के ऊपर केवल ईश्वर को माना है,

ईश्वर के बाद संसार में बुद्धि तत्त्व ही है । मैं बुद्धिवादी हूँ, बुद्धि के ऊपर सब पुस्तकों को, ट्रैडिशन्स को, नापने तौलने के लिये तैयार हूँ। यही हमारे यहाँ का क्रम प्राचीनों का था । हाँ, दो, चार, पांच सौ वर्ष पहले एक अंधेरी रात आई हमारे देश में, उसमें हमने इन मूढ़ग्राहों और परिपाटियों और ट्रैडिशंस को पूरी तरह से पकड़ा । परन्तु यदि हम विचार करें तो देखेंगे कि हमारा देश अपने मार्गों को बदलने मे, परिपाटियों को सुधारने में पीछे नहीं रहा है । हमारे देश का ही एक वाक्य है, जैसा संसार में और कहीं का मैंने नहीं सुना । कथा है कि जब यास्क मुनि के शरीर छोडने का समय आया तब उनके चेलों ने उनसे पूछा, "महाराज, आप जाते हैं, अब वेदों का अर्थ कौन करेगा ?" ध्यान रखिये, वेदों का ! यास्क मुनि निरुक्त के कर्त्ता हैं । निरुक्त वह शास्त्र है जो वेदों के शब्दों को सामने रखता है और उनका अर्थ निकालता है । चेलों ने पूछा, "अब आप जा रहे हैं, वेदों का अर्थ कौन करेगा ? हम लोग किस ऋषि के पास जायँ ?" यास्क ने जवाब दिया, "तर्को वै ऋषिरुक्तः ।" इसका क्या अर्थ है ? "तर्क, लाजिक, सिलाजिज़्म, यही ऋषि है, वेदों का अर्थ करने के लिये ।" यह वाक्य था कि तर्क ही ऋषि है । तर्क का मतलब बुद्धि, क्योंकि तर्क का सहारा तो बुद्धि के बिना बढ़ता नहीं । बुद्धि को ही ऋषि बनाना यह वाक्य हमारे देश की पुरानी परिपाटी को बताता है । हमारा देश बुद्धिवादी रहा है. परिपाटियों का दास नहीं । परिपाटियाँ अवश्य बनती हैं, किस देश में नहीं हैं ? आज क्या अमरीका और इंग्लैण्ड परिपाटियों से बंधे नहीं हैं ? बहुत जगहों पर परिपाटियों की बहुत गुलामी रहती है। अगर बुद्धि भी साथ हो तो वे ठीक होती रहती हैं । हमारे यहाँ परिपाटियाँ चलती हैं लेकिन बौद्धिकता पुराने समय से समाज पर प्रभाव डालती रही है ।

मेरा निवेदन यह है कि आज जहाँ एक ओर हमें पश्चिमी नक़ल से बचना है, वहाँ अपने देश की परिपाटियों का भी जो कि धर्म के नाम पर चलती है, विश्लेषण करना है । 'यह माघ मेला', किसी ने यहाँ पर कहा था, मैं उनका आदर करता हूँ, 'श्रद्धा और भक्ति का सूचक है ।' मैं प्रयाग का रहने वाला हूँ । गंगा से मेरा गहरा प्रेम है लेकिन मेरा गंगा में मूढ़ग्राह नहीं है । गंगा में बड़े बड़े घड़ियाल रहते हैं, क्राकोडाइल रहते हैं ? क्या वह वहाँ बुद्धि से श्रद्धा से रहते हैं ? नहीं । मल्लाह दिन भर गंगा में रहता है । मेरे मन में गंगा की उपासना इसलिए है कि गंगा के किनारे तपस्वियों ने तप किया था, गंगा का जल पवित्र है। परन्तु इस भेड़ियाधसान को, कि एक छोटी सी जगह में जहाँ संगम है वहाँ हजारों आदमी एक साथ स्नान करें, प्रोत्साहन देना उचित नहीं है । यह बुद्धि के

विरुद्ध है। मैं इसको भारतीय संस्कृति का विरोधी समझता हूँ। जो लोग इस प्रकार की तबियत को प्रोत्साहन देते हैं वह सही नहीं करते हैं। वह भारतीय संस्कृति की रक्षा नहीं करते।

मैं अधिक नहीं कहना चाहता। मेरा निवेदन यह है कि हमें इन दोनों भयावह रास्तों से बचना चाहिए, एक ओर पश्चिमीय नक़ल और दूसरी ओर अपने यहाँ की सब रीतियों को बिना समझे बूझे प्रोत्साहन देना। हमारी संस्कृति प्राचीन है लेकिन बौद्धिक है। जिस तरह का हमारा यह मेला है उस तरह के मेले मुसलमानों में भी चलते हैं। वे भी अवश्य ही बुद्धि के विरुद्ध हैं, उनमें कोई अक़्ल नहीं है। मुसलमानों के मेले चलते हैं, हिन्दुओं के मेले चलते है और वहाँ बहुत भीड़-भाड़ होती है। उनमें चोर-डाकू आते हैं, लुंगाड़े भी आते हैं और श्रद्धावान बहुत थोड़े आते हैं। प्राचीन समय में यह इसलिए होते थे कि वहाँ अच्छे लोग इकट्ठा होते थे, अच्छे विचार करते थे। आज भी विचार के लिए कुछ थोड़ी सी सभायें होती हैं। वह ठीक हैं, वहाँ लोग जायँ। परन्तु इस भावना को प्रोत्साहन न दिया जाय कि लोग दौड़े दौड़े दूर दूर से आवें और जल में डुबकी मार कर चले जायँ चाहे उनकी भावना न बदले, और वे तप और सत्य का अंश लेकर न जायँ। हमारी प्राचीन मर्यादा के अनुसार सत्य और तप भारतीय संस्कृति के मुख्य अंश हैं। जहाँ तप और सत्य नहीं है वहाँ भारतीय संस्कृति नहीं है। शासन से मेरा कहना है कि आप इन दोनों रास्तों से देश को बचाइये। एक तरफ़ खाली पश्चिमीय नकल न कीजिये। दूसरी तरफ ऐसे ऐसे मेलों को; जैसा कि अब की बार रेल वालों ने किया, बहुत प्रोत्साहन न दें। रोकथाम कीजिये। मैं जानता हूँ कि आपकी भी सीमायें हैं। जब लोग एक क्रम मानते हैं तो उसको आप रोक नहीं पाते।

श्री त्यागी : भीड़ ज्यादा होती है तो सुभीता देना पड़ता है।

श्री टंडन : ठीक है, प्रबन्ध करना पड़ता है, लेकिन भीड़ आवे इसके लिए न्यौता न दीजिये, निमंत्रण न दीजिये। भीड़ का आह्वान न कीजिये। आप ऐसे अवसर पर लोगों को समझाइये कि भीड़ न करें और गंगा में एकान्त स्थान पर नहायें।

श्री पी० एन० राजभोज : यह सब पुराण चल रहा है या क्या हो रहा है ?

धर्म का आधार युक्ति

श्री टंडन : यही कह रहा हूँ कि आप भारतीय संस्कृति को बिना समझे बूझे कीचड़ में घसीटें मत। भारतीय संस्कृति मूढ़ग्राहों या सुपर्स्टिशंस का बंडल नहीं है। जो लोग भारतीय संस्कृति को नहीं समझते

वे उसको समय समय पर बुराई कर देते हैं। वे लोग भी उसको गलत समझते हैं जो उसको अंधविश्वासों का बंडल समझते हैं। भारतीय संस्कृति बौद्धिक है, बुद्धि के ऊपर निर्भर है। जहाँ बुद्धि नहीं, जहाँ युक्ति नहीं, वहाँ भारतीय संस्कृति नहीं, वहाँ धर्म नहीं। बृहस्पति स्मृति का एक वाक्य याद आ गया, उसे कह कर बैठता हूँ। कहा है—

'केवलम् शास्त्रमाश्रित्य, न कर्तव्यो विनिर्णयः।'

केवल किताबों का, जिनको शास्त्र कहते हैं, सहारा लेकर धर्म का निर्णय नहीं हुआ करता।

"युक्तिहीन विचारेतु धर्म हानिः प्रजायते ॥"

जहाँ बुद्धि नहीं है, युक्ति नहीं है ऐसे विचार से धर्म की हानि होती है।

[**उपाध्यक्ष महोदय** अध्यक्ष पद पर आसीन हुए]

यह मैं सब सदस्यों से कहना चाहता हूँ, चाहे वे हिन्दू हों चाहे मुसलमान हों चाहे ईसाई हों। जो धर्म युक्ति पर आधारित नहीं है वह धर्म कहलाने के योग्य नहीं है। भारतीय धर्म बौद्धिक है और युक्ति पर निर्भर है। इस कारण से मैं शासन को सलाह देता हूँ कि इस प्रकार के मूढ़ग्राहों को बिना समझे बूझे प्रोत्साहन दिया न करे।

१६

गुलाल और गर्द

२२ मार्च १९५४ को भारतीय लोकसभा में उस वर्ष के सामान्य आय-व्ययक पर बोलते हुए

सभापति महोदय ! मैं आज इस बहस के आखिरी दिन में खड़ा हुआ हूँ। मुझको आशा थी कि शायद आज आखिरी दिन ये गवर्नमेंट की बेंचें खाली न रहें और मैं कुछ अपनी बात मंत्रियों को, उन मंत्रियों को सुना सकूँगा जिनके विभागों के बारे में मैं कुछ कहना चाहता था। इन दिनों में जब सब विभागों के सम्बन्ध में बहस होती है, क्योंकि जब बजट उपस्थित किया जाता है तो उसमें सभी विभागों के अनुमान होते हैं और उस समय हर विभाग का प्रश्न लाया जाता है, ऐसे दिनों में मुनासिब यह है कि सब मंत्रीगण यहाँ पर बैठे रहें और सुनें और समझें कि उनके विभाग के बारे में क्या कहा जा रहा है। अकेले वित्तमंत्री का यहाँ पर उपस्थित होना पर्याप्त नहीं, क्योंकि उनके सुपुर्द वे विभाग तो हैं नहीं जो उनका दिया हुआ रुपया व्यय करते हैं, वित्तमंत्री तो रुपया बांटते हैं, खर्च उसको दूसरे करते हैं, मुनासिब होता अगर वे यहाँ पर उपस्थित होते।

गुलाल तथा गर्द युक्त बजट

अस्तु, अभी हम होली की ऋतु में हैं और होली के बाद यहाँ इकट्ठे हुए हैं। गुलालों का आकाश हमने देखा है। कहीं कहीं गुलाल के साथ गर्द का गुब्बार भी देखा है। यह हमारा बजट भी होली के आकाश के समान गुलाल और गर्द से छाया हुआ है। हमारी पंचवर्षीय योजना में दोनों मिले हुए हैं। इन चंद मिनटों में मुझे सब ब्यौरों में नहीं जाना है, परन्तु जहाँ मैं मानता हूँ कि पंचवर्षीय योजना में कुछ रंगीनी है, दिलों को प्रसन्न करने वाली वस्तु है, वहाँ मुझे व्यर्थ का आडम्बर और गर्द का गुब्बार भी दिखाई देता है और मैं पूछना चाहता हूँ कि जिन दीन और गरीब भाइयों से हमारा देश भरा पड़ा है, और जिनके बारे में अभी मेरे मित्र श्री श्रीमन्नारायण अग्रवाल ने गांधी जी का एक उद्धरण पढ़ा, उन दीनों गरीबों की झोंपड़ियों में इस योजना से क्या अब तक हुआ। इससे अगले दो वर्षों में उनको क्या लाभ हो जायगा, इस बात में मुझे बहुत गहरा सन्देह है। मुझे इस पंचवर्षीय योजना से यह नहीं दिखाई देता कि हमारे गांवों की दशा कुछ बहुत उन्नत होने वाली है, उसके लिए तो

योजना का कुछ रूप रंग अलग होना चाहिये।

युगपरिवर्तक ग्राम-योजना

मैंने दो एक बार कहा है कि गाँवों का एक नया निर्माण होना चाहिए। युग बदलने के लिए मैंने वाटिका गृह योजना की बात रखी है जिसमें गाँव के हर कुटुम्ब के लिए घर हो और हर एक घर के साथ आधा एकड़ भूमि हो। ऐसा अगर हो जाय, तो आप देखेंगे कि क्या सूरत बनती है। मुझको ऐसा याद पड़ता है कि एक बार वित्तमंत्री ने कुछ शब्दों में मेरी इस बात का स्वागत सा किया था। परन्तु मुझको तो मालूम नहीं कि आज तक यह जो रुपये खर्च हुए, कई सौ करोड़ जो अब तक खर्च हो चुके, इस रक़म का कोई एक टुकड़ा किसी ऐसे एक गाँव के भी बसाने में खर्च हुआ।

मेरी यह कल्पना थी कि हर सूबे में या हर ज़िले में एक एक गाँव तो इस नमूने का बन जाता। मुझे नहीं मालूम होता है कि आज देश भर में इस योजना पर एक भी गाँव बसाया गया हो। दो सौ चार सौ घर इस तरह के बसाये जाते, हर घर में आधा एकड़ भूमि होती, बीच में सड़कें होतीं और यह यत्न होता कि वह स्वस्थ रह सकें—मुझे इसके लाभ पर और अधिक नहीं कहना है। आशा थी कि कुछ होगा लेकिन अभी तक कुछ नहीं हुआ है। मुझे यह मालूम होता है कि इस पंचवर्षीय योजना में शहरी ढंग से रहने वाले लोगों का ध्यान है। देहाती लोगों के लिए यह योजना बहुत अधिक करने वाली नहीं है।

मैं गाँवों में बढ़ती हुई बेकारी देख रहा हूँ। यहाँ चर्चा होती है पढ़े-लिखों की बेकारी की। ऐसा लगता है कि जो देहाती लोग हैं, गाँवों के मज़दूर हैं उनकी तरफ ध्यान नहीं है। उस सबके लिए दूसरी तरह की योजना की आवश्यकता है।

शिक्षा विभाग चेतनाहीन

मुझे थोड़े से शब्द भाषा के संबंध में कहने हैं। मेरा निवेदन है कि भाषा के प्रश्न पर हमारे शिक्षा विभाग के भीतर सजगता नहीं है। ऐसा लगता है कि वह ऊंघता हुआ विभाग है। चार वर्ष बीत गए, हिन्दी के सम्बन्ध में उन्होंने क्या किया ?

श्री नन्दलाल शर्मा (सीकर) : शत्रुता।

श्री टंडन : छोटे छोटे कुछ चार पांच शब्दकोश सामने आये हैं जिनमें बहुत रुपया बरबाद हुआ है। उस दिन मेरे मित्र सेठ गोविन्ददास जी ने पूछा हमारे शिक्षामन्त्री जी से कि जो काम संविधान सभा ने शब्दों के

बारे में कर दिया था अर्थात् संविधान का अनुवाद हिन्दीं में हो चुका और हिंदी शब्द स्वीकार हो चुके, क्या आप उन शब्दों को भी बदलने में लगे हैं। उन्होंने जवाब दिया कि हाँ, हम बदलने में लगे हैं। सेठ जी ने पूछा कि क्या आप संविधान की यानी कांस्टीट्यूशन की अवहेलना करेंगे, तो उन्होंने कहा, 'हाँ'। अवहेलना का मतलब उन्होंने नहीं समझा। स्पीकर साहब ने उनको मतलब समझाया तब उन्होंने कहा, 'नहीं'। मुझे अपने शिक्षामंत्री की इल्मियत में संदेह नहीं, बहुत आलिम हैं। शिक्षा विभाग से हम यह आशा करते हैं कि वह हिंदी को प्रगति दे। लेकिन ऐसा जान पड़ता है कि हमारे शिक्षामंत्री जी को हिंदी का ज्ञान बहुत कम है। मैंने सुना है कि वह बंगला बोल सकते है, बंगला भाषा में 'अवहेलना' बहुत साधारण प्रचलन का शब्द है, परन्तु उस शब्द की भी उनको जानकारी नहीं थी। मुझे इसके लिए शिकायत नहीं है। मैं सचमुच हृदय से उनका आदर करता हूँ, यह मैं आपसे अपने हृदय की बात कहता हूँ, लेकिन आदर होते हुए भी यह मेरा निवेदन है कि यह जो हिंदी के चलाने का काम है यह उनकी शक्ति के बाहर है।

हिन्दी का मंत्री अथवा आयोग

तब क्या किया जाय? वह शिक्षामंत्री हैं। जो काम अब तक हमने देखा उसमें तो उस विभाग में कोई चेतना नहीं दिखाई देती। मेरा निवेदन है कि या तो इसके लिए एक स्थायी आयोग, कमीशन, बना दिया जाय जिसके कामों में शिक्षा विभाग दखल न दे और जिसको हिंदी का काम करने का पूरा अधिकार हो, या एक नयी मिनिस्ट्री बनायी जाय। जरूरत यह है कि बिल्कुल एक नयी मिनिस्ट्री बनायी जाय जो हिंदी को चलाने के लिये.......

एक माननीय सदस्य : गोविन्द दास।

श्री टंडन : मेरे दिमाग़ में कोई खास आदमी नहीं है। मुझे खुशी होगी अगर आप आकर के काम करें। लेकिन कोई ऐसा आदमी बनाया जाय जो इस काम को लग कर करे और जिसमें चेतनता हो।

श्री एस० एस० मोरे (शोलापुर) : यदि नया मंत्री आवश्यक है, तो पुराने को क्यों न हटा दिया जाए?

श्री टंडन : मेरा निवेदन यह है कि यह विषय विचार करने का है। मैं आगे बढ़ता हूँ। समय थोड़ा है।

उर्दू का प्रश्न

राष्ट्रपति के पास उर्दू का मसला आया है। मेरे सूबे के बारे में

मांग आयी है कि वहाँ उर्दू एक क्षेत्रीय भाषा के रूप में स्वीकार की जाय और एक उर्दू की यूनिवर्सिटी बनाई जाय जहाँ उर्दू में शिक्षण हो। उर्दू के माने केवल उर्दू भाषा नहीं हैं बल्कि उर्दू और फ़ारसी लिपि है। सवाल लिपि का है। यही असली सवाल है। आज फ़ारसी और अरबी लिपि का सपना हमारे कुछ भाई देखते हैं और आये हैं राष्ट्रपति के पास कि इसको जारी किया जाय। मुझको ऐसा दिखाई पड़ता है कि यह दिमाग़ ग़लत है, इस दिमाग़ में कुछ मुस्लिम लीग के दिमाग़ की बू है। आज भी वह अपने को पूरा भारतीय मानते हुए इस देश का जो चलन है उसमें अपने को प्रविष्ट नहीं करना चाहते हैं। हमारे सामने किसी अलग कल्चर का सवाल नहीं है। एक भाई ने लखनऊ में कहा कि हमारा मुसलमानी कल्चर कुछ ईरानी है, हमको मौक़ा होना चाहिए कि हम उसके अनुसार काम कर सकें, उर्दू के द्वारा। क्या आज हमारे देश में इस तरह के दिमाग़ की ज़रूरत है? यह सांप्रदायिकता है। मैं उर्दू का विरोधी नहीं हूँ। मैं फ़ारसी भी जानता हूँ। मुझे फ़ारसी में मज़ा आता है। उर्दू में मुझे रुचि है लेकिन हमारे देश में क्या आज इन भाषाओं पर ज़ोर देने की आवश्यकता है, इस लिपि की आवश्यकता है? कैसा तमाशा हम पाकिस्तान में देख रहे हैं। पाकिस्तान में जो आज मुस्लिम लीग की हार हो रही है उसका बड़ा कारण यह है कि वह उर्दू ज़बान को बंगालियों के ऊपर लादना चाहती है। बंगाली उसको स्वीकार नहीं कर रहे हैं। वे भी मुसलमान हैं। उर्दू सब मुसलमानों को मान्य हो, ऐसी बात नहीं है। हमारे यहाँ के सभी रहने वाले जो मुसलमान हैं वे भी इस प्रश्न को उस रूप में, मुसलमानी रूप में न बढ़ावें। मेरा निवेदन है कि यह जो अनेक मांगें की गई हैं वे ज्यादातर ग़लत हैं। यह एक सही बात है कि अगर कोई उर्दू पढ़ना चाहे तो उसके ऊपर कोई रुकावट नहीं होनी चाहिए। ठीक है, और मैं जानता हूँ कि इस बात के लिए हमारे सूबे की गवर्नमेंट ने पूरा मौक़ा दिया है। लेकिन यह कि हमारी अलग उर्दू यूनिवर्सिटी बने, हम अरबी लिपि में अर्ज़ियाँ दे सकें यह सब ग़लत मांगें हैं। मेरा निवेदन है कि इस तरह की मांगों का साफ़ जवाब यही है कि वे मानने योग्य नहीं हैं।

रुपये की बरबादी

हमारी मिनिस्ट्री आज जो काम कर रही है उसके एक आध कामों के बारे में भी मेरा कुछ निवेदन है। जो ज़ोर देना चाहिए राष्ट्रभाषा पर वह मिनिस्ट्री नहीं दे रही है और जो काम कर भी रही है वह सही तरीक़े से नहीं कर रही है। अभी उनकी रिपोर्ट निकली है। उन्होंने कहा है कि

हमारा इरादा एक कोश बनाने का है। वह चाहते हैं कि कनसाइस आक्सफ़ोर्ड डिक्शनरी का अनुवाद हिन्दी में हो जाय। रिपोर्ट में कहा गया है कि ६०,००० रुपया इस काम के लिये हिन्दुस्तानी कल्चर सोसायटी को देना स्वीकार किया गया है। मैं चाहता था कि शिक्षामंत्री जी यहाँ होते और मै उनसे पूछता कि हिन्दुस्तानी कल्चर सोसायटी ने अब तक हिन्दी का जो काम किया है क्या उसका कुछ पता है? मुमकिन है कि पता हो। लेकिन फिर भी उसकी मदद करना उनको मंजूर है। इसी कोश, डिक्शनरी, के काम को दूसरी संस्था ने, मशहूर संस्था ने, उठाया है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन इस काम को कर रहा है। उसने बहुत सा काम आगे बढ़ाया है। उसने शिक्षा विभाग से कहा कि हमारे कोश के लिए रुपया दीजिए। शिक्षा विभाग ने उनको इन्कार कर दिया। हिन्दुस्तान भर में इस संस्था का नाम प्रसिद्ध है। इसने हिन्दी को चलाने का खास हिस्सा लिया है लेकिन उसको इन्कार कर दिया गया। यहाँ से उस सस्था के पास खत गया कि तुम इस डिक्शनरी के काम को मत उठाओ। शायद यह खत इसी मतलब से भेजा गया कि वह काम हिन्दुस्तानी कल्चर सोसायटी ने लेना था। मेरा निवेदन है कि यह ६०,००० रुपये की बरबादी है। हमें मालूम है कि इसी संस्था की ओर से संविधान का हिन्दुस्तानी में अनुवाद हुआ था।

हिन्दुस्तानी मे अनुवाद हुआ, परन्तु वह अनुवाद आज किस काम में आ रहा है? कौन उसको उठाकर देखता है? हिन्दी वाले हिन्दी का संविधान देखते है, अंग्रेज़ी वाले अंग्रेज़ी का देखते हैं। हिन्दुस्तानी अनुवाद के ऊपर जो बहुत सा रुपया खर्च हुआ, वह किस काम आया? यह कोश बनाने का जो काम है, अगर मेरी आवाज़ मंत्री महोदय तक पहुँच सके तो नम्र निवेदन है कि इसमें इस तरह से आप रुपये को मत फेंकिये।

आचार्य कृपलानी (भागलपुर व पूर्निया) : बहुत कम रुपया है।

श्री टंडन : जी हाँ?

श्री एस० एस० मोरे : बरबाद करने के लिए।

श्री टंडन : रुपया तो कोश के काम में आप लगायें, लेकिन यह काम उसको दीजिये जो कर सकता है, सम्मेलन है, नागरी प्रचारिणी सभा है काशी की—यह संस्थाएँ हैं जिन्होंने इस काम को किया है और कर रही हैं। हिन्दी साहित्य सम्मेलन में इस समय लगभग २२५ आदमी काम कर रहे हैं। वह सोसायटी जिसको आपने काम दिया है कोई ठोस सी चीज़ नहीं है। मै पूछूंगा कि क्या उस सोसायटी में दस आदमी भी काम करने वाले है? आज आपके रुपये से वह आदमी रख लें तो दूसरी बात है। मुझे उस संस्था का विरोध नहीं करना है, पर यह अवश्य कहना चाहता हूं कि हमारा रुपया ठीक काम में लगना चाहिये।

अकादमियों का नया चलन

मुझे एक बात और कहनी है और मैं बैठ जाऊँगा। कुछ इधर हमारे शिक्षा विभाग ने एक फ़ैशन सा निकाला है अकादमियों के खोलने का। एक नाच सीखने के लिये अकादमी खुली है, नाच और संगीत अकादमी। एक साहित्य अकादमी खुली है, अकादमी क्या है ?

आचार्य कृपलानी : एक आदमी।

श्री टंडन : यह नया शब्द हम को शिक्षा विभाग ने दिया। तीसरी एक कला की अकादमी खुलने वाली है। हमारे भाई धीरे से कहते हैं कि यह शब्द पुराना है। जी ! हिन्दी में यह शब्द नया है, अंग्रेज़ी में पुराना है, उसका उच्चारण भी दूसरा है। हमारे यहाँ जो यह साहित्य और अकादमी, इन दो शब्दों का इस होली की ऋतु में विवाह कराने का यत्न है, ऐसे विवाह कुछ ऐसे पुरोहित कराया करते हैं, जो सरस्वती पुत्र होते हैं। वे शब्दों का विवाह कराना जानते हैं। यह अनमेल शब्द मुझे उचित नहीं लगता। लेकिन शब्दों की बात छोड़कर मेरा निवेदन यह है, गहरी दृष्टि से, संजीदगी से, कि इन चीज़ों के ऊपर रुपया बरबाद करना अच्छा नहीं। मैं इनमें रुपयों की बरबादी देखता हूँ, मैं साहित्य का भी प्रेमी हूँ और शायद लोग न जानते हों कि संगीत का भी प्रेमी हूँ। परन्तु इस तरह से संगीत और नाच की अकादमी, यह मुझे बेतुकी लगती है। लखनऊ में किसी समय ऐसी अकादमी, नाम उसका अकादमी नहीं था, वाजिद अली शाह ने भी खोल रखी थी।

आचार्य कृपलानी : प्रत्येक युग के वाजिद अली शाह होते न।

श्री टंडन : कैसरबाग आज भी उसकी याद दिलाता है। लेकिहैं उनका जो मुख्य घर था उसमें आज हमारी गवर्नमेंट ने अक्लमन्दी करके एक विज्ञान का घर खोल दिया है।

[उपाध्यक्ष महोदय पीठासीन हुए]

मेरा निवेदन यह है कि हमारे सामने बहुत गहरे काम हैं। हमारे माननीय प्रधान मंत्री जी ने हमारा ध्यान खींचा है कि आज हमारे देश की स्थिति गंभीर है। एक तरफ़ तो हमारी यह स्थिति रहे और दूसरी तरफ़ हम नाच और गाने के ऊपर विशेष ध्यान दें और रुपया लगायें, मुझे यह ठीक नहीं लगता। मेरा यह निवेदन है कि ऐसे प्रयत्नों में पैसा न लगे, अच्छे कामों में लगे। शिक्षा विभाग के लिए आवश्यकता यह है कि वह राष्ट्रीयता की तरफ ध्यान दे और राष्ट्रभाषा को मदद दे।

अकादमी हिन्दी के लिये हितकर नहीं

यह साहित्य अकादमी जो बनी है, उसके विषय में एक दूसरी बात भी

कहना चाहता हूँ। मुझ को तो ऐसा लगता है कि हिन्दी को कुछ खिसका देने का असर इसके भीतर है। चौदह भाषाओं का यह एक संगम है, मैं अकादमी से संगम शब्द अच्छा समझता हूँ, १४ भाषाओं का यह एक साहित्य संगम है। सब भाषाओं की हमें आवश्यकता है। हम उनको मदद दें, लेकिन यहाँ हम क्या मदद देंगे। आवश्यकता यह थी कि अपने अपने राज्यों में उनको मदद दी जाय, उनको हम कुछ अनुदान, ग्रांट्स, दें। मगर यहां पर इस साहित्य संगम से उन भाषाओं का भला होगा, यह बात मेरी समझ में नहीं आती। और उल्टी बात क्या रखी गयी कि १४ भाषाओं में एक हिन्दी है। पांच हज़ार रुपये का इनाम हिन्दी के लेखक को दिया जायगा। उन्होंने कहा है कि हम हर एक भाषा के लेखक को पांच पांच हज़ार रुपया इनाम देंगे। पांच हजार रुपये का एक इनाम हिन्दी को मिल जायगा जो राष्ट्रभाषा है, जिसके बोलने वालों की आबादी भी इतनी अधिक है। पांच हज़ार रुपया उर्दू वालों को भी मिल जायगा। और पांच हज़ार रुपया दूसरी भाषाओं को भी मिल जायगा। यह क्या चीज़ है? शायद उनकी मंशा तो यह नहीं होगी, लेकिन जो इसका असर होगा वह यह है कि हिन्दी का स्थान जो राष्ट्रभाषा का है उसको शिक्षा विभाग नीचे उतारे। मैं इसीलिये निवेदन करता हूँ कि आज आवश्यकता है कि एक स्वतन्त्र आयोग बने जो हिन्दी की रक्षा करे और हिन्दी को प्रगति दे, या एक नयी मिनिस्ट्री बने जो केवल इस हिन्दी के काम को करे और जो बाक़ी ११ वर्ष बचे हैं इनके अन्दर हिन्दी को अच्छी तरह चला दे।

१७

केन्द्रीय शिक्षा विभाग

२७ मार्च १९५४ को भारतीय लोकसभा में उस वर्ष के शिक्षा मन्त्रालय के अनुदान पर बोलते हुए

सभापति महोदय! शिक्षा का विषय हमारे भविष्य का निश्चय करने वाला है। अपने देश की रक्षा अवश्य ही बहुत बड़ा विषय है, परन्तु रक्षा के लिए भी वुद्धि और विद्या की आवश्यकता होती है। इस लिए मेरा सदा यह विचार रहा है कि देश की रक्षा के साथ शिक्षा का क्रम क्या है, शिक्षा चलाने की रीति क्या है, किस तरह से हम अपने युवकों को भावी कार्यक्रम के लिए तैयार कर रहे हैं, यह सब विषय आ जाते हैं। इसके ऊपर राष्ट्र का वहुत अधिक धन खर्च होना चाहिये।

भारतीय आदर्श के अनुकूल शिक्षा

पिछले कुछ वर्षों के भीतर विश्वविद्यालयों के दीक्षान्त भाषणों में उनके कनवोकेशनों में, कई शिक्षा विषय के जानकारों ने बार-बार यह कहा कि आज का शिक्षा क्रम उचित नहीं है, दूषित है, इसको बदलो। हमारे कई राज्यपालों ने, गवर्नरों ने अपने दीक्षान्त भाषणों में इस पर वल दिया है। कहा तो कइयों ने, ऊँचे ऊँचे पदाधिकारियों ने, परन्तु देखने में कोई परिवर्तन नहीं आया। परिवर्तन एक दिन में नहीं होता, बहुत जल्दी नहीं होता, यह तो सब ही जानते हैं, परन्तु कुछ निश्चय उधर चलने का दिखाई देता, इसको हम आशा करते थे। अभी जान पड़ता है कि हमारे शिक्षा विभाग ने अपना निश्चय नहीं किया कि भावी शिक्षा का कार्यक्रम क्या हो। आज जो यूनिवर्सिटियाँ चल रही हैं वे वहुत पुराने समय में वनाई गई थीं। उनकी कल्पना अंग्रेज़ों ने अपनी आवश्यकताओं के अनुसार और कुछ अपने इंग्लैंड के कार्यक्रमों के अनुसार की थी। इंग्लैंड की कई यूनिवर्सिटियाँ वहुत ऊंची हैं। परन्तु विचार करने की तो बात यह है कि क्या अब भी हम उस मार्ग पर ही चलेंगे जिस पर पुराने अंग्रेज़ों ने हमको चला दिया? मैं निवेदन करता हूँ कि हमारे देश की शिक्षा प्रणाली अपने देश की संस्कृति के अनुरूप और आवश्यकताओं के अनुरूप होनी चाहिए। इंग्लैंड की या यूरोप की शिक्षा प्रणाली में जो कुछ अच्छी बातें मिलें उनको हम लें, परन्तु हमें स्मरण रखना चाहिये कि हमारे देश के आदर्श कुछ दूसरे आदर्श हैं, संस्कृति में

अन्तर है। हमारा देश कुछ नया देश तो नहीं है, हमारे यहाँ शिक्षा में बहुत प्रयोग पहले भी हो चुके हैं। जो प्रयोग अंग्रेज़ों ने किये वह इन्होंने अपने ढंग से किये। हमारे पुराने लोगों ने भी किये थे। हमारे विचारने की बात है कि क्या जो अपने पुराने रास्ते थे, उनमें कोई अच्छा रास्ता था जिसको आज हम अपना सकते हैं। मुख्य बात शिक्षा के सम्बन्ध में सोचने की यह है कि हम अपने युवकों को क्या बनाना चाहते हैं। हम क्या केवल उनको पढ़ा लिखा कर अपने देश के जो आवश्यक धन्धे हैं, उनमें ही लगाने का यत्न करना चाहते हैं या उनके भीतर कुछ नैतिक आदर्श पैदा करना चाहते हैं।

इसके विषय में मेरा निवेदन है कि हमारे यहाँ का जो पुराना रास्ता था वह आज के रास्तों की अपेक्षा अच्छा था। विद्यार्थी का जीवन कोमल न हो, अपनी मांग संवारने और हैट, बूट की चिन्ता में उनका रुपया और समय न जाय, किन्तु उनके जीवन में कठोरता हो, करापन हो, ब्रह्मचर्य की अवस्था में वे सिनेमाओं के शौक़ीन न हों, वे नाच गाने के आदी न हों, इसके लिए हमें ऐसा वायुमण्डल पैदा करना होगा जिसमें ब्रह्मचर्य की रक्षा हो। उचित यह है कि हम ब्रह्मचर्य के क्रम से अपने विद्यार्थियों को रखें, उनमें ब्रह्मचर्य की शक्ति और तेज पैदा हो, इसकी हम चिंता करें, परन्तु आज तो वह चिता नहीं है। दिल्ली में लड़के पढ़ रहे हैं, सहस्रों हैं, लखनऊ में लड़के पढ़ रहे हैं, सहस्रों हैं, शाम को वह कहाँ कहाँ जाते हैं, किसी को खबर नहीं। किन-किन सिनेमाओं में और घरों में घुसते हैं, क्या शौक़ीनी उनके दिमाग़ में है, क्या कपड़ा पहनते हैं, किस तरह से रहते हैं, कोई गुरु इसको देखता नहीं। अभी हमारे भाई कृपलानी जी ने कुछ थोड़ा सा संकेत दिया कि लड़कों ने क्या क्या किया है।

श्री विभूति मिश्र (सारन—चम्पारन) : अध्यापकों का भी यही हाल है।

श्री टंडन : तब शिक्षा विभाग पर और केवल शिक्षा विभाग पर ही नहीं बल्कि हर प्रदेश के शासन पर, केन्द्रीय शासन के केवल शिक्षामंत्री पर नहीं बल्कि सब शासनों पर इसका दायित्व है, सब पर एक बड़ी जिम्मेदारी पड़ती है। अभी एक भाई ने कहा कि अध्यापकों का भी यही हाल है। जब अध्यापक ऐसे हों तो फिर विद्यार्थी किसको देख कर अपने को ढाल सकेंगे···

डा० एन० बी० खरे : शासक कैसे होंगे ?

आमूल परिवर्तन आवश्यक

श्री टंडन : समय मेरा थोड़ा है। पुराने समय में गुरु अपने बच्चों से यह

आशा करता था—सत्यम् वद धर्मम् चर । बच्चों को यह सिखलाता था, वह इससे भी ऊपर चढ़ता था और बच्चों के सामने स्वयं अपने को उदाहरण स्वरूप धरता था, वह स्वयं अपने चरित्र को उदाहरण के लिए रखता था, केवल मुँह से ही उन्हें यह सीख नहीं देता था कि ऐसे बनो, उनके सामने स्वयं को आदर्श स्वरूप रखता था। अब आज अगर ऐसे अध्यापक हों जैसे मेरे भाई ने बताया, तो वह कैसे अपने को बच्चों के सामने रख सकते हैं ? अगर कभी किसी गुरु में कोई कमज़ोरी होती भी थी तो वह इस प्रकार चेतावनी देता था—'यान्यंस्माकं सुचरितानि तानि सेवितव्यानि नो इतराणि'। कैसा ऊंचा वाक्य है, इच्छा होती है कि संसार भर के गुरु इस को रट लेते। 'सुचरितानि' मेरे में जो गुण हैं उसी को ग्रहण करना, 'नो इतराणि' दूसरों को अर्थात् दूषणों को फेंक देना, मत ग्रहण करना। आज यह अध्यापकों में शक्ति हो, इसकी आवश्यकता है। आज हमें अपने शिक्षा के क्रम को इस तरह से रखना है, एक आमूल चूल परिवर्तन करना है, जिसमें बच्चों के ऊपर अध्यापकों का अच्छा प्रभाव पड़ सके। यह मुख्य बात है। उसका रास्ता ढूंढ़ना पड़ेगा। हमारे पुराने समय में ऋषिकुल कहिये या गुरुकुल कहिये उसकी प्रथा थी। बच्चे गुरुओं के साथ रखे जाते थे और उस समय के गुरु पैसों की चिन्ता करने वाले नहीं होते थे, पैसे से अचिन्त थे, उन्हें पैसे की फ़िक्र नहीं रहा करती थी, शासन उनको अचिन्त करता था। साधारण उनकी आवश्यकतायें होती थीं। वह कोमलता से जीवन व्यतीत करने वाले नहीं होते थे, उनके जीवन में एक कठोरता और तपस्या होती थी और उनके जीवन को देख कर बच्चे स्वयं अपने चरित्र को उनके अनुकूल बनाते थे। मेरा निवेदन है कि आज उसी प्रकार की यूनिवर्सिटियाँ हों। मैं प्रयाग का रहने वाला हूँ। भरद्वाज मुनि ने प्रयाग में बहुत बड़ी यूनिवर्सिटी बनाई थी। आज दो हजार, तीन हज़ार लड़कों की संख्या एक संस्था में बहुत मानी जाती है। भरद्वाज कुलपति कहलाये हैं और कुलपति की परिभाषा हमारे कोशों में यह दी है कि जो गुरु दस सहस्त्र विद्यार्थियों के पढ़ाने का इन्तज़ाम करे, उनके भोजन का इन्तजाम करे, उसको कुलपति कहते हैं। कुलपति की यह परिभाषा आपको कोश में मिलेगी। चूंकि घंटी बज चुकी है, मैं इतना ही निवेदन करूँगा कि इस सम्बन्ध में गम्भीर विचार की आवश्यकता है, उन विचारकों की आवश्यकता है जिनके जीवन में स्वयं तपस्या हो, जो अपनी तपस्या से विचार करके हमारे देश के सामने कुछ मौलिक वस्तु रख सकें और उनके अनुसार स्वयं आचरण करके दूसरों से आचरण करा सकें। मेरा इतना निवेदन है। बस इस विषय को मैं यहीं छोड़ता हूँ।

हिंदी का कार्य—हिंदी संस्थायें

मैं कुछ शब्द शिक्षा के जो अनुदान हैं, ग्रान्ट्स हैं, उनके बारे में कहना चाहता हूँ। मुझे भाषा के विषय में कुछ शब्द कहने हैं। उस दिन हमारे शिक्षामन्त्री नहीं थे। पाँच दिनों की जो बहस यहाँ पर हुई थी, उसमें मैंने भी भाग लिया था। मेरी इच्छा थी कि वह उस अवसर पर होते। आज वह उपस्थित हैं और मुझे अवसर मिला है कि मैं थोड़ा सा दिल खोल कर उनके सामने रख दूं...

डा. एन. बी. खरे : लेकिन वह सो रहे हैं।

श्री टंडन : ऐसी व्यर्थ बात मत कहिये। मन्त्री जी जानते हैं कि मैं हिन्दी का पुराना सेवक हूँ। हिन्दी के विषय में बहुत वर्षों से विचार करता रहा हूँ, किस प्रकार से उसका काम हो इस पर मैंने ध्यान दिया है और मेरे जीवन का एक बहुत बड़ा अंश हिन्दी की एक बड़ी संस्था साहित्य सम्मेलन के चलाने में लगा है।

आज देश में हिन्दी की सबसे बड़ी संस्था वह मानी जाती है। इसके आधीन लगभग १८०० केन्द्र इस देश में हैं जहाँ इसकी और इसकी शाखा संस्था की परीक्षायें होती हैं। यह इसका एक काम है। इसकी परीक्षाओं में कुल मिलाकर दो लाख से ऊपर परीक्षार्थी अर्थात् कैण्डिडेट हर साल बैठते हैं। इसकी सबसे ऊँची जो परीक्षा है जिसका नाम साहित्यरत्न है वह आपकी किसी यूनिवर्सिटी की एम० ए० की कक्षा से कम नहीं पड़ेगी। जितनी यूनिवर्सिटियाँ हैं उनको आप अनुदान देते हैं। किसी को २३ लाख, किसी को १२ लाख, किसी को १५ लाख, आप देते हैं या भिन्न-भिन्न राज्य देते हैं। आपके यहाँ से तीन को अनुदान दिया जाता है और जामिया मिलिया को भी पिछले कुछ वर्षों में ३, ४ और ५ लाख रुपया हर साल किसी न किसी रूप में दिया गया है। कभी २ कभी ३ और कभी ५ लाख दिया गया है। मगर हिन्दी साहित्य सम्मेलन की साहित्यरत्न परीक्षा में इतने विद्यार्थी बैठते और पास होते हैं जितने कि कुल यूनिवर्सिटियों को मिला कर भी नहीं होते हैं। आप इलाहाबाद यूनिवर्सिटी, लखनऊ यूनिवर्सिटी, दिल्ली यूनिवर्सिटी, जामिया मिलिया, कलकत्ता यूनिवर्सिटी, बम्बई यूनिवर्सिटी, सब को मिला कर लीजिये कि एम० ए० की परीक्षा में हिन्दी के कितने परीक्षार्थी बैठते हैं, और कितने पास होते हैं। इन सबको मिला कर जो संख्या हो उसकी चौगुनी संख्या में हिन्दी साहित्य सम्मेलन तैयार करता है। परन्तु मुझे ऐसा जान पड़ता है कि हमारे शिक्षा विभाग को हिन्दी साहित्य सम्मेलन पर अधिक भरोसा नहीं है। वह इसकी तरफ से जैसे आशंकित है। सच है, सम्मेलन हिन्दी के लिये

लड़ा था, सम्मेलन के लड़ने पर ही राष्ट्रभाषा का प्रश्न उठा, उसकी ओर के प्रतिनिधि बराबर लड़े कि हिन्दी राष्ट्रभाषा हो । मैं जानता हूँ कि हमारे आज के शिक्षामंत्री की राय थी कि हिन्दी न हो, हिंदुस्तानी हो, उनका भाषण कांस्टीटूएण्ट असेम्बली का मौजूद है ।

श्री नन्दलाल शर्मा (सीकर) : हिन्दुस्तानी कोई भाषा नहीं है ।

श्री टण्डन : हमारे शिक्षामंत्री की यह राय थी कि नागरी अक्षर और उर्दू अक्षर दोनों चलाये जायें । कांस्टीटूएण्ट असेम्बली में यह सवाल बार-बार आया, उसके ऊपर राय ली गई और आप सबको मालूम है कि राय का क्या नतीजा हुआ । मुझको तो कांग्रेस पार्टी के अन्दर जो वोटिंग हुई थी वह भी याद है । परन्तु अब जब हिन्दी स्वीकार हो गई तब मैं यह आशा करता हूँ, हृदय से कहता हूँ कि मैं शिक्षामंत्री का आदर करता हूँ, कुछ बातों में मेरा उनका मतभेद है, परन्तु मैं हृदय से उनका आदर करता हूँ, आज से नहीं वर्षों से मैं उनको जानता हूँ, मैं यह आशा करता हूँ कि जब तय हो गया कि हिन्दी चले, हिन्दुस्तानी नहीं, उर्दू नहीं, तब हिन्दी के ऊपर बल होना चाहिये, और जिस संस्था ने इतना काम किया है, उस संस्था के द्वारा कामों को कराने का यत्न करना चाहिये । मगर बात यह है कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन या और जो दो एक बड़ी संस्थायें देश में हैं, जो हिन्दी का काम करती आई हैं, उनकी ओर से शिक्षा विभाग का मन फिरा हुआ है और उनकी अवहेलना होती है ।

नागरी प्रचारिणी सभा और हिन्दी साहित्य सम्मेलन, यह मुख्य संस्थायें हैं देश में । हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने जड़ लगाई मद्रास में दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की । मद्रास में, कुल राष्ट्रभाषा का प्रचार, हिन्दी साहित्य सम्मेलन का चलाया हुआ है । दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा सम्मेलन की लगाई हुई वस्तु है, सम्मेलन ने इसको आरम्भ किया, सम्मेलन की वह शाखा सन् १९२८ में इसलिए स्वतन्त्र की गई कि वह हिन्दी का काम स्वतन्त्रता से आगे बढ़ावे । आज सम्मेलन की एक शाखा वर्धा में है, राष्ट्रभाषा हिन्दी प्रचार सभा, जिसका आरम्भ गांधी जी और श्री जमनालाल बजाज ने किया । परन्तु जब गांधी जी की नीति में हिन्दी और हिन्दुस्तानी का अन्तर पड़ा तब गांधी जी उससे अलग हो गये । हिन्दी संसार जानता है. दूसरे भी जानते हैं कि गांधी जी और हिन्दी साहित्य सम्मेलन का नीति के बारे में कुछ अन्तर हुआ और वह अन्तर हिन्दी और हिन्दुस्तानी का हमें कांस्टीटूएण्ट असेम्बली में दिखलाई पड़ा । प्रश्न यह है कि हम आज हिन्दी चलायेंगे या हिन्दुस्तानी ? किन शब्दों को आप चलायेंगे और किस प्रकार से काम करेंगे ? मेरा यह

निवेदन है कि भाषा के विषय में जो नीति शिक्षा विभाग ने अब तक बरती है वह मानो हिन्दी वालों को हटा कर हिन्दुस्तानी वालों को आगे करने की है। मैं अतिशयोक्ति नहीं करता, मैं मौलाना से कहता हूँ कि आप दिल पर हाथ रखें और सोचें कि कितने हिन्दी वालों को आपने इस काम के लिए अपनाया है। हिन्दी वाले छिपे नहीं हैं। नागरी प्रचारिणी और हिन्दी साहित्य सम्मेलन के लोग हिन्दी संसार के सामने हैं।

मेरा यह कहना भी है शिक्षा विभाग से कि उसकी रिपोर्टों से यह तो मालूम होता है कि यह स्कीम बन रही है और यह विचार किया जा रहा है, लेकिन देखना यह है कि क्या ठोस काम पिछले तीन वर्षों में हुआ हैं। जो काम आज हुआ है, वह सामने है।

हिन्दी संविधान में शब्द-परिवर्तन

कुछ शब्दों के अनुवाद छोटी पुस्तिकाओं के रूप में निकले हैं। परंतु इसके बारे में भी मेरा निवेदन है कि ठीक नीति नहीं बरती जाती। उस दिन मेरे मित्र गोविन्ददास जी ने पूछा था शिक्षामंत्री से कि क्या जो शब्द निश्चित हो चुके हैं, संविधान में तय हो चुके, उन पर क्या फिर विचार हो रहा है, क्या फिर आप उनको बदलेंगे? शिक्षामंत्री ने कहा 'हाँ'।

मौलाना आजाद : आप ग़लत कह रहे हैं। मैंने यह नहीं कहा।

डा० राम सुभग सिंह (शाहाबाद—दक्षिण) : पहले कहा था बाद में दुरुस्त कर दिया था।

मौलाना आज़ाद : मैंने सिर्फ़ यह कहा था कि एक बोर्ड बनाया गया है, इस काम के लिये। वह अगर चाहे तो यह भी कर सकता है। मौक़ा उसको रहेगा। मगर इस बोर्ड के जो टर्म्स आफ़ रेफरेन्स हैं उनमें यह कहीं नहीं है कि जिन लफ्ज़ों का पहले फ़ैसला हो चुका है उनको फिर नये सिरे से सोचे। लेकिन मैंने कोई इस तरह की बात भी नहीं कही है बोर्ड से कि नहीं भाई तुम इनको छू नहीं सकते। अगर वह नये लफ्ज़ों की जरूरत समझेंगे तो अपना मशवरा पेश करेंगे।

श्री टण्डन : तब फिर उस रोज जो जवाब आपने दिया था, मुझे ठीक याद नहीं है···

उपाध्यक्ष महोदय : माननीय सदस्य मुझे सम्बोधित करें।

श्री टण्डन : मैं आपसे निवेदन कर रहा हूँ कि शिक्षामंत्री ने जो कहा था, मैंने उसको सुना नहीं था, मैं मौजूद नहीं था, परन्तु जो आज आपने कहा कि 'मैंने यह कहा था कि वह चाहें तो बदल सकते हैं' उसके माने क्या हैं? मैं यह कह रहा हूँ कि संविधान के अन्दर जो तय हो

चुका है, जिस हिन्दी संविधान पर डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद और संविधान सभा के सदस्यों के दस्तखत हैं......

मौलाना आज़ाद : वह बदल नहीं सकते वह मशवरा दे सकते हैं, बदलने का उनको अख्तियार नहीं है।

श्री टण्डन : अब सवाल यह है कि बदलेगा कौन ? क्या पार्लियामेंट के सामने वह आवेगा ?

मौलाना आज़ाद : गवर्नमेंट उनके मशवरा को देख कर फिर आखिर में फ़ैसला करेगी।

श्री टण्डन : इसके जितने नुक्ते थे, मैंने समझ लिये। लेकिन असर जो चारो ओर शिक्षा विभाग ने डाला वह यही है कि संविधान के कुछ शब्दों को बदलने जा रहा है।

सवाल यह है कि जब कांस्टीट्यूशन के शब्द निश्चित हो चुके हैं तब क्या फिर विभाग द्वारा उनको बदला जा सकता है। हिन्दी में कांस्टीट्यूशन कुछ वर्षों में बना। एक कमेटी बनी जिसने शब्द तय किये और इस काम पर लाखों रुपया खर्च हुआ। उन शब्दों के अनुसार आपका संविधान आया। जब हम लोग हस्ताक्षर करने को गये तो एक तरफ अंग्रेज़ी में लिखे कांस्टीट्यूशन पर हमने हस्ताक्षर किये और दूसरी तरफ हिन्दी में लिखे कांस्टीट्यूशन पर हस्ताक्षर किये। आज फिर कोई विभागीय कमेटी इस पर विचार करे कि वह शब्द रखे जायँ या न रखे जायँ, मैं कहता हूँ कि यह बिलकुल ग़लत है। शिक्षा विभाग का फिर से किसी बोर्ड को यह अधिकार देना कि तुम उन शब्दों पर फिर से सोचो, मैं कहता हूँ कि...

मौलाना आज़ाद : मैं फिर कहना चाहता हूँ कि उनके टर्म्स आफ़ रेफरेन्स में इसका एक लफ्ज़ भी नहीं है। लेकिन मैंने उस दिन यह कहा था कि हमने उनको रोका नहीं है। अगर वह चाहें तो अपनी राय दे सकते हैं।

सेठ गोविन्ददास (मंडला—जबलपुर-दक्षिण) : उनको रोकना चाहिये।

मौलाना आज़ाद : मैं अभी तक इस पोज़ीशन में नहीं हूँ कि कह सकूँ कि उन्होंने एक लफ्ज़ के मुताल्लिक भी मशवरा दिया है। मैंने अभी चेयरमैन से पूछा है, लेकिन अभी तक यह मेरे इल्म में नहीं है कि उन्होंने एक लफ्ज़ के बारे में भी मशवरा दिया है।

श्री टण्डन : मैं यह उसूल समझता था कि संविधान के इन शब्दों को छुआ न जाय। मेरा दूसरा निवेदन यह है कि जो काम हो रहा है...

आचार्य कृपालानी : इसमें क्या ऐतराज हो सकता है कि कांस्टीट्यूशन की एक और दूसरी कापी बनायी जाय जिसमें प्रचलित शब्द रखे जायँ और जिस कापी में हमने दस्तखत किये थे वह वैसे ही रहे।

श्री टण्डन : कांस्टीट्यूशन एक पवित्र चीज़ है और जिस पर हस्ताक्षर हो चुके हैं उसको बदलने का सवाल ही नहीं उठता।

मेरा निवेदन यही है कि वह यत्न नहीं होना चाहिये कि शब्द बदले जायँ। हमारे पास काम बहुत है। मेरा मंशा यह है कि शिक्षा विभाग को जो काम करना चाहिए उसमें बहुत देर हो रही है। हम जल्दी में हैं और चाहते हैं कि जल्दी-जल्दी काम हो। जो काम हो चुका है उसको दुहराने में तो बहुत समय लग जायगा। हमको तो सन्देह यह है कि १५ वर्ष के बाद कहीं और समय अंग्रेज़ी के लिये मांगने का यत्न न किया जाय।

सरकारी हिन्दी शिक्षा समिति

मैं अब एक दूसरी बात की ओर ध्यान दिलाता हूँ। शिक्षा विभाग की तरफ से हिन्दी शिक्षा समिति बनी है। मेरा निवेदन है कि इस हिन्दी शिक्षा समिति में जो हिन्दी के सच्चे प्रतिनिधि होने चाहिये वे नहीं हैं। एक आध हैं। मैं कहता हूँ कि देश में हिन्दी साहित्य सम्मेलन और नागरी प्रचारिणी सभा दो मुख्य संस्थायें हैं जिन्होंने हिन्दी के क्षेत्र में वर्षों से काम किया है। क्या आप उनकी अवहेलना करके हिन्दी का काम करेंगे ? यह दोनों संस्थायें जिस भाषा को स्वीकार करेंगी वही भाषा देश में मानी जायगी। हिन्दी साहित्य सम्मेलन और नागरी प्रचारिणी सभा जिन शब्दों को चलायेंगी वही शब्द देश में चलेंगे। आपने इन संस्थाओं को छोड़ कर इधर से और उधर से कुछ लोग ले लिए हैं। मेरा यह निवेदन है कि यह हिन्दी का काम करने का रास्ता नहीं है। आपने एक शिक्षा समिति बनाई है। मेरे पास जो आपकी पिछले वर्ष की रिपोर्ट ५२–५३ की छपी है उसमें कहा गया है—

"शिक्षा समिति की तीन उपसमितियां बनाई गई हैं तथा उनमें से एक को (१) हिन्दी परीक्षण, दूसरी को (२) हिन्दी भाषा का आधार भूत व्याकरण और तीसरी को (३) हिन्दी प्रचार पर प्रतिवेदन प्रस्तुत करने के लिए कहा गया है।"

व्याकरण का काम भी इसमें से कोई समिति करेगी। पहले वर्ष की जो रिपोर्ट मेरे सामने आयी है उसमें दिया हुआ "हैज़ बीन सेट अप," हिन्दी परीक्षायें जो चल रही हैं उनकी जांच करने के लिए एक समिति बनायी गयी है। अंग्रेजी में इसको **प्रेज़ेंट परफ़ेक्ट टेंस** कहते हैं। इसका

अर्थ है कि वह काम समाप्त हो गया। अब की जो रिपोर्ट निकली है उसमें प्रेजेंट परफ़ेक्ट टेंस नहीं है वल्कि प्रेजेंट कन्टीन्यूअस टेंस है। यानी "विभिन्न हिन्दी संस्थाओं द्वारा ली गई हिन्दी परीक्षाओं के स्तर की जांच करने के लिए एक समिति वनाई जा रही है।" यह रिपोर्ट निकली है इस साल। परन्तु मुझे मालूम होता है कि इस रिपोर्ट के लिखने और छपने के बाद एक दूसरी रिपोर्ट आई है "हिन्दी के विकास और प्रचार के लिए कार्यक्रम"। मेरा यक़ीन है कि यह पिछले पांच छः दिनों के अन्दर लिखी गई है। इसका भीतरी प्रमाण इसमें है। इसमें लिखा है कि हिन्दी परीक्षाओं के स्तर की जांच करने के लिये एक समिति नियुक्त करने का निश्चय हुआ है। और इसमें कमेटी वालों के नाम दिये हुए हैं। "समिति में निम्नलिखित व्यक्ति होंगे।" इससे मुझे मालूम होता है कि पारसाल यह तय हुआ था और उसमें था कि "ये उपसमितियां अपने प्रतिवेदन शिक्षा समिति को, फरवरी १९५३ में होने वाली उसकी द्वितीय बैठक में देंगी"। फरवरी १९५३ में उनको रिपोर्ट करना था। लेकिन मालूम होता है कि जव यह रिपोर्ट अभी लिखी गयी तव तक यह कमेटी बनी नहीं थी। तो फिर रिपोर्ट करने का सवाल ही नहीं उठता। मालूम होता है कि पिछले ७ या ८ दिनों में यह कमेटी बनायी गयी है। अब उसमें जो नाम हैं वह मैं पढ़ता हूँ:

(१) श्री एम० सत्यनारायण,
(२) श्री अमृतलाल नानावती,
(३) श्री जी० पी० नैने,
(४) श्री एन० नगप्पा,
(५) श्री रजनीकान्त चक्रवर्ती,
(६) श्रीरामधारी सिंह दिनकर,
(७) श्री जेठालाल जोशी,
(८) डा० आर्येन्द्र शर्मा,
(९) श्री विजयेन्द्र स्नातक,
(१०) श्री मगन भाई पी० देसाई,
(११) प्रो० एन० ए० नाडवी।

उनमें से बहुतों को तो मैं जानता ही नहीं हूँ। कुछ को जानता हूँ। ज्यादा उनमें ऐसे हैं जिनका नाम मैंने हिन्दी के सम्बन्ध में कभी नहीं सुना। कुछ इसमें ऐसे हैं जिनका नाम हिन्दुस्तानी के साथ बंधा रहा है। जो लोग हिन्दी साहित्य सम्मेलन के विरोधी थे और हिन्दी साहित्य सम्मेलन की परीक्षाओं के विरुद्ध अपनी हिन्दुस्तानी की परीक्षायें चलाने की कोशिश करते थे उनके इसमें कुछ नाम हैं। मैं यह उचित नहीं सम-

ज्ञता कि मैं वैयक्तिक वात कहूँ। अस्तु। मैं कहता हूँ कि इसमें हिन्दी साहित्य सम्मेलन का और नागरी प्रचारिणी सभा का कोई आदमी नहीं है। मुनासिब था कि उनसे सलाह तो की जाती। सबसे बड़ा स्थान हिन्दी संसार में हिन्दी साहित्य सम्मेलन का है जिसकी परीक्षाओं में हर साल दो लाख से ऊपर परीक्षार्थी बैठते हैं। उसका एक आदमी नहीं और जो छोटी परीक्षायें लेने वाली संस्थायें है, उनको इसमें जगह दी गयी है और वह हिन्दी साहित्य सम्मेलन के ऊपर बैठ कर उसकी परीक्षाओं के लिए जज का काम करेंगी। इससे साफ़ पता चलता है कि हमारा शिक्षा विभाग उन लोगों को सहारा देना चाहता है जो उस तरफ़ नहीं जाना चाहते जिधर हिन्दी की मुख्य संस्थाओं की प्रवृत्ति है बल्कि उस प्रवृत्ति से हट कर काम करना चाहते हैं।

हिन्दी कोश

दूसरा उदाहरण मैंने उस दिन दिया था डिक्शनरी का। आपको डिक्शनरी बनवानी है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने अब तक कितने कोश बना दिये। नागरी प्रचारिणी सभा का शब्दसागर हिन्दी का सबसे ऊंचा कोश है। नागरी प्रचारिणी सभा को यह काम सुपुर्द नहीं हुआ, हिन्दी साहित्य सम्मेलन को नहीं हुआ। कोई संस्था है 'हिन्दुस्तानी कल्चर सोसायटी' इलाहाबाद में जिसको अधिक लोग जानते भी नहीं हैं। उसका दफ्तर कहाँ है ? शायद किसी के रहने के घर में कुछ काम होता हो। अब आपने उस संस्था को इस काम के लिए ६०,००० रुपये दिये हैं।

मैं कहता हूँ कि यह बहुत ही नामुनासिब है। हिन्दुस्तानी कल्चर सोसायटी को डिक्शनरी का काम ! यह क्या है ? इसी सोसायटी ने संविधान का हिन्दुस्तानी में तर्जुमा किया था। वह तर्जुमा किस काम का है, किस के काम आता है ?

डा० एस० एन० सिंह (सारन—मध्य पूर्व) : किसी के नहीं, रद्दी की टोकरी मे गया।

श्री टंडन : आपको मदद देना है तो किसी ऐसे को मदद दीजिए जो यह काम कर सके। हिन्दुस्तानी कल्चर सोसायटी में कितने मेम्बर है, कौन-कौन हैं ? कहाँ उसका अधिवेशन हुआ, कितने आदमी उस अधिवेशन में आए ?

डा० राम सुभग सिंह : बगदाद में।

श्री टंडन : यह खुली बात है कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन किस प्रकार की संस्था है। बराबर उसके खुले अधिवेशन होते रहे हैं, हज़ारों की संख्या में आदमी आते हैं, उसका काम १७००–१८०० केन्द्रों में है।

उसकी तो आप अवहेलना करें और नागरी प्रचारिणी सभा की अवहेलना करें और इस तरह से यह डिक्शनरी बनावें ! यह किस काम में आयेगी और किस क़ाम की होगी ?

मौलाना आज़ाद : क्या आपको यह याद नहीं आया कि नागरी प्रचारिणी सभा को इस काम के लिए रुपया मंजूर किया गया ।

श्री टंडन : हाँ, मैं जानता हूँ ।

मौलाना आज़ाद : उसको भूल गए आप ।

श्री टंडन : नहीं भूल नहीं गया । आपने हिन्दी साहित्य सम्मेलन को भी मदद दी है । वह मदद क्या है इस पर मैं अभी आता हूँ । आपने मदद दी है, मगर यहाँ यह डिक्शनरी के काम का सवाल है कि आप इस काम को हिन्दी साहित्य सम्मेलन से करायें या नागरी प्रचारिणी सभा से करायें या इस हिन्दुस्तानी कल्चर सोसायटी से करायें । आपने जो मदद दी वह तो शब्दसागर के लिए थी । यह दूसरा काम है । आपके विभाग ने कहा है कि अंग्रेजी से हिन्दी में आक्सफ़ोर्ड कन्साइज़ डिक्शनरी की तरह कोश बनाया जाय । उसके लिए हिन्दी साहित्य सम्मेलन में काम हुआ है । कोई आठ या दस अक्षर के शब्द बन भी चुके, उन्होंने आपके विभाग से रुपया मांगा उस पर वह हज़ारों रुपये खर्च कर रहा है । वह काम कर लेगा, अगर आप एक पैसा भी नही दें तो भी वह कर लेगा, क्योंकि उसका तो अपना भी स्रोत है । वह इस काम में लगा है । उसने शिक्षा विभाग को लिखा कि हमको डिक्शनरी बनाने के लिए रुपये दीजिये । विभाग ने कहा कि डिक्शनरी का काम मत उठाओ । मेरा अन्दाज़ है कि शिक्षा विभाग ने पहले ही फैसला कर लिया था कि हिन्दुस्तानी कल्चर सोसायटी को ६० हजार रुपया देंगे । सम्मेलन को विभाग ने लिख दिया कि तुम इस डिक्शनरी के काम को मत उठाओ । हिन्दी साहित्य सम्मेलन तो विभाग का दास नहीं है, वह काम कर रहा है । वह लगभग तीन साल से वैज्ञानिक कोश का क़ाम भी कर रहा है । आपके छोटे छोटे कामों पर मैंने सुना है कि लाखों रुपये खर्च हुए । मैंने रिपोर्ट में पढ़ा है कि आपने १६ या २० हजार शब्द सायंटिफ़िक बनाए हैं । मेरा निवेदन है कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन के तीन वैज्ञानिक कोश छप चुके हैं । पिछले चार पांच वर्षों में लगभग तीस हज़ार वैज्ञानिक शब्द उनके यहाँ बन चुके हैं, उनका तो इरादा था कि तीन चार लाख शब्दों तक का निर्माण हो, आप दस बीस हजार शब्दों की बात कर रहे हैं । श्री महापंडित राहुल सांकृत्यायन की देख रेख में यह सब काम हुआ था । सम्मेलन के काम में हिन्दी के पंडित सम्मिलित रहते हैं, जो हिन्दी से परिचित हैं । और शिक्षा विभाग ने जो यह कोश का काम दिया है

उसमें न जाने किन लोगों से काम होगा।

जो सच्चा काम हिन्दी का करने वाले हैं, उनको आप पकड़िये। जो हिन्दी का विरोध करके हिन्दुस्तानी नाम से काम कर रहे हैं, उनको सहारा न दीजिये। हिन्दुस्तानी कल्चर सोसायटी को आपने सहारा दिया। वर्धा में भी हिन्दुस्तानी प्रचार सभा को आपने सहायता दी। उसको रुपया दिया है। जो वहाँ पर राष्ट्रभाषा प्रचार समिति है, बहुत पुरानी जो संस्था है और जो हिन्दी भाषा का काम कर रही है, उसको आपने एक पैसा नहीं दिया।

डा० एन० बी० खरे : बहुत पोल खुली है।

सहायता पाने वाली संस्थाएँ

श्री टंडन : अब जो आपने मदद दी है उस पर भी थोड़ा सा कहना चाहता हूँ। जो रिपोर्ट आपकी आई उसमें संस्कृति या कल्चर के सम्बन्ध में आपने लिखा है : "सांस्कृतिक कार्य करने वाली संस्थाएँ।"

जिनको आपने सहायता दी है वह कौन कौन हैं। शुरू में आपने लिखा है :

"निम्नलिखित संस्थाओं को अभी तक साहाय्य अनुदान दिये गये हैं :—

शिबली ऐकेडमी, आजमगढ़ ६०,००० रुपए।"

इस शिबली ऐकेडमी ने कल्चर का क्या काम किया है, मैं नहीं जानता। मैं यह जानता हूँ कि उन्होंने उर्दू में बहुत सी किताबें लिखाई हैं, आज नहीं, बहुत पहले की बात है। पुरानी संस्था है और उस संस्था के चलाने वाले मेरे एक दोस्त रहे हैं, वह कांग्रेस के साथ भी थे। उर्दू में कई अच्छी किताबें यह संस्था तैयार कर चुकी है यह मैं मानता हूँ। मगर आज उसके बारे में यह कहना कि कोई खास कल्चर का काम कर रही है, यह मेरा निवेदन है ठीक नहीं है। आजकल हमारे देश में कल्चर के माने क्या हैं, भारतीय संस्कृति। मैं कल्चर के माने समझता हूँ भारतीय संस्कृति, इस्लामी तमद्दुन नहीं, जो जिन्ना का लफ़्ज था, जिसने हमारे देश के टुकड़े कराए, हमारे देश का विभाजन कराया और पाकिस्तान बनाया। इस्लामी तमद्दुन और हिन्दू तमद्दुन, इन दोनों से हमें अलग चलना है। हमारे देश में शब्द चला हुआ है, भारतीय संस्कृति। भारतीय संस्कृति, यह शब्द हमारे यहाँ कल्चर के लिए है : यह आजमगढ़ के लोग क्या भारतीय संस्कृति का काम कर रहे हैं जो आपने उनको ६० हजार रुपये की मदद दी ?

अब दूसरी संस्था कौन है जिसको आपने मदद दी ? अंजुमन-ए-तरक्की-ए-उर्दू (भारत), अलीगढ़ ३६,००० रुपए।

मैं इसका विरोधी नहीं हूँ कि उर्दू संस्थाएँ हों, लेकिन कोई अनुपात हो, कोई सेंस आफ़ प्रपोर्शन हो। आपने इसको, बिल्कुल एक नयी संस्था को यह मदद दी। पुरानी अंजुमन तरक्की-ए-उर्दू थी जो मौलाना अबदुल हक़ के साथ पाकिस्तान चली गई। उसका यहाँ दिल्ली में केन्द्र था। मौलाना अबदुल हक़ के साथ कुल वह चीज चली गयी। उसके बजाय एक नयी छोटी सी चीज चली है और उसको आपने ३६ हजार रुपये दिये। यह वही संस्था है जो उत्तर प्रदेश में चारो तरफ दस्तख़त कराती है कि उर्दू उत्तर प्रदेश में क्षेत्रीय भाषा बनायी जाय। यह जो उर्दू के विषय में नयी बात चली है, जहाँ तक मुझे मालूम है इस संस्था का उसमें हाथ है। ख़ैर मैं उस पर उस दिन कह चुका, इस वक्त ज्यादा नहीं कहना चाहता हूँ। मैं इसको बहुत ग़लत समझता हूँ। इस तरह आज फिर वही तफ़रका डालना है, फिर वही साम्प्रदायिकता पैदा करनी है और इसकी आड़ में फिर वही मुस्लिम लीगी दिमाग़ है जिसकी वजह से इस्लामी तमद्दुन पर जोर दिया गया था। आज हमें एक मिली जुली कल्चर की चीज़, मिली जुली संस्कृति बनाना है। उस संस्कृति को हिन्दू मुसलमानों का मिलकर मंजूर करना उचित है। उर्दू पढ़ने लिखने के मैं खिलाफ़ नहीं हूँ। मैं उर्दू का प्रेमी हूँ, मैं फ़ारसी का प्रेमी हूँ, अब भी मुझे फुरसत मिलती है तो फ़ारसी के कवि हाफ़िज को लेकर कभी बैठ जाता हूँ। मुझे इसका शौक है। मगर फ़ारसी का शौक होना और चीज़ है और हमारे देश में क्या भाषा चले, यह दूसरी बात है। हमारे देश में एक ही संस्कृति, भारतीय संस्कृति, चल सकती है। उस संस्कृति का आधार हमारे देश की भाषा, हमारे देश की लिपि है। आज कोशिश करना कि देश में अरबी और फ़ारसी का रस्मुलख़त हम चलायें, मेरा ख्याल है कि यह नामुनासिब बात है। अपने निजी काम के लिये हम बरतें, लेकिन पब्लिक तरीक़े से खुल्लमखुल्ला काम में लाना, यह और बात है।

अब तीसरे नम्बर पर है—

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा, वर्धा ३०,००० रुपये।

अखिल भारतीय ललित कला तथा शिल्प समिति—यह अलग बात है।

अब आगे है।

"अनुदानों के लिये, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, रामकृष्ण मिशन, सांस्कृतिक संस्था और भारतीय विद्या भवन के मामले विचाराधीन हैं।"

आप हंसिये मत। यह उस वक्त की बात है जब रिपोर्ट लिखी गयी थी। उस वक्त वह सब जेरे ग़ौर था। जो रिपोर्ट अब मेरे पास आई है उसमें लिखा है कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन को रुपया दिया गया। हर

साल दिया जाता है। छः सात साल से दिया जाता है। ४० हजार रुपया दिया गया है, वह बराबर दिया गया और आज कोई नई चीज़ यह नहीं है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन की भी मदद इसमें आई है। अब आप इसको देख लें कि यह रुपया किस हिसाब से दिया गया और यह साठ हजार रुपया हिन्दुस्तानी कल्चर सोसायटी को किस हिसाब से दिया गया।

मौलाना आज़ाद : सालाना नहीं लम्पसम है।

श्री टंडन : २५ हजार रुपया सन् १९५१ में दिया गया। उसका क्या हुआ, कहाँ है, उसका क्या बना, अब तक हमें नहीं मालूम है।

मैने सुना है कि उसके भवन के लिये कुछ रुपया देने का प्रस्ताव है। यह हिन्दुस्तानी कल्चर सोसायटी को या ऐसी हिन्दुस्तानी सोसायटी को रुपया देना क्या आज उचित है? हिन्दी सोसायटीज़ को रुपया दीजिये। जो हिन्दुस्तानी का काम करने वाली संस्थाएँ हैं उनको आज आपका इस तरह की सहायता देना·····

मौलाना आज़ाद : डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद उसके चेयरमैन हैं और उनके कहने से यह रक़म दी गयी है।

हिन्दी ग्रन्थ-निर्माण

श्री टंडन : इस वक़्त मेरा कहना यह है कि आपको हिन्दी की संस्थाओं की सिर्फ़ मदद ही नहीं करनी है। बल्कि हिन्दी की बड़ी बड़ी संस्थाओं को अपने साथ लेकर, जैसे मैंने पहले कहा था, आपको पचास साठ लाख रुपया लगाकर हिन्दी के ग्रन्थों को दो, तीन वर्ष के अंदर तैयार करना चाहिए। आप यह कर सकते हैं, शिक्षा विभाग कर सकता है। एक एक किताब के ऊपर आठ दस हज़ार रुपया खर्च करें। तब आप देखेंगे कि कितनी किताबें निकल आती हैं। मैंने एक संस्था की ओर से अभी एक किताब फिज़ीकल केमिस्टिरी के ऊपर लिखवाई है। बी० ए० के कोर्स की किताब है, किताब छपकर आ गयी है और मैं उसको शिक्षा विभाग के पास भिजवा दूंगा। आप गौर करें, एक किताब पर सात, आठ हज़ार रुपया खर्च किया जाय। जितने विषय हैं विज्ञान के उनके सम्बन्ध में बहुत जल्दी आप दो साल के अन्दर ७०-८० अच्छी किताबें निकाल सकते हैं, यह चीज़ गैर मुमकिन नहीं है, लेकिन वह काम नहीं हो रहा है। स्कीम्स कुछ बन रही हैं, कुछ ऊँघते हुए से स्कीम्स बना रहे हैं और यह उम्मीद की जा रही है कि हिन्दी का काम चले। बस मैं और अधिक न कहूँगा। मेरा यह नम्र निवेदन है कि ज़्यादा तेजी के साथ काम होना चाहिये।

हिन्दी का स्वाधीन मण्डल या मन्त्रालय

मैंने उस दिन भी सुझाव दिया था और आज भी देता हूँ कि आप के शिक्षा विभाग की तरफ़ से यह उचित होगा अगर हिन्दी साहित्य सम्मेलन, नागरी प्रचारिणी सभा और दक्षिण की हिन्दी प्रचार सभा जो दक्षिण में हिन्दी का काम कर रही है, इन तीनों संस्थाओं से सलाह करके आप एक ऐसे लोगों का बोर्ड बनायें जो हिन्दी का काम कर सकें, जो हिन्दी अच्छी तरह से जानते हों और उसकी गतिविधि से वाक़िफ हों। आप उनको पूरा काम सुपुर्द करें, वह एक ऐटानोमस बाडी हो, स्वतन्त्र संस्था हो और तब आप देखियेगा कि कितनी अच्छी तरह से यह काम होता है। अगर यह असम्भव हो तो मैंने जैसे पहले कहा था यह शासन के सोचने की बात है कि एक अलग हिन्दी के लिये आप मिनिस्ट्री बनावें और वहाँ ऐसे लोगों का रक्खें जो हिन्दी के काम में दत्तचित होकर जुट जायेंगे और अपने साहस और परिश्रम से इसको इतना बढ़ा देंगे कि फिर हमको दस, ग्यारह वर्ष के बाद यह सोचना न पड़े कि हमारे समाज के कार्य का कोई अंश है जिसमें हिन्दी न चल सके। इस काम की आवश्यकता है। यही मेरा निवेदन है।

१६

जनता को आत्म दर्शन नहीं

२१ अप्रैल १९५४ को भारतीय लोक सभा में वित्त विधेयक पर बोलते हुए

उपाध्यक्ष महोदय ! चारो ओर हमारे देश में एक प्रकार का असंतोष वर्तमान स्थिति से दिखाई देता है। हमारी गवर्नमेण्ट जनता को सुख पहुँचाने के लिए बहुत सी दिशाओं में यत्न करती है, परन्तु फिर भी यह सच है कि चारो ओर एक प्रकार का असन्तोष है, हृदयों में पीड़ा है। जो आशायें हमारी स्वतन्त्र गवर्नमेण्ट से की जाती थीं, वह पूरी नहीं हो रही हैं। सम्भव है वह आशायें अधिक रही हों, परन्तु यह सच है कि आज वह पूरी नहीं हो रही हैं। मुझको इस असंतोष में मुख्य कारण यह जान पड़ता है कि जनता जो बहुत वर्षों से दबी हुई थी, उसने अपने स्वरूप का दर्शन नहीं किया था, बहुत वर्षों के दबाव में उसने अपनी आत्मा को खो सा दिया था, उसको आशा थी कि स्वतन्त्रता के आते ही हमें उस आत्मा का दर्शन होगा, हमारे देश की आत्मा पर जो खोल चढ़े हुए थे वह हटेंगे और हमें अपना स्वरूप दिखाई पड़ेगा। आज हम जो भी यत्न कर रहे हैं, उसमें इसका हमें ध्यान रखना चाहिये कि हम जनता को उसके आत्मा का स्वरूप दिखा सकें। वह आज वास्तव में नहीं हो रहा है। हम कहीं भी काम करें उचित यह है कि हम जनता को इस भावना को ध्यान में रखें।

गाँव के अन्दर जनता है। गाँवों के अन्दर बेकारी है। उसको दूर करने का रास्ता ऐसा होना चाहिये जो जनता के स्वरूप के अनुकूल हो। हम काम तो करते हैं परन्तु इस नीति से करते है कि हम जनता से बहुत दूर रहते हैं। गाँवों की स्थिति में इधर पिछले चार वर्षों में बहुत कुछ बदलाव नहीं आया है, नये गाँव का स्वरूप हमें देखना चाहिये। हम गाँवों को ठीक करना चाहते हैं, औषधियाँ देना चाहते है, स्वास्थ्य के ऊपर हमारी निगाह है, परन्तु इन सब कामों मे भी हमारी अपनी आत्मा का स्वरूप नहीं है। आयुर्वेद की बात होती है, तो हमारी मन्त्रिणी जी की ओर से उसकी खिल्ली उड़ायी जाती है। उनका अधिक विश्वास है इन बाहरी औषधियों पर, आयुर्वेद पर नहीं। आज हम बहुत सी बातों में इसका ध्यान नहीं रखते कि हम जनता के पास जा रहे हैं या जनता से दूर हट रहे हैं।

बेकारी को दूर करने का मार्ग

बेकारी बढ़ी हुई है। हम बहुत बड़ी बड़ी योजनायें सोच रहे हैं, परंतु जनता को उसके गाँव में क्या चाहिये इससे हम अभी हटे हुये हैं। मेरा निवेदन है, थोड़े से समय में मैं अन्दर तो घुस नहीं सकता इस बेकारी के प्रश्न के, परन्तु मोटी रीति से मेरा यह कहना है कि हमारे शासन को यह नीति माननी चाहिये कि बेकारी को दूर करने का एक ही रास्ता है संसार भर में, कोई दूसरा रास्ता नहीं है, कोई रायल रोड, कोई मुख्य मार्ग दूसरा नहीं है, सिवा इसके कि देश इन वस्तुओं का परित्याग करे जो दूसरे देशों से आती हैं, उन वस्तुओं को काम में लाये जो वह बनाता है, और जो अपनी आवश्यकतायें हैं उनको इस तरह से सीमित करे कि वह उन्हीं वस्तुओं के भीतर रहे। यही एक मार्ग है, दूसरा मार्ग नहीं है। आज हम देखते हैं कि बाहर से कितनी वस्तुएँ आती हैं, हम दूसरे देशों को रोजगार देते हैं। मैं मिसाल क्या दूं ? एक एक चीज को देखिये। मोटर कार एक मद है। अरबों रुपया हमारा बाहर जाता है। यह बात सच है कि हमें अपनी आदतों को बदलना पड़ेगा, अपने रहन-सहन को बदलना पड़ेगा, अगर हम बेकारी दूर करना चाहते हैं तो हमें देहातों में हर चीज़ बनवानी होगी और अपनी आदत को बदल कर हमें उन चीजों का उपयोग करना होगा। आज इसकी जरूरत है। मुझको याद है कि अंग्रेज़ी ढंग में बात करते हुए मैंने कभी कहा था कि "केवल उन्हीं वस्तुओं का उपयोग करो जिनका तुम उत्पादन करते हो तथा जिन वस्तुओं का तुम उपयोग करते हो उनका उत्पादन करो।"

[पंडित ठाकुर दास भार्गव पीठासीन हुए]

यदि हम इस मंत्र को सीख लें तो हमारी बेकारी दूर हो जायगी।

घरों के बनाने में सहायता

मैं उन भाई से, जिन्होंने कल कहा था कि हमें घरों की समस्या को हल करना चाहिये और १०० करोड़ रुपया घरों के लिए देना चाहिये सहमत हूँ। आज कितने दरिद्र हैं, हमारे देश में चारो तरफ गरीब भरे पड़े हैं, जिनके पास घर नहीं हैं। मैंने पहले भी कभी निवेदन किया था कि हर एक कुटुम्ब को आधा एकड़ भूमि देनी चाहिये। आधा एकड़ भूमि के साथ उन लोगों को, जिनके पास पैसा नहीं है, घर बनाने के लिए हमें सहायता देनी है। मैं बिल्कुल इससे सहमत हूँ कि इस प्रश्न को हमें उठाना चाहिये। गाँव गाँव में हर कुटुम्ब के लिये घर बनाने की हमें चिन्ता करनी है। वहाँ के लोग अपना परिश्रम लगावें और गवर्नमेण्ट इसमें उनको

सहायता दे ।

स्वास्थ्य औषधियों पर निर्भर नहीं

स्वास्थ्य विभाग के विषय में भी मेरा यह निवेदन है कि हमारे देहात यदि अच्छे और स्वस्थ रीति से बनें तो यह जो बहुत सी औषधियाँ हैं, जिन्हें हम अप्राकृतिक रीति से चला रहे हैं, उनकी हमें आवश्यकता नहीं पड़ेगी । मेरा इन औषधियों में अधिक विश्वास नहीं है । मैं तो यह निवेदन करता हूँ कि हमारा इस प्रकार का रहन सहन ही होना चाहिए कि हमें बहुत औषधियों की आवश्यकता न पड़े ।

चेचक का टीका हानिकर

स्वास्थ्य विभाग की चर्चा करते हुए मेरा यह निवेदन है कि हमारे देश में आखिर यह चेचक के टीके का सवाल क्यों नहीं उठाया जाता। हम बहुत सी चीज़ों में अंग्रेजों की नक़ल करते है, लेकिन क्या आपको मालूम है कि इंग्लेंड में १८५३ में ज़बरदस्ती चेचक का टीका लगाना शुरू हुआ, इसके विरुद्ध वहाँ पर बहुत वर्षों तक आन्दोलन रहा है । लोगों ने देखा कि टीके के कारण रोग बहुत बढ़ रहे हैं और अन्त में उस आन्दोलन के सामने इंग्लेंड को झुकना पड़ा। सन् १८९८ में वहाँ पर जबरदस्ती चेचक का टीका लगाना बन्द कर दिया गया। कुछ लोगों का कहना है कि अब वहाँ का स्वास्थ्य सुधरा है और उसके सुधरने का मुख्य कारण यह है कि चेचक का टीका लगाना बन्द हो गया है । हम यहाँ पर आज भी जबरदस्ती लोगों को वैक्सिनेट करते हैं और चेचक के टीके लगाते हैं। इंग्लेंड में वैक्सिनेशन ऐच्छिक (आप्शनल) है, कोई किसी के साथ जबरदस्ती नहीं करता है और बहुत से लोग हैं जो टीका नहीं लगाते हैं । आखिर क्यों ? हमारी स्वास्थ्य मन्त्रिणी जी यहाँ नहीं हैं। मैंने पहले भी एक बार कहा था कि इन सरकारी बेंचों को खाली नहीं रहना चाहिये । इस सम्बन्ध में मैं तो आपसे पूछता हूँ कि क्या यह सच है कि वहाँ पर वैक्सिनेशन आप्शनल है ? मेरा निवेदन यह है कि इंग्लेंड में वैक्सिनेशन अर्थात् चेचक का टीका लगाना लाजिमी नहीं है और वहाँ की बहुत बड़ी जनता टीका नहीं लगाती है। आप इसका उत्तर दें।

श्री सी० डी० देशमुख : सम्भव है कि यह सच हो, लेकिन मेरा कहना यह है कि इंग्लैंड से अब चेचक रोग का लोप हो चुका है । अब तो उसको केवल यह चिन्ता है कि इंग्लैंड में कोई ऐसा व्यक्ति न आने पावे जिसके पास टीका लगवाने का प्रमाण पत्र न हो ।

श्री टंडन : लेकिन साथ ही मैं तो यह कह रहा हूँ कि इंग्लैंड ने अपने मुल्क के लिये यह नहीं अच्छा समझा। अजीब बात है जो आप कह रहे हैं कि वह दूसरों से कहें कि वे वैक्सिनेशन करा कर आयें, लेकिन अपने मुल्क में उन्होंने विधि के बल से टीका लगाने का क्रम उड़ा दिया। इससे साफ़ जाहिर होता है कि वह वैक्सिनेशन को कोई अमृत नहीं मानते उसको वह विष समझते हैं, उसे बुरा समझते हैं। जो बुरी चीज है उसे आपके लिये छोड़ दिया, आप ले लीजिये अगर आपको सन्तोष हो। लेकिन यह साफ बात है कि उन्होंने अपने देश से इसको उड़ा दिया। उन्होंने समझा कि इसमें स्वास्थ्य का नुकसान है और इसलिये उड़ा दिया। मेरे पास एक राय है जिसको मैं सामने रखता हूँ। मेरे सामने एक काग़ज है जिसमें प्रोफेसर ए० आर० वैलेस का मत है कि "कानून के ज़ोर से टीका लगाने के लिए विवश करने वाली विधियों का निरसन किसी भी दल की विचारधारा अथवा राजनीतिक कार्यक्रम की अपेक्षा कहीं अधिक तात्कालिक तथा गूढ़ महत्व का विषय है।"

यह प्रोफेसर ए० आर० वैलेस, ओ० एम०, एल० एल० डी०, डी० सी० एल०, एफ० आर० एस० का कथन है। वहाँ पर इस प्रकार का नियम चल रहा है। मेरा निवेदन है कि हमारे मुल्क में क्यों न यह चीज की जाय कि जिसको लगाना हो वही लगाये ? आप कम से कम यह अवसर तो दीजिये कि जिसको इस पर विश्वास न हो वह न लगाये। आप उसको तंग तो न करें।

सरकारी स्वास्थ्य योजना

मैं देखता हूँ कि हमारी स्वास्थ्य मंत्रिणी जी ने एक नई स्कीम चलाई है सरकारी नौकरों के लिये। मेरे पास कुछ सरकारी नौकर आये और उन्होंने कहा कि हमारे साथ अन्याय हो रहा है। इस स्कीम में कह दिया गया है कि सरकारी नौकरों को ज़बरदस्ती रुपया देना पड़ेगा। कहा गया है कि तुम्हारी तनख्वाह से हम रुपया काटेंगे और तुम्हारे इलाज की हम चिन्ता करेंगे। बहुत से सरकारी नौकर हैं जो ऐलोपैथिक इलाज नहीं कराना चाहते हैं, उन्होंने पूछा कि इलाज हमारे मन के माफ़िक़ होगा या ऐलोपैथिक होगा। जो सरकारी नौकर मेरे पास आये उन्होंने मुझे बताया कि उन लोगों को ऐलोपैथिक इलाज के लिये रुपया देना पड़ेगा। यह क्यों ? आपने योजना बनाई है। अपनी योजना के सम्बन्ध में हेल्थ मिनिस्ट्री की जो रिपोर्ट है उसके सातवें पन्ने पर सेन्ट्रल ऐक्टिविटीज़ के नीचे लिखा है कि "इसके लिए सरकारी नौकरों को एक वर्गीकृत क्रम के अनुसार मासिक अंशदान देना पड़ेगा।" हर एक सरकारी नौकर की तन-

ख्वाह, जो कि दिल्ली में है, काट ली जायगी। बहुत से लोग हैं जो ऐलोपैथिक इलाज नहीं कराना चाहते हैं। आप क्यों जवरदस्ती करते हैं? मेरा सुझाव है कि आप आप्शन दें। जो आपकी योजना से लाभ उठाना चाहता है उसकी तनख्वाह काटें, जो लाभ नहीं उठाना चाहता है उसकी तनख्वाह न काटें।

शिक्षामंत्री का कथन

इसके वाद मैं कुछ शब्द शिक्षा विभाग के सम्बन्ध में भी कहना चाहता हूँ। मैं चन्द मिनट में कह सकूँगा। शिक्षामंत्री ने उस रोज अपना असर डालने के लिए बहुत कुछ कहा। लेकिन मेरा निवेदन है कि उन्होंने न्याय से काम नहीं लिया। जो बातें मैंने नहीं कही थीं वह उन्होंने अपनी तरफ से मेरे मुँह में रख दीं। उन्होंने विलकुल ग़लत बयानी से काम लिया। मैंने उम्र भर अलग हिन्दू मुसलमान के हित की चर्चा नहीं की। मेरे सामने केवल संस्कृति का सवाल रहता है। लेकिन यह हिन्दू है, यह मुसलमान है लानत है उस पर जो इस तरह सोचता हो। मेरे लिए सब इन्सान वरावर हैं। मैंने अपना हमेशा यह उसूल रखा है

'न हिन्दुअम न मुसलमां न काफ़िरम न यहूदी'

मौलाना साहब ने अपना जिक्र करते हुए कहा कि उनकी जिन्दगी के पन्ने खुले हुए हैं। यहाँ पर बहुत लोग हैं जिनकी जिन्दगी के पन्ने खुले हुए है—कुछ मानी में। न मालूम उन लोगों ने स्वतन्त्रता के लिये कितनी कितनी सज़ायें पायी हैं, कितनी कितनी तकलीफ़ें उठायी हैं, मगर उनका जिक्र वे नहीं करते। जो लोग करनी करते हैं वे

'कहि न जनावहिं आप',

अपनी बात अपने मुँह से नहीं कहते।

'सनाये खेश रा गुतफ़्न न ज़ेवद मर्दरा सायब'

अपनी कारीगरी को अपने मुँह से बयान करना बहुत अच्छी बात नहीं होती है। यहाँ बहुत लोग है जो बड़े कारीगर हैं, जिन्होंने कष्ट सहे हैं।

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा का कोश

लेकिन मसला तो यह था कि शिक्षा विभाग में क्या हो रहा है। उन्होंने मदद दी एक इंस्टीट्यूशन को। इसकी कुछ चर्चा मैंने यहाँ पर की थी। यह एक इंस्टीट्यूशन है जिसने एक शब्दकोश बनाया है। मेरा यही कहना था कि अगर आप हिन्दी का काम कराना चाहते हैं तो उन लोगों से कराइये जो इस काम को जानते हैं। मेरे सामने इसी इंस्टीट्यूशन की लिखी हुई एक किताब है। यह है वर्धा की 'हिन्दुस्तानी प्रचार

सभा'। जब मैंने इसका जिक्र किया तो मैंने यह नहीं कहा था कि आप इसको यह क्यों देते हैं। मैंने कहा था कि जहाँ एक तरफ़ आप इसको मदद देते हैं वहाँ वर्धा में एक और संस्था है 'राष्ट्र भाषा प्रचार सभा' जो कि बहुत पुरानी संस्था है, उसको आप नहीं देते हैं। उसका आपने एक बवंडर बनाया और कहा कि इसके चेयरमैन फलां हैं और यह गाँधी जी के नाम से चलती है और इसलिये उसको रुपया देने की बात कही और फ़रमाया कि गो कि इसका नाम हिन्दुस्तानी प्रचार सभा है लेकिन यह काम हिन्दी का करती है। यह उन्होंने ग़लत बयानी की। उनकी बात को काटा है किसने ? यह चीज अखबार में आयी है। आप देखें कि श्री प्यारे लाल जी ने उनकी स्पीच वग़ैरह की तारीफ़ की है और जो उन्होंने 'पुर फ़रेब' लफ्ज़ का इस्तेमाल किया उसकी भी तारीफ़ की है। लेकिन उन्होंने कहा कि यह बात ग़लत है कि वह हिन्दी का काम करती है। यह बात मौलाना ने बिल्कुल ग़लत कही। यह प्यारे लाल साहब का बयान रखा है।

बिचबिन्दी खोली

अब आप उन लफ्ज़ों को देखिये जो इस संस्था ने बनाये हैं। 'बुलेटि'न केलिए उन्होंने बनाया है 'बतौती'। 'कैबिनेट' के लिए उन्होंने लिखा है 'खोली'। 'प्रीमियर' के लिए उन्होंने 'पहलुआ' लफ्ज़ बनाया है। यह किताब मेरे सामने है। आप इसे देखें। 'सेंटर' के लिए उन्होंने लफ्ज़ रखा है 'बिचबिन्दी', यह क्या लफ्ज़ है ! जहाँ हम कहेंगे 'केन्द्र' वहाँ वह कहेंगे 'बिच-विन्दी'। हम कहते हैं 'केन्द्रीय मन्त्रिमंडल'। आप जानते हैं कि 'केबिनेट' के लिए 'मंत्रिमंडल' शब्द प्रचलित है। लेकिन वह उसके लिए कहेंगे 'बिचबिन्दी खोली'। और लफ्ज़ सुनिये, 'सेंट्रलाइजेशन' का तर्जुमा है 'बिचि-याना'। इस तरह के लफ्ज़ों को कौन समझेगा ? उन्होंने 'कंसालीडेशन' का तर्जुमा किया है 'ठोसियाना'। आप देखें कि वह किस तरह के शब्द बना रहे हैं। 'मिनिस्टर' के लिए देश भर में 'मंत्री' शब्द प्रचलित है। लेकिन उसको पसन्द है 'वज़ीर'। 'वज़ीर' लफ्ज़ भी लोग समझते हैं। लेकिन 'मंत्री' जो कि एक प्रचलित शब्द है वह उनको पसन्द नहीं है। बस इस बात को मैं यहीं छोड़ता हूँ। कथन मेरा यह है कि वह संस्कृत से घबराते हैं। हमारे संविधान में कहा गया है कि संस्कृत के आधार पर शब्द बनाये जायें जिससे सब प्रान्तों में समझे जा सकें। पर यह संस्कृत से घबराते हैं, और आपने देखा कि किस तरह के लफ्ज़ वह बनाते हैं।

वैज्ञानिक शब्दों का राष्ट्रीयकरण

एक बात शिक्षामंत्री ने इंटरनेशनल साइंटिफ़िक टर्म्स के बारे में कही। उन्होंने कहा था कि सब जगह इंटरनेशनल टर्म्स काम में आते हैं। मैं कहता हूँ कि उसकी सीमायें हैं। मेरे सामने कुछ देशों के खत हैं। एक भाई ने इन पत्रों को मंगाया है। एक पत्र थाइलैंड एम्बैसी का है। उसमें लिखा है कि "टेकनिकल तथा वैज्ञानिक शब्द जो हमारे यहाँ काम में आते हैं वह या तो 'थाई' भाषा के हैं या संस्कृत तथा पाली भाषा की सहायता से बने हैं तथा वे टेकनिकल तथा वैज्ञानिक अध्ययन के लिये पर्याप्त पाये गये हैं।"

दूसरा पत्र फ़िनिश लिगेशन का है। उसमें लिखा है "फ़िनलैण्ड का रवैय्या नये शब्द तथा टर्म्स गढ़ने का है जो आधार रूप से फ़िनिश हों तथा जिन पर कोई विदेशी प्रभाव न हो।"

सभापति महोदय : अभी दो आदमियों को और बोलना है इसके पहले कि मैं फ़ाइनेन्स मिनिस्टर साहब को बोलने के लिए कहूँ।

श्री टंडन : मैं आपकी आज्ञा का दास हूँ। अगर आप कहें तो मैं बैठ जाऊँगा।

सभापति महोदय : अगर आप कोई नया मज़मून शुरू करेंगे तो उसमें देरी होगी। आप इस मज़मून को खत्म कर दीजिये, नया मज़मून शुरू न कीजिये।

श्री टंडन : शिक्षा विभाग के बारे में मैं कह रहा था। इसी तरह से ईरान को लीजिये। ईरान एम्बैसी ने जवाब दिया है, "लगभग ३० वर्ष पूर्व वैज्ञानिक तथा टेकनिकल टर्म्स के राष्ट्रीयकरण का कार्य आरम्भ हुआ था। अब हालांकि हम इस सम्बन्ध में स्वावलम्बी हो चुके हैं फिर भी हम किसी हद तक विदेशी भाषाओं पर निर्भर हैं।"

मेरा कहना यह है कि जो हम लोग उस रोज़ कह रहे थे कि शब्दों के गढ़ने में आप देश का ध्यान रखे वह बात ग़लत नहीं है।

संविधान के शब्द

एक बात मैंने उस रोज़ और कही थी जिसका शिक्षामंत्री ने जवाब दिया था। मैंने कहा था कि संविधान में कुछ शब्द जो स्वीकार हो चुके हैं उनके भी हटाने का प्रयत्न दिखाई पड़ता है। उन्होंने कहा कि ऐसी कोई चीज़ नहीं है। उन्होंने जो कमेटी बनायी है उसके बारे में उन्होंने कहा था कि उसको अख्तियार है कि कोई शब्द बनाये या न बनाये। उस कमेटी ने जो शब्द बनाये हैं उनमें से कुछ मेरे सामने हैं। मैं दो तीन

शब्द यहाँ पर देना चाहता हूँ जिनको आप देखें। जो हिन्दी का संविधान बना है और जिस पर श्री राजेन्द्र बाबू के और हम लोगों के हस्ताक्षर हैं उसमें 'कमीशन' के लिए 'आयोग' शब्द आया है लेकिन जो कोश शिक्षा विभाग ने बनवा कर भेजा है उसमें कमीशन के लिये 'कमीशन' शब्द ही रखा है। तो वह इस प्रकार से संविधान में आये हुए कुछ शब्दों को बदलना चाहते हैं। 'कम्पन्सेशन' के लिए जो सविधान का अनुवाद हुआ है उसमें 'प्रतिकर' शब्द आया है। इस संविधान के अनुवाद पर बहुत रुपया खर्च किया गया है। लेकिन अब हमारे सामने जो टेकनिकल टर्म्स आये हैं उनमें 'कम्पेन्सेशन' के लिए 'मुआवजा' शब्द आया है। 'मुआवज़ा' कोई ऐसा शब्द नहीं है जो इधर न समझा जाय, लेकिन जो दक्षिण के भाई हैं वह सब नहीं समझेंगे। सवाल यह है कि संविधान के लफ्ज़ों को इस तरह से बदलना क्या मुनासिब है जब वह मंजूर हो चुके थे?

श्री अलगू राय शास्त्री (जिला आजमगढ़—पूर्व व जिला बलिया पश्चिम) : अनुचित है।

श्री टंडन : इसी तरह आप देखें कि "ग्राण्ट" के लिए लफ्ज़ 'अनुदान' आया है। संविधान ने उस लफ्ज़ पर अपनी मुहर लगा दी है, लेकिन यहाँ पर लफ्ज़ 'इमदाद' उसके लिये रखा है। अनुदान हटाकर लफ्ज़ इमदाद रखा है। 'ग्राण्ट इन एड' के लिये यहाँ पर 'इमदाद' है, जब कि हमारे संविधान में 'सहायक अनुदान' है। 'ला' के लिये देखें, संविधान में जो लफ्ज़ मंजूर हुआ है, वह 'विधि' है, लेकिन यहाँ पर 'ला' के लिये 'कानून' लफ्ज बनाया जा रहा है। 'सिविल ला' के लिये 'दीवानी क़ानून' रखा गया है।

श्री अलगू राय शास्त्री : बड़ा जुल्म हो रहा है।

श्री टंडन : जो बात मैंने कही थी वह सही थी, उन्होंने उसका रूप रंग बदला है।

संस्कृति धरती से उत्पन्न

शिबली ऐकेडेमी को ग्राण्ट देने की बात मैंने इसलिए छेड़ी क्योंकि उसमें कल्चर की बात लायी गयी थी और इसलिए मैंने उसके बारे में निवेदन किया था। चूंकि कल्चर का बड़ा भारी सवाल है, इसलिये मैं आपकी इजाजत से कुछ लफ्ज़ उसके बाबत कहना चाहता हूँ। मैंने उम्मीद की थी कि उसके सम्बन्ध में कोई फ़र्क नहीं होगा लेकिन मुझे थोड़ा अफ-सोस हुआ जब मैंने 'इस्लामी तमद्दुन' और 'हिन्दू तमद्दुन' की बात सुनी। मैं तो समझता हूँ कि 'इस्लामी तमद्दुन' और 'हिन्दू तमद्दुन'

कोई चीज नहीं है। मुझे यह सुनकर अफ़सोस हुआ जब मौलाना हिफ़जुर्रहमान यहाँ पर खड़े हुए और उन्होंने फ़रमाया कि यहाँ पर 'इस्लामी तमद्दुन' भी रहेगा और 'हिन्दू तमद्दुन' भी रहेगा और उसका एक मजमुआ बनेगा। मैं उनसे पूछना चाहता हूँ कि अगर मजमुआ बनेगा तो दोनों कहाँ रहेंगे ? और क्या मजहब की राह पर आप तमद्दुन बनायेंगे ? शिया तमद्दुन, सुन्नी तमद्दुन, वैष्णव तमद्दुन, जैन तमद्दुन, आखिर कितने तमद्दुन आप रखेंगे ? तमद्दुन का धर्म से सम्बन्ध नहीं है। मैं यह कहना चाहता हूँ कि धर्म अलग है और तमद्दुन अलग है। तमद्दुन का सम्बन्ध जमीन से होता है। हम ईरानी तमद्दुन समझ सकते हैं अरबी तमद्दुन समझ सकते हैं, उसी तरह मैं भारतीय संस्कृति और भारतीय तमद्दुन समझता हूँ और उसी की चर्चा करता हूँ लेकिन कोई अगर इस्लामी तमद्दुन और हिन्दू तमद्दुन की बात कहता है तो वह ग़लत है और उसी ग़लती की वजह से हम देखते हैं कि यह सब टंटा खड़ा हुआ, यह पाकिस्तान ही इस बिना पर बना। बहुत जगह पर जिन्ना साहब और उनके अनुयायियों की स्पीचें दिखला सकता हूँ जिसमें उन्होंने यह कहा है कि मुस्लिम तमद्दुन अलग है और इसलिये हम दोनों साथ नहीं रह सकते, हमारा मुल्क अलग होना चाहिये। यही तमद्दुन की मुख्य जड़ थी जिसके कारण हमारे देश का बंटवारा हुआ और पाकिस्तान की स्थापना हुई और इसी के साथ उन्होंने उर्दू भाषा के प्रश्न को भी समेट लिया। मेरा निवेदन यह है कि धर्मों के ऊपर तमद्दुन नहीं होगा। हमारी संस्कृति हमारी भूमि से निकलेगी, उसमें मज़हब का भेद नहीं होगा। चीन में भी मुसलमान हैं, तो क्या उनका रहन-सहन, पहराव और लिखना-पढ़ना चीनियों से भिन्न है ? वे बिल्कुल दूसरे चीनियों की तरह अपना जीवन व्यतीत करते हैं। हमारे देश में जितने मुसलमान भाई बसते हैं, वे सब हमारे भाई हैं, छाती से छाती मिलाकर इस देश में रहें, लेकिन अगर वह अलग मज़हब और तमद्दुन की बिना पर यहाँ रहना चाहें तो झगड़ा होगा और लड़ाई होगी और उसका नतीजा क्या होगा ! एक दूसरी नीति और एक दूसरे तरह की चीज आयेगी जैसा कि हमने एक नमूना जिन्ना साहब की शख़्सियत में देखा। आज हमें उसकी ज़रूरत नहीं है। मज़हब पर तमद्दुन नहीं होगा, हमारा रास्ता मेल जोल का होगा और इसीलिये हमें एक ही तमद्दुन और एक भारतीय संस्कृति पर क़ायम रहना है। हमारी उस भारतीय संस्कृति के बारे में बोलते हुए हमारे प्रधानमंत्री ने कहा था कि उसके कुछ अलग अलग रंग हैं। हमारी ज़मीन में कुछ अलग अलग रंग हैं। तामिल प्रदेश में कुछ, महाराष्ट्र में कुछ और विन्ध्य प्रदेश में दूसरा रंग है और

जिसके लिये उन्होंने वेराइगेटेड लफ्ज़ कहा था, परन्तु मूल में हमारी संस्कृति एक है और वह भारतीय संस्कृति है, चाहे उसमें मुसलमान हों चाहे हिन्दू हों ।

तंगदिली किसकी ?

शिक्षामंत्री ने उर्दू के सम्बन्ध में भी एक अजीब बात कही । उन्होंने कहा कि हमारे देश में साढ़े चार करोड़ मुसलमान बसते हैं तो क्या उनके नाम के ऊपर अगर हमने उर्दू के लिये कुछ दे दिया तो ग़लती की । मैं नहीं समझता कि साढ़े चार करोड़ से उर्दू का क्या ताल्लुक है । उर्दू तो बहुत थोड़े जानने वाले हैं । हम कोई उर्दू के दुश्मन नहीं हैं मगर उन्होंने बात कुछ पलट के कही । 'उर्दू' को आप मदद दीजिये, मैं उसका विरोध नहीं करता । मैंने तो यह कहा था कि ग्राण्ट, अनुदान, देते समय कुछ अनुपात होना चाहिये । आपको यह देखना होगा कि आप लोग हिन्दी का काम किस से ले रहे हैं । मैंने कहा था हिन्दी का काम आप को कराना है तो मुख्य करके हिन्दी की संस्थाओं के ज़रिये से करवाइये । मैंने जामिया मिलिया, जो उर्दू को चलाने वाली संस्था है, उसके ऊपर कोई एतराज़ नहीं किया, इसी तरह अलीगढ़ यूनिवर्सिटी काम करती है, मैंने उसके ऊपर कोई एतराज़ नहीं किया, मेरी मंशा कोई उर्दू के ऊपर एतराज़ करने की नहीं थी । मैंने तो यह दिखाया था कि कल्चर के नाम पर आपने किसको अनुदान दिया । आप अंजुमने तरक्क़ी उर्दू को कल्चर के नाम पर मदद दिया करें, तो मेरे नज़दीक वह चीज़ ठीक नहीं है और आप ऐसा करके, बहुत ग़लत काम कर रहे हैं । शिक्षामंत्री ने बहुत से ऐसे लफ्ज़ इस्तेमाल किये, मैं लौट कर उनको नहीं कहना चाहता । मेरे दिमाग़ में वे इस समय हैं भी नहीं लेकिन मुझे इस समय एक बात याद आ रही और वह यह है कि गांधी जी के बारे में मैंने पढ़ा था कि जब नागपुर में गाँधी जी ने हिन्दी का पक्ष लिया था तो उर्दू तहरीक़ को चलाने वाले मौलाना अब्दुल हक़ साहब, जो अंजुमन तरक्की का काम करने वाले थे, उन्होंने गांधी जी के बारे में उस समय कहा था कि, 'उनके चेहरे से रया का नक़ाब उतर गया', रया के अर्थ हैं फ़रेब । यह लफ्ज़ मौलाना साहब ने मेरे लिये इस्तेमाल किया था । जो चीज अब्दुल हक़ साहब ने महात्मा गांधी जैसी बड़ी शख्सियत के लिये कही, आज वही चीज़ मौलाना साहब ने मेरे जैसे छोटे आदमी के लिये कहना मुनासिब समझा । तंगदिली की बात कह देना बड़ा आसान है । यह तंगदिली किसकी है, यह समझने की बात है । मैं पूछना चाहता हूँ कि आप आज फ़ारसी लिपि को क्यों पकड़े हुए हैं ? फ़ारसी की लिपि इस देश की नहीं है । आप उसको पकड़े क्यों हैं । क्या यह तंगदिली नहीं

है ? हमारे देश में जो नागरी लिपि चल रही है उसके लिये मेरा निवेदन है कि वह हमारी संस्कृति और तमद्दुन का जुज है और उसी को फैलाना चाहिये और ग्रहण करना चाहिये । क्या यह कहना तंगदिली है ? मैं यह कहता हूँ कि आप फ़ारसी लिपि को जो पकड़े रखना चाहते हैं यह तंगदिली नहीं तो क्या है ? क्या यह फ़राखदिली है ? मैं इस पर क्या कहूँ, अधिक नहीं कहना चाहता । उन्होंने उस रोज बहुत ग़लत बयानी से काम लिया । मैं तो हिन्दू, मुसलमान को एक करना चाहता हूँ, एक संस्कृति उनकी हो, एक तमद्दुन में वे रहें और इसलिये मेरा बार-बार यह निवेदन है कि देश के सब लोगों को एक लिपि नागरी लिपि में बांधना उचित है । वह क्या कोई आपके मजहब के खिलाफ़ जाता है ? चीन में जो मुसलमान हैं वह चीनी लिपि में अपना सब काम काज करते हैं, और कुरान शरीफ़ का भी अध्ययन वह चीनी भाषा में ही करते हैं, अरबी लिपि में वह अपना काम नहीं चलाते । मैं चाहता हूँ कि हम सब मिल कर इस सवाल को हल करें ।

हिन्दी जानने वालों से काम लीजिए

इस मिनस्ट्री की तरफ से सचमुच उन लोगों के जरिये से काम कराने की कोशिश होनी चाहिये जो हिन्दी जानते हों । कल एक भाई ने थोड़ी सी उस सम्बन्ध में चर्चा की थी । हमारे शिक्षामंत्री जी किनसे काम लेते हैं ? मालूम ऐसा होता है कि जो हिन्दी बिल्कुल नहीं जानता वही सबसे अच्छा हिन्दी का काम कर सकता है । उनके जो सचिव हैं वह हिन्दी जानने वाले नहीं हैं, उनके जो ज्वाइंट सेक्रेटरी हैं वह हिन्दी जानने वाले नहीं हैं और उनके वहाँ का डिप्टी सेक्रेटरी हिन्दी जानने वाला नहीं है, क्या इस तरीक़े से यह हिन्दी का काम पूरा होगा ? मौलाना साहब खुद जितनी हिन्दी जानते हैं, वह ज़ाहिर है । मैंने देखा कि मौलाना साहब को उनकी स्पीच जो शोधन करने के लिये जाती है वह फ़ारसी लिपि में भेजी जाती है, जबकि हमारे संविधान में साफ उल्लेख है कि नागरी लिपि का प्रयोग होगा, मगर उनके लिये खास तौर पर और कुछ दूसरे लोगों के लिये भी खास तौर पर फ़ारसी लिपि में उनकी स्पीचें भेजी जाती है । मेरे पास जब मेरी स्पीच शोधन के लिये आई तो मुझे यह देखकर ताज्जुब हुआ कि उसमें मौलाना साहब का जितना हिस्सा था वह फ़ारसी लिपि में लिखा हुआ था । मैं नहीं जानता कि यह कहाँ तक कांस्टीट्यूशन के मुआफिक है, लेकिन वाक़या यह है कि वह इतने रोज से हमारे शिक्षामंत्री है, लेकिन वह अभी तक नागरी लिपि नहीं सीख सके हैं । इसलिये मेरा कहना है कि हिन्दी का काम ऐसे लोगों के जरिये से होगा जो खुद हिन्दी अच्छी

तरह जानते हैं। मौलाना साहब ने मेरे लिये कहा था कि मैंने कोई कंस्ट्रक्टिव सुझाव नहीं दिया। मैंने उस समय कहा था और इस समय भी कहता हूँ कि आप ऊँची किताबें लिखवाइये, और आठ, दस हजार रुपया एक एक किताब पर खर्च कीजिये। मैंने दूसरा सुझाव यह दिया था कि आप इसके लिये एक आयोग बना दीजिये जो इस काम को करे और आज इस अवसर पर फिर मैं उसी बात को दुहराता हूँ।

विस्थापितों को प्रतिकर

१८ मई १९५४ को विस्थापित व्यक्ति (प्रतिकर और पुनर्वासन) विधेयक पर बोलते हुए

सभापति महोदय ! सबसे पहले मैं गवर्नमेंट को बधाई देता हूँ कि उन्होंने इस विधेयक को सामने रखा है। यह प्रश्न बहुत वर्षों से लटक रहा है। अन्त में इतने वर्षों बाद बहुत घूमघाम कर गवर्नमेंट इस परिणाम पर आई कि अब हम पाकिस्तान का मुँह न देखें और उन भाइयों की सहायता के लिये जो पाकिस्तान से आये हुए हैं कुछ करें। अब उन्होंने यह फैसला किया है और इस पर वह बधाई के पात्र हैं।

प्रतिकर का अन्तर गवर्नमेंट पूरा करे

मैं इस विषय में दो एक सुझाव देना चाहता हूँ। एक सुझाव तो मेरा यह है कि जो इस विधेयक की धारा १३ में कम्पेनसेशन-पूल की बात कही गई है, उसमें गवर्नमेंट ने यह स्वीकार किया है कि वह भी उसमें कुछ धन अपनी ओर से मिलायेगी, यह बात धारा १३ (सी) में कही गई है। कितना मिलायेगी यह तो नहीं बताया गया है लेकिन इस विधेयक के साथ १६ पृष्ठ पर एक नोट है। उससे मालूम होता है कि मोटे तौर पर १८५ करोड़ रुपयों की जायदाद इस समय गवर्नमेंट के पास बाँटने के लिये है। प्रश्न यह है कि इसमें गवर्नमेंट और कितना मिलायेगी। जो प्रतिकर हमें देना है वह तो बहुत अधिक है। अगर इस धन में थोड़ा ही मिलाया गया तो बहुत थोड़ा ही पल्ले पड़ेगा उन भाइयों के जो पाकिस्तान से आये हैं। आपने जो विधेयक का अभिप्राय दिया है उसमें यानी स्टेटमेंट आफ़ आब्जेक्ट्स एण्ड रीजन्स में कहा गया है कि इसमें वह रुपया जो पाकिस्तान से मिलेगा जोड़ा जायगा। यह तो कल्पना की बात है और बहुत आशा नहीं है कि हमें शीघ्र कुछ मिलने वाला है। जो जायदाद हमारे आदमी पाकिस्तान में छोड़कर आये हैं और जो जायदाद यहाँ से गये हुए लोगों की हमारे पास है उनके अन्तर, difference, की चर्चा है और यह कहा गया है कि आप उसको पाकिस्तान से लेने का यत्न करेंगे, आप यत्न करें, परन्तु मेरा सुझाव है कि उस अन्तर को गवर्नमेंट अपने पास से मिलाये। आप उतनी ही रक़म इसमें मिला दें जो अन्तर के कूतने पर आती है, जिसकी चर्चा स्टेटमेंट आफ़ आब्जेक्ट्स एण्ड रीजन्स में की गयी है,

और फिर स्वयं पाकिस्तान से वसूल करके अपने हिसाब में रख लें। यह सेलेक्ट कमेटी के विचार करने की बात है। मैं चाहता हूँ कि इस बात पर गवर्नमेंट विचार करे। हाँ, रुपया शायद बहुत अधिक होगा और गवर्नमेंट कह सकती है कि इतना रुपया वह अपने पास से कहाँ से देगी। यह ठीक है। हम को अपनी गवर्नमेंट का भी ध्यान रखना है। इस संबंध में मेरा सुझाव है, कई वर्ष पहले भी मैंने सुझाव दिया था, और आज भी मेरा सुझाव है कि इसके लिये एक विशेष टैक्स लगाना चाहिये। कुछ भी उसका नाम हो, लेकिन एक विशेष टैक्स लगाना चाहिये और उस टैक्स में मेरा अपना विचार है कि अच्छी रकम मिलेगी। मुझको आशा है कि टैक्स को हम प्रेमपूर्वक देंगे। जो पैसा इस टैक्स में आये उससे पाकिस्तान से आये लोगों को हम सहायता दें। जिन्होंने कोई मुसीबतें नहीं उठाई हैं और जो यहाँ के रहने वाले हैं उनसे इतनी ही सहायता हम चाहते हैं कि कुछ पैसा वह दें। जो भाई वहाँ से भाग कर आये हैं, उन्होंने जो मुसीबतें उठाई हैं वह बहुत हृदय विदारक हैं और यहाँ पर आज उनकी चर्चा करने की ज़रूरत नहीं है।

स्वतंत्रता-प्राप्ति में विस्थापितों द्वारा बलिदान

सच बात यह है कि हमारी स्वतंत्रता का मूल्य सब से अधिक उन भाइयों ने दिया है जो पाकिस्तान से भाग कर यहाँ आये हैं। उन्होंने केवल धन ही नहीं खोया, अपने भाइयों और घर वालों को खोया, अपना घर खोया, जितनी कड़ी मुसीबतें उन्होंने उठाई हैं हम लोगों को तो उसका कोई अंश भी नहीं उठाना पड़ा। तब आज अगर हम से उनकी सहायता के लिये टैक्स द्वारा कुछ रुपया माँगा जाय, कुछ अरब रुपये क्यों न हों, तो मेरा निवेदन यह है कि हम लोगों को उधर के लोगों के लिये प्रसन्नता के साथ देना चाहिये। गवर्नमेंट इस विषय में कुछ आगे बढ़े, साहस से कदम उठाये। अगर इतना साहस गवर्नमेंट नहीं करती तो मैं यही कह सकता हूँ कि गवर्नमेंट अपने को इतिहास के पन्नों में निन्दनीय कहलायेगी। जिन लोगों ने स्वतंत्रता के लिये सबसे ज्यादा कष्ट उठाया है, उनकी मुसीबतों को मैंने देखा है, आज भी देख रहा हूँ, आज भी ये बेचारे टुकड़े टुकड़े के लिये घूमते हैं। मुझको कुछ थोड़ा अनुभव है, मैं यह भी जानता हूँ कि गवर्नमेंट ने सहायता की है, लेकिन वह सहायता उन लोगों की मुसीबतों को देखते हुए बहुत थोड़ी रही है। मैंने घुस कर उन भाइयों की हालत को थोड़ा देखा है। किस तरह से यह रह रहे हैं? मुझको याद है, मैंने अहमदाबाद में देखा है, आज भी वह दृश्य मेरे सामने है। शायद ४० फीट के लगभग चौड़े और ५० या ६० फीट के लगभग लम्बे गोदाम में मैंने २२

कुटुम्बों को रहते देखा जिनके सब प्राणी मिला कर ८० या ९० होते थे। यह देख कर कि वह किस तरह से रह रहे हैं, मेरी आँखों में आँसू आ गये।

यह एक जगह की बात नहीं। इस तरह के उदाहरण मुझको कई जगह पर देखने को मिले और मुझे विश्वास है कि मंत्री जी को मुझसे ज़्यादा इस विषय में अनुभव होगा। क्योंकि वह तो बहुत परिश्रम के साथ दौड़े धूपे हैं। मुसीबतों के बारे में तो किसी को सन्देह नहीं है। प्रश्न यह है कि गवर्नमेंट कहाँ से पैसा लाये कि सहायता करे। यही वास्तविक प्रश्न है। पाकिस्तान से मिलेगा आज यह हम नहीं जानते। पाकिस्तान की अपनी रकम को हमें छोड़ना नहीं है, वह जब मिले हम उसको लें। लेकिन जब तक वह रकम नहीं मिलती है गवर्नमेंट अपने पास से उतनी रकम मिलाये। जब वह रकम पाकिस्तान से वसूल हो जाय तो उसको अपने पास रख ले। इसके लिए मैं सुझाव दूंगा कि या तो गवर्नमेंट टैक्स लगावे या उधार ले। गवर्नमेंट के पास दो ही रास्ते हैं। मैं कहता हूँ कि इसके लिए एक खास लोन उठाया जा सकता है। उसमें से रुपया दिया जाय। पाकिस्तान से मिलेगा तो उसको सरकार अपने पास रखेगी। यह दो ही रास्ते हैं। जो रकम वहाँ हम छोड़ आये हैं और जो रकम हमें यहाँ मिलेगी उसका जो अन्तर है उसके लगभग वह टैक्स या लोन हो। मैं यह नहीं कहता कि जो बड़े बड़े लखपति और करोड़पति हैं गवर्नमेंट उनको पूरा पूरा मुआवज़ा दे लेकिन हाँ इतना मुआवज़ा तो दे कि वे अपने काम में, अपने रोज़गार में लग सकें। लेकिन ऐसे लोग बहुत थोड़े हैं। अधिकतर छोटी छोटी स्थिति के लोग हैं और कुछ सार्वजनिक संस्थायें हैं।

संस्थाओं की हानि-पूर्त्ति

सार्वजनिक संस्थाओं की वहाँ बहुत बड़ी बड़ी रकमें छूटी हैं। मेरा यह सुझाव है कि उनको तो पूरी तरह से मुआवज़ा देना चाहिये क्योंकि वे सार्वजनिक संस्थायें बराबर दूसरों का काम करती हैं। इस विधेयक में एक दफा है जिसमें ट्रस्ट का लफ़्ज़ इस्तेमाल किया गया है। लिखा है कि आप उनके लिये **वेलफेयर कारपोरेशन** बनायेंगे। धारा १६ में यह शब्द हैं :

"For the purpose of rendering assistance to trust-entitled to compensation."

ट्रस्ट की परिभाषा इस बिल में मैं देख रहा था। लेकिन मुझको नहीं मिली। ट्रस्ट की परिभाषा इसमें नहीं दी गयी है। सिलेक्ट कमेटी को मैं सुझाव देता हूँ कि वह इसकी परिभाषा दे और इस परिभाषा के भीतर उन संस्थाओं को लावे जो जनता की सेवा करती रही हैं चाहे वे ट्रस्ट ऐक्ट

में न आती हों। ट्रस्ट ऐक्ट तो एक खास क़ानून है और उसमें ट्रस्ट एक खास क़ानूनी शब्द है। मैं चाहता हूँ कि वह सब संस्थायें जो दूसरों के लिए काम करती रही हैं और जिनका धन पाकिस्तान में रह गया है वह सब ट्रस्ट की परिभाषा में आयें। जिन संस्थाओं की रजिस्ट्री ऐक्ट २१ सन १८६० के अन्तर्गत हुई है या दूसरी रीति से जो संस्थायें किसी भी रूप में कुछ **एजूकेशनल** या **मैडीकल फैसिलिटीज** देने वाली हैं उनकी रक्षा के अभिप्राय से यह वेलफेयर पूल बनेगा। मेरा सुझाव है कि खाली इन्हीं दो प्रकार की संस्थाओं में गवर्नमेंट की सहायता परिमित नहीं होनी चाहिए बल्कि जो भी संस्थायें जनता की सेवा करती थीं और उनके पास पैसा था और उनका पैसा वहाँ छिन गया और आज वह संस्थायें ग़रीब हो गई हैं उन सब संस्थाओं को आपको पूरा रुपया देना चाहिए। व्यक्तियों के लिए मैं नहीं कहता लेकिन अगर आप संस्थाओं का पूरा रुपया न दें तो वह बहुत अनुचित होगा। आप पूरी तरह से उनकी सहायता करें और इस सहायता के लिए मैंने जो सुझाव दिए हैं उनके अनुसार कार्य करें। या तो एक विशेष प्रकार का लोन आप सामने रखें या टैक्स लगावें। मेरा तो विश्वास है कि यह टैक्स लोग प्रसन्नता से देंगे। यह टैक्स इस अनुमान से हो कि किसकी क्या हैसियत है। उस पर आप व्यौरे में विचार कर सकते हैं। मेरा सुझाव है कि इन दो रास्तों से आप पूल में पर्याप्त धन रखें और जो संस्थायें हैं उनके पैसे में काट कपट तनिक भी न करें। जितनी संस्थायें हैं उनको पूरा रुपया दिया जाय। यह मेरा सुझाव है।

२०

तिब्बत पर चीन का अधिकार

१८ मई १९५४ को विदेश नीति पर बोलते हुए

उपाध्यक्ष महोदय ! मुझे इस विवाद के सम्बन्ध में अधिक कहना नहीं है। एक बात मुझको कुछ खटकती रही है। उस अपनी खटक को दूर करने के लिए विदेश मन्त्रालय के सामने अपनी बात रख देना चाहता हूं। मुझे खेद है कि हमारे प्रधान मंत्री जी इस समय यहाँ नहीं हैं।

साधारण रीति से उनकी जो संसार के सम्बन्ध में नीति है, विशेषकर संसार के दो आपस में विरोध करने वाले समूहों से अलग रहने की, उसका मैं समर्थन करता हूं। मेरे विचार में उस नीति के सम्बन्ध में हमारे प्रधान मंत्री ने बुद्धिमानी से काम किया है। परन्तु मुझे जो बात खटकी है वह हाल की चीन के साथ की हुई सन्धि है। तिब्बत के सम्बन्ध में चीन से इस प्रकार की सन्धि करना मुझको खटकता है। मुझको ऐसा लगता है कि हमने औचित्य से उतर कर कुछ काम किया है।

तिब्बत की स्वतन्त्रता

तिब्बत लगभग १९१४ से स्वतन्त्र रहा है। यह सच है कि बहुत पुराने समय से चीन ने उसके ऊपर एक अपना धुंधला सा अधिकार माना है परन्तु उसका कुछ बहुत अधिक मूल्य नहीं था। यह सच है कि तिब्बत के पास बहुत सेनायें नहीं रही हैं। वह संसार के उन विचित्र देशों में है, शायद सबसे विचित्र देश, जिसने अधिक सेनाओं में विश्वास नहीं किया है। कुछ थोड़ी बहुत तादाद तो रखी है परन्तु उन्होंने अधिकतर अपने पड़ोसियों की शुभकामनाओं पर विश्वास किया है।

आचार्य कृपालानी (भागलपुर व पूर्निया): उसी का यह नतीजा है।

श्री टंडन : परन्तु चीन ने इधर सन् ५० और ५१ में अपनी सेनायें तिब्बत में भेज कर तिब्बत को मजबूर किया कि वह चीन का आधिपत्य बहुत सी बातों में माने। मुझे याद है जब मैं कालिज में पढ़ता था और एक युवक था, तब १९०४ में कर्नल यंगहज़बेंड तिब्बत के भीतर गये थे। हम लोगों को वह अच्छा नहीं लगा था। हम समझते थे कि तिब्बत को परेशान करने के लिए ब्रिटिश गवर्नमेंट की यह एक चाल है। परन्तु यह तो सच है कि कर्नल यंगहजबेंड सेना सहित गये, उन्होंने तिब्बत से शर्तें कीं, और तिब्बत के साथ उन्होंने एक इक़रारनामा किया, चीन के साथ नहीं। उस समय तिब्बत के साथ उनकी लिखा-पढ़ी हुई। यह सच

है कि उसके कुछ वर्षों बाद उसी विषय में उनकी चीन के साथ भी लिखा-पढ़ी हुई और एक इक़रारनामा हुआ। यह तो मालूम होता है कि चीन बहुत वर्षों से तिब्बत के अपने सम्बन्ध को इस तरह समझता रहा है कि हमारी कुछ वहाँ हुकूमत सी है, जिसे अंग्रेजी में 'सुज़रेंटी' कहते हैं। तिब्बत वाले दूसरी तरफ यह समझते रहे हैं कि हम स्वतंत्र हैं और सन् १९१४–१५ में यह बात स्पष्ट हो गयी। उस समय तिब्बत की ओर से कह दिया गया कि हम चीन के मातहत नहीं हैं और हम स्वतंत्र हैं। यह बात सामने आ गयी थी। विशेषकर जिस समय पहला संसार युद्ध छिड़ा हुआ था उस समय यह बात स्पष्ट हो गयी थी कि तिब्बत चीन की हुकूमत नहीं मानता और तिब्बत वाले अपने को स्वतंत्र कहते हैं। यों कहने को तो चीन वालों ने नेपाल तक को अपनी हुकूमत के अन्दर माना है। उनका तो यह भी दावा रहा है कि तिब्बत और नेपाल उनके पुराने मातहत हैं। जिस प्रकार बहुत दिन पहले नेपाल ने उस मातहती के दावे पर ठोकर मार दी उसी तरह तिब्बत ने भी ठोकर मार दी। नेपाल ने अपनी फौजें तिब्बत में भेजकर उसके बहुत से भाग पर क़ब्जा भी कर लिया था। परन्तु पीछे वह हट आया। जिस प्रकार से नेपाल ने ठोकर मारी उसी प्रकार तिब्बत ने भी ठोकर मारी। फ़र्क इतना था कि गोरखा बन्दूक चला सकता है, लड़ सकता है और मर सकता है और तिब्बत वाले फ़कीर हैं।

चीन का उपनिवेशवाद

मुझे जो बात अपने सम्बन्ध में खटकती है वह यह कि हमारा जो कुछ अब तक तिब्बत से सम्बन्ध रहा है उसमें यह भी है कि हमारे वहाँ कुछ छोटे मोटे व्यापार सम्बन्धी अधिकार रहे हैं। हमारे कुछ आदमी वहाँ रहते थे और हमारे तारघर भी थे।

अब हमने अधिकार दे दिया, जहाँ तक कि हम अधिकार दे सकते हैं, कि चीन तिब्बत को अपने मातहत समझे। मेरा यह तो मतलब नहीं और मैं यह नहीं कहता कि तिब्बत के स्वातंत्र्य के लिए हम फौजें भेज कर लड़ते, यद्यपि पड़ोसी के स्वातंत्र्य के लिए कभी लड़ना भी पड़ता है, आज मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि आपको इस समय कोई लड़ाई उनसे लेनी थी, लेकिन जो बात खटकती है वह यह कि जिस अन्याय के साथ चीन ने तिब्बत के ऊपर हमला किया और उनकी स्वतंत्रता को हड़प किया, जिसमें और कालोनियलिज्म में कोई फ़र्क नहीं है, उसको हमने लिखा-पढ़ी में मान लिया। पश्चिम के देशों ने विदेशों में कालोनी बनाने की जो नीति रखी थी, और वह पुरानी नीति आज भी है, उस नीति के विरोध में हमारे प्रधान मंत्री ने बहुत जगह और बार बार कहा है उसका

उन्होंने विरोध किया है। ठीक, हमारा देश इसके लिए उनका आदर करता है और संसार का वह भाग जो कालोनी नहीं रखता, वह भी उनका आदर करता है। परन्तु यहाँ चीन ने क्या किया है ? एक ग़रीब देश जिसके पास सेना नहीं है, जो किसी को सताता नहीं है, चीन से कुछ माँगता नहीं है, चीन के ऊपर हमला नहीं करता, एक अलग टुकड़े में छोटा सा देश जिसकी कोई वहुत आमदनी भी नहीं है, जिसकी कोई वड़ी जनसंख्या भी नहीं है, जिसके पास सेना नहीं है और केवल नाममात्र के कुछ सिपाही हैं, ऐसे देश से संसार के किसी भी देश को भय नहीं था और न हो सकता था, परन्तु चीन ने उसको हड़प लिया।

तिब्वत को चीन के अधीन मानना अनैतिक

हिन्दुस्तान ने उस हड़प करने की क्रिया को मान लिया, स्वीकार कर लिया, मुझको यह चीज़ खटकती है। क्या यह ठीक किया ? वहुत सी अन्दर की वातें मैं नहीं जानता। सन् ५०-५१ में जो पत्र-व्यवहार हमारी गवर्नमेंट ने चीन से किया उसमें उन्होंने आपत्ति की कि तुमने फौज अपनी क्यों भेजी, हमारी सरकार ने इस प्रश्न को उठाया, चीन का जो जवाव आया उस जवाव में मुझे शील की कमी लगी और वह एक भद्दी तरह का जवाव लगा। दो पत्र यहाँ से गये और दो पत्र वहाँ से आये, वे पत्र छपे हुए हैं उनको मैंने देखा उसमें उन्होंने वहुत अभिमान के साथ हमसे कहा है कि आपको इसमें कोई ग़रज़ नहीं है, आप दूसरे के वहकावे में आकर एतराज कर रहे हैं। उल्टे खुद हमारे विदेश विभाग के ऊपर एक चपत मारी कि आप तो दूसरे के वहकावे में आकर हमको ऐसा लिख रहे हैं और तिब्वत जो उभरा है वह भी दूसरे देशों के भड़काने से उभर रहा है। आखिर यह जवाब उनका क्या था ? मुझे तो एक गुंडापन मालूम हुआ। अपनी सेना के भरोसे जो काम उन्होंने किया उसके ऊपर हम चुप हो गये। वहुत से संसार में गुंडे हैं जिनका अस्तित्व हमको स्वीकार करना पड़ता है, सव राज्य संसार के भलमनसी से नहीं चलते। गुंडापन वहुत से राज्यों के भीतर भी रहता है। जैसे नागरिको में गुंडों के रहते भी उनको वर्दाश्त करना पड़ता है वैसे ही हर प्रकार के राज्यों की स्थिति भी वर्दाश्त करनी पड़ती है। हर जगह आदमी लड़ नहीं सकता, सो तो मैं मानता हूँ और इसीलिये मैं लड़ने की वात नहीं कहता, परन्तु आगे के लिए तिब्बत के भविष्य के लिए हमने चीन को उनका मालिक स्वीकार किया, यह चीज़ मुझे खटकती है और मैं चाहूँगा कि इस विषय को हमारे विदेश मंत्रालय के मंत्री जी कुछ और अधिक स्पष्ट करें। मुझे तो वह वात खटकी और एक नैतिक स्तर से हटी हुई मालूम पड़ी इसीलिये मैंने अपनी उस खटक को सामने रख दिया।

२१

खाद्य में मिलावट

२३ अगस्त १९५४ को भारतीय लोकसभा में खाद्य अपमिश्रग विधेयक पर बोलते हुए

अध्यक्ष महोदय ! इस सरकार का ध्यान मिलावट के बड़े प्रश्न की ओर गया यह स्वागत करने की बात है। आज यह मानी हुई बात है कि जो वस्तुयें हमारे भोजन की हैं या औषधियों की हैं उनमें बहुत गहरी मिलावट हो रही है। कर्रा होने की आवश्यकता है। मुलायमियत से काम बहुत नहीं चलेगा क्योंकि इसमें बड़े गहरे गहरे मक्कार, जो अपने आर्थिक स्वार्थ के लिये दूसरों को कुछ भी हानि पहुँचा सकते हैं, लगे हुये हैं।

मुझे बहुत ब्यौरे में जाना नहीं है। बहुत से भाइयों ने चर्चा की और लोग जानते हैं कि किस प्रकार से खाने पीने की वस्तुओं में और औषधियों के मामले में आज जाल और फ़रेब हो रहा है।

घी में साँप की चर्बी

इसमें बहुत धनी लोग भी शामिल हैं। एक समय की बात है, शायद मेरे भाई श्री बनारसी प्रसाद झुनझुनवाला को याद हो बहुत वर्ष हुए कलकत्ते में घी का काम करने वाले लोगों के घरों में बड़े साँपों की चर्बी पाई गई थी। कलकत्ते के पास उड़ीसा है, उड़ीसा में बड़े बड़े अजगर होते हैं, उन अजगरों के चमड़े की जूतियाँ पहनी जाती हैं। इन अजगरों की चर्बी को इकट्ठा करके बहुत से व्यापारियों ने घी में मिलाया था और वे पकड़े गये। उनकी बिरादरी, मैंने सुना, बहुत प्रतिष्ठित थी, वैश्य कुल के प्रतिष्ठित समाज के लोग इस काम में शामिल थे। मैंने सुना कि उनके ऊपर बिरादरी का कुछ दण्ड हुआ। उधर तो रोकथाम हुई, परन्तु आज दूसरे प्रकार की मिलावट करने की समस्या हमारे सामने है। आज घी में अजगर की चर्बी मिलाने की शायद बहुत ज़रूरत नहीं रह गयी इसलिये कि मिलावट के लिये दूसरी चीजें समाने आ गयी हैं। वनस्पति पदार्थ इसमें मुख्य है। केन्द्रीय सरकार ने उस वनस्पति पदार्थ को एक ठीक और उचित चीज़ माना है। दूसरी तरफ श्री झुनझुनवाला संसद् के एक सदस्य जो डाक्टर हैं उनकी यह सम्मति रख रहे हैं कि वह हानिकारक है और उसके कारण बहुत से रोग उत्पन्न हो रहे हैं।

हमारी सरकार ने बड़े बड़े व्यापारियों के कथन को और उनके पक्ष

में दिए हुये कुछ वैज्ञानिकों के कथन को मान लिया है। मैं जानता हूँ कि दो एक वैज्ञानिकों ने यह मान लिया है और यह कह दिया है कि इसके प्रयोग से कोई हानि नहीं है। इधर वह वैज्ञानिक हैं, उन्होंने चिकित्सा के काम में कभी कोई अनुभव भी नहीं किया है। यहाँ एक चिकित्सक का कथन आपके सामने है और मेरा अनुमान है कि यदि चिकित्सकों को अच्छी तरह से इस विषय में कहने दिया जाय तो आपको यह अनुभव होगा कि यह चीज़ ठीक नही है। परन्तु चिकित्सकों को छोड़ दीजिये, पैसे में इतना बल है कि वह चिकित्सकों की राय को पलट देता है और वैज्ञानिकों की राय को भी पलट देता है। मेरा तो यह सुझाव है कि हमारी मंत्रिणी जी ये जो व्यापारी लोग हैं, पैसा पैदा करने वाले लोग हैं इनके नैतिक स्तर का पुराना अनुभव करके इस प्रश्न को देखें और समझें कि आखिर इस व्यापार में उसी बिरादरी के लोग लगे हैं जो घी में अजगर की चर्वी मिला सकती थी। बिरादरी से मेरा मतलब पैसा पैदा करने वाली बिरादरी से है, वह बिरादरी जो पैसा पैदा करने में नैतिकता को कोई जगह नहीं देती। वह बिरादरी सभी जगह है, येनकेन प्रकारेण किसी भांति पैसा आ जाय यही उनका ध्येय रहता है। वही बिरादरी आज इस प्रकार की वनस्पति मिलों को चला रही है, वनस्पति बनाने अथवा घी के साथ वनस्पति मिलाने में उसको क्या बड़ा पाप दिखाई देगा ? दस बीस हज़ार रुपया देकर इसकी राय ले लेना या उसकी राय ले लेना यह कोई कठिन बात इस समय नहीं है।

वनस्पति घी में रंग मिले

मैं मंत्रिणी जी से कहना चाहता हूँ कि आज जो आप देश में मिलावट को रोकना चाहती हैं, आपकी इस मनोवृत्ति का स्वागत है, परन्तु आप ऐसा करने के लिये साहस भी तो दिखायें। वह शक्ति अगर आप में हो तो इसे बन्द कीजिये आपकी गवर्नमेंट के लिये यह तो बहुत छोटी चीज है। आपने क़ानून बनाया, परन्तु अगर आप में साहस हो तो आप इस मिलावट की वस्तु के बनने को रोकिये। मै उसके लिये आपको गहरी बधाई दूंगा। क्या इसके लिये कुछ और जानकारी की आवश्यकता है कि मिलावट चारों ओर हो रही है और वनस्पति पदार्थ घी में मिलाया जा रहा है, अच्छा घी मिलना ही आज एक समस्या बन गई है। असली घी जनता को सुलभ करने के लिये यह प्रश्न आज से नहीं करीब पन्द्रह वर्ष से सरकार के सामने रहा है कि कोई ऐसा रंग निकाला जाये जो वनस्पति में मिलाया जाय ताकि दोनों में भेद हो सके·······

सभापति महोदय : गत २९ वर्षों से।

श्री टंडन : जी। केन्द्रीय शासन सम्बन्धी मेरा अनुभव कम है, आपका अनुभव पुराना है। आपका कथन ठीक है कि यह प्रश्न इतने वर्षों से सरकार के सामने पेश है, इधर थोड़ा सा जो मेरा अनुभव हुआ उसमें मैंने देखा कि इस प्रश्न के ऊपर सरकार टाल-मटोल करती है।

सन् १९५१ में इस प्रश्न को मैंने उठाया। कांग्रेस की कार्य समिति के भीतर मैंने यह प्रश्न उठाया और तब मुझको यह आश्वासन दिलाया गया कि बहुत शीघ्र इसके लिए यह प्रबन्ध हो जायगा कि वनस्पति में मिलाने के लिए कोई रंग निकल आये और बहुत शीघ्रता के साथ यह चीज़ सामने आ जायगी। प्रश्न टल गया, इस विषय के जो मंत्री थे, वे बुलाये गये और उनसे बातचीत हुई और उन्होंने भी कहा कि बहुत शीघ्रता से यह चीज़ की जायगी। कांग्रेस वर्किंग कमेटी ने अपना इस विषय में उस समय जो मत प्रकट किया था वह कार्य समिति की सन् ५१ की कार्यवाहियों में रक्खा हुआ है। कार्य समिति के बाद फिर वह विषय आल इंडिया कांग्रेस कमेटी में उठाया गया। इस भवन के मेरे कांग्रेस सहयोगीगण ध्यान दें कि यह विषय आल इंडिया कांग्रेस कमेटी के सामने जब गया तब उसने अपनी राय दी कि बहुत शीघ्र वनस्पति में रंग मिलना चाहिए जिससे घी में मिलावट न हो सके परन्तु यदि यह बहुत जल्दी नहीं हो सके तो उन्होंने इस बात पर बहुत बल दिया कि वनस्पति पदार्थ का बनना बन्द किया जाय।

वनस्पति घी का बनना बन्द हो

इसके ऊपर आल इंडिया कांग्रेस कमेटी ने बल दिया कि जो पदार्थ वनस्पति घी कहलाता है या जिसको अंग्रेज़ी में **वेजिटेबल प्रोडक्ट** कहते हैं उसका बनना बन्द किया जाय। मुझको याद है, कांग्रेस के भीतर जो मंत्री थे, हमारे प्रधान मंत्री तथा दूसरे मंत्रिगण ने उस समय इसका विरोध किया था। परन्तु आल इंडिया कांग्रेस कमेटी के सदस्यों ने उसको स्वीकार किया और अधिक मत से उसको पास किया। यह आप लोगों को याद होगा। हम लोगों ने समझा था कि जब आल इंडिया कांग्रेस कमेटी ने, जो कि मुख्य अधिकारिणी है कांग्रेस नीति की, एक बात तय की है तो अब तो यह गवर्नमेंट मानेगी ही। यह सन् १९५१ की बात है। आज सन् १९५४ है। लगभग तीन वर्ष हो गये, न तो वह रंग ही आज तक आया है और न उन व्यापारियों के माथे पर इस सन्देह में कि शायद वनस्पति बन्द होगा कोई शिकन आई है।

बाबू रामनारायण सिंह (हजारीबाग—पश्चिम) : और न आयेगी।

श्री टंडन : कहीं कोई चर्चा इस पदार्थ के बन्द करने की नहीं है।

श्री नन्द लाल शर्मा (सीकर) : शिकन मिनिस्टरों के चेहरे पर आ गई है।

श्री टंडन : हमारे यहाँ बराबर विज्ञान की शालायें खुलती चली जा रही हैं वैज्ञानिक अनुसन्धान के लिये। हमारे देश में रासायनिक प्रयोग बहुत हुए हैं और बराबर बढ़ रहे हैं, गहरे विषयों पर। परन्तु आश्चर्य होता है कि इस छोटी सी बात के लिए कि कोई रंग मिल सके कोई प्रयोग सफल नहीं हुआ। कलकत्ते में हमारे गांधी जी के भक्तों में से एक हैं, उन्होंने एक रंग सामने रखा भी और जान पड़ता था कि वह कुछ काम करेगा। सम्भव है कि उसमें कुछ त्रुटि रही हो, परन्तु वह सरकार के देखने की बात थी। फिर भी उस रंग को गवर्नमेंट ने नहीं चलाया। उन साहब ने ...

सभापति महोदय : श्री सतीश चन्द्र दास।

श्री टंडन : श्री सतीश बाबू ने तो रंग सामने रखा। लेकिन जहाँ तक मुझे मालूम है गवर्नमेंट ने, यह कह कर कि यह ठहरता नहीं है, उस को स्वीकार नहीं किया। यदि आपके पास कोई अच्छी वस्तु नहीं क्योंकि चारो ओर जो आपके इतने वैज्ञानिक हैं वह कोई रंग नहीं निकाल सके तो आप कम से कम इसका प्रयोग तो करके देखते ताकि सब की समझ में आता कि आप में सचाई है। नहीं तो ऐसा मालूम होता है, मेरे हृदय पर यह भावना है, कि यह बात टाली जाती है और उसके बारे में आप में सत्यपक्ष की भावना नहीं है, यह भावना नहीं है कि हम इस मिलावट के क्रम को बन्द करें।

श्री गिडवानी (थाना) : सत्य भावना न होने का कारण ?

श्री टंडन : उसमें मुझे जाना नहीं है। कारण सम्भवतः यह है, मंत्रियों के दिल में एक बात धंसी हुई है कि यह चीज़ शुद्ध है, इससे कुछ हानि होने वाली नहीं है। मैं इस भावना को स्वीकार नहीं करूँगा जिसकी ओर माननीय सदस्य का शायद संकेत है कि उसमें कोई बड़े बड़े कैपिटलिस्टों का पैसा काम कर रहा है।

श्री वी० जी० देशपांडे (गुना) : वह भी हो सकता है।

श्री टण्डन : प्रभाव तो काम कर सकता है परन्तु यह मेरी भावना है कि उनके मन में ऐसा विश्वास है कि इससे हानि नहीं है और इसलिये उन्होंने इसको महत्व नहीं दिया है। मैं इसको अनुचित मानता हूँ। यह चीज़ ठीक नहीं है। इसके लिये थोड़े साहस की आवश्यकता है। मैं जानता हूँ कि बड़े बड़े व्यापारी लोग इस काम के विरोध में हैं कि उनके व्यापार में कुछ भी रोकथाम हो। इस व्यापार से स्वास्थ्य पर क्या असर पड़ता है यह उनके लिए गौण बात है। उनके लिये पैसा ही मुख्य है, स्वास्थ्य गौण है।

मंत्रिणी जी के लिये तो स्वास्थ्य मुख्य होना चाहिये, पैसा गौण होना चाहिये। देश का स्वास्थ्य संभले इसके लिए मेरा निवेदन यह है कि कांग्रेस वालों को अपने आल इंडिया कांग्रेस कमेटी के रेज़ोल्यूशन पर बल देना चाहिये। मुझको मालूम है, मैंने सुना था कि कुछ मंत्रियों ने इस प्रकार की बात कही कि यह रेज़ोल्यूशन तो पास हो गया परन्तु हमारे चलाये चलेगा नहीं। वर्किंग कमेटी और आल इंडिया कांग्रेस कमेटी का मत साधारण रीति से ले लिया जाता है सरकारी रीतियों को चलाने के लिए, उसका सहयोग पाने के लिये। लेकिन जहाँ पर बहुमत एक काम के पक्ष में है और आप चाहते हैं कि दूसरा काम किया जाय, वहाँ पर आपने उस बहुमत को टरका दिया।

कपट जाल को बन्द कीजिये

मुझको अधिक नहीं कहना है। केवल इतना निवेदन करना है कि यह अधिनियम या कानून जो बन रहा है, यह कुछ ही दूर जा सकता है। लेकिन अगर यह मालूम हो बड़े बड़े व्यापारियों को, जो उत्पन्न करने वाले हैं, मिल मालिक हैं, कि गवर्नमेंट आफ़ इंडिया किसी ऐसी वस्तु को सहन नहीं करेगी जो स्वास्थ्य के विरुद्ध है तब मिलावट के अपराध में रोक थाम हो सकेगी। यह चीज़ ऐसी है कि इसके प्रमाण के लिये किसी एनैलिसिस की जरूरत नहीं है। स्पष्ट बात है कि यह फैला हुआ अपराध है, इसको रोकने के जो साधारण उपाय हैं उनको आप न करें तो आपके इस क़ानून की मंशा पर सन्देह होता है। इस क़ानून को पास कर क्या आप केवल दिखाना चाहते हैं कि हाँ! हमने खाद्य मिलावट को रोकने के लिये क़ानून बना दिया। एक विप सामने है, यह बहुत बड़ा और व्यापक विष है। इसको रोकिये। अगर आप समझते हैं कि यह आपकी शक्ति के बाहर है कि आप इसके लिये रंग निकाल सकें तो आप इसका बनाना बन्द कर दीजिये। ग़रीबों के लिये शुद्ध तेल का खाना अच्छा है। केवल ग़रीब अमीर की बात नहीं है। शुद्ध तेल से सस्ता या अधिक पोपक वनस्पति नहीं है। तिल्ली का तेल हो, या सरसों का तेल या मूंगफली का तेल हो, जो शुद्ध पदार्थ है, जो जमाया हुआ नहीं है, जिसमें हाइड्रोजिनेशन नहीं हुआ है, जिसमें निकल का प्रयोग नहीं किया गया है। खाने के लिए वह अधिक ठीक है उसे चलाइये। लेकिन जिस प्रकार से निकल या दूसरी चीजों का प्रयोग करके हाइड्रोजिनेशन होता है और जमी हुई वस्तु घी के नाम पर चलती है यह स्पष्ट छल है। आप यह कह सकते हैं और हो सकता है कि कहा जाय कि तेल में महक है। महक तो हटाई जा सकती है। आप महक हटा करके तेल बेचें, लेकिन उसको जमाने का

जो कार्य है उसमें विष उत्पन्न होता है, इसको आप न होने दें। इतना करना कोई कठिन बात नहीं है। कुछ भाई कहते हैं कि वनस्पति में घी की शक्ल आती है तो इसमें क्या हर्ज है ? यह घी की शक्ल देना भी तो एक छल है। इस कपट जाल को आप रोकें। और इस प्रकार से देश का नैतिक उत्थान करके देश के स्वास्थ्य की रक्षा करें।

●

हरिजनों में परिवर्तन

३० अगस्त १९५४ को भारतीय लोकसभा में अस्पृश्यता विधेयक पर बोलते हुए

सभापति जी ! इस विधेयक का मैं हार्दिक स्वागत करता हूँ। इसमें अस्पृश्यता को दूर करने के लिये बहुत से रास्ते बताये गये हैं। हमारे सहयोगियों ने अभी उस दिन और आज कई रास्ते सुझाये हैं। विशेषकर इस बात पर बल दिया है कि इस अधिनियम के स्वीकृत होने के बाद इसकी स्वीकार हुई बातों पर दैनिक जीवन में काम करने पर ध्यान दिया जाय। यह बात मुख्य है। सुनने में तो यह बात साधारण है, परन्तु इसकी आवश्यकता है।

हरिजनों के लिए स्वच्छ घर

हरिजनों को देहातों में जो असुविधायें हैं वह हम में से बहुत लोग जानते हैं। नगरों में उनको जो असुविधायें हैं, घर की, कुओं की, वे हमारे सामने आती ही रहती हैं। मैं तो चाहता हूँ कि नगरों में और देहातों में भी हरिजनों के घरों पर विशेष ध्यान दिया जाय। उनको घर बनाने की सुविधा दी जाय। मैंने पहले किसी दूसरे संबंध में इस बात पर बल दिया है कि हमारे समाज का रूप, विशेषकर देहाती समाज का रूप बदलने की आवश्यकता है। जिस प्रकार के हमारे गंदे गाँव हैं वह आज बदलने की आवश्यकता है। सवर्णों के गाँवों में भी लोगों के घर गंदे और एक दूसरे से सटे हुए बने हैं। यह हमारे गाँव तो बिल्कुल समाप्त कर देने के योग्य हैं। हम हर घर को अलग अलग रखें। मैंने सुना है कि जहाँ आज इस विषय पर ध्यान दिया गया है वहाँ दीवार से दीवार मिलाकर घर नहीं बनाये जाते हैं। अभी हमारे एक मित्र रूस से होकर आये हैं। उन्होंने बताया की वहाँ ग्रामों में घर सटे हुए नहीं बनाये जाते हैं। यह बात हमें अच्छी लगी। वहाँ गाँव इस तरह के हैं ही नहीं जैसे हमारे देश में हैं। वहाँ हर घर के साथ भूमि लगी हुई है। इसका कुछ नमूना हम अपने यहाँ उस राज्य में देखते हैं जिसे तिरुवांकुर कोचीन कहते हैं। उसका नमूना तिरुवांकुर से लेकर कन्याकुमारी तक चला गया है। वह एक लम्बा फैला हुआ बाग सा दिखाई देता है। हरियाली और सौन्दर्य बराबर गाँवों के साथ मिले हुए दिखायी देते हैं।

डा० काटजू : ऐसा ही बंगाल में भी है।

श्री टंडन : मुझको यह निवेदन करना है कि हमारे गांव वाटिका गाँव के रूप में बनें। हो सकता है कि ऐसा करने में कुछ देर लगे। लेकिन कम से कम हरिजनों के लिए छोटे छोटे भूमि के टुकड़े दिए जायें। आज यह हो सकता है। कठिन कुछ नहीं है, अगर यह हमारे होम मिनिस्टर के दिमाग़ में आ जाय।

डा० काटजू : मुझ से इसका क्या वास्ता है ?

श्री टंडन : यह बिल आप लाये हैं इसलिए मेरा निवेदन है कि केवल इस बिल को पास करके आप संतोष न कर लें, कुछ दौड़ धूप करें, कुछ इस बात के लिए चिन्ता करें। गवर्नमेंट कुछ नमूने के गाँव बना दे। बतावे कि हमने दो सौ हरिजनों को कैसी सुन्दर बस्ती बना दी है। एक एक घर में आप भूमि दें। मैं तो कहता हूँ कि लगभग आधा एकड़ भूमि दें, लेकिन अगर आप आधा एकड़ नहीं दे सकते हैं तो चौथाई एकड़ दें उनको घर बनाने में आप कुछ मदद करें। ज्यादा नहीं दे सकते हैं तो थोड़ा बहुत रुपया दें, बाकी वह खुद मेहनत कर लेंगे। लेकिन सौ दो सौ इस तरह के हरिजनों के घर आप बना दें। इससे कोई यह समस्या हल नहीं हो जायगी लेकिन इससे दूसरों को प्रेरणा होगी और उनको प्रोत्साहन मिलेगा। इस प्रकार एक तो मेरा यह सुझाव है कि आप इनके लिए अच्छे घर बनावें। इस से तीन चौथाई अछूतपन दूर हो जायगा।

गन्दे काम के लिये जाति न बने

दूसरा सुझाव भी है। यों तो बहुत सी छोटी छोटी बातें हैं पर मैं उनमें नहीं जाना चाहता। और लोगों ने उनको कहा है और वह इस विधेयक में भी है, जैसे कुओं से पानी भरने का मौका देना आदि। इन सब का आज भी लोगों को गाँवों में दुःख है। जहाँ अलग अलग कुएँ नहीं हैं वहाँ यह कष्ट है। आज कुछ सुविधायें बढ़ गयी हैं। लेकिन एक बड़ी समस्या है जो मनुष्य की प्रकृति से सम्बन्ध रखती है। वह यह है कि हमारे देश में जो गन्दे से गन्दे काम हैं वे आपने एक जाति के सुपुर्द कर रखे हैं। जितना गन्दा काम है पशु मारने का डोम के सुपुर्द है और मल-मूत्र साफ करने का कुल काम भंगी के सुपुर्द है। यह एक जाति है जो इस गन्दे काम को करती है। अगर अभी एक भंगी चारों तरफ़ से बम्पुलिस साफ़ करके आपके पास आ बैठता है तो तुरन्त आपके मन में एक हिचक होगी। यह स्वाभाविक बात है। आपने इस काम को करने वालों की एक जाति बना दी है। मेरा निवेदन है कि यह जो आपका सामाजिक ढाँचा है इसको बदलने की आवश्यकता है। इसके ऊपर तो गहरे ध्यान देने की

जरूरत है। इस विषय में इस बिल से कुछ नहीं बनने वाला है। जीवन का ऐसा क्रम होना चाहिए कि आपको इतने लोगों को हरिजन बनाने की आवश्यकता न पड़े। आज तो आपने इनको काम से हरिजन बना रखा है। जहाँ म्युनिसिपैलिटी है वहाँ आप देखिये। दिल्ली म्युनिसिपैलिटी को देखिये, नयी दिल्ली म्युनिसिपैलिटी को देखिये, इलाहाबाद म्युनिसिपैलिटी, लखनऊ म्युनिसिपैलिटी को देखिये। अगर यह किया जाय कि हरिजनों में जो भंगी जाति है वह अपना काम बन्द कर दे तो आपकी सभ्यता निर्मूल हो जायगी।

गन्देपन को सहन न कीजिए

आपका तो नगर का नगर गंदा पड़ा रह जायगा। आपकी सभ्यता यह जितना बाहर आप बनाये हुए हैं रंगा चुंगापन यह सब समाप्त हो जायगा अगर आज भंगी यह तय कर लें कि हम तो पाखाना उठाने का काम नहीं करेंगे। मैं भंगियों को सलाह देता हूँ, यहाँ जो हमारे भाई बैठे हुए हैं और जो अछूत या हरिजन कहलाते हैं, 'हरिजन" पहले से अच्छा नाम है, मैं उनको यह सलाह देता हूँ कि हरिजनत्व या अछूतपन का नाश तभी होगा जब भीतर से आपके हृदय में निश्चय होगा, एक कठोर निश्चय होगा कि हम इस नीचपन को बर्दाश्त नहीं करेंगे। इसकी आवश्यकता है। हम सवर्णों को तो सलाह देते ही हैं, मेरी आपको सलाह है कि आप स्वयं अपने को ऊंचा करें और गन्दी आदतें छोड़ें। शराब पीना वगैरह, बहुत ऐसी गन्दी आदतें बना रक्खी हैं जिनसे आप नीचे गिरते हैं। यह जो जूठा उच्छिष्ट भोजन बचता है; बड़े बड़े नगरों में भोज होते है, न्यौते और दावतें होती हैं और खाने के बाद जो कुछ पत्तलों में पड़ा हुआ रहता है, उसको भंगी लोग बीन बीन कर ले जाते हैं। मैं उनको उच्छिष्ट पदार्थ के ग्रहण करने से रोकता रहा हूँ लेकिन मैं देखता हूँ कि हमारे हरिजन भाइयों की उसको खाने की आदत पड़ी हुई है। हमारे भाई क्या राजस्थान के क्या उत्तर प्रदेश के यह दृश्य देखा करते हैं, इसको बन्द करने की आवश्यकता है। हम सवर्णों को सलाह देते हैं कि उनको ऊँचा उठायें, लेकिन उन्हें आपस में हो गहरा यत्न करना चाहिये कि वह उस उच्छिष्ट भोजन को, फेंके हुए भोजन को नहीं छूएंगे—यह प्रवृत्ति उनको नीचे गिराती है।

भंगी का काम समाप्त हो

इसके अलावा दूसरी बात मैं यह चाहूँगा कि वह पाखाना उठाने का काम बन्द कर दें, यह पेशा खत्म हो। है कठिन बात, लेकिन यह होना

चाहिये और मेरे लिये तो यह समाज का आदर्श है, मैं चाहूँगा कि मेरा पाखाना कोई दूसरा आदमी न उठावे। मैं खुद उसको उठाऊँगा, यह भावना हमारे सवर्ण भाइयों में हो और हमारे हरिजन भाई तय कर लें कि हम इस पेशे को नहीं करेंगे। सेवा भाव से करना और बात है लेकिन हम पेशा इस बात का नहीं करेंगे कि हम दूसरों का पाखाना उठायें और दूसरे जो सवर्ण कहलाने वाले लोग हैं वह यह दावा करें कि हमारा पाखाना भंगी आये तो साफ़ हो। हमारा घर वह साफ़ करे, और अगर इंकार करते हैं तो उसको पकड़ पकड़ कर हम जेलखाने भेजें, यह क्रम बिल्कुल नामुनासिब है और बंद होना चाहिये। इसके लिए साहस चाहिये। मैं चाहता हूँ कि हरिजन खुद उठें और वह इस स्थिति के विरुद्ध बलवा करें कि एक जाति की जाति पाखाना साफ़ करने वालों की बना दी गई है। वह समाज का पाखाना साफ़ करने से इंकार करें और कहें कि हम ऐसा नहीं करेंगे, अपना अपना पाखाना साफ़ करो और अपने घरों को साफ़ करो। तब हमें घरों को आवश्यकता के अनुसार बनाना पड़ेगा और मेरा जो घर का आदर्श है तब वह आ जायगा। आज गंदे घर, गंदे गाँव भरे पड़े हैं।

नए ढंग का समाज

बम्बई और कलकत्ते जैसे गंदे शहर देखता हूँ तो मुझे सख्त हैरत और घबराहट होती है और एक नफ़रत होती है। वहाँ जो मैं दो-महले और आठ-आठ महले मकानों को देखता हूँ तो तबियत घबड़ा उठती है कि क्या यह आदमियों के रहने के घर हैं! वहाँ घर इसलिए बन पाते हैं कि या तो वहाँ आज पानी से पाखाना खींच खींच कर समुद्र में फेंकने का ढंग चलाया गया है, पखाना ज़मींदोज़ करके नीचे नीचे खींच लिया जाता है, या भंगी लोग आकर पाखाना साफ़ करते हैं। प्राय: यह दोनों तरीके साथ साथ ही चलते हैं। आज बड़े बड़े नगरों में यह हो रहा है। इसलिए गंदगी है और स्वास्थ्य की हानि है। मेरा कहना यह है कि बिल्कुल एक नये ढंग से समाज बनाना चाहिये, हमें हरिजनों की जरूरत नहीं है। हमारा मल मूत्र वहीं कच्ची भूमि में चला जाय, भूमि में मल मूत्र जाना प्राकृतिक है और स्वाभाविक है और उससे उत्तम खाद उत्पन्न होती है। हमने अपने रहने सहने का ढंग गलत कर दिया है। अगर हरिजन लोग तैयार हों कि हम गंदा काम नहीं करेंगे तो उनका लाभ है, क्योंकि हरिजनत्व और छूआछूत तभी समाप्त होगा, और उनके द्वारा हमारे उच्च वर्णों को भी बुद्धि आयेगी और ज़्यादा सफ़ाई के साथ वे रह सकेंगे। अपने हाथ से जब वह स्वयं अपना गंदा काम करेंगे तो बिल्कुल सारे

समाज की हालत बदल जायगी और घर बनाने की सूरत बदल जायगी और घर दूसरी तरह से बनेगा, बिना ऐसी भूमि के जहाँ मल मूत्र गाड़ा जा सके कोई घर तब नहीं बनेगा। इस समस्या का स्थायी हल मैं केवल इस विधेयक के इन चंद पन्नों में नहीं देखता। इन चार, पाँच पन्नों में अछूतपन के दूर करने का स्थायी रास्ता नहीं है। स्थायी रास्ता यह है कि जो सबसे छोटा और गंदा काम है जिसके कारण मनुष्य अछूत बन जाता है यानी मल मूत्र साफ़ करना और पशुओं की लाश ढोना, यह सेवा की भावना से हो तो उचित है, लेकिन पैसे का लोभ देकर किसी एक जाति से यह काम कराना अनुचित हैं। इसमें समाज के परिवर्तन की आवश्यकता है। इसमें गवर्नमेंट बहुत कुछ कर सकती है। हरिजनों के दृढ़ होने की बात है, हम लोगों को अपना रहन-सहन बदलने की बात है और गवर्नमेंट की ओर से मार्ग प्रदर्शन होने की बात है।

●

२३

ओछा बनियापन अनुचित

२१ सितम्बर १९५४ को भारतीय लोक सभा में पुनर्वास विधेयक पर बोलते हुए

सभापति जी ! पश्चिमी पाकिस्तान या पूर्वी बंगाल से जो लोग आये हैं, जो लोग वहां से भाग आये हैं, उनके बारे में जब भी किसी विचारवान पुरुष के हृदय में ध्यान आता है तो उसका हृदय भर आता है। उनकी कठिनाइयां, उनकी मुसीबतें, उन्होंने जो कुछ सहा उसको याद कर आज भी दुःख होता है।

विभाजन—बुद्धिहीनता

पाकिस्तान का जन्म ही घृणा और दूसरों को दुःख पहुंचाने की इच्छा के बीच हुआ था। वहां से किस प्रकार से लोग भगाये गये, यह अब इतिहास का विषय है। मैं जानता हूं कि हमारे देश से जो लोग भाग गये उनको भी बहुत कष्ट दिया गया। सच बात तो यह है कि यह पाकिस्तान की पैदाइश ही मुसीबत देने वाली हुई। मैं तो आरम्भ से ही इस प्रकार देश के विभाजन के विरुद्ध था, परन्तु यह विभाजन हुआ। मैं तो आज भी समझता हूं, और जो समझता हूं उसको छिपाता भी नहीं हूं, कि यह कुछ बुद्धिमानी की बात नहीं हुई थी। परन्तु जो कुछ भी हमारे नेताओं ने किया, उसका कुल खमियाजा क्या केवल शरणार्थी लोगों को ही बर्दाश्त करना है ? जो कुछ हुआ, जो भूल हुई, या ईश्वर की लीला में ठीक हुआ, जो कुछ भी हुआ वह इसलिए हुआ कि राजनीतिक कारणों से प्रेरित होकर हम लोगों ने यह उचित समझा कि देश का विभाजन मान लें। यह भी उचित समझा गया कि फ़ौजों का भी विभाजन हो जाय। मुसलमान फ़ौज वहां पहुंच जाय और हिन्दू फ़ौज यहां चली आवे, यह भी हमने बुद्धिमानी बरती, जिसका परिणाम यह हुआ कि दोनों तरफ़ मारकाट हुई। करोड़ों, अरबों की सम्पत्ति हमारे भाई वहां छोड़ आये। मेरा निवेदन है कि इन सब बातों को भुला देना उचित नहीं है। आज जो बात हमारे सामने है वह रुपये पैसे की है। जो कष्ट उन लोगों ने सहे हैं उनका मूल्य पैसों में नहीं दिया सकता है। हमारा कृतज्ञ देश जो भाई चले आये हैं, विस्थापित हुए हैं, उनको और उनकी मुसीबतों को याद रक्खेगा।

सरकार का ओछा बनियापन

परन्तु यह जो छोटी सी कथा आने, पाई की, रुपये पैसे की छिड़ी है उसमें सरकार की ओर से इतना छोटा और ओछा बनियापन मुझे अच्छा नही लगता। हमारे मंत्री जी हैं तो बनिया, हिसाब किताब में चतुर हैं, परन्तु हिसाव किताव की चतुराई सदा इसी में नहीं होती कि रुपये देने में काट-कपट की जाय। हिसाब कम बनाना ही हिसाब किताव की चतुराई नहीं है। उदारता के साथ हिसाब निबाहना ऊँची बनियाई है। आज कुछ उदारता की आवश्यकता है। गवर्नमेंट के पास शक्ति भी है। अरबों रुपया वह देश के कामों पर खर्च कर रही है। यह भी तो गहरा देश का काम है। जो लोग आये हुए हैं वे आज मुसीबतों से छूट गये हैं, यह बात तो नहीं है, उनकी बुरी दशा आज, इस समय, भी है। अपनी आँखों से मैंने उन भाइयों की दशा को देखा है। देखा है कि ५०, ६० फीट लम्बे और लगभग ३५ फीट चौड़े कमरे के भीतर ८०, ९० प्राणी रोज़ रह रहे हैं।

यह दशा इनकी है। किसी तरह से इन्होंने गुज़ारा किया। अब उनको जब मुआवज़ा देने का प्रश्न सामने है तो हम यह कहें कि बस जो यहाँ से भाग गये हैं उनकी जितनी सम्पत्ति है, और उसका अन्दाज़ा लगाया गया है कि वह एक सौ करोड़ के लगभग है, वह तुम्हें मिलेगी और गवर्नमेंट ने जो कुछ रुपया, ८० करोड़ के लगभग, लगाया है वह मिलेगा, और कुछ नहीं मिलेगा। यह मुझको उचित नहीं लगता।

पाकिस्तान की ओर कोमलता

पाकिस्तान की चर्चा करना ही व्यर्थ है। वहाँ से कुछ आने का नहीं है। यह तो तभी हो सकता है जब उनकी नाक दबा कर आप निकालें। नाक दबाकर तो निकाला जा सकता है किन्तु आप नाक दबाने वाले नहीं हैं। यह आपकी प्रवृत्ति है।

श्री पी० एन० राजभोज (शोलापुर—रक्षित—अनुसूचित जातियाँ): ताकत नहीं है।

श्री टंडन : ताक़त की बात नहीं है। वह आपकी कोमलता है। आप पाकिस्तान की ओर बरताव करने में कोमल रहे हैं। कोमलता बहुत जगहों पर ठीक होती है, परन्तु बहुत जगहों पर दुर्बलता का चिह्न होती है। भीष्म पितामह का एक वाक्य राजनीतिज्ञों को याद रखना चाहिये। जब वह शरशय्या पर पड़े थे और राजा लोग भीड़ लगाकर उनके चारों ओर बैठे थे तब उन्होंने बहुत से उपदेश दिये जो महाभारत के शांति पर्व में वर्णित हैं। उनका वाक्य था कि जो शासन कर्ता अच्छे लोगों की रक्षा नहीं कर सकता और जो दुष्टों के साथ कठोर बरताव नहीं कर सकता वे दोनों नर्कगामी होते हैं। यह जिस प्रकार से पाकिस्तान बना और जो काम उन्होंने किया

उसको देखते हुए उनके प्रति इतनी कोमलता उचित नहीं है। इस कथन में मैं यह सुझाव नहीं दे रहा हूँ कि उनके साथ लड़ाई करो।

विस्थापितों के लिए सम्पत्ति-कर

हमारे यहाँ से जो मुसलमान गये उन्होंने भी बड़ा कष्ट उठाया। इस में संदेह नहीं। मेरा हृदय व्यथा से भर जाता है जब मैं उन कष्टों को सोचता हूँ जो उनको पंजाब में उठाने पड़े। परन्तु जो पाकिस्तान से भाग भाग कर आज हमारे यहाँ आये हैं उनके लिए हमको कुछ करना चाहिए। हमको उनके साथ दया का वर्ताव करना चाहिए। जो यहाँ से चले गये हैं उनके प्रति पाकिस्तान का कर्तव्य है कि वह उनके साथ दया का वर्ताव करे। परन्तु इस समय तो हमारे सामने यह प्रश्न है कि जो भाग भाग कर यहाँ आये हैं उनकी हम रक्षा करें। आप कहते हैं कि हमने उनके लिए ८० करोड़ रुपया लगा दिया और अब आप कहते हैं कि बस अधिक नहीं। मैं पूछता हूँ कि क्या यह ८० करोड़ उनकी मुसीबतों का, उनके कष्टों का मूल्य है? मुझे तो यह देखकर लज्जा होती है।

बरसों हुए आरम्भ में जब यह सवाल उठा था तब मैंने नम्रतापूर्वक एक सुझाव दिया था और मुझे आशा थी कि शायद वह सुझाव विचार के बाद मंज़ूर कर लिया जायेगा। मैंने निवेदन किया था कि हमारे देश में जो भी सम्पत्ति है उसका एक छोटा सा अंश ले लिया जाय। बहुत छोटों को हम छोड़ सकते थे लेकिन अधिकांश संपत्ति का एक अंश ले लिया जाय यह मेरा सुझाव था। मैं चाहता था कि वह धन इन विस्थापितों में बाँट दिया जाय। अगर ऐसा किया जाता तो अच्छी सूरत दिखाई पड़ती परन्तु गवर्नमेंट ने वह नहीं किया। अब वह ८० करोड़ के ऊपर सौदा करना चाहती है। अस्सी या ८५ करोड़ क्या चीज है? अंदाजा लगाया गया है कि ये विस्थापित वहाँ नगरों में पाँच अरब ५० करोड़ की संपत्ति छोड़ कर आये हैं। मैंने उस समय कुछ अंदाजा किया था।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : यह अन्दाजा सिर्फ शहरी जायदाद का है।

श्री टंडन : आपने कहा कि यह सिर्फ़ शहरी जायदाद का अन्दाजा है। मैंने उस समय कुछ अनुमान कुल जायदाद का किया था। मेरा अनुमान था कि ये लोग जो जायदाद छोड़ कर आये हैं वह २० अरब की है। आज अचल सम्पत्ति की बात है। जो चल सम्पत्ति थी, जो मनक़ूला जायदाद थी, वह भी सैकड़ों करोड़ों रुपये की थी। प्रवर समिति ने उनका मूल्य अचल सम्पत्ति से भी अधिक बताया है।

सरदार हुक्मसिंह : बीस अरब गवर्नमेंट का अपना अन्दाज़ा था।

श्री टंडन : उस समय हम लोग विचार के लिये जब बैठे थे तब हमने

अनुमान किया था कि ये लोग करीब बीस अरब की जायदाद छोड़ आये हैं। अब जब आप मुआवज़ा देने बैठे हैं तो क्या आप इस सबको भुला देंगे ? मेरा निवेदन है कि जिस कोष में से आप मुआवज़ा देना चाहते हैं, जिसको आप कम्पेन्सेशन पूल कहते हैं, यह बहुत ही कम है। इसमें अच्छी मात्रा में बढ़ावा होना चाहिये। कुछ भाइयों ने सुझाव दिया है कि यह ढाई सौ करोड़ कर दिया जाय। इसमें क्या धरा हुआ है ? मैं तो कहता हूँ कि गवर्नमेंट चार सौ या पाँच सौ करोड़ रुपया दे।

मैं यह गम्भीरता से कहता हूँ कि हमारी गवर्नमेंट को गहरी दृष्टि से सोचना चाहिये। आज भी इसके लिये देर नहीं है। इसके लिए वह विशेष टैक्स लगा सकती है। उस टैक्स को वह किसी और काम में न लगाये और कहे कि केवल इसी काम में लगायेगी। मेरा हृदय कहता है कि हमारा देश उदारता के साथ उस टैक्स को दे देगा। इतना कमीनापन हमारा देश नहीं दिखायेगा कि जो पैसा हमारे विस्थापित भाइयों के लिए माँगा जाय उसको वह न दे और उसमें कमी करे। मेरा तो यह सुझाव है कि आज भी गवर्नमेंट गहरी दृष्टि से सोचे। जल्दबाज़ी न करे।

इसका यह मतलब नहीं कि उनको प्रतिकर देने में रोक करे। शायद यह कहा गया है कि हम तीन वर्ष में अदा करेंगे। यह बहुत लम्बा समय है। देर हो चुकी है। आप उनको देना शुरू करें। इस प्रकार दें कि छोटों को जहाँ तक जल्दी हो सके देकर ख़त्म कर दें। बड़ों को रोकें। परन्तु जो आमदनी का रास्ता है उसको बिलकुल बन्द न कर दें। मैं समझता हूँ कि गवर्नमेंट बहुत बड़ी गलती करेगी अगर वह मई के प्रतिकर कोष में देश से जाने वालों की सम्पत्ति **इवैक्वी प्रापर्टी** का आना बन्द करदे। मैं समझता हूँ कि यह उन लोगों के साथ अन्याय होगा जो पंजाब से भाग कर यहाँ आये हैं। इसका यह मतलब नहीं है कि जो मुसलमान हमारे देश में रहते हैं उनको पीड़ा पहुँचाई जाय। तनिक भी नहीं। उनको कष्ट हो तो उनकी सहायता दी जाय। मैं तो सदा इस बात का पक्षपाती रहा हूँ। परन्तु मैं नहीं चाहता कि इस प्रकार से उन लोगों को सहारा दिया जाय जो इस इरादे में बैठे हैं कि अवसर मिलते ही अपनी जायदाद बेच-बेच कर पाकिस्तान भाग जायँ। कुछ लोग आज भी वहाँ रुपये भेजते हैं। उनका कुटुम्ब वहाँ है और उन्होंने एक दो आदमी यहाँ छोड़ रखे हैं कि उनकी जायदाद देखते रहें। पाकिस्तान से तो हिंदू भगाये गये। यहाँ हम लोगों ने पाकिस्तान का दिखाया रास्ता नहीं पकड़ा। और हमने ऊँचे स्तर से काम किया और मुसलमानों की रक्षा की। यह सदा हमारे लिये गौरव की बात रहेगी। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि जो इस इरादे में बैठे हुए हैं कि हम अपनी जायदाद बेचकर पाकिस्तान जायें उनको हम सहारा दें।

श्री पी० एन० राजभोज : जो अछूत लोग वहाँ से आना चाहते हैं उनको आने नहीं दिया जाता।

श्री टंडन : वह तो दूसरा विषय है।

मेरा निवेदन यह है कि आप इस बात पर विचार करें कि जल्दी से जो आप का प्रतिकर कोष है उसको बंद कर देना बुद्धिमानी नहीं है।

एक दूसरी बात जो अभी चली कि जो लोग मकानों में रह रहे हैं उनके मकानों का नीलाम किया जायगा उस पर भी कुछ निवेदन करूँगा। जो मकान किसी शरणार्थी को दिया गया है उसको नीलाम करके अधिक से अधिक रुपया लेना यह मेरा निवेदन है अनुचित होगा।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : मिनिस्ट्री यह नहीं चाहती कि जिनके मकान पाँच या दस हजार के हैं उनको निकाला जाय।

श्री टंडन : मेरा कहना है कि जो लोग बसे हुये हैं, अथवा किन्हीं मकानों और दुकानों में रह रहे हैं उन्हीं रहने वालों को उस जगह का ठीक मूल्य का अंदाज़ा लगाकर उस मूल्य पर देने का प्रयत्न सरकार की ओर से किया जाना चाहिये। सरकार की ओर से सौदेबाजी और बनियेपन की प्रवृत्ति दिखाना अवांछनीय होगा।

अभी मेरे एक भाई यह कह रहे थे कि पाकिस्तान में बहुत से ऐसे लोग हैं जो वहाँ से यहाँ पर आना चाहते हैं लेकिन वह आने नहीं पाते। मैं उनसे कहूँगा कि यह आज का विषय नहीं है। लेकिन उन्होंने पाकिस्तान और हिन्दुस्तान के मुक़ाबले की कुछ बात कही; तो क्या जिस प्रकार से यहाँ पर मुसलमान और दूसरी दूसरी अल्पसंख्यक जातियाँ रक्खी जा रही हैं, उसकी कोई समानता हम पाकिस्तान में देखने जायेंगे? समानता हमें पाकिस्तान से नहीं करनी है। पाकिस्तान तो दूसरे ही ढंग से बना है और दूसरे ही ढंग से सारी बातें सोचता है . . .

श्री नन्द लाल शर्मा : टंडन जी, मुझे क्षमा करें, उनको प्रतिकर की आवश्यकता होगी। अब जो यहाँ आये हैं उनको कहाँ से देंगे, उनको कुछ नहीं मिल रहा है, उनके क्लेम्स एंटरटेन नहीं हो रहे हैं।

श्री टंडन : ठीक है, जो बाद में आये हैं उनको प्रतिकर की आवश्यकता होगी, इसलिए उचित यह होगा कि उनके लिए मार्ग खुला रहे। मैंने पहले भी निवेदन किया था कि वह खुला रहे और मई से जो नई सम्पत्ति आने की मियाद को समाप्त करने का विचार है उसको समाप्त न किया जाय। यहाँ से जो लोग भाग भाग कर जाने वाले हैं, उनकी सम्पत्ति से ऐसा मालूम होता है प्रतिकर कोष अभी कुछ वृद्धि करेगा। यह मामला ऐसा नहीं है कि हम सोचें कि एक, दो वर्ष में हम समाप्त कर देंगे। मैंने तो पहले भी कहा था और आज भी मेरे हृदय में यह बात

क़ायम है कि इसके लिए अव भी सरकार कोई विशेष टैक्स लगा सकती है और टैक्स लगा कर हम इस समस्या को सफलतापूर्वक हल कर सकते हैं। गवर्नमेंट विस्थापितों के सहायतार्थ काम तो करती है लेकिन मुझको ऐसा लगता है कि कुछ जगहों पर सरकार ने अपनी आँखों में पट्टी भी वाँध ली कि उनकी मुसीवतें दिखाई न पड़ें। हम लोग मुसीवतें देख सकते थे लेकिन सरकारी आदमियों ने मुसीवतें नहीं देखीं। यह नहीं होना चाहिये। हमें घुस घुस कर पता लगाना चाहिये कि इन सव लोगों को ठीक स्थान मिल गया कि नहीं और सव लोग ठीक से अपने कारोबार में लग गये हैं कि नहीं। यह देखना हमारा कर्त्तव्य है।

संस्थाओं को प्रतिकर दिया जाय

एक वात प्रवर समिति की रिपोर्ट में है और इस विधेयक में भी है कि जो वड़े वड़े ट्रस्ट हैं उनको हम इस **कम्पेन्सेशन पूल** (प्रतिकर कोष) में से कुछ नहीं देंगे। मैं प्रवर समिति से इसमें सहमत नहीं हूँ। पंजाव में पाकिस्तान वनने से पूर्व वड़ी भारी भारी संस्थायें थीं जो वहाँ पर काम करती थीं। ऐसी संस्थाओं के करोड़ों रुपये छिन गये और वे संस्थायें यहाँ चली आई और अव आप उनके वारे में यह कहते हैं कि हम एक डवल नहीं देंगे······

सरदार हुक्म सिंह : जनरल रेवेन्यूज़ से दिया जायगा।

श्री टंडन : जनरल रेवेन्यूज़ कहने से क्या होता है? कहाँ से दिया जायगा, उसके लिए कोई व्यवस्था भी है? यह भी एक अजीव वात है कि अगर मेरी कोई व्यक्तिगत जायदाद गई है तो मुझको तो **कम्पेन्सेशन पूल** से रुपया मिल सकता है मगर एक संस्था जो करोड़ों रुपया छोड़ आई है उसको इस पूल में से कुछ नहीं मिलेगा, उसके लिए संस्था वाले खुशामद करते फिरें कि उनको भी कुछ दिया जाय, सरकार ने यह जो भेद किया है वह मेरी समझ में नहीं आया, इसमें क्या तर्क या **लाजिक** है। यदि मैं एक संस्था ले कर यहाँ आया और उस संस्था के लाखों रुपये वहाँ छिन गये, तो उसके लिए मुझे उस **कम्पेन्सेशन पूल** में से एक डवल नहीं मिलेगा लेकिन जो मेरी निजी जायदाद पीछे छूट गई है उसका पैसा इस **पूल** से मिलेगा। यह तर्क मेरी समझ में नहीं आता। मामूली तौर से होता यह है कि जो सार्वजनिक संस्थायें हैं उनकी पहले चिन्ता की जाती है। जो सार्वजनिक संस्थायें छोड़ कर आये हैं, चाहे वे सिक्ख हों, आर्यसमाजी हों या दूसरी संस्थायें हों उनकी चिन्ता हम न करें, यह मुझे न्यायोचित नहीं प्रतीत होता। अपनी रिपोर्ट में ऐसी संस्थाओं के लिए प्रवर समिति ने गवर्नमेंट से खाली यह सिफ़ारिश कर दी कि गवर्नमेंट अपने पास से उनको दे। उसके लिए आपने कोई कोष अथवा जायदाद नहीं वतलाई कि

उसमें से उनको सहायता दी जाय। आपने उनको केवल गवर्नमेंट के रहम पर छोड़ दिया कि तुम्हारा जिसको जी चाहे उसको दो। मैं यह मानता हूँ कि आपने तो इस भावना से कहा कि वह जो प्रतिकर कोष है वह न घटने पाये। स्पष्ट है कि वह काफ़ी नहीं है, लेकिन आपको कहना तो यह चाहिए था, जैसा मैं कहता हूँ, कि सरकार को उस कोष को अधिक बढ़ाना चाहिए। मैं कहता हूँ कि इस कोष को आप खूब बढ़ाइये, इतना बढ़ाइये कि उन ट्रस्ट्स को भी आप दे सकें। ढूंढ़ कर उन संस्थाओं का पता लगाइये जिन्होंने नुक़सान उठाया है और उनकी क्षति पूरी कीजिए। मैं सुन यह रहा हूँ कि सरकारी आदमियों ने यह तय किया है कि केवल कुछ शिक्षण का काम करने वाली संस्थाओं और सांस्कृतिक काम करने वाली संस्थाओं को मदद देंगे। मैं समझता हूँ इसमें भेद नीति होगी और यह नहीं किया जाना चाहिए। मेरा स्वयं एक बड़ी संस्था से संबन्ध है। मैं जानता हूँ कि क्या मुसीबत उस संस्था को हुई है। आज मैं यहां पर इसलिए खड़ा नहीं हुआ हूँ कि उस संस्था के लिए सरकार से सहायता की माँग करूँ, परन्तु यह मैं जानता हूँ कि लाखों रुपया उस संस्था का, मेरा अनुमान है कोई बीस लाख रुपये का, उस संस्था का नुक़सान हुआ होगा। अब एक डबल भी उसको इस पूल में से सहायता के रूप में न मिले, यह क्या ठीक है? वह संस्था सार्वजनिक क्षेत्र में काम करती है और वहाँ पर सार्वजनिक कार्य करती थी। उसकी जो आमदनी थी वह चली गई। हाँ, उसको थोड़ी भूमि मिली, लेकिन जो शहरी जायदाद थी उसका कुछ नहीं मिला। अब वह संस्था वाले दौड़ें, इधर-उधर खुशामद करें तो शायद कुछ और मिल जाय। ऐसी और संस्थायें होंगी जो इस तरह की कठिन परिस्थिति में रह रही होंगी। अब भला बताइये वे संस्थायें कहाँ और किसके पास दौड़ती फिरें? वर्षों आप उनको लटकाये रहें, यह क्या उचित है? संस्थाओं का भी अधिकार होता है, अगर एक व्यक्ति के अधिकार हो सकते है तो संस्थाओं के भी अधिकार हैं और मैं उनके अधिकार माँगता हूँ। इसके लिए आवश्यकता यह है कि जैसा मैंने पहले भी बताया आप इस पूल को अच्छी तरह बढ़ायें और अगर गवर्नमेंट इसको अपने रुपये से नहीं बढ़ा सकती तो इसके लिए अतिरिक्त टैक्स लगाइये और कोष को बढ़ाइये। मेरा कहना है कि सरकार इस कोष को बढ़ाना अपना कर्त्तव्य समझे, जिस प्रकार वह सेना के ऊपर खर्च करना अपना कर्त्तव्य समझती है, जिस प्रकार उद्योगों को बढ़ावा देना अपना कर्त्तव्य समझती है, जिस प्रकार बेकारी को दूर करना अपना कर्त्तव्य समझती है, उसी प्रकार विस्थापितों को सहारा देना और उनकी कठिनाइयों को कम करना उसका कर्त्तव्य है।

●

२४

आर्थिक रूप--नैतिकता--ग्रामोद्योग

२१ दिसम्बर १९५४ को देश की आर्थिक स्थिति के सम्बन्ध में प्रस्तुत प्रस्ताव पर बोलते हुए

बेकारी बढ़ी

श्री टंडन : सभापति जी ! इधर हमारे सामने गवर्नमेंट की ओर से पर्याप्त साहित्य इस बात का रखा गया है कि जो पंच-वर्षीय योजना उन्होंने चलाई, उसका क्या नतीजा वास्तविक कार्यरूप में हुआ। गवर्नमेंट के विचार में जो उन्नति हुई है उसका चित्र उन्होंने हमारे सामने खींचकर रखा है। परन्तु तो भी उनको यह स्वीकार करना पड़ा है कि हमारे देश में बेकारी घटी नहीं, बढ़ गई है। एक ओर उन्नति का चित्र है, हमने यह किया, वह किया, उसको दोहराने की आवश्यकता नहीं, कल से हम उसकी कथा सुन रहे हैं। जो साहित्य उन्होंने छापा है, जो अंक दिये हैं उनमें वह चित्र खिचा हुआ है। परन्तु इस एक वाक्य में कि बेकारी घटी नहीं परन्तु बढ़ गई है, वह कुल चित्र का चित्र एक कालिमा से पुत जाता है। क्या नतीजा इसका कि हमने विशाल भवन बनाये ?

आचार्य कृपालानी : उन महलात में भूखे भरे हैं।

श्री टंडन : विशाल नहरें खोदी हैं, परन्तु बेकारी बढ़ गई और बेकारी का अर्थ है भुखमरी। वह बढ़ गई है। यह एक बड़ा विचित्र दिग्दर्शन हमारे प्रयत्नों का है। मेरे विचार में तो गवर्नमेंट को गहरी दृष्टि से सोचने की आवश्यकता थी। क्या यह सब कुछ जो हम कर रहे हैं, यह धूम-धाम जिसकी सूचना पत्रों में हर रोज़ आती है, जिसके विज्ञापन आते हैं, पुस्तकों में जो हमारे सामने बराबर यह चित्र आते हैं--क्या इन सब का यह नतीजा हुआ है कि बेकारी बढ़ गई है, और यदि यह सच है तो यह सब कुछ हम किस मतलब के लिए कर रहे हैं। आखिर मतलब तो यही है कि हमारे समाज का दुख दूर हो।

बार-बार मेरे सामने शब्द आते हैं 'समाजवादी समाज'। समाजवादी शब्द तो समझ में आता है लेकिन 'समाजवादी समाज' यह समझ में नहीं आता है। समाज उचित बने यह तो मैं समझता हूँ, समाज नैतिक बने यह भी मैं समझता हूँ, समाज से दरिद्रता उठे यह भी समझ में आता है, मगर यह 'समाजवादी समाज' से मेरे मस्तिष्क में कोई विशेष चित्र नहीं खड़ा होता है।

श्री वोगावत : (अहमदनगर दक्षिण) : उसे सर्वोदयवाद कहिये, हमें कोई आपत्ति नहीं है।

रामराज्य

श्री टंडन : उस समाज की तस्वीर मैं अपने मस्तिष्क में रखता हूं जिसकी कल्पना गांधी जी ने एक शब्द रामराज्य में की थी। मैं तो उस शब्द से यह समझता था कि गांधी जी के सामने वह चित्र था जिसमें कोई बेतहाशा धनी न हो, कोई बहुत दीन न हो; जिसमें दरिद्रता न हो, मूर्खता न हो, पाप न हो, शराब न हो, व्यभिचार न हो। मेरे सामने तो यही राम-राज्य का चित्र था। गांधी जी के नाम से और रामराज्य के नाम से मुझे एक श्लोक याद आ गया है। रामचन्द्र जी ने अयोध्या की बात कहते हुए कहा था—

न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यः न मद्यपः !
नानाहुताग्निः नाविद्वान् न स्वैरी स्वैरिणी कुतः ॥

इसका अर्थ यह है कि मेरे राज्य में कोई स्तेन या चोर नहीं रहता, न सूम ही कोई रहता है जो अच्छे कामों में पैसा न दे, कोई मदिरा पान करने वाला नहीं रहता है, कोई ऐसा नहीं रहता है जिसके घर में बराबर अग्नि न जलती हो। लोग जानते हैं कि प्राचीन समय में बराबर २४ घंटे अग्नि रखना घर में अच्छा माना जाता था। कोई मूर्ख नहीं बसता है, कोई व्यभिचारी नहीं रहता है। और जब व्यभिचारी नहीं रहता तो व्यभिचारिणी कहाँ से आयेगी। न तो कोई व्यभिचारी है और न ही व्यभिचारिणी। इसी को गांधी जी रामराज्य कहा करते थे। इस श्लोक में कोई अधिक चित्रण नहीं है परन्तु यह स्पष्ट है कि दरिद्रता, मूर्खता और चोरों इत्यादि का न होना आवश्यक है। मैं इस सरकारी योजना की कथा सुन रहा हूँ, कभी वित्त मंत्री को कहते हुए और कभी दूसरे मंत्रियों को कहते हुए। लेकिन नैतिकता की कहीं भी चर्चा नहीं आई। 'समाजवादी समाज' का शब्द तो आया परन्तु उसका अर्थ आर्थिक है, उसका ध्यान आर्थिक है, उस समाज में कहीं नैतिकता भी बसती है इसकी कोई कहीं चर्चा नहीं करता। मेरा निवेदन है कि यह हम यूरोप के देशों की नक़ल कर रहे हैं। हमने कुछ शब्द विलायत के लोगों से सीख लिये हैं और उनमें से एक शब्द 'समाजवादी समाज' भी है। यह एक इस प्रकार का शब्द है जो हमारे भाई इधर उधर एक दूसरे के ऊपर फेंका करते हैं। इन शब्दों का तब तक कोई अर्थ नहीं जब तक कोई समाज सांस्कृतिक आधार पर न हो।

मेरे सामने अपने देश की जो तस्वीर है वह यह है कि हमारे यहाँ चारो

ओर समाज का आधार नैतिकता हो। वह व्यापार, उद्योग, वह रोटी और वह भूमि और महल किस काम के जहाँ मदिरा उछलती है, जहाँ अनैतिकता है, जहाँ व्यभिचार है ? मेरा निवेदन है कि हमारी गवर्नमेंट भावी समाज की तस्वीर सामने रखते समय केवल विदेशी शब्दों के जाल में न फँसे। एक शब्द को सामने रखे जो गांधी जी ने हमें बताया था। वह शब्द है रामराज्य। बहुत से भाई शायद यह कहें कि यह तो पौराणिक शब्द हो गया है परन्तु सच बात यह है कि इस शब्द के भीतर ऊँचे अच्छे आदर्श हैं। यह शब्द प्रगतिवादी है। मेरे सामने यह सवाल कि यह सरकारी उद्योग का कार्य है या इसे कोई एक व्यक्ति करता है इतने महत्व का नहीं है जितना यह कि हम समाज को किस आधार पर बना रहे हैं और साथ ही यह कि समाज के व्यवसाय में कोई बेकार तो नहीं रह जाता है।

रास्ता सही नहीं

गवर्नमेंट के साहित्य में जो यह एक वाक्य है कि बेकारी घटी नहीं बल्कि बढ़ी है, उसने मेरे हृदय में उन सब कामों के बारे में जो हो रहे हैं एक निराशा सी उत्पन्न कर दी है। मेरा निवेदन है कि अब भी आप गहरी दृष्टि से यह समझिये कि जिस रास्ते पर हम चल रहे हैं वह सही रास्ता नहीं है। अरबों रुपया हमने खर्च कर दिया है। परन्तु सफलता अभी तक हम प्राप्त नहीं कर पाये हैं। हमें तुरन्त ही इस रास्ते को बदलने की आवश्यकता है। ठीक रास्ता हम इन बड़ी बड़ी योजनाओं को लेकर नहीं तै कर सकेंगे। हमें देहातों में सीधे दीन के पास जाना चाहिए और उसकी बेकारी दूर करनी चाहिये। आज गवर्नमेंट का यह कर्त्तव्य है, तुरन्त कर्त्तव्य है, दस बरस बाद नहीं। यह बेकारी हमारे सामने और हमारे शासन के सामने एक बड़ा प्रश्न धर रही है। उसका एक ही जवाब है, और वह यह कि हम जिम्मेदारी लेते हैं कि हम देश में एक आदमी को भी बेकार नहीं रहने देंगे। इसकी आवश्यकता है। कोई आवे, कशे बाशद, और कहे कि हम काम करेंगे तो हम कहें कि लो हम काम देते हैं। मेरा निवेदन है कि यह हमारे शासन को करना चाहिए। यह जो हमारा रुपया चारो ओर लग रहा है यह उचित प्रकार से नहीं लग रहा है। अगर इस रुपये को देहातों में बेकारी को सीधे हटाने में लगाया जाय तो बेकारी हटना सम्भव है, असम्भव नहीं है।

प्राइवेट और पब्लिक सेक्टरों की बात हुई। मेरा निवेदन है कि यह बड़े बड़े व्यवसाय जहाँ मशीनों से काम होते हैं, सम्भव है हम उनको आज बिल्कुल रोक न सकें, किन्तु उनकी संख्या और उनका क्षेत्र जहाँ तक सीमित हो, वहाँ तक हम देश को सुख पहुँचा सकेंगे।

उद्योगपति की अनैतिकता

मैंने निवेदन किया कि समाज के जीवन का आधार नैतिकता हो। मेरा कुछ थोड़ा सा अनुभव है कि यह मिलें और यह बड़े बड़े कारखाने नैतिकता की ओर जाने वाले नहीं होते, बल्कि उल्टे इनका प्रभाव दूसरी ओर होता है। मुझको एक बड़ा पुराना अनुभव इस समय याद आता है। बहुत पुरानी बात है। मैं युवक था। वकालत पास कर चुका था। १९०६ की बात है। हमारे पूज्य प्रातःस्मरणीय पंडित मदन मोहन मालवीय जी के मन में यह बात आई कि इलाहाबाद में कपड़े की एक मिल खोली जाय। उन्होंने मुझसे कहा कि तुम इसका थोड़ा पता लगाओ। मुझको उन्होंने कई परिचय-पत्र दिये और बाहर भेजा। मैं नागपुर की मिल देखने गया और फिर बम्बई अध्ययन करने के लिए गया। मैं नागपुर कई दिन रहा। वहाँ से बम्बई गया और मिलों का भ्रमण किया। आज भी मेरे दिमाग़ पर एक अनुभव जमा हुआ है। मैं एक मिल में गया जिसके मालिक कुछ धर्मात्मा कहे जाते थे। प्रसिद्ध था कि वह धर्मप्रिय पुरुष हैं। इस समय नाम तो लेना नहीं है। उनकी मिल में मैं गया। मैं घूमता फिरा। मैं वहाँ पहुँचा जहाँ बहुत सी स्त्रियाँ छोटे छोटे काठ के टुकड़ों पर सूत चढ़ा कर लाती थीं। उनको वह एक टब में फेंकती जाती थीं। वह कत्तिनें थीं, सूत कातने वाली। वह सूत एक तराज़ू पर रखा जाता था, वह तोला जाता था और तोल कर उन कत्तिनों से कहा जाता था कि तुम्हारा सूत इतना हुआ। मैंने उस तराज़ू को जिसको अंग्रेज़ी में **स्प्रिंग बैलेंस** कहते हैं देखा। मैं उसके पास खड़ा हो गया और मैंने तोलने वाले से पूछा कि तुम किस तरह तोलते हो। उसने बताया कि हम ऐसे तोलते हैं, इस निशान पर काँटा आता है तो इतना होता है, इस निशान पर आता है तो इतना होता है। मैं खड़ा देखता रहा। दो तीन स्त्रियाँ आईं, उन्होंने सूत डाला, और उसने तोला और आवाज़ दी कि इतना हुआ। मुझको कुछ भ्रम हुआ कि कहीं मैं कुछ ग़लती तो नहीं समझा। मैंने उससे पूछा कि तुमने तो हमको ऐसा समझाया था कि यहाँ पर काँटा आता है तो इतनी तोल होती है, लेकिन जो तुमने आवाज़ लगाई वह कम की थी। कहीं ऐसा तो नहीं है कि हम ग़लत समझे हों। वह मुस्कराया और उसने कहा कि हम अभी बताते हैं, और वह एक आध आवाज़ और देकर मुझे अलग ले गया। उसने कहा कि आपने ठीक समझा है, लेकिन यह हमारे मालिकों का हुक्म है कि जब तोलो तो हर तोल में कुछ कम बताओ, नहीं तो इनकी मज़दूरी इतनी बढ़ जायगी कि उससे हमको घाटा होगा। यह सुन कर मैं दंग रह गया। मैं आशा नहीं करता था कि ऐसी मिल में इस तरह से मिल मालिकों की तरफ़ से खुली धोखेबाज़ी और चोरी होती होगी। यह तस्वीर मेरे दिमाग़ से कभी

हटी नहीं। मुझको बड़ा खेद हुआ कि एक ऐसे पुरुष के बारे में जिनको मैंने धर्मात्मा समझ रखा था मुझको अपना विचार पलटना पड़ा। उनके यहाँ युवकों को इस प्रकार की आज्ञाएँ दी जाती हैं कि तुम हर तोल में धोखा करो। यहाँ सरकार सेर और छटांक के स्टैंडर्ड बनाती है कि कोई धोखा न करे। इण्डियन पीनल कोड में एक बार भी धोखा देने के लिए दण्ड है, और वहाँ यह धोखा एक योजना की तरह चल रहा था! मैं जो कह रहा हूँ वह अपने अनुभव की और आँख की देखी बात कह रहा हूँ। मैं हर एक मिल मालिक के ऊपर कोई बौछार नहीं करता। लेकिन उसके बाद मेरे मन पर ऐसी छाप पड़ गई कि यह मिल का व्यवसाय धर्म से अलग होकर ही प्रायः चलता है, अर्थात् कोई 'धर्मात्मा'—'धर्मात्मा' शब्द तो बहुत बड़ा है, परन्तु—कोई सचमुच अपने को जो सम्हाल कर रखना चाहता है, सचाई पर जिसका जीवन स्थिर है, उसके लिए यह राह चलनी कठिन है। तब ऐसी योजना और ऐसे **सिस्टम** को, चाहे वह प्राइवेट हो या पब्लिक, जो इस प्रकार से खुली रीति से अनैतिकता की ओर ले जाने वाला है, मैं कहता हूँ कि आग लगा दो। यह **सिस्टम** हमारे देश में चलने के योग्य नहीं है। जितनी जल्दी हो सके इसको हटाना चाहिये। यदि हम मालिक को सत्य के रास्ते पर रख सकें तो मज़दूर भी उस रास्ते पर आयेंगे। जहाँ मालिक के दिल में, जो काम लेने वाले हैं उनके दिल में, आरम्भ से ही अनैतिकता हो तो वहाँ मज़दूर क्या करेंगे? मेरे सामने तसवीर केवल रोटी और पैसे की नहीं है। मेरे सामने तसवीर नैतिक जीवन की है।

शासन ग्रामोन्मुखी हो

यह नैतिक जीवन यदि हम देहातियों को, मज़दूरों को उनके घर पर रखें, गाँव में रखें तो उनको अधिक दे सकेंगे इसकी अपेक्षा कि हम उनको मिलों में लाकर दो दो और चार चार हज़ार की भीड़ में रख कर उनसे काम लें। मेरे ऊपर यह असर है कि यह नैतिकता से दूर हटाने वाली चीज़ है। इसलिए मैं इस बात का पक्षपाती हूँ और मेरा यह निवेदन है कि गवर्नमेंट गाँवों की तरफ़ जाय और यह यत्न करे कि मज़दूर को उसके घर पर ही कुछ व्यवसाय मिले जो वह कर सकता हो। जो काम वह आज भी जानता है वह उसे करे और उस काम के किए हुए उत्पादन को हम जनता के व्यवहार में लायें।

(सभापति से) अब कै मिनट मैं समझूँ कि आप मुझे और दे रहे हैं?

सभापति महोदय : माननीय सदस्य पहिले ही २० मिनट ले चुके हैं। यदि वह चाहें तो पाँच मिनट और ले सकते हैं।

श्री टंडन : बहुत धन्यवाद। मेरे सामने मुख्य प्रश्न यह है कि यहाँ से

बेकारी दूर हो और वह बेकारी दूर हो नैतिकता के साथ। वेश्या बना कर किसी को रोटी नहीं देनी है, चोर बना कर, झूठा बना कर रोटी नहीं देनी है। हमारा क्रम यह चाहिये कि जीवन शुद्ध हो। वेश्या का शब्द मेरे मुँह से निकला। यह बात याद आ गई कि हमारे देश में तीस लाख से अधिक वेश्यायें हैं। ये क्यों हैं और इस तरह अनैतिकता का जीवन क्यों बिता रही हैं? यह आर्थिक प्रश्न है, यह अनैतिक इसलिये हुई हैं कि उनकी आर्थिक सम्हाल नहीं हुई। मैं चाहता हूँ कि हमारी गवर्नमेंट इस प्रश्न को देखे कि कोई औरत और कोई मर्द यदि कहीं पर काम माँगे तो उसके लिये वहाँ काम मौजूद हो? भले ही इसलिए चाहे हमें अन्य जगहों से रुपयों का बन्दोबस्त करना पड़े, हमें उसको तुरन्त जुटा कर यह यत्न करना चाहिये कि जिन कामों में हम हर एक को लगा सकें, वही काम हमें मुख्यकर उठाना चाहिये।

मैंने कुछ भाइयों से सुना, जो चीन से आये थे और हाल ही में हमारे प्रधान मंत्री जी भी चीन गये थे, उन्होंने देखा, मैं तो गया नहीं, लेकिन कुछ वहाँ का हाल सुना और मुझे यह सुन कर बड़ी प्रसन्नता हुई कि वहाँ पर उन्होंने वेश्याओं का रोज़गार उड़ा दिया है, वहाँ पर अब वेश्यायें नहीं हैं। मैंने सुना है कि वहाँ पर भिखमंगे नहीं हैं। इससे जान पड़ता है कि उन्होंने अपनी आर्थिक योजना ऐसी बनायी है जिसमें हर एक को वह काम देने को तैयार हैं......

डा० सुरेशचन्द्र (औरंगाबाद) : चीन में बेरोज़गारी ज़्यादा है।

श्री टंडन : मैं ज़्यादा तो जानता नहीं। मैंने सुना है कि वहाँ पर वेश्यायें नहीं हैं और उन्होंने वेश्याओं का रोज़गार अपने यहाँ से हटा दिया है। यदि यह सही है तो ज़ाहिर है कि उन्होंने उनके लिये कोई और रोज़गार दिया होगा। मैं तो वहाँ गया नहीं, जो मैंने सुना वही आपको बतला रहा हूँ। मेरे एक भाई ने अभी कहा कि चीन में बेरोज़गारी है। अगर वहाँ पर बेरोज़गारी है तो उनको उसे हल करना पड़ेगा।

ग्रामोत्पादित वस्तुओं का उपयोग

मैं अपने देश की बात कह रहा हूँ कि हमारे देश में बेरोज़गारी को दूर करने का रास्ता यह है कि हम गाँव में जाकर इस बात की जिम्मेवारी लें कि जो काम करने आयेगा उसको हम वहीं पर काम देंगे, मगर ऐसा तभी हो सकेगा जब हम यह तय कर लें, और यह सिद्धान्त ज़रा समझने की चीज़ है, कि हम उसी चीज का व्यवहार करेंगे जो हमारे देश में बनती है। जो चीज़ें हमारे देश में बनती हैं हम, जहाँ तक सम्भव होगा, अपनी आवश्यकतायें उन्हीं में सीमित रखेंगे और हमारी आवश्यकतायें उन्हीं वस्तुओं की होंगी जो

हमारे देश में बनती हैं। यह काम थोड़ी तपस्या का है और इस चीज़ को ऊँचे स्तर पर जो लोग हैं उनको चलाना पड़ेगा। मैं यह कोई नई बात आपसे नहीं कहता हूँ। मुझे याद है कि इंगलैंड में जब **लेबर मिनिस्ट्री** थी तब वहाँ के एक मंत्री ने भी इसी प्रकार कहा था। कुछ **अनएम्प्लायमेंट** बेकारी वहाँ पर थी, तब उन्होंने कहा था कि इसको बन्द करने का एक ही रास्ता है कि हम अपने देश में सब सामान बनायें जिनकी कि हमें ज़रूरत है और बाहर से हम सामान न मँगायें। आज हम अपने यहाँ देखते हैं कि कितना धड़ाधड़ सामान विलायत से चला आता है, मोटर गाड़ी से लेकर छोटी से छोटी चीज़ तक, यहाँ तक कि चेहरे पर लगाने का सफ़ेद पाउडर तक भी विलायत से दौड़ा चला आता है। मेरा सुझाव है कि हम इस दिशा में सख़्ती करें और इस बात को देखें कि जो चीज़ हमें देहात में मिलती है उसका व्यवहार बढ़ायें। जैसे देहात में कुम्हारी का काम होता है तो हम इस बात का यत्न करें कि कुम्हार को वहाँ पर काम मिले, हम उससे काम लेने के मार्ग निकालें। जब हम ऐसा करेंगे तभी हमारा रास्ता स्पष्ट होगा।

खादी के ऊपर गवर्नमेंट ने कुछ पहले की अपेक्षा ज़्यादा खर्च किया है। खादी के संबंध में उन्होंने अनुमान लगाया कि इस वर्ष दो करोड़ रुपये की लागत की बनाई जायगी। पहले कम बनती थी। आगे का अनुमान है कि चार करोड़ रुपये से भी ज़्यादा की बनेगी और इस तरह से बढ़ती जायगी। यह मेरे लिए एक सुखमय संदेश है। यदि खादी के ऊपर बल दिया जाय और अन्य ग्राम उद्योगों के ऊपर बल दिया जाय तो मेरा अपना विश्वास है कि यह बेकारी की समस्या बहुत कुछ दूर हो सकती है और साथ ही साथ हमारे जीवन में कुछ अधिक नैतिकता आ सकेगी और जीवन अधिक सुखमय हो सकेगा।

२५

मुख्य आवश्यकताएं

१९ मार्च १९५५ को भारतीय लोकसभा
में वित्त विधेयक पर बोलते हुए

मंत्रिमण्डलवंचित मंच

सभापति जी ! मैंने बहुत देर में विचार किया कि कुछ शब्द इस विवाद में मैं भी निवेदन करूँ। मैंने एक बार पहले भी इधर की मंत्रियों से वंचित बेंचों की ओर ध्यान दिलाया था। मंत्रिमंडल वंचित बेंचें शोभनीय नहीं लगती हैं।

श्री सी० डी० देशमुख : वंचित मंत्रिमंच।

श्री टंडन : यह हमारी संसद् का दुर्भाग्य है कि मंत्रिमंडल यह आवश्यक नहीं समझता कि उसके विषय में जो बातें यहाँ कही जायँ उनको वह सुने। केवल एक वित्त मंत्री जी उपस्थित हैं। यह सच है कि वे शासन के एक मुख्य विभाग अर्थात् वित्त का संचालन करते हैं। परन्तु यहाँ सदस्यों को तो भिन्न भिन्न विभागों के विषय में भी कुछ कहना होता है। मैंने पिछले वजट सत्र में भी कहा था कि जब सब विषयों पर बहस होती है तब सब ही मंत्री उपस्थित हों, क्योंकि यह तो सीमित नहीं है कि मैं किस पर बोलूँगा और मेरे मित्र किस पर बोलेंगे, मुझे छूट है कि मैं किसी भी बात पर बोल सकूँ। परन्तु यहाँ जब भिन्न भिन्न विभागों के मंत्री नहीं हैं तो स्वभावतः वह उन सब बातों को नहीं सुनेंगे यद्यपि सम्भव है कि कभी उनके कान में कुछ छोटी मोटी बातें पहुँच जायँ। अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार के सम्बन्ध में पंचशील की चर्चा सुनी है। बड़ा सुन्दर शब्द है। किसी किसी ने उसको पंचशिला बना दिया है। वह भी एक अर्थ में सही है क्योंकि पंचशील ही पंचशिला है। पंचशील की बात याद कर मैं अपने मंत्रियों से कहना चाहता हूँ कि अपने व्यवहार के लिए एक शील तो रखें कि वे यहाँ उपस्थित रहें। एक शील यह चाहता है कि जिस समय संसद् में सदस्यगण अपने विचार प्रकट करें उस समय मंत्रिगण यहाँ पर उपस्थित रहें। मैं तो चाहूँगा कि उनके साधारण व्यवहार का यह एक अंग हो।

वजट हिन्दी और नागरी अंकों में

वित्त मंत्री जी ने माँगों के सम्बन्ध में तीन बड़े बड़े पोथे दे दिये हैं। इस थोड़े से समय में मैं उन पर क्या कह सकूँगा। कुछ साधारण बातें

निवेदन करता हूँ। पहले मैं वित्त मंत्री को वधाई इस वात पर देता हूँ कि उन्होंने इस वर्ष अपने इन पोथों के कुछ अंश हिन्दी में भी प्रकाशित किए हैं, उनका भाषण तथा कुछ और दो अन्य पत्र हिन्दी में आये हैं। यह शुभ प्रारम्भ है। मैं आशा करता हूँ कि अगले वर्ष सम्पूर्ण वजट हिन्दी में—नागरी अक्षरों में और नागरी अंकों में—उपस्थित किया जायगा।

श्री सी० डी० देशमुख : कुछ नागरी अंक हैं।

श्री टंडन : मैंने कहा कि मैं आशा करता हूँ कि अगले वर्ष सम्पूर्ण वजट हिन्दी भाषा और नागरी अंकों में उपस्थित किया जायगा।

श्री देशमुख : मेरे कहने का मतलव यह था कि जो रोमन संख्या थी उसकी जगह हमने नागरी अंकों का उपयोग किया है और दूसरे अंकों के लिए अंग्रेज़ी अंकों का उपयोग किया है।

श्री टंडन : मैंने नागरी अंकों की इसलिए चर्चा की क्योंकि संविधान में अंग्रेज़ी अंकों के लिए कहा गया है। अव भी हमारे विधान में यह कलंक उपस्थित है कि जो अंक हम प्रयुक्त करें वे अंग्रेज़ी अंक हों। ये अंग्रेज़ी अंक हमारे देश के लिए कलंक हैं। अपने में वे अच्छे हैं। हम अंग्रेज़ी भाषा पढ़ें, मैं उसका पक्षपाती हूँ, अंग्रेज़ी भाषा के पढ़ने में मैंने अपने जीवन का वहुत वड़ा भाग लगाया है, जीवन का वहुत वड़ा अंश अंग्रेज़ी के ऊँचे साहित्य का अध्ययन करने में मैंने लगाया है, मेरा उससे कोई वैर नहीं हो सकता परन्तु हमारे देश में हमसे यह कहा जाय कि नागरी अक्षरों का तुम प्रयोग करो परन्तु नागरी अक्षरों के प्रयोग के साथ तुम अंग्रेज़ी अंकों को मिलाओ, तो मेरा निवेदन है कि वह अनुचित वात है और उसको किसी न किसी समय हमें हटाना है। मेरा कहना वित्त मंत्री से यही है कि उनको अधिकार है, आज भी जो हमारा संविधान है उसके द्वारा सरकार को अधिकार है, कि जिन अंकों का चाहे वह उपयोग कर सकती है। इसी कारण से मैंने यह कहने का साहस किया कि अगले वर्ष वे पूरा वजट विवरण हिन्दी अक्षरों में और नागरी अंकों में प्रकाशित करायेंगे।

पुस्तकों के कागज पर कर

उन्होंने इस वर्ष कई प्रकार के कर लगाये हैं। मैं व्यौरे में नहीं जाना चाहता, केवल एक वात कहना चाहता हूँ कि यह जो कागज पर उन्होंने कर लगाया है, यह अगर न लगाया होता तो अच्छा था, क्योंकि उसमें उन्होंने अखवारों को तो छोड़ दिया, परन्तु पुस्तकों के ऊपर कर लगाया है। वास्तव में अखवार वंद हो जायं तो देश की वहुत हानि नहीं है, परन्तु अच्छी पुस्तकों का निकलना रुक जाय, जनता के लाभ के लिए यह उचित

नहीं है। मैं चाहूँगा कि जहाँ तक सम्भव हो पुस्तकों के, अच्छे साहित्य के, प्रचार की ओर उनका ध्यान जाय।

डाक-टिकट में वढ़ौती

दूसरी वात मुझे यह कहनी है कि डाक के टिकटों का जो हिसाव रहा है, उसमें पिछले दो वर्षों से जो वढ़ौती की गई है उसका परिणाम यह हुआ है कि सस्ता साहित्य जाना वन्द हो गया। मेरे पास कल या परसों गोरखपुर के कल्याण कार्यालय से दो पुस्तकें आई हैं, भगवद्गीता हिन्दी में और अंग्रेजी में। उन पुस्तकों का दाम जहाँ तक मुझे याद पड़ता है साढ़े छः आने हैं, परन्तु उनके ऊपर टिकट ग्यारह आने के लगे हैं। यह मैं जानता हूँ कि वित्त मन्त्री के हाथ में डाक विभाग नहीं है, परन्तु उनके द्वारा मैं उस विभाग से निवेदन करना चाहता हूँ कि यह तो वहुत अंधेर है।

श्री सी० डी० देशमुख : हमारा सामुदायिक उत्तरदायित्व है।

श्री टंडन : साढ़े छः आने की भगवद्गीता उसको अगर मैं यहाँ मँगाता हूँ तो ग्यारह आने के टिकट उस पर लगाने पड़ेंगे और वी० पी० से अगर आये तो तीन आने और पड़ेंगे और मुझको १४ आने देने पड़ेंगे। दो छोटी छोटी और इतने कम दाम वाली पुस्तकों के मँगाने के लिये इतना डाक महसूल, यह कैसा शासन का क्रम है? मैं इसकी ओर मंत्री महोदय का ध्यान दिलाना चाहता हूँ। कल्याण कार्यालय ने एक पत्र भी भेजा है जिसमें उन्होंने वतलाया है कि डाक खर्च में वढ़ौती होने के कारण परिणाम यह हुआ है कि हमारी पुस्तकें कम निकलती हैं और इन पुस्तकों पर गवर्नमेंट को जितना हम पहले स्टाम्प के रूप में दिया करते थे, उससे कम मिला, क्योंकि हमारी पुस्तकों का प्रचलन कम हुआ। इसलिए मैं निवेदन करना चाहता हूँ कि अगर सम्भव हो तो इस पर आप विचार करें।

ग्राम शोषित हैं—ग्रामों की गृह-योजना

मुख्य वात जो मेरे मन में आपके शासन के सम्वन्ध में है वह यह है कि अव भी आपका ध्यान सर्वोदय अर्थात् सवका लाभ हो, जन समुदाय उन्नति करे, उस पर वहुत कम गया है और सरकार का ध्यान अंग्रेजी शासन-काल की तरह अव भी शहरों की तरफ़ है और गाँव की तरफ़ वहुत कम है। आपकी सिंचाई योजनायें अवश्य कुछ जल पहुँचायेंगी, परन्तु आज भी मुख्यतः जितनी आपकी योजनायें हैं उनमें शहरी उन्नति का क्रम अधिक है। देहातों का लाभ अपेक्षाकृत वहुत ही थोड़ा है। मैंने पिछले वर्ष ध्यान दिलाया था, इस वात पर कि आवश्यकता यह है कि देहातों में नवमार्ग से ग्रामनिर्माण किया जाय। मैंने उसका नाम वाटिकागृह-योजना दिया था जिसमें हर गृह के साथ एक छोटी वाटिका हो, हिन्दुस्तान के ग्रामों में कोई ऐसा घर

न हो जिसके साथ थोड़ी सी वाटिका न हो। मेरे सामने यह रूपरेखा है कि देश के ग्रामों का कोई घर ऐसा न हो जिसके साथ कम से कम आध एकड़ भूमि न हो। आज के ग्राम दरिद्र हैं, घर देखने के और रहने के योग्य नहीं हैं, गंदे और बीमारियों के स्थान हैं। बीमारी फैलती है तो आप बांटते हैं औषधियाँ। इनको आप न बांटें। यह औषधियाँ आपकी व्यर्थ हैं, आप इन पर करोड़ों रुपये व्यर्थ फूंकते हैं। वह रुपया आप लगाइये ग्रामों के सुधार में। चाहे छोटे घर हों लेकिन उनको आप आध एकड़ भूमि आसानी से दे सकते हैं, इसमें कोई कठिनाई नहीं है। पिछले वर्ष जब मैं बोल रहा था तो वित्त मंत्री जी ने कहा था कि हाँ, मैं यह योजना योजनाकारों के पास अर्थात् **प्लैनिंग कमीशन** के पास पहुँचा दूंगा। मैं जानता हूँ कि उन्होंने पहुँचा भी दिया। मैं यह बात इसलिए जानता हूँ कि वहाँ से एक आदमी मुझसे पूछने आया था कि आपकी क्या योजना है। मैंने उससे निवेदन कर दिया था, परन्तु आज आपके बजट की किसी बात से किसी रूप में यह नहीं जान पड़ा कि आपने कहीं एक गाँव भी उस योजना के अनुसार बनवाया हो, या आपने इस देश में यह यत्न किया हो कि हम एक गाँव ऐसा बनावें जिसमें बीस, पचीस, सौ या दो सौ कुटुम्बों को आध एकड़ भूमि वाटिका के लिए दी जाय। आध एकड़ भूमि कोई बड़ी बात नहीं है। हमारे देश में लगभग सात करोड़ परिवार हैं।

एक माननीय सदस्य : शहर के लोगों को निकालकर।

श्री टंडन : हर परिवार के लिये अगर आध एकड़ भूमि दें तो साढ़े तीन करोड़ एकड़ भूमि हुई। इस प्रकार से साढ़े तीन करोड़ एकड़ भूमि देना बहुत आसान है। फिर यह तो जा कर अंत में पड़ेगी, इस समय आरम्भ करने के लिए थोड़ी भूमि में यह काम किया जा सकता है। मेरा निवेदन है कि अगर इस प्रकार के ग्राम बनें तो दवाओं की आवश्यकता नहीं होगी। छूत की बीमारी का नाम निशान नहीं रहेगा। वह आप से आप भाग जायगी। एक एक घर अलग अलग बनें। आज के ग्राम-घर तो एक दूसरे से सटे हुए हैं। एक घर की दीवार दूसरे घर की दीवार से मिली हुई रहती है। यहाँ हम लोग किस ठाट-बाट से रहते हैं! मुझे तो ऐसा लगता है कि जितनी हमारी योजनायें हैं वे हमारे ग्रामों की ओर नहीं जा रही हैं, वे शहरों की ओर भाग रही हैं। शहरों ने अंग्रेजी राज्य में ग्रामों का शोषण किया। शोषण शहरों के लाभ के लिये किया गया और ग्राम शोषित रहे। आज आवश्यकता यह है कि आप ग्रामों का शोषण बन्द करें, आप उनके लिये पैसा लगावें। आज जो धनी मानी लोग हैं आप उनसे पैसा लें। अगर आप देश भर का भला चाहते हैं तो आप उसका नाम सर्वोदय दें या **सोशलिज्म** दें, लेकिन आवश्यकता यह है कि जितना पैसा है,

उस पैसे में से, उस सम्पत्ति में से एक अंश आप निकाल कर ग्रामों को दें। उनके मकान वनाने में सहायता दें या उधार दें। उनमें से वहुत से आदमी अपने परिश्रम से अपने मकान वनायेंगे। भले ही वह कच्चे मकान वनायें। जहाँ आवश्यकता हो कूप आदि तथा मकान वनाने के लिए आप सहायता दें। मै यह समझता हूँ कि यह ऐसी योजना है जिसकी आज आवश्यकता है।

हिन्दी आयोग

अव में कुछ शव्द हिन्दी के वारे में कहता हूँ। संविधान ने यह कहा है कि संविधान के प्रारम्भ से जव पाँच वर्प पूरे हो जायँ, उस समय तुरन्त एक हिन्दी कमीशन वनना चाहिए। मैं कुछ समझ नहीं पाया कि वह अव तक क्यों नहीं वना। संविधान में अंग्रेज़ी के जो शव्द हैं वह यह हैं—

"The President shall, at the expiration of five years from the commencement of this Constitution."

मैं वीच के शव्दों को छोड़ता हूँ

"by order constitute a Commission which, shall consist of a Chairman, इत्यादि इत्यादि...

अंग्रेज़ी भापा के शव्दों के स्पष्ट माने हैं। 'ऐट' और 'आफ़्टर' में वहुत अंतर है। मुझे मालूम है कि आप आयोग वनायेंगे, वह वनेगा अवश्य, लेकिन मुझको आश्चर्य यह लगता है कि आपने इतना समय क्यों लिया। मुझे ऐसा जान पड़ता है कि आपकी प्रक्रिया ठीक नहीं है और आपने संविधान की अवहेलना की है। मैं तो यह आशा करता था कि जिस दिन २६ जनवरी होगी, उसके दो एक दिन पहले से ही गज़ट में समाचार आयेगा। संविधान के अनुसार २६ जनवरी को इसकी घोषणा होनी चाहिए थी कि कमीशन वन गया। लेकिन प्रेज़िडेण्ट ने अर्थात् गवर्नमेंट ने इसकी घोपणा नहीं की। इसमें मुझको स्पप्ट संविधान की अवहेलना लगती है। यह अवश्य है कि आप इस काम को करेंगे लेकिन, जितनी जल्दी हो सके, आपको इस त्रुटि की पूर्ति करनी चाहिए।

शिक्षा विभाग

हिन्दी के काम के विपय में मैं शिक्षा विभाग की कुछ रिपोर्ट आदि देख रहा था। मैंने आशा की थी कि मुझको शिक्षा विभाग की रिपोर्ट में कुछ अधिक जानकारी मिलेगी। किसी मसखरे ने कहा है कि शव्दों की रचना इसलिए की गई है कि वह विचारों को छिपा ले। यह रिपोर्ट एक उदाहरण है इस कथन का। जो रिपोर्ट उनकी ओर से निकली है उसमें कोई विशेप पता नहीं मिलता। उसमें एक वात कही गयी है कि हमने एक लाख

और कुछ रुपया काशी नागरी प्रचारिणी सभा को हिन्दी कोश के लिए दिया। पारसाल मैंने इस विषय में बहुत व्यौरे के साथ कहा था कि उन्होंने जो अनुदान अर्थात् **ग्रांट्स** दिये हैं वह क्या समझकर दिये हैं। आज मैं जानना चाहता हूँ कि मेरी बात सही निकली या शिक्षा मंत्री की बात सही निकली। मैं कहता हूँ कि शिक्षा मंत्री की बात बिल्कुल ग़लत निकली, उस समय भी उन्होंने ग़लत बयानी की थी और इसका जो प्रमाण है उसको उन्होंने छिपा दिया। प्रमाण यह है कि उन्होंने ६० हज़ार रुपया **'हिन्दुस्तानी कल्चर सोसायटी'** को एक कोश के लिए दिया था। मैं आपको स्मरण दिलाता हूँ, शायद आपको याद न रहा हो कि मैंने कहा था कि यह **'हिन्दुस्तानी कल्चर सोसायटी'** इस योग्य नहीं है कि वह कोश बना दे और आपने अपना रुपया मुफ़्त फेंका है। यह काम देना चाहिये था नागरी प्रचारिणी सभा को या हिन्दी साहित्य सम्मेलन को। मैंने कहा था कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन इसी तरह का कोश बना रहा है। आपको याद होगा कि **'हिन्दुस्तानी कल्चर सोसायटी'** के कुछ शब्दों के उदाहरण भी मैंने दिये थे। वह शब्द यहाँ के विवाद में आये थे और वित्त मंत्री जी की वाणी में भी आये थे। **'कैबिनेट'** का अनुवाद 'खोली' किया गया था और **'सेंटर'** का अनुवाद 'विचबिन्दी' किया गया था। उस पुस्तिका में से मैंने बहुत से शब्दों के उदाहरण दिये थे। मैंने कहा था कि यह संस्था इस योग्य नहीं है कि ठीक कोश बनाये। उस संस्था को रुपये दिये गये, और उसने कोश का नमूना बना कर दिया। यह मैं अन्दर की बात बता रहा हूँ, रिपोर्ट की बात नहीं क्योंकि वह बात तो छिपाई गई। गवर्नमेंट ने इस सोसायटी के कोश का नमूना देखने के लिए एक छोटी सी कमेटी बनाई। उस कमेटी ने यह रिपोर्ट दी है कि जो काम हुआ है वह नितान्त असन्तोषजनक **'एनटायरली अनसैटिसफैक्टरी'** है। यह बात पबलिक के सामने नहीं आई है लेकिन मैं जानता हूँ कि उस रिपोर्ट में यह बात कही गई।

श्री अलगूराय शास्त्री : (जिला आजमगढ़ पूर्व व जिला बलिया पश्चिम) : आज आ गई।

श्री टंडन : मैं चाहता था कि अगर आज शिक्षा मंत्री यहाँ होते तो मैं उनसे यह बात पूछता। उस कमेटी में अच्छे योग्य आदमी थे। सरकार के बाहर के भी लोग थे। अगर आपकी गवर्नमेंट के ही आदमी रहते तो शायद ऐसा कहने की हिम्मत उनको न पड़ती। परन्तु उसमें डा० सुनीति कुमार चटर्जी थे, उनके उस कमेटी की रिपोर्ट पर हस्ताक्षर हैं। उस पर बनारस युनिवर्सिटी के हिन्दी के जो प्रोफ़ेसर हैं उनके भी हस्ताक्षर हैं।

इस काम के लिए सोसायटी को तीस हज़ार रुपया दे दिया गया, और भी ३० हज़ार बाद में दिया जाने को था। इस तरह से वह कोश बनाया जा रहा है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने बिना आपकी सहायता के एक

कोश बनाया। उनके २४ पन्ने इस कमेटी के सामने आये। इसी रिपोर्ट में कहा गया है कि यह उससे कहीं अच्छा है और मानने के योग्य है और सम्मेलन का प्रयत्न आदरणीय है। लेकिन हिन्दी साहित्य सम्मेलन को कोश बनाने के लिए एक पैसा अभी तक नहीं दिया गया और सोसायटी को बहुत सा पैसा दिया गया। यह एक उदाहरण है कि किस प्रकार से हिन्दी का काम होता है और किस प्रकार से पैसा व्यय होता है।

हिन्दी के काम में प्रगति

मैं और विषयों पर भी कुछ निवेदन करना चाहता था परन्तु मैं जानता हूँ कि और भी लोग बोलने वाले हैं। मैं अधिक समय नहीं लूंगा। मेरा निवेदन यही है कि अब हिन्दी के काम में अधिक प्रगति हो। आप बहुत जल्दी एक कमीशन बनायें। और कमीशन बनाने में यह ध्यान रखें कि कौन कौन लोग उसमें रहते हैं। उसमें आप इस प्रकार के लोगों को रखें जो न्याय कर सकें, जो निडर होकर अपना काम कर सकें, जिनको न शिक्षा मंत्री का डर हो और न प्रधान मंत्री का डर हो और न वित्त मंत्री जी का डर हो, और जिनको हिन्दी का ज्ञान हो। आज तो एक बड़ा तमाशा है। शिक्षा विभाग में ऐसे लोग हिन्दी का काम करते हैं जो स्वयं हिन्दी नहीं जानते। जो इस विभाग के मुख्य सचिव हैं वे तीनों ऐसे हैं जो हिन्दी के ज्ञान से अपरिचित हैं। जो इस प्रकार हिन्दी से अपरिचित हैं वे कैसे हिन्दी का काम कर पायेंगे? जिनका हिन्दी जगत में सम्मान है, जिनको संसार में लोग जानते हैं कि इन्हें हिन्दी भाषा आती है, इस प्रकार के आदमियों का आप कमीशन बनायें।

मैंने सुना है कि हमारे भाई गोविन्ददास जी ने आज कुछ चर्चा की है करोड़ों के देने की। करोड़ तो दूर है। मैंने तो निवेदन किया था कुछ लाख खर्च करने का। आप चर्चा हिन्दी के चलाने की करते हैं। मैं तो तब समझता कि आप हिन्दी की प्रगति चाहते हैं यदि आप हिन्दी की कुछ ऐसी पुस्तकें निकलवा देते जो ऊँचे दर्जों में पढ़ाई जा सकतीं। एक अच्छे ग्रन्थ पर १४ या १५ हजार रुपया खर्च आता है। मैंने कहा था कि आप साल भर में ऐसे चालीस पचास ग्रन्थ निकलवा दें तो चार पाँच साल में आप हिन्दी के साहित्य को ऐसे ग्रन्थों से भर देंगे जिनसे ऊँची कक्षाओं में पढ़ाने का काम चल सके, लेकिन इस दिशा में कुछ भी काम नहीं किया गया। मुझे तो ऐसा लगता है कि मानो यह शिक्षा विभाग इसलिए बनाया गया है कि यह हिन्दी के काम में रोड़ा अटकावे, उस काम को बढ़ावे नहीं बल्कि घटावे। मैं आपके कामों की गति देख रहा हूँ। हिन्दी इन २५ या ३० साल में किधर गयी है यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ। इस देश में बहुत थोड़े लोग ऐसे हैं जो मुझसे इस

विषय में अधिक जानते हैं। मेरे जीवन का बहुत बड़ा अंश इस काम में गया है। इसलिए यदि मैं कुछ जानता हूँ तो इसमें कोई बहादुरी की बात नहीं है। मैं देखता हूँ कि जिन लोगों को हिन्दी की जानकारी है उनको शिक्षा विभाग में नहीं रखा गया है। मैं कुछ समझ नहीं पाता। शिक्षा मंत्री जी योग्य आदमी हैं परन्तु उनको हिन्दी का ज्ञान नहीं है। इस कारण होना तो यह चाहिए था कि वे उन लोगों को अपने सचिव मंडल में रखते जो उनकी इस हिन्दी न जानने की त्रुटि को पूरा करते। लेकिन इसके बजाय उन्होंने अपने सचिव ऐसे रखे हैं जो उनकी कमी को और बढ़ा रहे हैं बजाय इसके कि उसकी पूर्ति करते और हिन्दी के लिए अच्छा काम करते।

औद्योगीकरण से अनैतिकता

अध्यक्ष महोदय, मैं आपके द्वारा वित्त मंत्री जी का ध्यान इस ओर दिलाना चाहता हूँ कि वह ग्रामों की ओर अपने शासन को अधिक बढ़ायें। मेरे सामने यह मुख्य बात है। मैं रात दिन **इंडस्ट्रियलाइजेशन** की बात सुनता हूँ। मैं उससे हैरान हूँ। मुझे वह अच्छी नहीं लगती, बिल्कुल वाहियात है। देश **इंडस्ट्रियलाइजेशन** से नहीं बनेगा। देश **इंडस्ट्रियलाइजेशन** से बेईमान होगा। अभी सात आठ रोज़ हुए एक बड़े व्यापारी मेरे पास आये थे। वह आपके एक मंत्री की शिकायत कर रहे थे। मैंने उनसे पूछा कि आपकी राय में व्यापारी कितने प्रतिशत ईमानदार होते हैं, उन्होंने कहा कि व्यापारियों में एक ईमानदार नहीं है। मुझको यह सुनकर बड़ा धक्का लगा। मैं भी देश को कुछ जानता हूँ। मैं जानता हूँ कि जो लोग अधिक धन एकत्र करते हैं प्रायः उनका रास्ता अनुचित होता है। आज आवश्यकता यह है कि देश में जो अनैतिकता फैली हुई है उसको बन्द किया जाय। मैंने पिछले वर्ष जब आर्थिक स्थिति की चर्चा हो रही थी अपने भाषण में यह कहा था कि यह उचित है कि हम देश की धन-वृद्धि करें परन्तु धन की वृद्धि में सन्मार्ग का ध्यान रखें, अनुचित रास्ते न अख्तियार करें। उस पर मैं कुछ ब्यौरे में आ गया था। बाद में मैंने सुना कि हमारे प्रधान मंत्री ने मेरे उस भाषण की चर्चा कांग्रेस पार्टी में की। मैं वहाँ उपस्थित नहीं था। उनके शब्द मेरे सामने आये थे। मैंने अपने भाषण में कहा था कि हमको नैतिकता की आवश्यकता अधिक है, भलमंसाहत की आवश्यकता अधिक है, केवल पैसे की उतनी आवश्यकता नहीं। हमारे प्रधान मंत्री ने अपने भाषण में कहा था कि 'टंडन जी ने **मारल स्टैंडर्ड** की चर्चा की, वहाँ तो उद्योगों को बढ़ाने का विषय था, वह बहक गये।' उन्होंने मेरे कथन को बहकना कहा था। जो व्यापारी लोग हैं और जिनका मुख्य उद्देश्य येन केन प्रकारेण लक्ष्मी

की वृद्धि करना है वह तो नैतिकता की वात को वहकना कहते ही हैं। परन्तु मेरा निवेदन है कि यदि गांधी जी का नाम (कभी कभी हम गांधी जी का नाम व्यर्थ ही अपनी त्रुटियों को छिपाने के लिए ले लेते हैं) कुछ अर्थ रखता है, और उनके नाम के भी पहले यदि हमारी संस्कृति का कुछ अर्थ है, जिसके कारण हमारे लोगों का आज तक नाम चला आ रहा है, तो वह यह है कि हमारे जीवन का मुख्य आदर्श नैतिकता है। लेकिन आज जितने काम हैं, क्या व्यापार, क्या सरकारी नौकरी, क्या **इंजिनियरिंग** और उसके साथ ठेकेदारी, क्या वकालत, सव जगह आज अनैतिकता वढ़ी हुई है। मैं कुछ अपने अनुभव से कह रहा हूँ। ये वड़े-वड़े महल शुद्ध कौड़ी के ऊपर नहीं वने हैं। "शुद्ध कौड़ी" की एक वहुत सुन्दर कथा है, लेकिन समय कम होने की वजह से मैं उसे कहूँगा नहीं। हमारे प्रातः-स्मरणीय मालवीय जी ने मुझे सुनाया था। मैं उस कथा को कहूँगा नहीं, केवल यह निवेदन है कि यह महल शुद्ध कौड़ी पर नहीं उठे हैं, न वम्वई के, न कलकत्ते के और न दिल्ली के। मैं उनको देखता हूँ तो हृदय रो उठता है। कारण कि जितने ऊँचे महल उठे हैं वह प्रायः वेईमानी से ही उठे हैं। आज वेईमानी का वारापार नहीं है।

औसत आय—दरिद्रता

वित्तमंत्री जी ने देश की औसत आमदनी वतायी है। उन्होंने अपने भाषण में लगभग यह कहा था कि वह पहले २५५ रुपये वार्षिक थी, अव वह वढ़कर २७० या २८० तक हो गयी है। यह अंकों की वात है। अभी हाल में पंत जी ने अपने भाषण में कहा था कि वह २५५ है। मैं इसको माने लेता हूँ। इन २५५ की औसत वालों में कितने ऐसे धनी हैं जिनकी आमदनी दो लाख, चार लाख, पाँच लाख या दस लाख के ऊपर है। उन्होंने कहा था कि दस लाख के ऊपर वाले वहुत कम हैं। मैं उनके शब्दों का ही हवाला दे रहा हूँ। पाँच लाख के ऊपर कुछ हैं, और दो लाख के ऊपर तो वहुत लोग हैं। दो लाख को भी छोड़ दीजिए। मैं पूछता हूँ कि २५० रुपये की औसत आमदनी वाले कितने हैं? आप देखेंगे कि इस औसत से ज़्यादा आमदनी वाले शहरों में रहते हैं, गाँवों में वहुत कम। २५० रुपये से ऊपर की आमदनी वाले आपको शहरों में वहुत मिलेंगे। मैं भी उससे ऊपर हूँ और यहाँ और जितने और वैठे हैं वे सव ऊपर हैं और शहर के लोग प्रायः सव ऊपर हैं। इससे नीचे कौन हैं, ग्राम वाले। सरकारी आँकड़ों में वताया गया है कि देश के प्रत्येक व्यक्ति की औसत आमदनी २५५ रुपये वार्षिक है, लेकिन कितने ही धनी व्यक्तियों की आय इससे वहुत अधिक है। आप देखेंगे कि ९० प्रतिशत जनता की औसत आमदनी २५० रुपये से कम है और दस प्रतिशत

की आमदनी औसत से ऊपर तथा हजारों लाखों की है। आँकड़ों की बात आप करते हैं। औसत के ऊपर केवल दस प्रतिशत हैं और ९० प्रतिशत ऐसे हैं जो इस औसत के नीचे हैं अर्थात् जिनकी आमदनी २५० रुपये से भी कम है और जिनकी आय १०० रुपये, ९० रुपये या ८० रुपये ही होती है। अब यह सोचने की बात है कि जिनको केवल ८० रुपये साल में मिलते हैं, वे अपना गुजारा कैसे करते होंगे। मेरा निवेदन है कि ऐसी हालत में हमारा कर्त्तव्य है कि हम गाँवों की ओर देखें न कि बड़े महलों को। हम देहातियों के पास जायँ, उन दरिद्र लोगों के पास जायँ जिनकी आमदनी इतनी छोटी है, उनकी हम हैसियत बढ़ायें। इन महल वालों को ऐसा अवसर न दें कि महल पर महल बनाते जायँ। ऐसा करने में कोई लाभ नहीं होगा वरन हर प्रकार की हानि ही होगी।

मैं और अधिक नहीं कहूँगा। मैं चाहूँगा कि मंत्रिमंडल भविष्य का जो स्वप्न देखे उसमें यह देखें कि बड़े बड़े महल यहाँ पर नहीं खड़े होंगे, ऐसे **इंडस्ट्रियलाइजेशन**, औद्योगीकरण, का स्वप्न न देखें जिसमें अरबों और करोड़ों रुपये की लागत लगा कर कारखाने बने हों; कारखाने कहीं कहीं आवश्यक हो सकते हैं और अपवाद के रूप में रक्खे भी जा सकते हैं, परन्तु हम ऐसा स्वप्न देखें कि देहात में हम लोग जायँ, देहात हमारे वाटिका गृह की तरह हों, उनके बीच से बेकारी दूर हो और उनको कुछ न कुछ काम हम दें, जैसे भी हो ग्रामीणों के जीवन में अधिक सुख लायें। हमारा उचित ध्येय यह है।*

---

*श्री टंडन के इस भाषण के अनन्तर वित्तमंत्री श्री देशमुखजी ने एक कागद पर एक श्लोक लिखकर टंडनजी के पास भेजा, जो इस प्रकार था--

मंत्रिभिर्वंचिता हन्त! पर्यंका नैव शोभते।
अंकास्तथा हि वैदेशाः कलंका एव मन्यते।।

अर्थात् मंत्रियों से वंचित ये बेंचें (जिनकी ओर टंडन जी ने संकेत किया था), बिल्कुल शोभा नहीं दे रही हैं तथा इसी प्रकार ये विदेशी अंक भी हमें कलंक की तरह ही मालूम पड़ते हैं। (अपने भाषण में टंडनजी ने विदेशी अंकों को हिन्दी में स्थान देने के लिए खेद प्रकट किया है।)

२६

हिन्दी आयोग—इन्द्रिय निग्रह

२० अप्रैल १९५५ को भारतीय लोकसभा में वित्त विधेयक पर बोलते हुए

सभापति जी मैं इस विधेयक के अन्तिम विचार के समय कुछ वहुत आवश्यक सुझाव देने के लिये खड़ा हुआ हूँ, नहीं तो मेरा कोई विचार इसमें भाग लेने का नहीं था। मुझे खेद है कि मैं जिन मंत्री के विभाग के सम्वन्ध में कुछ कहना चाहता हूँ वह यहाँ नहीं हैं। मेरा तात्पर्य गृह मंत्री महोदय से है। मेरा निवेदन है कि वित्त विभाग के मंत्री जो यहाँ उपस्थित हैं, वे मेरा सुझाव उन तक मेरे दूत होकर पहुँचा देंगे। वे मेघदूत तो नहीं होंगे क्योंकि कुछ शृंगार की वातें नहीं हैं परन्तु वे मेरे ऊपर कृपा करके मनुज दूत होकर मेरी वात पहुँचा देंगे।

हिन्दी आयोग

मुझे एक विषय पर कहना है जो इस समय गृहमंत्री के सामने होगा। वह है उस आयोग अर्थात् कमीशन की नियुक्ति जो हिन्दी के विषय में जाँच करने वाला है। समाचारपत्रों में आ रहा है कि उसके ऊपर वह विचार कर रहे हैं। अपने पिछले भाषण में मैंने कहा था कि गवर्नमेंट ने संविधान यानी **कांस्टीट्यूशन** की अवहेलना की है, उन्होंने संविधान के विरुद्ध काम किया है। उचित था कि २६ जनवरी को यह कमीशन नियुक्त हो जाता। संविधान की शव्दावली से यह अर्थ स्पष्ट है। अंग्रेज़ी भाषा में भी कुछ जानता हूँ और गवर्नमेंट के विभागीय मंत्री भी जानते हैं "At the expiration of five years" (पाँच वर्ष की कालावधि समाप्त हो जाने पर) का अर्थ स्पष्ट है। यह अवधि समाप्त हो गई परन्तु अभी तक वह कमीशन नियत नहीं हुआ है। मैं चेतावनी देता हूँ कि इसके बनाने में और देर न की जाय। मैंने सुना है कि गृह विभाग उसके ऊपर विचार कर रहा है, यह ठीक है कि गृह विभाग का ही वह काम है, उसी को इस पर विचार करना चाहिये। मैंने सुना था कि शिक्षा विभाग इसमें अपना हाथ रखना चाहता है, शिक्षा विभाग चाहता है कि वह भी इसमें आ जाय लेकिन मैं निवेदन कर देना चाहता हूँ कि शिक्षा विभाग का इससे कोई सम्वन्ध नहीं है। दो कमीशन इधर हाल में नियुक्त हुए हैं, एक **बैकवर्ड क्लासेज़ कमीशन** और दूसरा **स्टेट्स रिआर्गेनाइज़ेशन कमीशन**, अर्थात् पिछड़ी जातियों का आयोग और राज्य पुनर्निर्माण आयोग, इन दोनों को गृह विभाग ने स्थापित किया था। इस वर्ष का जो

बजट है, उसमें उनका व्यय भी दिखलाया गया है। मैं यह स्वाभाविक समझता हूँ कि यह कमीशन भी गृह विभाग की ओर से आये।

यह कमीशन कितने आदमियों का बनेगा, इसकी कोई चर्चा संविधान में नहीं है। इस कमीशन की रिपोर्ट के ऊपर विचार करने के लिये, लोक-सभा की और राज्य सभा की एक कमेटी बनेगी। संविधान में लिखा है कि उस कमेटी में कुल ३० आदमी होंगे, २० यहाँ के और १० वहाँ के। परन्तु इस आयोग अथवा कमीशन में कितने आदमी होंगे, इसकी कोई चर्चा नहीं है। केवल इतना है कि इसमें सब भाषाओं का प्रतिनिधित्व रहेगा। वह ठीक है। मैं यह कहना चाहता हूँ कि इस आयोग में बहुत थोड़े से आदमी नहीं रह सकते। हमारा देश बहुत बड़ा है। मैं यह चाहता हूँ कि देश के प्रत्येक भाग का इसमें प्रतिनिधित्व हो, हर भाषा के और हर बड़े प्रदेश से इसमें लोग आयें। यह स्पष्ट है कि यह छोटा नहीं हो सकता। मेरा अनुमान है कि २५ व्यक्तियों से कम इसमें नहीं होने चाहियें। मैं चाहूँगा कि आप इसको समझ लें कि यह आयोग २५ से कम का नहीं बनना चाहिये। जैसे वह कमेटी ३० मेम्बरों की होगी उसी तरह मैं चाहता हूँ कि इस आयोग में भी २५ और ३० के भीतर लोग रहें। इस आयोग में १४ या १५ की संख्या ठीक न होगी। मेरा निश्चित सुझाव है कि इसके सदस्यों की संख्या २५ से कम नहीं और ३० से अधिक नहीं होनी चाहिये। भारतीय संविधान में जो १४ भाषायें लिखी गई हैं, उनका प्रतिनिधित्व तो इसमें होगा ही परन्तु इस तरह से इसमें लोग लिये जायँ कि इसमें सब प्रदेशों के विशेषज्ञ आ जायँ। हमारे देश में कई छोटे छोटे राज्य भी हैं। इनके अलावा ९ बड़े राज्य हैं जिनको कि "ए" श्रेणी का कहा गया है और ९ "बी" श्रेणी के राज्य हैं। उनका तो प्रतिनिधित्व अवश्य होना चाहिये, अर्थात् हर एक प्रदेश का कम से कम १-१ आदमी अवश्य रहे। उत्तर प्रदेश बहुत बड़ा है। मैं उत्तर प्रदेश से आया हूँ। उत्तर प्रदेश की आबादी ६ करोड़ के ऊपर है। इसी तरह बिहार है और उस प्रदेश की आबादी भी ४ करोड़ के ऊपर है। इनको यदि उतना ही प्रतिनिधित्व मिले जितना आसाम को मिले तो यह ठीक नहीं होगा।

आसाम का प्रतिनिधित्व उसमें अवश्य चाहिये, परन्तु इन दो बड़े सूबों का अधिक प्रतिनिधित्व होना चाहिये। मेरा कहना यह है कि इस आयोग में २५ और ३० के बीच में आदमी हों और जहाँ तक सम्भव हो इसमें हर बड़े प्रदेश के आदमी आ सकें। जहाँ तक बिलासपुर और अजमेर आदि छोटे प्रदेशों का सम्बन्ध है, इन सब के आने की कोई आवश्यकता नहीं है।

श्री बी० डी० शास्त्री (शहडोल-सीधी) : विन्ध्य प्रदेश का प्रतिनिधित्व होना चाहिये।

श्री टंडन : विन्ध्य प्रदेश तो बड़ों में है। मेरा मतलब तो अजमेर, बिलासपुर और कुर्ग जैसी छोटी रियासतों से था कि वहाँ के प्रतिनिधित्व की कोई आवश्यकता नहीं है। विन्ध्य प्रदेश तो "बी" श्रेणी में आ गया, उसका तो प्रतिनिधित्व होना ही चाहिये . . .

एक माननीय सदस्य : विन्ध्य प्रदेश **पार्ट 'सी' स्टेट** है।

श्री टंडन : विन्ध्य प्रदेश **पार्ट 'बी'** में मौलिक संविधान के अनुसार था। हिमाचल प्रदेश **पार्ट सी** में है। मेरा निवेदन है कि हिमाचल प्रदेश का भी क्षेत्र बड़ा है, वहाँ से एक प्रतिनिधि इसमें लिया जा सकता है। दिल्ली भी **पार्ट 'सी'** में है, लेकिन यहाँ से भी एक आदमी आ सकता है। परन्तु कुर्ग से अलग प्रतिनिधि आने की आवश्यकता नहीं है। मैसूर से आ जायगा। मेरा कहना यह है कि इस विषय पर विचार की आवश्यकता है। हर प्रदेश आयेगा। हिन्दी बहुत से प्रदेशों की भाषा है और यह हिन्दी कमीशन है, हर प्रदेश के आदमी इसमें आने चाहियें। स्पष्ट है कि हिन्दी वालों की संख्या आप से आप औरों की अपेक्षा अधिक होगी। कोई एक या दो की अधिकता की बात नहीं होगी। यह ठीक है कि इस आयोग में सब भाषाओं का यानी उर्दू, संस्कृत, मलयालम और कन्नड आदि भाषाओं का प्रतिनिधित्व होगा, परन्तु मुख्य कर के यह काम हिन्दी वालों का है और इसलिये इसमें हिन्दी वालों की संख्या अधिक होगी। मैंने उस दिन भी कहा था कि हिन्दी के लोगों में जो आदमी चुने जायँ, वे ऐसे हों जो सचमुच हिन्दी जानने वालों का प्रतिनिधित्व कर सकें, यह नहीं कि आप ऐसे आदमियों को चुन लें जो आपकी खुशामद करते हों। कुछ इस तरह के लोग होते हैं जिनको हम मीरासी कहा करते हैं, जिनका काम यह होता है कि कोई दूसरा गाता है और वह सारंगी बजाया करते हैं। ऐसे सारंगी बजाने वाले मीरासियों को इस आयोग में बिल्कुल नहीं आना चाहिये। आप ऐसे आदमियों को चुनें जो स्वतन्त्रता के साथ विचार करके और ईमानदारी के साथ अपना मत व्यक्त कर सकें, और जिनको वास्तव में हिन्दी आती हो, ऐसे नहीं जिन्होंने सुनी सुनाई कुछ जानकारी के बल पर कह दिया कि हम भी हिन्दी जानते हैं। मैंने देखा है कि कभी कभी ऐसे लोग जिनको हिन्दी के नाम पर आता जाता कुछ नहीं है हिन्दी के ऊपर रायज़नी करने के लिए खड़े हो जाते हैं। अभी हाल में एक इसी तरह के साहब ने हिन्दी साहित्य के बारे में राय दी है कि उसमें यह नहीं है और वह नहीं है। मेरा निवेदन है कि उनको कुछ आता जाता नहीं है। हिन्दी बड़ी पुरुषार्थी भाषा है और विशाल भाषा है, उसका साहित्य ऊँचा है और वह बड़ी शक्तिशालिनी है। उन साहब ने कहा है कि हिन्दी अभी राज्य के कामों को अदा नहीं कर सकती। मैं तो कहूँगा कि जो ऐसा कहते हैं वह बिल्कुल जानते ही नहीं। आप जब चाहें तब परीक्षा

कर देख लें। हिंदी में इतना पुरुषार्थ है, इतना सामर्थ्य है कि आपके जितने विभाग हैं सबके लिये आसानी के साथ वह शब्द देती चली जायगी।

श्री रघुनाथ सिंह (जिला बनारस-मध्य) : यू० पी० में हो ही रहा है।

श्री टंडन : इस समय मेरा मुख्य काम यह है कि जो कमीशन नियुक्त होने वाला है, उसके बारे में मंत्री जी को सचेत करूँ कि कहीं वह यह भूल न कर बैठें कि हर भाषा के एक-एक आदमी को लेकर, जैसे कि एक हिंदी का ले लिया, एक मलयालम का ले लिया, एक आसामी का ले लिया, कमीशन बना दें। जो बड़े प्रदेश हैं जिनकी संख्या कम से कम १८ है, ९ ए श्रेणी के और ९ बी श्रेणी के, और जो सी श्रेणी के बड़े प्रदेश हैं, जैसे हिमाचल है, दिल्ली है उन सब स्थानों से लगभग २५, ३० प्रतिनिधियों को लेकर इस कमीशन का निर्माण हो। इस सम्बन्ध में मेरा इतना ही निवेदन है।

मैं एक दूसरे विषय के सम्बन्ध में कह कर समाप्त कर दूंगा क्योंकि मैं १५ मिनट के भीतर ही समाप्त कर देना चाहता हूँ।

शराब और सिगरेट

इधर शराब के विषय में कुछ ध्यान दिया जा रहा है। हमारे कांग्रेस के प्रधान जी ने कहा है कि मेरा पूरा उद्योग होगा, जहाँ तक मुझे याद पड़ता है उन्होंने कहा है कि एक साल में ही, देश में जो औपचारिक रूप से शराब चल रही है वह बंद कर दी जाय। मैं उनको इस साहस पर बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि उनमें यह शक्ति होगी कि वह हर प्रदेश की गवर्नमेंट से शराबबंदी करा लें। शराब के चलन में बहुत सी रुकावटें अलग-अलग प्रदेशों में हो भी चुकी हैं। बम्बई में हो चुकी हैं, कुछ दूसरे स्थानों में हो चुकी हैं। जिस समय मैं कांग्रेस का प्रधान था उस समय मैंने भी अपनी राय इस विषय में दी थी। लेकिन एक और विषय है जिसके ऊपर अभी तक प्रायः मुँह नहीं खोला गया है। वह है सिगरेट और तम्बाकू का विषय। आज भी प्रायः हमारा मुँह नहीं खुलता है। हमारे सिख भाई तो इससे ठीक ही चिढ़ते हैं। शराब वह भी पी लेते हैं लेकिन तम्बाकू से बहुत चिढ़ते हैं। मेरा निवेदन सिखों से है कि शराब भी छोड़ो, तम्बाकू तो उनके गुरुओं ने छुड़ा दी है, लेकिन वह शराब भी छोड़ें और तम्बाकू भी।

रक्षा संगठन मंत्री (श्री त्यागी) : दोनों छोड़ने के लिये न कहिये।

एक माननीय सदस्य : चाय भी।

श्री टंडन : मैं जो निवेदन करता हूँ कृपा कर उसे सुनिये। अगर आप में शक्ति हो, इंद्रिय निग्रह हो तो बहुत अच्छा है। हमारे देश में यह बड़ा पुराना वाक्य है कि "यथा राजा तथा प्रजा"। कौटिल्य का वाक्य है—

"राज्यस्य मूलं इंद्रियनिग्रहः"

समझ लीजिये जो शासन करना चाहता है, उसमें यह शक्ति होनी चाहिये कि वह अपनी इंद्रियों को सम्हाल कर रखे इंद्रिय निग्रह करे। मैं आप लोगों से, जोकि इधर (सरकारी पक्ष में) बैठे हुए हैं, यह चाहता हूँ कि आप जरा रास्ता दिखायें। सुबह से शाम तक जो हमारे भाइयों के मुँह में सिगरेट लगी रहती है यह बहुत शोभायमान नहीं है। आपका कर्तव्य कहता हूँ। मेरा किसी पर आक्षेप नहीं है...

कृषि मंत्री (डा० पी० एस० देशमुख) : बहुत कम लोग पीते हैं।

श्री टंडन : मैं जानता हूँ।

डा० पी० एस० देशमुख : यह नहीं पीते, वह नहीं पीते।

श्री त्यागी : मैंने छोड़ दिया।

श्री टंडन : मंत्रिमंडल अनावश्यक रूप से मेरा समय नष्ट कर रहा है। मैं चाहता हूँ कि ईश्वर उन्हें बुद्धि दे, वह हँसी करते हैं, लेकिन वह लोग देश का नुक़सान कर रहे हैं।

डा० पी० एस० देशमुख : मैं यह कहता हूँ...

श्री टंडन : जी नहीं। आप चुप रहिए। मैं जानता हूँ कि मंत्रियों में से बहुत से गहरे सिगरेट पीने वाले हैं। आप यहाँ बातें मारते हैं। मैं जब निवेदन करता हूँ तो मेरे सामने देश है, केवल आप नहीं हैं। आप तो यहाँ पर दो चार दिन के लिए हैं, फिर यहाँ से रफ़ू चक्कर हो जायेंगे। ज़रूरत इस बात की है कि हमारे भाई जिनके हाथ में शासन है वह रास्ता दिखायें देश को। आज हमारे बच्चे नष्ट हो रहे हैं। मैंने अभी अख़बार में पढ़ा, मेरी जेब में अख़बार की कतरन मौजूद है कि १९ अरब सिगरेट यहाँ पर पिछले वर्ष बिकी है और बाहर से ५४ करोड़ सिगरेट आई है। यह क्या है! मैं जानता हूँ कि यह आदत आसानी से नहीं छूटती, मगर मैं मंत्रियों का यह कर्तव्य समझता हूँ कि यह जो सिगरेट बीड़ी पीने की आदत है, और बीड़ी का तो कोई ठिकाना ही नहीं है, ऊँचे दर्जे के लोग तो सिगरेट पीते हैं, उस आदत को सम्हालने की ज़रूरत है। इस आदत को सम्हालने में हमारा मंत्रिमंडल मार्ग प्रदर्शक हो सकता है, देश की नेतागीरी कर सकता है। उनको अच्छे नेता होना चाहिये। बहुत से मंत्री जिनकी आदत है सिगरेट पीने की वह इसको साधारण बात समझते हैं। ऐसे भी लोग हैं जो शराब पीने को भी साधारण बात समझते हैं। मैं समझता हूँ कि जो इस बात का दावा करते हैं कि मैं देश का मार्ग प्रदर्शन करूँगा, मैं देश को रास्ता दिखाऊँगा, उनके लिए अपने को साफ़ करना ज्यादा ज़रूरी है, बनिस्बत दूसरों के। इसलिए मंत्री थोड़ा जोर अपने ऊपर भी डालें। फेंक दें सिगरेट, फेंक दें शीशे का गिलास और तय कर लें कि हिम्मत के साथ देश में शराबबंदी करनी है, सिगरेट बंदी करनी है। अपने ऊपर जरा सख्ती करें, और अगर

कुछ कमज़ोरी हो तो कम से कम सामने तो वह सिगरेट लेकर न आयें, छिपा कर पी लें। बहुत से ऐसे हैं जो लगातार खुले आम पीते हैं, जिनको शृंखलाबद्ध पीने वाले कहते हैं। मेरा निवेदन है कि आज इस बात की ज़रूरत है कि भारत सरकार देश में शराब के साथ सिगरेट भी बन्द करे क्योंकि इससे हमारे बच्चों की बहुत हानि हो रही है।

इतना कह कर मैं समाप्त करता हूँ। अंत में मैं फिर वित्त विभाग के मंत्री जी से जो यहाँ मौजूद हैं, कहना चाहता हूँ कि हिन्दी कमीशन के सम्बन्ध में जो मेरा निवेदन है उसे वह गृह मंत्री तक पहुँचा दें।

२७

विवाह-विच्छेद नहीं

४ मई १९५५ को भारतीय लोकसभा में हिन्दू तलाक़ बिल पर बोलते हुए

अध्यक्ष महोदय ! यह विषय, समाज की एक पुरानी प्रथा को बदलने का, बहुत गम्भीर विषय है। मैं किसी चीज़ के बदले जाने का विरोधी नहीं हूँ। पाटस्कर जी ने जो उस दिन अपना भाषण दिया उसके ३/४ भाग से मैं सहमत हूँ अर्थात् मैं यह मानता हूँ कि समय के अनुसार प्रथायें बदलती हैं, धर्म बदलता है। समय भेदेन धर्म भेदः। अवस्था भेदेन धर्म भेदः। यह प्राचीन वाक्य हैं। समय के बदलने से धर्म बदलता है, अवस्था के बदलने से, स्थितियों के बदलने से, धर्म बदलता है। यह बिल्कुल सही है। मैं इस बँधे हुए समय में और अधिक इस विषय में नहीं जा सकता।

बुद्धिवादी आदर्श

मैं इस बात के साथ पूरी तरह सहमत हूँ कि हमारे प्राचीन लोग केवल पुराणपंथी नहीं थे। सम्भव है पाटस्कर जी से इस विषय पर मेरा कुछ अन्तर हो। वे पुराणपंथी नहीं थे, वे बुद्धिवादी थे। प्राचीन समय से हमारे यहाँ बुद्धि की महिमा रही है। जब एक बड़े ऋषि इस संसार को छोड़ने लगे तो उनके शिष्य उनके पास गये और पूछने लगे कि महाराज अब वेदों का अर्थ कौन करेगा, किस ऋषि के पास आप हमें भेजते हैं। इस पर उस ऋषि ने कहा

तर्कोवैऋषिरुक्तः

तर्क ही ऋषि है। तर्क के सामने शास्त्र अलग रह जाते हैं। शास्त्र की मर्यादा तभी तक है जब तक तर्क उनके साथ है। इसीलिए कहा है, स्मृति का एक पुराना वाक्य है—

केवलं शास्त्रमाश्रित्य न कर्त्तव्यो विनिर्णयः।

केवल शास्त्र का आश्रय लेकर कर्त्तव्य का निर्णय नहीं हुआ करता।

युक्तहीनविचारेतु धर्महानिः प्रजायते।।

जहाँ युक्ति नहीं है, **लाजिक** नहीं है, **रीजन** नहीं है, वहाँ धर्म की हानि होती है। प्राचीन काल में भारतवर्ष में हमारे ऋषि मुनि भी कोई एक शास्त्र को पकड़ कर नहीं बैठ गये थे बल्कि उन्होंने समय और काल के अनुसार

धर्मशास्त्रों की रचनाएँ कीं और परिवर्तन किये और हमारा देश तो सदा से ही बुद्धिवादी और तर्कवादी रहा है।

नैको मुनिर्यस्य मतिर्नभिन्ना।

अर्थात् ऐसा कोई मुनि नहीं है जिसकी मति भिन्न न हो। सदा से हमारा देश तार्किक है और बुद्धिवादी है। इस बात के पक्ष में मैं एक नहीं अनेकों प्रमाण दे सकता हूँ कि हमारा देश बुद्धिवादी रहा है। हमारे देश में मनु के बाद याज्ञवल्क्य आये और उसके बाद इतनी स्मृतियाँ बनीं। सौ से ऊपर स्मृतियों का बनना ही इस बात का प्रमाण है कि हमारा देश एक तलैया नहीं है, हमारा धर्म तलैया नहीं है जिसके भीतर हम बँध गये हों। समय के अनुसार हमारे ऋषियों और मुनियों ने समाज को स्मृतियाँ तैयार करके दीं, इस तरह इतने अंश में मैं आप से सहमत हूँ।

पातिव्रत—मौलिक धर्म

पर साथ ही साथ यह भी स्मरण रखिये कि हमारे देश की कुछ मौलिक मर्यादाएँ हैं, उन मर्यादाओं को भी हमें समझना है, उनके मूल में कुछ सार है। इनमें से एक मर्यादा है पातिव्रत धर्म की भावना। वह आदर्श और पवित्र भावना आज भी हमारी बहनों में विद्यमान है। पातिव्रत धर्म का नाम मैं नहीं जानता कि भारत को छोड़ कर और कहीं दुनियाँ में भी हो। सम्भव है हमारी आधुनिक स्त्रियाँ इसे सुनकर कुछ हँस भी दें, परन्तु हमारे धर्म का एक अंग पातिव्रत है जिसका अनुवाद अंग्रेज़ी में नहीं हो सकता। हमारे एक पुराने बड़े भाई स्वर्गीय श्री ऐंड्रयूज़ ने एक बार कहा था कि मैं संसार में चारो ओर घूमा और मैंने देखा कि "जिस तरह से स्त्रियों का हमारे देश में पातिव्रत धर्म है (उन्होंने उसके लिए **चैस्टिटी** का शब्द प्रयुक्त किया था) वह आदर्श मैंने कहीं नहीं पाया।" हमारी बहन श्रीमती रेणु चक्रवर्ती ने **डाइवोर्स** के पक्ष में यह दलील दी कि अगर कहीं पर उसका ग़लत इस्तेमाल होता है, तो वह कोई कारण **डाइवोर्स** को न रखने के लिए नहीं हो सकता। मैं उनसे पूछना चाहता हूँ कि क्या उनकी इस दलील को दूसरी तरह से नहीं रक्खा जा सकता कि अगर विवाहित स्थिति में कोई ऐसे लुच्चे आदमी हैं जो बुरी स्थिति पैदा करते हैं तो क्या उन चन्द अपवादों के कारण आप बिलकुल समाज की रूढ़ियाँ बदल दें? यह मेरी बहन की दलील दूसरी तरह से भी सामने रखी जा सकती है। मैं इसको गम्भीर विषय समझता हूँ। आपने **सेक्रामेंट** की चर्चा की। हमारे यहाँ उसको संस्कार कहते हैं।

श्री पाटस्कर : हमको मालूम है।

श्री टंडन : अगर आपको यह मालूम है तो फिर **सेक्रामेंट** की बात

क्यों करते हैं, उसको आप छोड़ दें और संस्कार को मानिये। सेक्रामेंट के माने हैं, सेक्रेड कार्य। यह तो हम सब जानते हैं कि विवाह हमारा एक संस्कार है और हमारे यहाँ उसकी बड़ी महिमा है। हमारे यहाँ पति और स्त्री का जो सम्बन्ध है वह पवित्र सम्बन्ध माना गया है और, जैसा मैंने कहा, पातिव्रत का बड़ा ऊँचा स्थान माना गया है। अरे! क्या इस समय में आपसे आदर्शों की बात करूँ? मैं तो आपसे कहूँगा कि अगर आप इन आदर्शों की बातों की अवहेलना करते हैं, और केवल इस शरीर को और शरीर की आवश्यकताओं को ही देखते हैं, तब फिर आप We love but while we may (हम प्रेम करते हैं जब तक कि कर सकते हैं) उस आदर्श के अनुयायी भी हो सकते हैं। क्या वह भी कोई आदर्श है और अपनाने योग्य है? मैं तो कहूँगा कि यह पशुवत आदर्श है कि We love but while we may, यह भावना हमारे आदर्श के आज से नहीं हमेशा से बिलकुल विपरीत रही है। हमारा तो आदर्श कुछ और ही रहा है। हमारे देश ने इस पशुवत प्रणाली को स्वीकार नहीं किया। विवाह सम्बन्ध क्या है और विवाह पद्धति की आवश्यकता क्या है? हमारे देश के कुछ आदर्श हैं। हमारे देश की जो स्मृतियाँ हैं, उनमें हमारे आदर्श हैं। हमारा एक आदर्श यह है—

पतिव्रता मैली भली, काली कुचिल कुरूप।
पतिव्रता के रूप पर वारूँ कोटि सरूप॥

इसी आदर्श को आधार मान कर हमारे अधिनियम बनने चाहिएं। पतिव्रता स्त्री भले ही मैली हो काली हो और कुरूप हो परन्तु हम करोड़ों सफ़ेद चेहरों, मुलायम चेहरों और श्रृंगारवान चेहरों को एक पतिव्रता स्त्री के चरणों पर वार सकते हैं। यह हमारे देश का आदर्श रहा है और इस आदर्श को आज हम भूल नहीं सकते। यह इसी देश का आदर्श था कि एक भारतीय रमणी जो जानती है कि मेरा भावी पति आज से बारह महीने बाद मरने वाला है, जिसके सम्बन्ध में बताया गया है कि वह मरेगा, परन्तु जब एक बार वर लेती है तब वह इसी पर दृढ़ रहती है कि वही मेरा पति है और उसीसे मेरा विवाह होगा। यह कथा आपके ही देश की है, संसार के किसी दूसरे देश में ऐसी कथा आपको सुनने को नहीं मिलेगी।

सीताजी की भावना

रामायण हमारे देश का एक पवित्र ग्रंथ है जिस पर हम सब गर्व करते हैं। बाईं ओर बैठे हुए मेरे भाई तो रामायण में पटु हैं। मुझे इस अवसर पर रामायण की कुछ पंक्तियाँ याद आ रही हैं। जब श्री रामचन्द्र को वनवास हुआ और सीता जी उनके साथ वन में जाने के लिए खड़ी हो गयीं और

रामचन्द्र जी से आग्रह करने लगीं कि मैं भी आपके साथ वन में जाऊँगी, तब रामचन्द्र जी सीता जी को समझाते हुए कहते हैं कि यह सुकुमार शरीर लेकर कैसे वन में चल सकोगी और वहाँ की कठिनाइयों को झेल सकोगी और उनको वन गमन से रोकना चाहते हैं। उस समय सीता जी जो उत्तर में कहती हैं वह समझने की बात है। वह आदर्श सदा हमारे देशवासियों की आँखों के सामने रहना चाहिए। सीता जी कहती हैं—

नाथ सकल सुख साथ तुम्हारे।
सरद विमल विधु वदन निहारे॥

रामचन्द्र जी से सीता जी कह रही हैं कि हे नाथ आपके साथ रह कर आपका शरद् पूर्णिमा के निर्मल चन्द्रमा के समान मुख देखने से मुझे समस्त सुख प्राप्त होंगे। रामचन्द्र जी जो यह कहते हैं कि तुम उस बीहड़ रास्ते पर नहीं चल सकोगी तो सीता जी उसके उत्तर में इस तरह कहती हैं—

मोहि मग चलत न होइहि हारी।
छिनु छिनु चरन सरोज निहारी॥

क्षण क्षण आपके चरणकमलों को देखते रहने से मुझे मार्ग चलने में थकावट न होगी। छिनु छिनु चरन सरोज निहारी, मैं पीछे पीछे चलूँगी, आपके चरण मेरे सामने होंगे और मुझको थकावट नहीं आयेगी। फिर सीता जी कहती हैं—

प्राननाथ करुनायतन सुन्दर सुखद सुजान।
तुम्ह विनु रघुकुल कुमुद विधु सुरपुर नरक समान॥

प्राणनाथ अर्थात् आप मेरे प्राण के मालिक हैं। 'प्राणनाथ' हमारे यहाँ पति को संबोधन करने का प्रिय शब्द है। सीता जी कहती हैं कि हे प्राणनाथ, हे दया के धाम, हे सुन्दर, हे सुखों के देने वाले, हे रघुकुलरूपी कुमुद के खिलाने वाले चन्द्रमा, आपके बिना स्वर्ग भी मेरे लिये नरक के समान है। हमारी स्त्री जाति का यह आदर्श रहा है।

श्रीमती शिवराजवती नेहरू : परन्तु उनके संग क्या किया ?

श्री टंडन : उनके साथ जो बर्त्ताव हुआ क्या बहन जी को उसकी शिकायत है ? लेकिन मैं साधारण रीति से जो स्थिति है उसकी बात कह रहा हूँ।

अपवाद का इलाज

मेरी बहन श्रीमती रेणु चक्रवर्ती ने बताया ऐबेरेशन्स अपवाद होते हैं। लेकिन जो आदर्श हैं उन आदर्शों को समाज से नहीं हटाया जाता। उन आदर्शों को रक्खो। हाँ ! अपवादों का इलाज करो। इलाज है। आप

का **स्पेशल मैरेज ऐक्ट** बना हुआ है, अगर उसमें कोई कमी है तो उसको पूरी करो। मगर यह जो हमारा पातिव्रत है, उसको न छुओ। जो **स्पेशल मैरेज ऐक्ट** है उसमें आप अपने विवाह की रजिस्ट्री करा सकते हैं। अगर रजिस्ट्री कराने में कोई बाधा है तो उसको दूर कीजिये। मैं श्री पाटस्कर जी से कहता हूँ कि वह हिन्दू समाज के पातिव्रत के आदर्श की पवित्रता को न मिटायें। पातिव्रत की पवित्रता को रक्खें, विवाह की पवित्रता को न छुएँ। परन्तु साथ ही जो आवश्यकता हो उसको पूरी करें। क्या मैं जानता नहीं कि हमारे देश में भी ऐसे स्त्री और पुरुष हैं जो अलग हो जाते हैं, लेकिन उनके लिये कोई दूसरा रास्ता बना दीजिये। विवाह का जो क्रम है उसको न छूइये। विवाह में हमारे यहाँ सप्तपदी होती है। विवाह में हमारे यहाँ स्त्री पुरुष का संवाद होता है। हमारे यहाँ जो विवाह संस्कार की पद्धति है, उसके ९/१० भाग में स्त्री और पुरुष का एक दूसरे से संवाद है, आपस में उनकी बातचीत होती है। जो विवाह इस पवित्रता के साथ होते हैं, यदि उनमें कहीं कोई गड़बड़ी हो, किसी कारण से, तो उसके लिये रास्ता निकालिये, परन्तु विवाह की पवित्रता के ऊपर आप हमला न कीजिये।

स्मृति-निर्माण

आज आप एक स्मृति बना रहे हैं, मैं इस विधेयक को स्मृति ही मानता हूँ, और मैं मानता हूँ कि हमें स्मृति बनाने का अधिकार भी है।

श्री धुलेकर (जिला झाँसी दक्षिण) : स्मृति नहीं बना रहे हैं।

श्री टंडन : यह जो विधि हैं सब स्मृतियाँ ही हैं। मैं उनको स्मृतियाँ ही मानता हूँ। पहले स्मृति बनाने का अधिकार ऋषियों को था, अब वह अधिकार जनता को और जनता के प्रतिनिधियों को है। परन्तु मेरा निवेदन यह है कि आप जिस पवित्र कार्य में लगे हैं, दायित्व के कार्य में लगे हैं, इसमें भूल न कीजिए। आपकी स्मृतियाँ जो आज बन रही हैं वह अशुद्ध न हों। यह कहने को न हो कि हम इतने लोगों ने बैठ कर एक घृणित बात की। आपकी बात समाज की पद्धति के बिल्कुल विरुद्ध है, हमारे मौलिक सिद्धान्तों के विरुद्ध है। हमारे देश के सिद्धान्त दूसरों से अलग हैं, हमारे देश का क्रम ही दूसरा है, यह वह देश है जहाँ पर माना गया है

"सुखस्य मूलं धर्मः"

सुख का मूल धर्म है, इन भौतिक उपकरणों में नहीं। इसका यह अर्थ नहीं कि भौतिक उपकरणों को सर्वथा छोड़ दिया जाय, लेकिन यहाँ यह रक्खा गया कि सुख का मूल धर्म है। इसी तरह से यह रक्खा गया—

"शासनस्य मूलं इन्द्रियनिग्रहः"

शासन का मूल इन्द्रिय निग्रह है। आज आप इस प्रकार की बातें कर के यह विपाक्त भावना फैलाते हैं कि पति पत्नी का सम्बन्ध छूट सकता है। इसकी बात आप न करें। यह एक ऐसा सम्बन्ध है जिसे हम पवित्र मानते हैं। मैं आदर्शों की बात कर रहा हूँ और कहता हूँ कि इसकी पवित्रता पर बल दिया जाय, स्त्रियों और पुरुषों के अन्दर इस सम्बन्ध की पवित्रता की भावना हो। आपने **मानोगमी** एक पत्नी विवाह की धारा स्वीकार की जिसके माने हैं एक पत्नीव्रत। एक पत्नीव्रत हमारा पुराना आदर्श है, रामचन्द्र की प्रसिद्धि ही इसके कारण हुई। बहुत से लोग इस एक पत्नीव्रत के आदर्श से गिर गये हैं। आज आप एक नई स्मृति बना रहे हैं और उसमें एक पत्नीव्रत का ऊँचा आदर्श रख रहे हैं तो यह **डाइवोर्स** विवाह-विच्छेद की बात कैसी? पत्नीव्रत और पातिव्रत इन दोनों का जो मेल है उसमें **डाइवोर्स** विच्छेद न लाइये। जो स्त्री पुरुष इस प्रकार से **डाइवोर्स** लेकर के अपना मुँह काला करना चाहते हैं वह दूसरी तरफ़ जायँ दूसरे अधिनियम का सहारा लें। विवाह की पवित्रता को इस आज की स्मृति के द्वारा कैसे बढ़ाया जाय आपको यह सोचना उचित है।

यह केवल मेरे और आपके बीच की बात नहीं है। आप इस जगह से निकलकर बाहर तो चलिये और देखिए कि कितने आदमी आपको इसके पक्षपाती मिलते हैं।

श्री जगजीवन राम : समाज कितने आदमियों से बनता है। समाज दो चार आदमियों को कहा जाता है या सारे समाज को समाज कहा जाता है?

श्री टंडन : दो चार आदमी नहीं, मैं दो चार जाति भी नहीं कहता, मैं समाज की बात कह रहा हूँ। समाज में फैली हुई क्या प्रथा है। कुछ जातियाँ हैं, जहाँ पति पत्नी के अलग हो जाने की प्रथा चलती है, लेकिन वहाँ भी इसे अच्छा नहीं समझते। मैं तो कहता हूँ कि हरिजनों में भी बार बार विवाह कर अपने पति को जो पत्नी छोड़ती है उसको वह लोग अच्छा नहीं समझते।

श्री जगजीवन राम : क्या यहाँ बार बार छोड़ने की बात कही गई है?

श्री टंडन : यह कह ही कौन सकता है? आप कहेंगे तो आपको कौन बुद्धिमान समझेगा? आपको अधिकार भी नहीं है ऐसा कहने का।

एक माननीय सदस्य : क्या आप इसको अच्छा समझते हैं?

श्री टंडन : प्रश्न है आदर्श का। आप आदर्श नहीं रखते हैं तो न रक्खें। परन्तु क्या आप एक पवित्र स्त्री से कह सकते हैं कि तू चल और चांडालिनी हो जा, तू स्वैरिणी हो जा?

Shrimati Renu Chakravartty: What is all this ? This is very objectionable.

(**श्रीमती रेणु चक्रवर्ती :** यह सब क्या है? यह तो बहुत आपत्ति-जनक है।)

श्री वी० जी० देशपांडे (गुना) : कोई **आबजेक्शनेबुल** बात नहीं है।

श्री टंडन : मैं आपसे कहता हूँ कि अगर आप चाहें तो यहाँ कानून बना सकते हैं।

Mr. Deputy Speaker : The hon. Member will kindly look at me and address the Chair.

(**श्री उपाध्यक्ष :** माननीय सदस्य कृपया मेरी ओर देखें और अध्यक्ष को संबोधित करें।)

श्री टंडन : मैं आप से कहता हूँ। जब इधर से कुछ साहबान बोलते हैं तो मुझे थोड़ा सा उधर भी झुकना पड़ता है।

मैं आप से कहता हूँ कि यह दलील कि क्या हम लोगों से कह रहे हैं कि **डाइवोर्स** करो, बिल्कुल व्यर्थ है। मैं कहना चाहता हूँ कि हम यहाँ एक आदर्श रखते हैं। हमारे देश में पुराने आदर्श के एक राजा ने कहा था—

"न स्वैरी स्वैरिणी कुतः"

हमारे राज्य में कोई स्वैरी नहीं है, हमारे राज्य में कोई भी व्यभिचारिणी नहीं है। हमारा वास्तविक आदर्श यह है। **डाइवोर्स** वहाँ होता है जहाँ व्यभिचारी और व्यभिचारिणियाँ हों। हाँ कभी कभी बहुत थोड़े मामलों में आपसी लड़ाई भी हो जाती है। वह तो बात दूसरी है। मैं कहना चाहता हूँ कि हमें ऊँचे आदर्श रखने हैं। कहीं कहीं ऐसा भी होता है, जैसा कि हमारी बहन ने कहा, **ऐबेरेशन्स** अपवाद होते हैं। उसके लिये मैं रास्ता बता रहा हूँ। उसका रास्ता यह है, जैसा हिन्दू विधि के एक विशेषज्ञ ने बताया, कि उसके लिये मार्ग **स्पेशल मैरेज ऐक्ट** में निकाल दिया जाय।

मैं आप से यही निवेदन करना चाहता हूँ कि मेरा किसी के प्रति आक्षेप नहीं है, हमारे एक मंत्री जी बोल उठे, उनके प्रति भी मेरा आक्षेप नहीं है, न हरिजनों की ओर ही सिर्फ़ संकेत करके मैं कह रहा हूँ।

श्री जगजीवन राम : आप भूलते हैं, हिन्दू समाज में भी बहुत सी जातियाँ ऐसी हैं जिनके अन्दर **डाइवोर्स** है। सिर्फ़ हरिजनों की बात कहना ग़लत है।

सम्पूर्ण हिन्दू समाज का प्रश्न

श्री टंडन : मैं तो ख़ुद कहता हूँ कि ग़लत है। हरिजनों का कोई प्रश्न नहीं है।

श्री जगजीवन राम : आपने नाम लिया, और किसी ने नहीं लिया।

श्री टंडन : आप बोलने के लिये खड़े हुए कि हरिजनों ....

श्री जगजीवन राम : मैं यह कहने के लिये खड़ा हुआ कि हमें पूरा मुल्क देखना है, मैं हरिजनों के बारे में नहीं, हिन्दू समाज के लिये बोल रहा हूँ।

श्री टण्डन : और मैं भी बोल रहा हूँ सबके लिये।

Mr. Deputy Speaker : I would request hon. Members to get up if they want to make an interruption, and make it with the permission of the Chair. Otherwise, they may reserve their remarks at the end and ask some questions.

श्री टंडन : यह अच्छा होगा कि हमारे मंत्री जी जब उनके बोलने का समय आये तब अपनी बात कहें और तब तक वह चुप रहें।

आदर्श की बात

जहाँ तक समाज का सम्बन्ध है, उसमें हरिजन भी हैं, उसमें पिछड़ी जातियाँ भी हैं। मैं इस बात को मानता हूँ कि जो माननीय मंत्री ने यह कहा कि इसमें केवल हरिजनों की बात नहीं है वह ठीक है। बहुत से ऐसे लोग हैं जो **शेड्यूल्ड कास्ट्स** के नहीं हैं लेकिन उनके यहाँ भी पति और पत्नी अलग हो जाते हैं। जो एक वास्तविक बात है उसको कोई थोड़े ही छिपा सकता है, परन्तु मैं फिर कहता हूँ कि हरिजनों के यहाँ भी यह चीज़ अच्छी नहीं समझी जाती है। मैं कहता हूँ कि आप देश में अच्छी आदर्श-वादिता रक्खें, **डाइवोर्स** की बात हम यहाँ न लावें। जो ग़लत क़िस्म के पुरुष हैं, या ग़लत क़िस्म की स्त्रियाँ हैं, मैं उनकी बात नहीं कहता। मैं उन लोगों की बात नहीं कहता जिन लोगों ने पातिव्रत धर्म को या एक पत्नीव्रत धर्म को जीवन में स्थान नहीं दिया। ऐसी बात जहाँ पर आती है, वहाँ पर हम उसके लिये रास्ता निकाल दें।

परन्तु यह जो हमारे देश का आदर्श है, वह आदर्श केवल उच्च जातियों का नहीं है। वह सबका है—हरिजनों का भी है। हमारे सन्तों का वही आदर्श रहा है। आप रैदास की वाणी पढ़िए, पातिव्रत-धर्म के विषय में उनके विचार पढ़िए। मैंने अभी जो दोहा पढ़ा है, वह कबीर का है, जो जुलाहे थे। हमारे देश के जो उच्च विचारक और महात्मागण हुए हैं, उन सबका यह आदर्श रहा है कि पति-पत्नी का जो सम्बन्ध है, वह अत्यन्त पवित्र है। यह कोई उच्च जातियों का प्रश्न नहीं है।

इसी नाते पाटस्कर साहब से मेरा निवेदन है कि वह इस बारे में कोई रास्ता निकालें और इस धारा को हटा दें। इसमें जल्दी की कोई बात नहीं है। वह इस पर पुनः विचार करें और कोई रास्ता निकालें। कुछ और समय ले लें, कुछ बिगड़ नहीं जायगा, और फिर वह ठीक रास्ते पर उचित अधिनियम लायें।

मुझे इतना ही कहना है। मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।

विवादकर व्यवस्था

७ मई १९५५ को भारतीय लोकसभा में हिंदू उत्तराधिकार विधेयक पर बोलते हुए

उपाध्यक्ष महोदय ! इस विधेयक पर मुझे कुछ नयी बातें नहीं कहनी हैं। मैं इसलिये खड़ा हुआ हूँ कि मैं अपनी सम्मति इस सदन के सामने रख दूं—चाहे वह सम्मति बहुत कुछ उसी प्रकार की हो जो मेरे दूसरे भाई प्रकट कर चुके हैं।

दामाद का हस्तक्षेप

मैं इस विधेयक को पढ़कर कुछ चकित हूँ। मेरे भाई मंत्री जी, जो इस विधेयक को इस भवन में उपस्थित कर रहे हैं, इस बात को मानने वाले हैं कि हमें केवल शब्दों, पुरानी बातों और रस्मों की अपेक्षा बौद्धिक क्रम के ऊपर अधिक ध्यान देना है। मैं उनकी इस बात को स्वीकार करता हूँ, यह मैंने उस दिन भी निवेदन किया था। मैं यह चाहता हूँ कि जो बात बुद्धि में न आये, युक्ति में न आये, उसको पकड़ने का यत्न हम न करें। यह उचित नहीं है कि उसको ही चलाए जायें। परन्तु मुझे लगता है कि इस विधेयक में उन्होंने कई चीज़ों में पुरानी बातों को पकड़ा है, कई बातों में उन्होंने हस्तक्षेप करने का यत्न किया है, परन्तु साथ ही कोई उन्होंने ऐसी नयी बात निकाली हो, जो आज की स्थिति और बुद्धि के अनुकूल हो, ऐसा मुझे नहीं लगा। मैं कुछ समझ नहीं पाया कि क्या उनको इसका पता नहीं है कि हमारे देश में किस प्रकार के लोग रहते हैं। जो यह कल्पना करते हैं कि, जिस प्रकार हमारे मुसलमान भाइयों में होता है, लड़की को जायदाद में कुछ हिस्सा दे देने से लड़के आदि उस हिस्से के बदले उसको रुपया दे देंगे वे देहातों की स्थिति को अधिक जानते नहीं हैं। जहाँ पर बहुत अधिक पैसा हो, बहुत रुपया छोड़ा गया हो, वहाँ पर यह बात सम्भव है, लेकिन साधारण रीति से हमारे यहाँ जनता रुपये वाली नहीं है। यह जितना भी आप क़ानून बनाते हैं, जो दाय बचता है उसके विभाजन का जितना भी आपका क़ानून है, वह लगभग पाँच या सात सैकड़े आदमियों के लिए है। जनता की अधिक संख्या हमारे यहाँ पैसे वाली नहीं है। हमारे यहाँ की औसत आमदनी २५५ रुपये प्रति साल निकाली गई है। जिस देश की साल में इतनी कम आमदनी है, जिसमें करोड़पतियों और लखपतियों की

संख्या भी है जिनकी आमदनी दो-तीन या चार-पाँच लाख की है, उसके विषय में हम अनुमान कर सकते हैं कि वहाँ पर करोड़ों आदमी ऐसे हैं, जिनकी आय बहुत ही कम है, २५५ रुपये भी नहीं हैं, केवल ४० या ५० रुपये साल की आमदनी है। आखिर देहात के लोगों के पास है क्या? क्या उनकी जायदाद है और क्या उनकी आय है! यह जितना विधेयक आप बना रहे हैं और जिस सम्पत्ति की यहाँ पर चर्चा हो रही है, उसका सम्बन्ध बहुत थोड़े से गिने हुए शहरी आदमियों से है—अथवा कुछ ऊँचे-ऊँचे जमीदारों से है। यदि यह विधेयक उन्हीं तक सीमित होता, तो मुझे बहुत चिंता न होती। यह क़ानून वहाँ जायगा, जहाँ बहुत छोटे-छोटे कच्चे घर हैं और दो एक बीघे ज़मीन है। आपने व्यवस्था की है कि देहात में भूमि का कुछ हिस्सा दामाद के घर में भी पहुँचे। मुझे ऐसा लगता है कि यह बात बहुत बुद्धि की नहीं है। आप यह क्या करने जा रहे हैं? क्या हमारे देश में इस बारे में बहुत पुराने समय से विचार नहीं किया गया था? क्या अब तक हमारी लड़कियों के साथ अन्याय ही होता रहा है? जब हमारी कुछ बहिनें यह बात कहती हैं, तो मुझे हँसी आती है और आश्चर्य होता है। क्या उनको यहाँ की स्थिति का ज्ञान नहीं है? क्या वे विलायत से आयी हैं?

श्री टेक चन्द (अम्बाला-शिमला) : दिमाग़ विलायत से आए हैं।

लड़की दूसरे घर का धन

श्री टंडन : पुत्री के विवाह के लिए हम अपने को बेच देते हैं। न जाने कितने भाई और पिता जन्म भर गुलामी करते हैं इसलिए कि लड़की के विवाह से उऋण हों। इतना लड़की के लिए करते हैं! लड़की हमारे यहाँ लक्ष्मी का स्वरूप मानी जाती है। उसके साथ अन्याय का प्रश्न ही क्या है? परन्तु इसमें भी कोई सन्देह नहीं है—और यह वास्तविकता है—कि लड़की दूसरे घर का धन है। चूंकि लड़की को दूसरे घर जाना ही है, इस लिए हमारे यहाँ कहावत है कि लड़की दूसरे घर का धन है। लड़की को कोई अपने घर बिठा नहीं लेता है। लड़की के लिए हमारे ऊपर यह एक बड़ा दायित्व होता है कि कहीं न कहीं से पैसा लायें, उसकी रक्षा करें और फिर उसका विवाह करें। जब लड़की का विवाह होता है, तो लखपति और करोड़पति उसको लाखों देते हैं और देहात का वह आदमी जिसके पास अधिक पैसा नहीं है, सौ दो सौ रुपये में ही लड़की का विवाह कर देता है, परन्तु प्रायः लड़की को कुछ न कुछ देता ही है। इसके अपवाद अवश्य होते हैं, उनकी चर्चा मैं नहीं करता। और अपवाद केवल यहीं नहीं है, दूसरे देश में भी ऐसे लोग हैं, जो लड़की के बदले पैसा लेते हैं। यह केवल यहाँ की

बात नहीं है। मैंने यूरोप के एक देश की बात सुनी है। जार्जिया की कथा बहुत प्रसिद्ध है। वहाँ सुन्दर लड़कियाँ होती हैं। दूसरे लोग वहाँ जाते हैं, लड़कियाँ लेते हैं और उनके पिता को भेंट करते हैं। बहुत जगह यह प्रथा है।

मैं यह कहना चाहता हूँ कि लड़के और लड़की का स्वरूप बिल्कुल एक नहीं होता है। **इकनामिक ईक्वैलिटी**—आर्थिक बराबरी—की बात एक बड़ी सस्ती बात है। क्या कोई देश सचमुच आर्थिक बराबरी स्थापित करने का दावा कर सकता है? यह कहिए कि अवसर दिया जाय, परन्तु आर्थिक बराबरी का नाम लेकर क्या कोई बहुत सच्ची बात करेगा? क्या यूरोप में आर्थिक बराबरी है? आज भी यूरोप और अमेरिका में स्त्रियाँ तड़पती हैं, जब वे जवान होती हैं, कि हमारे लिए पति मिले, चारो ओर वे पति-आकांक्षिणी होती हैं—इस कारण से कि आर्थिक आवश्यकता उनको होती है और हमारे यहाँ तो वह है ही। क्या इसमें कोई सन्देह है? आज भी स्त्रियों का आदर मान बराबर होता है, लेकिन कुटुम्ब का बोझ पुरुषों के ऊपर ही होता है, पिता पर होता है, लड़कों पर होता है—स्त्रियों के ऊपर कोई बोझ नहीं डाला करता है। इस स्थिति को हमें भूल नहीं जाना चाहिए। ऐसी दशा में थोड़े थोड़े से पैसों के लिए, जायदाद के लिए, ऐसा रूप देना कि कलह उत्पन्न हो, कोई बुद्धिमानी की बात नहीं है। इसीलिए मैं मंत्री महोदय को इस बिल के ऊपर बधाई नहीं दे सकता हूँ।

मुझे इसमें युक्ति और बुद्धि की और अपने देश की स्थिति की जानकारी की गहरी कमी लगती है। बम्बई, कलकत्ता आदि शहर जहाँ बड़े बड़े धनी लोग रहते हैं, वे तो हमारे देश का रूप नहीं हैं। वहाँ हो सकता है कि यदि लड़कों को पिता की मृत्यु के बाद २-२ लाख या ४-४ लाख रुपये बंटे, तो लड़की को भी लाख डेढ़ लाख मिलना चाहिए जो प्रायः दे भी दिया जाता है। परन्तु जैसा हमारे और भाइयों ने कहा एक व्यापारी के लिए भी यह कठिन है कि उसके व्यापार का बंटवारा हो और उसमें झगड़ा और टंटा उठ खड़े होने की सदा सम्भावना बनी रहेगी। देहाती आदमी के पास एक छोटी सी झोपड़ी है। जब उसकी लड़की का विवाह हो जाता है वह दूसरे के घर चली जाती है। उस ग्रामीण का दामाद अथवा दामाद का पिता अपने हिस्से का बंटवारा कराने के लिए लड़की के पिता के दरवाजे पर लट्ठ लेकर आये, तो इस तरह तो झगड़ा और टंटा खड़ा करना है।

एक माननीय सदस्य : उसका परिणाम कोर्ट में जाना होगा।

श्री टंडन : वर्तमान रूप में विधेयक को पास करना झगड़े और टंटे को खड़ा करना है और हमारा देश मंत्री महोदय को इस विधेयक के लिए बधाई नहीं दे सकता। उन्हें इस बिल को वापिस ले लेना और इस पर फिर विचार करना चाहिए। मैं तो इस पक्ष में हूँ कि **सेलेक्ट कमेटी**, प्रवर

समिति, में यह जाने के योग्य नहीं है, इसके ऊपर उन्हें फिर से विचार करना चाहिए। उसको दूसरा रूप देकर वह सदन में लायें।

परिवार का बोझ पुत्र पर

एक बात और है जिसके विषय में उन्हें सोचना चाहिए। जिन्हें अपनी लड़की को कुछ जायदाद अथवा सम्पत्ति देनी होती है कभी कभी वह वसीयत से देते हैं, परन्तु फिर भी प्रायः यही देखा जाता है कि लोग यह पसन्द करते हैं कि जायदाद उनके लड़कों के बीच में ही रहे और इस कारण उन्हें लड़की को जो देना होता है, वह अपने हाथ से उठा कर दे देते हैं। ऐसा करने में एक कारण यह रहता है कि आदमी की यह स्वाभाविक इच्छा रहती है कि उसका जो कुटुम्ब और परिवार है वह चले, और कुटुम्ब लड़के से चलता है, लड़की की ओर कुटुम्ब के लिए नहीं देखा जाता है। एक पिता अपने कुटुम्ब के चलने के लिए अपने लड़के की ओर देखता है, लड़की की ओर नहीं देखता क्योंकि लड़की शादी के बाद दूसरे घर में चली जाती है और उस घर की हो जाती है। इसका यह अर्थ न समझ लिया जाय कि मैं स्त्रियों को उनके अधिकार देने के पक्ष में नहीं हूँ, हमें उनको उचित मात्रा में देना है और उनको हर प्रकार से समर्थ बनाना है। मैंने पहले ही कहा कि मैं युक्ति के साथ चलना चाहता हूँ और शास्त्रों और स्मृतियों में जो सैकड़ों और हजारों वर्ष पहले उस काल के अनुसार लिखा गया था, उससे मैं अपने को आँख बन्द करके बाँधने को तैयार नहीं हूँ।

पत्नी का अधिकार उचित

पुरानी बात तो यह थी कि पत्नी को कोई अधिकार नहीं था। वह बात आधुनिक काल में उचित नहीं थी। अब थोड़े दिन पहले एक अधिनियम पारित करके आपने पत्नियों को जो अधिकार दिया, उसका मैं स्वागत करता हूँ और उसको रहना ही चाहिए। मैं इस मत का बिलकुल पोषक हूँ कि पति की जायदाद में पत्नी का गहरा अधिकार रहना चाहिए और मैं तो कहूँगा कि पति के बाद अगर आप सारी जायदाद उसकी पत्नी को दे दें और लड़के को न दें, तो मैं उसका विरोध नहीं करूँगा और आप भले ही ऐसी व्यवस्था कर दें कि पति के बाद पत्नी सारी जायदाद की मालिक होगी और लड़के के स्थान पर लड़के की माता का सारा अधिकार होगा, कुल अधिकार आप माता को दे दीजिये, लड़के को कौड़ी मत दीजिए, माता स्वयं ही उसको देगी, आखिर वह उस लड़के की माता जो ठहरी, माता होने के नाते वह अपने लड़कों को स्वयं देगी। आप स्त्री मात्र के प्रति इस तरह आदर दिखलाइये कि पुरुष के मरने के बाद सारी जायदाद की हक़दार उसकी औरत हो, पत्नी

पूर्ण अधिकारिणी हो, उसका बंटवारा लड़के के साथ न हो, **साइमलटेनियस एयर** नहीं, मुख्य भाग उसका हो, मैं तो इसका पक्षपाती हूँ। आपने इस विधेयक में रक्खा है कि लड़के के साथ उसको एक हिस्सा मिलेगा, मैं कहता हूँ कि पत्नी को पूरा अधिकार दिया जाय।

लड़कियों का उत्तराधिकार

जहाँ तक लड़कियों को पिता की जायदाद में हिस्सा देने की बात है, मैं कहूँगा कि यदि लड़की अविवाहित है तो अवश्य उसको हिस्सा मिलना चाहिए क्योंकि सम्भव है आगे चलकर उसका विवाह आदि करने में कोई झंझट उठ खड़ा हो, इसलिए आप अविवाहित लड़की को उसके पिता की जायदाद में अधिकार दीजिए, परन्तु जहाँ तक विवाहिता स्त्रियों को हिस्सा देने की बात है यह देखना पड़ता है कि जब लड़की की शादी हो जाती है तब वह दूसरे घर की हो जाती है। वह स्वतंत्र नहीं होती और उसके ऊपर उसका पति रहता है जो उसको रास्ता दिखलाता है और यह हो सकता है कि स्त्री को उसका पति प्रेरणा करे या ससुर प्रेरणा करे और दूसरे कुटुम्ब वाले उस स्त्री के पिता के कुटुम्ब में आकर उनके घरेलू मामलों में हस्तक्षेप करें और झगड़ा टंटा उठ खड़ा हो। मेरा निवेदन है कि आप ऐसी व्यवस्था करके झगड़ा बढ़ा रहे हैं और इसलिए विवाहिता स्त्री को जो हिस्सा पिता की जायदाद में देने की बात आपने रखी है, वह ठीक नहीं है। जिसे लड़की को कुछ देना होता है वह उठाकर अपने हाथ से अपने जीवनकाल में दे जाता है।

माता पिता का उत्तराधिकार

अब दूसरी बात मुझे यह कहनी है कि आपने प्रथम श्रेणी में, जिसको आपने अंग्रेजी में **क्लास १** लिखा है, जिन लोगों का बराबर का हिस्सा है, उनमें आपने माता पिता को रखना उचित नहीं समझा। बात यहाँ पर हो रही थी स्त्रियों के आदर की, तो क्या आपके सामने माता उतनी आदरणीय नहीं है जितनी कि लड़की या लड़की की लड़की? जो दूसरे कुटुम्ब में चली गई है उसका हिस्सा लड़के के साथ है, परन्तु उसकी माता का आप आदर नहीं करते, यह बहुत अनुचित है। हमारे देश में माता पिता का जो आदर है उसको देखते हुए मैं यह कहना चाहता हूँ कि आप उनको पहली श्रेणी में रक्खें, माता और पिता दोनों पहली श्रेणी में रक्खे जायँ और उनका अपने लड़के की जायदाद में अधिकार हो।

श्री बोगावत (अहमदनगर दक्षिण) : उनको लम्बा ढकेल दिया है।

श्री टंडन : उनको आपने पहली श्रेणी से हटा कर दूसरी श्रेणी में कर

दिया है और इसके अर्थ यह हुए कि उन्हें कुछ नहीं मिल सकेगा, उनका नम्बर तो तब आयेगा जब प्रथम श्रेणी में लेने वाला कोई न बचे। अब यह जो प्रथम श्रेणी में लड़की की लड़की को हिस्सा देने की बात है वह इस तरह होगी कि मान लीजिये मेरी लड़की का विवाह कलकत्ते में हुआ और मेरी लड़की की जो लड़की है उसका विवाह आसाम में हुआ, मेरे मरने के बाद उन सबका तो मेरी सम्पत्ति में अधिकार होगा लेकिन मेरी जायदाद पर मेरे माता-पिता को कोई अधिकार नहीं होगा, यह क्या बुद्धिमानी है ? मुझे तो यह बात बहुत विचित्र लगी और मुझको तो ऐसा लगता है कि हमारे पाटस्कर जी मानों इस विधेयक के बनाने वाले हैं ही नहीं, और यह किसी और की बनाई वस्तु उनके ऊपर ढकेल दी गई है और उसको उन्होंने हम लोगों के सामने रख दिया है। मुझे विश्वास नहीं होता कि यह पाटस्कर जी की बुद्धि का परिणाम है। मैं चाहता हूँ और उनसे अपील करता हूँ कि वे इसको वापिस लें, मैं तो अपने साथियों से यह कहूँगा कि वे **सेलेक्ट कमेटी** का जो यह प्रस्ताव है, उसके विरुद्ध वोट करें। मैं इसको **सेलेक्ट कमेटी** में भेजना ही नहीं चाहता, यह एक बहुत ही रद्दी वस्तु है। सेलेक्ट कमेटी में तो एक ठीक विधेयक जाना चाहिए जिसे सेलेक्ट कमेटी उसमें इधर उधर थोड़ी बहुत कांट छांट करके भेज दे। इस प्रकार से यह विधेयक वर्तमान रूप में प्रवर समिति के पास भेजे जाने के योग्य नहीं है। मैं और अधिक नहीं कहना चाहता। मुझे आशा है कि हमारे भाई स्वतन्त्रता के साथ इस पर अपना मत व्यक्त करेंगे, इसके ऊपर सचेतक का कोई ह्विप नहीं है और यह ठीक भी है कि ऐसे विषयों पर सदस्यों को अपना स्वतन्त्र मत प्रकट करने और मतदान देने की छूट होनी ही चाहिए। सदस्य लोग जैसा उचित समझें करें। हम सब कहें कि यह विधेयक संयुक्त प्रवर समिति को न भेजा जाय और हम यह माँग करें कि श्री पाटस्कर जी इसको वापिस ले जायँ और फिर विचार करके अधिक बुद्धिमानी की एक वस्तु हमारे सामने लायें।

२९

विस्थापितों की सहायता

१३ सितम्बर १९५५ को भारतीय लोक-सभा में विस्थापित समस्या पर बोलते हुए

स्वतंत्रता का मूल्य

सभापति जी ! यह विस्थापितों का प्रश्न सदा से मेरे हृदय पर गहरी चोट करता आया है। मैंने अनुभव किया कि हम लोगों ने जो इस ओर भारतवर्ष के उन भागों में थे जहाँ मारकाट नहीं हुई और जहाँ के लोग बिना घरबार वाले नहीं बनाये गये, हम लोगों ने स्वतंत्रता बहुत आसानी से, आपेक्षित दृष्टि से, बहुत आसानी से पाई जब कि पुराने पंजाब और पूर्वी बंगाल के रहने वाले भाइयों को स्वतंत्रता के लिए जो मूल्य देना पड़ा वह कहीं ज़्यादा गहरा था उसकी अपेक्षा जो हमने दिया। ऐसी सूरत में हम लोगों का, जिनको कोई विशेष कष्ट नहीं हुआ, कर्तव्य था कि हम उन विस्थापितों के कष्ट में हृदय खोलकर शामिल होते और मैंने इसी दृष्टिकोण को सामने रखकर एक समय सुझाव दिया था कि हम लोगों के ऊपर एक विशेष टैक्स विस्थापितों के कष्टों को दूर करने के लिए लगाया जाय। इधर हमारे बहुत धनी लोग भी हैं। उनके धन का अगर कुछ भाग इसमें ले लिया जाता तो एक अच्छी रक़म खड़ी हो सकती थी और उसका उपयोग इन दुखी भाइयों के कष्ट को कुछ कम करने के लिए किया जा सकता था परन्तु मेरा वह सुझाव नहीं माना गया। सरकार ने अपनी साधारण आय में से इनकी कुछ सहायता की, परन्तु वह सहायता बहुत ही कम रही है। इस विषय में पुनर्वास मंत्री महोदय के ऊपर मेरा कोई आक्षेप नहीं हो सकता क्योंकि यह तो नीति की बात थी।

क्रियाशील सहानुभूति

प्रारम्भिक काल से जब से यह मुसीबत हमारे ऊपर सन् ४७ में आई, उस काल से मेरे ऊपर यह असर है कि केन्द्रीय सरकार ने, इस विषय में जो सहानुभूति, क्रियाशील सहानुभूति, दिखलानी चाहिए थी उसमें बहुत कमी की है। मेरा यह आक्षेप अपनी गवर्नमेंट पर अवश्य रहा है और आज भी है। हम लोगों ने अनुमान किया था कि जो हमारे भाई पाकिस्तान से आये थे, उनकी क़रीब १५, २० अरब रुपये की हानि हुई थी। आज उस

हानि के बदले में हमने उनको क्या दिया है? गवर्नमेंट ने अब तक सब मिला कर क्या दिया है? बहुत कम दिया है। मेरा तो आज भी सुझाव है, मैं जानता हूँ कि हमारे मंत्री जी के हाथ में यह नहीं है, परन्तु मैं फिर भी आज वही बात कह रहा हूँ, इसलिए कि मैं आशा करता हूँ कि कम से कम मेरी बात वह अपनी **कैबिनेट** को सुना तो देंगे, यह तो बतला देंगे कि हमारी यह माँग है। हमारी माँग यह है कि इस समय भी, आखिरी समय भी जब अन्तिम विदाई हमको देनी है, अपने भाइयों को प्रतिकर, मुआवज़ा देना है तो हम पहले से कुछ अधिक उदारता दिखलायें। पंडित ठाकुर दास भार्गव ने पचास करोड़ की बात की थी। मैं तो उसको सड़ी सी रक़म समझता हूँ लेकिन आज आप उसे भी देने को तैयार नहीं हैं। मैं इससे कहीं ज्यादा रक़म चाहता हूँ कि उनको दी जाय। गवर्नमेंट ने अब तक जो रक़म इसमें दी है उससे और मिलाये। कम से कम गवर्नमेंट ४, ५ अरब रुपया तो और निकाले। आप बड़ी बड़ी योजनाओं पर काफ़ी रुपया कहीं न कहीं से निकाल लेते हैं तो इसके लिए भी आप अवश्य कोई व्यवस्था कर सकते हैं। अगर आप उसके लिए विशेष टैक्स नहीं लगाना चाहते तो मत लगाइये, आप कहीं और से इसका प्रबन्ध करिये और इस कोष को बढ़ाइये। यह जो १८५ करोड़ रुपये का आपने **कम्पेनसेशन पूल** बनाया है, यह बहुत ही कम है। मेरा मुख्य कहना यह है।

ग़रीबों को पूरा प्रतिकर

जिस तरह से कि ज़मीनों की बात हुई थी अर्थात् जो भाई उधर जमीनें छोड़कर आए हैं उनको जिस अनुपात से जिस **रेशियो** से आपने भूमि पंजाब में दी उससे भी आज जो रुपया आप दे रहे हैं वह कम है, हालाँकि आप जानते हैं कि जिन भाइयों को आज आप यह मुआवज़ा दे रहे हैं इस मुआवज़े के देने में उनके उन नुक़सानों को, उन घाटों को आप नहीं देख रहे हैं जो चल सम्पत्ति द्वारा उनको हुई है। जितनी चल सम्पत्ति उनकी गई उसको आपने हिसाब में नहीं लिया। आपने केवल मकान आदि को देखा और इसमें जो छोटे-छोटे लोग थे उनको भी आप बहुत कम करके मुआवज़ा दे रहे हैं। यहाँ पर यह सुझाव भी दिया गया है और मैं इससे सहमत भी हूँ कि जो बहुत छोटे लोग हैं उनको आप कुछ हद तक अधिक दें। जो आपने उनके दावे स्वीकार किये हैं उन दावों की पूरी रक़म कम से कम कुछ लोगों को देनी ही चाहिये।

यहाँ अभी थोड़ी देर हुई गृह मंत्री पंत जी आये थे लेकिन अब तो वह चले गये हैं। अगर वह होते तो मैं जो बात अब कहने जा रहा हूँ वे उसको स्वीकार करते। उत्तर प्रदेश में जब ज़मींदारी प्रथा समाप्त हुई तब यह बात ठीक थी कि जिनसे ज़मींदारियाँ ली गई उनको, उन ज़मींदारियों के बदले में बहुत

कम रुपया दिया गया क्योंकि उनको पूरा रुपया देना मुमकिन नहीं था और नहीं दिया जा सकता था। परन्तु जो नीचे दर्जे के लोग थे उनमें से बहुतों को पूरा मुआवज़ा देने का यत्न हुआ और जैसे जैसे ऊपर गए वैसे वैसे मुआवज़े की रक़म कम होती गई। आपने तो पूरा मुआवज़ा देने की कहीं बात ही नहीं रखी। मेरा सुझाव है कि कुछ हद तक लगभग ५,००० रुपये तक के जिनके दावे हैं उनको पूरा मुआवज़ा देने का यत्न आप कीजिये। इसका नतीजा यह हो सकता है कि ऊपर जाकर उन लोगों के दावों में जिनके दावे दो लाख से ऊपर हैं आपको कुछ कमी करनी पड़े। मैं समझता हूँ कि अगर आपको ऐसा करना पड़े तो यह बेहतर होगा कि आप इसको भी करें। मैं यह नहीं कहता कि आप उनके दावे को घटा दें लेकिन अगर दोनों में चुनना पड़े तो जो लोग ग़रीब हैं उनको आप ज़्यादा सहूलियत दें। जिनको दो लाख का मुआवज़ा देना है उसमें यदि कुछ कमी कर दी जाय और साथ ही साथ जो ग़रीब हैं उनको आप कुछ हद तक पूरा मुआवज़ा दें, यह ज़्यादा अच्छा होगा।

अधिक धन दीजिए

जो मुख्य बात मैं कहना चाहता हूँ वह यह है कि आप यह काम तभी कर सकते हैं जब आप कुछ पैसा और उसमें लगाएँ। पंडित ठाकुर दास भार्गव जी ने अपने भाषण में इस बात की चर्चा की है कि जो ऐशोरेंस आपके पूर्वगामी मंत्री श्री अजित प्रसाद जैन ने इस भवन में दिए थे उनको पूरा किया जाय। उन्होंने यह वायदा तो नहीं किया था कि वह गवर्नमेंट से रुपया दिला सकेंगे या दिला देंगे परन्तु उनके कुछ शब्द बहुत साहस के थे। उन्होंने कहा था कि मुझको अपने में भरोसा है, यह शब्द उनके थे। साथ ही उन्होंने हमदर्दी भी दिखलाई थी......

मिस्टर चेयरमैन (पंडित ठाकुरदास भार्गव) : यह भी कहा था कि जब दूसरा **प्लान** तैयार होगा उस वक्त भी मैं यह चीजें गवर्नमेंट के सामने रखूंगा और साथ ही उन्होंने **रिहैबिलिटेशन ग्राण्ट** के बारे में कहा था।

दूसरों से लीजिए

श्री टंडन : उन्होंने कहा था कि मैं फिर गवर्नमेंट के सामने उनकी बात को रखूँगा। मेरा विश्वास है कि उन्होंने रखी होगी। अब चूँकि आप मंत्री हैं, मुझे आशा है कि आप इस विषय में यत्न करेंगे। मैं जानता हूँ कि इसके लिए आपको अधिक पैसे की आवश्यकता पड़ेगी। यह काम एक करोड़, दस करोड़ या पच्चीस करोड़ में होने वाला नहीं है। आपको क़ाफ़ी रुपया दिये। मैं यह अन्तिम निवेदन इस विषय पर करना चाहता हूँ, और

शायद आज ही ऐसा निवेदन करने का अवसर है, कि आप इन विस्थापितों के साथ अधिक न्याय कीजिये। आप उन लोगों से लीजिये जिन्होंने बहुत आराम के साथ स्वराज्य पाया है और जो दुमहले, चौमहले दिल्ली, पंजाब और कलकत्ता में खड़े कर रहे हैं। इन सब से आप पैसा निकालें। मामूली आदमी की जेब में भी आप हाथ डालें, हम सब भी कुछ न कुछ दे सकते हैं। परन्तु इन दुखियाओं की ओर आप कुछ और कृपा की निगाह से देखिये। मैं बराबर अनुभव करता हूँ कि किस प्रकार से यह दुःखी लोग दौड़ते फिरते रहे हैं, छोटे छोटे स्थानों पर जाते हैं। मेरा कार्यालय है, लोक सेवक मंडल का। मैं देखता हूँ कि उस कार्यालय में आज मैं और मेरे साथी अचिंतराम जी कुछ बहुत नहीं कर पाते परन्तु उनको यह विश्वास है कि कुछ सुनवाई होती है और इसीलिए वहाँ ये लोग दौड़े चले आते हैं। ये लोग वहाँ आज से नहीं आ रहे हैं, जब से यह मुसीबत आई है तब से ही आते हैं। कुछ अनुभव हम लोगों को है कि कितनी कठिनाई इनको होती है। मकानों का ही प्रश्न है जो अब नीलाम हो रहे हैं। उसके मारे अपना दुःख सुनाने के लिए कितने ही लोग हमारे पास आते हैं।

बुरा दूसरों ने किया। मुझे उन बुराइयों में नहीं जाना है—बस यह आपकी गवर्नमेंट से मुझे अन्त में कहना है कि इसमें अधिक न्याय करने की बात सोची जाय और इन दुखियाओं का दुःख दूर करने के लिए जहाँ से भी हो आप पैसा इकट्ठा करें। मेरी समझ में तो कम से कम यदि आप १०० करोड़ रुपया और लायें तो भी यह काम पूरा होने वाला नहीं है। जो पंडित भार्गव जी ने ५० करोड़ की माँग की मैं उसको कम समझता हूँ। १०० करोड़ रुपया, उस सब को छोड़ कर जो आपने आज तक दिया है, यदि आप और दें तो भी मैं समझता हूँ कि यह कम ही होगा।

बस मेरा यह निवेदन है कि मेरी यह आवाज़ आप **कैबिनेट** तक पहुँचा दें, यही अन्त में मुझे मंत्री महोदय से प्रार्थना करनी है।

३०

गोआ की समस्या

१७ सितम्बर १९५५ को भारतीय लोक-सभा में विदेश नीति पर बोलते हुए

सभापति जी ! आज के विदेशी विषयों के इस वादविवाद में मैं कुछ शब्द केवल गोआ के बारे में निवेदन करने को खड़ा हुआ हूँ।

सुनहली रेखा

सबसे पहले मैं अपनी श्रद्धांजलि उन वीरों को अर्पित करता हूँ जिन्होंने गोआ के सत्याग्रह में अपने प्राणों की आहुति दी है। उसके बाद मेरी श्रद्धांजलि उन बहुत से साहसी पुरुषों और नारियों के लिए है जिन्होंने अच्छी संख्या में गोआ में प्रवेश किया और चोटें खायीं। इन चोटों में बहुतों को गोलियाँ भी लगीं। स्वभावतः पोर्चुगाल के इस अत्याचार की नीति पर हमारे हृदय में क्षोभ उत्पन्न होता है।

परन्तु साथ ही मुझे इस सत्याग्रह से एक प्रसन्नता हुई। भविष्य की एक सुनहली रेखा मुझको आकाश में दिखाई पड़ी। अपने राष्ट्रपिता गांधी जी के नेतृत्व में हमने देखा कितने युवक और अधिक अवस्था के लोग भी साहस से बढ़कर देश के लिए अपनी बलि चढ़ाने को तैयार हुए। जब जब उन्होंने कोई पग उठाया चारो ओर से उनकी पुकार पर सहस्रों नर नारी देश के लिए खड़े हुए। कुछ ऐसा लगता था कि हमारे हृदय की वह लहर इधर ढीली सी हो चली थी। इस सत्याग्रह ने हमें दिखलाया कि हमारे जन समुदाय के भीतर इस समय भी साहस, वीरता और त्याग की वह भावना मौजूद है जो राष्ट्र का मुख्य आधार हुआ करती है। इस कारण मुझको इस सत्याग्रह आन्दोलन पर प्रसन्नता हुई और मैंने उन युवकों को जो सत्याग्रह के लिए गए थे, हृदय से आशीर्वाद दिया।

परन्तु आज विवाद का प्रश्न तो यह है कि सत्याग्रह जो बंद कर दिया गया वह क्या ठीक हुआ। हमारे कई भाइयों ने इस प्रश्न को इस तरह देखा कि इसमें शासन के अधिकारियों के पैर ठंडे हो गये। इस बात को उन्होंने अंग्रेज़ी भाषा में कहा था। मुझे निष्पक्ष भाव से इस प्रश्न को देखते हुए ऐसा नहीं लगा। सत्याग्रह ने अपना काम किया। सत्याग्रह ने साहस की लहर फैलाई। सत्याग्रह ने संसार के सामने गोआ के प्रश्न को स्पष्ट रीति से रक्खा, यह सत्याग्रह का गहरा लाभ हुआ। उसका प्रभाव भी संसार के अन्य राष्ट्रों पर पड़ा, मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है।

सत्याग्रह—एक अनुष्ठान

परन्तु हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिये कि सत्याग्रह एक अनुष्ठान होता है। मैं आशा करता हूँ कि अनुष्ठान का अर्थ आप सब लोग समझते होंगे . . .

Dr. Lanka Sundaram (Visakhapatnam) : Please translate it into English.

(**डा० लंका सुन्दरम् (विशाखापत्तनम)** : इसे अंग्रेज़ी में अनुवादित कर दीजिए।)

श्री टंडन : अंग्रेज़ी में मैं उसका अनुवाद नहीं कर सकता। अनुष्ठान यज्ञ के समान होता है जो बारहो महीने नहीं चला करता। वह सामयिक होता है और विशेष कार्य के लिए किया जाता है। सत्याग्रह भी एक अनुष्ठान है, यज्ञ है, समय से किया जाता है और समय पर उसका परिणाम सामने आता है। किसी अभिप्राय से अनुष्ठान किया जाता है, परन्तु वह कोई स्थायी कार्य नहीं होता। सत्याग्रह यहाँ हुआ और उसका कुछ परिणाम हुआ। हाँ ! यह परिणाम नहीं हुआ कि गोआ आपको मिल गया हो। परन्तु उसका लाभ हुआ, इसमें कोई सन्देह नहीं। गोआ का प्रश्न आगे बढ़ा और संसार के सामने आया। प्रश्न यह है कि क्या यह अनुष्ठान अभी जारी रह सकता था। कुछ थोड़े दिन और भी जारी रखा जाना सम्भव था, परन्तु यह तो स्पष्ट है कि ऐसे अनुष्ठान सदा नहीं चला करते, स्थायी नहीं होते। आपने गांधी जी के क्रम में भी देखा था कि किस प्रकार से वह चलाते थे और फिर समय पर उस अनुष्ठान को खींच भी लेते थे। यहाँ प्रधान मंत्री जी ने यह तो नहीं कहा कि उन्होंने उसको चलाया, जो कुछ उन्होंने कहा वह तो अपने हृदय की सही बात कही, अर्थात् उन्होंने इस अनुष्ठान को चलाने का दायित्व कभी अपने ऊपर नहीं लिया। परन्तु इतना तो स्पष्ट है कि यद्यपि उन्होंने स्वयं उसको नहीं चलाया, तो भी सहानुभूति उनके हृदय में सत्याग्रहियों के प्रति थी। आदर सत्कार और आशीर्वाद की भावना उनमें थी, यह भी स्पष्ट है। इसीलिए उनको आज यह सुनना पड़ा, जैसा कुछ भाइयों ने कहा, कि आपकी नीति में परिवर्तन हो गया है।

नीति परिवर्तन

उन्होंने स्वयं यह कहा कि हमारी नीति में परिवर्तन नहीं हुआ है। विरोधी भाइयों की बात मैंने जो सुनी और प्रधान मंत्री जी ने जो कुछ कहा, उसमें मुझे कुछ बीच की बात सही लगती है। सम्भवतः जानबूझ कर प्रधान मंत्री ने नीति नहीं बदली हो परन्तु उनका पहले जो क्रम था वह आशीर्वादात्मक और सहानुभूतिपूर्ण था, उसमें अन्तर पड़ा जब सत्याग्रह

को उन्होंने रोका इसमें तो कोई सन्देह नहीं है। उन्होंने बताया कि उनके स्वयं मस्तिष्क में बहुत स्पष्टता नहीं थी। उन्होंने कहा कि आरम्भ में मैं बहुत स्पष्ट नहीं था कि क्या कर्तव्य है।

वह यह समझते हैं कि उनकी नीति में अन्तर नहीं हुआ। इधर लोगों ने यह समझा और यह आक्षेप किया कि उनकी नीति में अन्तर हुआ। मैं मान लेता हूँ आपकी बात कि अन्तर हुआ है। तो क्या नीति में अन्तर करने से सदा बुराई होती है? जो बुद्धिमान पुरुष होता है उसको तो अपनी नीति को समयानुकूल बदलना पड़ता है। जो नीति पाँच दिन पहले थी वह आज भी उसी नीति पर चलता रहे जब संघर्ष छिड़ा है, यह आवश्यक नहीं है, यह तो आप सब स्वीकार करेंगे। यदि उनके हृदय ने उस सत्याग्रह की नीति को उस समय स्वीकार भी किया हो चाहे बेजाने, जिसको अंग्रेज़ी में **सब-कांशस माइंड** कहते हैं उसके द्वारा, उन्होंने तो यह कहा है कि कोई अन्तर नहीं किया है, परन्तु यदि उन्होंने उस नीति को अपना मन स्पष्ट न होने के कारण कुछ दिन के लिए चलाया भी, तो फिर पीछे जब उन्होंने देखा कि अब इसको हम बन्द करें, कुछ कारणों से, तो इसमें न कोई उनकी झूठी बात है और न नीति की बुराई ही है। इसमें न कोई उन्होंने अपराध किया है और न ही यह कोई अनीति है।

शासन ने दायित्व लिया

मैं स्वयं यह समझता हूँ कि अब गवर्नमेंट ने या शासन ने यह स्पष्ट कर दिया कि अब हम यह दायित्व अपने ऊपर लेते हैं, हम अब गोआ पर सील लगाते हैं, यह उनका अंग्रेज़ी का शब्द है। उन्होंने हर दायित्व को अपने ऊपर लिया और कहा कि अब हम पुर्तगाल के साथ निबटेंगे, आर्थिक रोकथाम लगाकर, अथवा उनके मन में दूसरी बातें हैं जो उन्होंने स्पष्ट नहीं कहीं, परन्तु उन्होंने कहा कि शासन इस दायित्व को अपने ऊपर लेता है और द्वार को बन्द करता है, उनको आने नहीं देंगे और जब उनको आने नहीं देंगे तब फिर हम कैसे आपको जाने देंगे? अंग्रेज़ी में उन्होंने जो लफ़्ज इस्तेमाल किया है वह यह है कि यह **एप्रोप्रियेट** नहीं है कि हम आपको जाने दें। मुझे तो यह बात नीतिपूर्ण और ठीक लगी है कि उन्होंने द्वार बन्द करके सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली। अभी तक तो सत्याग्रहियों ने यह ज़िम्मेदारी अपने ऊपर ली थी। अनुष्ठान उन्होंने किया और उनका अनुष्ठान चलने दिया गया कुछ देर तक। अब यह कहा गया है कि अनुष्ठान को बन्द किया जाय और हम स्वयं ज़िम्मेदारी लेकर सामने आते हैं और हम इसका निबटारा करेंगे। मैं नहीं समझता कि क्यों गवर्नमेंट को, जिसने बहुत बड़ा दायित्व अपने ऊपर लिया है, अवसर न दिया जाय। आपको चाहिये कि आप अनु-

ष्ठान को बन्द कर दीजिए। उन्होंने अपने ऊपर इस ज़िम्मेदारी को लेकर एक साहस का काम किया है और आप उन्हें अवसर दीजिये, देखिये वह क्या करते हैं। यह काम एक दो दिन में तो हल हो नहीं सकता। आपको चाहिये कि आप उनको साल छः महीने का समय दीजिये और देखिये वह क्या करते हैं। आप देखें कि उनकी कार्रवाइयों का क्या परिणाम निकलता है। उन्होंने **इकनामिक सैंक्शन** लगाने की बात कही है। साधारण रीति से माल के आने जाने पर, जहाजों द्वारा माल के आने जाने पर रोक लगाने की बात कही है। इन सब कार्रवाइयों के बावजूद यदि आप देखें कि कोई नतीजा नहीं होता है, तब फिर समय आयेगा जब आप उनकी टीका-टिप्पणी कर सकेंगे और कह सकेंगे कि आप सफल नहीं हुए और अब हम कोई दूसरा रास्ता निकालेंगे। सत्याग्रह को उन्होंने कुछ दिन तक जारी रहने दिया और फिर उसको रोक दिया, यह अपने में कोई ऐसी बात नहीं है जिसके ऊपर हम उनको बुरा भला कहें।

सत्याग्रह की सफलता

मैं स्वयं यह समझता हूँ कि आपके सत्याग्रह से अनुष्ठान का काम हो गया। यदि आप यह समझते थे कि इस सत्याग्रह से आप सालाजार के घुटने टिका देंगे तो इसकी मुझे कभी कोई आशा नहीं थी। आशीर्वाद मैंने दिया था। मैं यह आशा करता था कि सत्याग्रह का कुछ न कुछ असर ज़रूर होगा। सत्याग्रह ने भावना जगा दी और अपना काम उसने कर दिया। आपने देखा कि गांधी जी के नेतृत्व में कैसे लड़ाइयाँ लड़ी गईं। आप जानते हैं कि अंग्रेजों के समय में भी कितने सत्याग्रह हुए। क्या एक ही सत्याग्रह के कारण अंग्रेज़ों ने घुटने टेक दिए? यह नहीं हुआ। जब हम इस रास्ते पर चलते हैं तो भाव जगाते हैं, आपके हृदय में एक तरह के, संसार के हृदय में दूसरी तरह के और फिर कुल मिलाकर कुछ समय बाद एक वायुमण्डल संसार में बनता है। उस वायुमण्डल का असर होता है और तब वह अपना प्रभाव दिखाता है। यह बात कुछ समय लेती है। आपने एक सत्याग्रह शुरू किया, उसका अनुष्ठान समाप्त हुआ। मैं समझता हूँ कि शासन ने समय पर आकर बुद्धिमानी का काम किया है कि आपके अनुष्ठान को रोक दिया, नहीं तो शायद बहुत सम्भव था कि वह थोड़े दिन बाद अपने आप ढीला होता। उन्होंने आपको सत्याग्रह रोकने का अवसर नहीं दिया, उन्होंने सभी का आदर रखा और उस अनुष्ठान को रोककर स्वयं अपने ऊपर उसका उद्देश्य ओढ़ लिया। आपको उन्होंने बरीउज़जिम्मा कर दिया और अपने ऊपर दायित्व ओढ़ लिया। मैं इसको एक बुद्धिमानी की बात समझता हूँ। आप देखें छः महीने या साल भर। उनको काम करने का अवसर दें। यह राजनीतिक प्रश्न है, फिर आपके सामने आयेगा और आप जैसे भी चाहेंगे अपने विचार प्रकट कर सकेंगे।

३१

धर्म परिवर्तन में कपट-भावना

३० सितम्बर १९५५ को भारतीय लोकसभा में ईसाई मिशनरियों के धर्मप्रचार पर बोलते हुए

उपाध्यक्ष महोदय ! अभी जो भाषण हुए उनको सुन कर मेरे हृदय में यह भावना है कि जो विधेयक हमारे सामने उपस्थित किया गया है, उसके पीछे बहुत अच्छे कारण हैं। इस पर हमारे उपमंत्री जी जो यहाँ उपस्थित हैं, क्या करेंगे, यह तो मैं नहीं जानता, लेकिन उनसे, उनकी गवर्नमेंट से तथा यहाँ के सदस्यों से मेरा तो यह कथन है कि जो कारण बताये गये हैं उन कारणों के अतिरिक्त हम सबों को भी अनुभव इन मिशनरी पादरियों का है। उन सब बातों को जानते हुए, उनका अनुभव करते हुए, यह उचित है कि हम इस प्रकार से अपने देश के लोगों को दूसरे देश के लोगों द्वारा दूसरे धर्मों में जाने से बचायें।

यह ठीक है कि हमारे संविधान में इस बात की छूट है कि जो पुरुष या नारी किसी दूसरे धर्म में जाना चाहे वह जा सके, दूसरे धर्म के लोगों को अपने धर्म के प्रचार का भी अवसर हमारे यहाँ दिया गया है। साथ ही संविधान का यह भी अभिप्राय है कि जहाँ हमें यह दिखाई पड़े कि इस धर्म परिवर्तन के पीछे छल कपट है उसे हम रोक सकते हैं। किसी गवर्नमेंट को जिसमें नैतिकता का आदर है, जो डरपोक नहीं है, किसी दूसरे देश से डरती नहीं है, इस प्रकार की अनुचित बातें सहन नहीं करनी चाहियें। हमें इस विषय के भीतर घुस कर, जो ऐसे बुरे मार्ग हैं लोगों के धर्म परिवर्तन कराने के लिये, उनको रोकना है।

डा० एल्विन ने जो बातें कई वर्ष पहले अपने अनुभव से लिखी थीं, उनको हम लोग पहले भी कुछ पढ़ चुके हैं और इधर भी हम सदस्यों को एक पुस्तिका बांटी गई है, जिसको देखने का मुझे अवसर मिला। वह बहुत भयावह है, बहुत डरावनी है। डा० एल्विन का जो अपना अनुभव है इन मिशनरियों के बारे में, उससे यह प्रकट है कि यह लोग जो काम करते हैं, उनमें से कुछ अच्छे लोग भी हैं, सज्जन भी हैं, लेकिन उनमें बहुत लोग ऐसे हैं जो ईसाई बनाने के लिये छल कपट का सहारा लेते हैं।

अभी हमारे एक भाई ने कहा कि वह आदिवासी है, आदिवासियों में ईसाई मिशनरी वह किस तरह से काम कर रहे हैं, यह उन्होंने बताया। अपने को स्वामी बताना, जैसा उन्होंने कहा कि ये स्वामी बन कर जाते हैं,

इसका क्या अर्थ है ? मैंने भी पहले देखा था कि एक दूसरी संस्था के लोग, साल्वेशन आर्मी के लोग, वह भी साधु का वेश रख कर जाते थे; जैसे हमारे यहाँ साधू संन्यासी हुआ करते हैं उसी प्रकार वह भी गाँव गाँव का दौरा करते थे। इसमें सन्देह नहीं कि वह यह सब काम सेवा के रूप में करते हैं, ऐसी ऐसी जगहों पर पहुँचते हैं, जहाँ हमारे आदमियों का जाना कठिन होता है। वह शिक्षा भी देते हैं। हम लोगों ने सुना कि किस प्रकार से वह पैसा बाँटते हैं। लेकिन इस सबका असली तात्पर्य यह होता है कि वह किसी तरह से लोगों को ईसाई बना सकें। डा० एल्विन ने अपने वक्तव्य में बहुत बल के साथ कहा है कि यहाँ यह ईसाई जो बातें कर रहे हैं वह दूसरे देशों में बाहर के लोग नहीं कर पाते। उन्होंने हालैण्ड की मिसाल दी और बताया कि यहाँ पर डच मिशनरी बहुत फैल रहे हैं और घुसे हुए काम कर रहे हैं, वे स्वयम् हालैण्ड में वह बातें नहीं कर सकते जो यहाँ करते हैं। यह छल कपट का रास्ता हमें बन्द करना है। डा० एल्विन ने अपना वक्तव्य शायद सन् १९४४ या ४५ में लिखा था। मुझे ठीक याद नहीं है। उस समय उन्होंने यह विश्वास प्रकट किया था कि जब इस देश की अपनी गवर्नमेंट आयेगी तब वह इन चीज़ों को रोकेगी और जो बातें आज हो रही हैं उनकी अनुमति कभी नहीं देगी। आज मुझे ऐसा लगता है कि इन पादरियों के काम में हमारी स्वतन्त्रता के आने के बाद भी छल कपट बन्द नहीं हुआ और ईसाई होने वालों की संख्या बढ़ती जाती है।

ग़रीबी से नाजायज़ फ़ायदा

इसका यह कारण नहीं है कि जनता में कोई धर्म परिवर्तन की लालसा बढ़ती जाती है। असल बात यह है कि ये मिशनरी इन लोगों की ग़रीबी का बहुत बड़ा फ़ायदा उठा रहे हैं। हमारा देश ग़रीब है, आदिवासी भी ग़रीब हैं और हरिजन भी ग़रीब हैं। इन आदिवासियों और हरिजनों की ग़रीबी का ये लोग बेजा फ़ायदा उठाते हैं। अभी जो भाई जेठालाल जी ने पढ़ा वह मैंने सुना। उन्होंने बतलाया कि उत्तर प्रदेश में जो चमारों की ५ लाख की बहुत बड़ी संख्या है उस पर इन मिशनरियों की निगाह लगी हुई है। वे समझते हैं कि ये हरिजन उनकी ख़ुराक हैं। जेठालाल जी ने और भी समूहों के नाम गिनाये हैं जिन पर इनकी निगाह है और जिनके बारे में इनकी मान्यता है कि ये ग़रीब लोग हैं, हिन्दू धर्म इनको अच्छी तरह अपनाता नहीं है, तो हम ही क्यों न इनको घसीट कर ले आयें और ईसाई बनायें। मेरा कहना है कि हमें इस बात को रोकना है। हमने हिम्मत करके यह फ़ैसला किया है कि हम अछूतपन बन्द करेंगे और उसका परिणाम यह हुआ कि आज हमारे देश में अछूतपन बन्द हो गया। यह ठीक है कि वह नियम द्वारा बन्द किया गया

है, और अव भी कहीं कहीं देहातों में कुछ वना हुआ है। इसका कारण यही है कि यह वहुत पुरानी प्रथा है, एक दम से नहीं जा सकती। लेकिन अव हमारी सरकार का यह कर्तव्य है कि वह इस तरह के छल कपट से लोगों का धर्म परिवर्तन न होने दे। इसमें कोई संकुचित धार्मिक भावना की वात नहीं है, इसका वहुत गहरा राजनीतिक प्रभाव पड़ता है, यह नहीं भूलना चाहिये। डा० एल्विन ने स्वयं इस वात पर वल दिया है कि जिनका इस प्रकार से धर्म परिवर्तन किया जाता है उन पर दूसरे प्रकार के राजनीतिक असर पड़ते हैं और देश में नये नये प्रकार के अल्पसंख्यक समूह वन जाते हैं जो भिन्न भिन्न प्रकार के अधिकारों की माँग करते हैं।

जो हमारे यहाँ ईसाई भाई हैं हम उनका आदर करते हैं और जो दूसरे धर्म वाले हैं उनका भी हम आदर करते हैं। हमारा देश तो इस विषय में सदा से वड़ा उदार रहा है। यह ख़ाली सनातन धर्मियों का ही देश नहीं है। यहाँ सव धर्मों के लोग हैं। हमारे यहाँ प्राचीन समय से लोग अलग अलग मतों के अनुसार चलते रहे हैं। परन्तु यह उनका स्वतंत्र मत होता था, वे लोग स्वतंत्रता के साथ इन मतों के अनुसार चलते थे। हमारा तो यह कथन रहा है—"नास्ति मुनिर्यस्य मतिर्न भिन्ना।" यह हमारी दुर्वलता का एक कारण भी हो सकता है, लेकिन यह हमारा वड़प्पन भी वतलाता है कि इस वारे में हमने कोई रोकथाम नहीं की। मुनियों में भी आपस में मतभेद रहा है। स्मृतियों में भी भेद रहा है। इस प्रकार हमारे यहाँ परिवर्तन होते रहे हैं। लेकिन अपनी संख्या वढ़ाने के लिए, धोखाधड़ी से लोगों का धर्म परिवर्तन किया जाय और उनको हमारे देश की संस्कृति से अलग कर दिया जाय, यह वहुत ही भयावह है और इसका एक राजनीतिक पहलू भी है। यह केवल सामाजिक प्रश्न नहीं है। इसलिए हमको यह उचित लगता है कि इस ओर हमारी सरकार ध्यान दे। यदि इस विल में हमारे मंत्रियों को कुछ वदलने की आवश्यकता प्रतीत हो तो वे इसमें संशोधन कर सकते हैं। मुझको तो यह विल वहुत सीधा सादा लगता है। अगर सरकार जरूरत समझे तो कुछ परिवर्तन कर ले।

पूर्व सूचना आवश्यक

इस विल में यह कहा गया है कि यदि कोई अपना धर्म परिवर्तन करना चाहे तो पहले वहाँ के अधिकारी को इसकी सूचना दे दे। अगर वह सचमुच धर्म परिवर्तन करना चाहता है तो उसके लिए इस विल में कोई रोक नहीं है। हाँ ! जो लोग छिपकर काम करने वाले हैं उनको यह वात पसन्द नहीं आयेगी। नहीं तो इसमें तो यह सीधी सी वात है कि जो धर्म परिवर्तन करना चाहे वह पहले से उसकी सूचना दे दे, और जो आदमी धर्म परिवर्तन कराने में हिस्सा

लेना चाहता है, चाहे वह पादरी हो या कोई दूसरा हो, जो इस काम में मदद देना चाहता है कोई किताब पढ़ाकर या कोई रस्म करा के, उसको भी पहले ऐसा कराने की अनुमति लेनी होगी। उसको इस बात के लिए आज्ञा लेनी होगी कि वह धर्म परिवर्तन कराने में भाग ले सके। मुझे ऐसा नहीं लगता कि इस बिल में कोई आपत्तिजनक बात है।

ये पादरी लोग सब पैसे वाले हैं। विलायत से, अमरीका से और दूसरे देशों से इनके पास पैसा आता है। ये लोग इस पैसे का यह उपयोग करते हैं कि हमारे ग़रीब भाइयों को बहकाकर उनका धर्म परिवर्तन करा लेते हैं। ये लोग इन ग़रीब लोगों को कुछ धन का फ़ायदा करा देते हैं या पैसा दे देते हैं और इनका धर्म परिवर्तन करा लेते हैं। डा० एल्विन ने भी यह लिखा है कि ये लोग उनको कर्ज़ देते हैं और थोड़ी थोड़ी सुविधा देकर धीरे धीरे इनको ईसाई बना लेते हैं। हमको यह बरदाश्त नहीं करना चाहिये कि कोई आदमी आये और पैसे का लोभ देकर हमारे यहाँ के आदमियों का धर्म परिवर्तन कर दे। हमारी गवर्नमेंट को इस विषय में सचेत होने की आवश्यकता है। मैं समझता हूँ कि यह बिल जो उसके सामने पेश है बहुत उचित है। उसकी बातें बहुत सीधी सी हैं। उसमें केवल दो तीन तो बातें ही हैं। एक यह कि जो धर्म परिवर्तन करना चाहे वह पहले इसकी सूचना अधिकारी को दे दे, दूसरी यह कि धर्म परिवर्तन कराने वाला अधिकारी व्यक्ति हो, अर्थात् राज्य के किसी अधिकारी से उसको यह अधिकार मिला हो कि वह यह काम करा सकता है। तीसरी यह कि जिनका धर्म परिवर्तन होता है उनका एक रजिस्टर रखा जाय। यही तीन बातें इस बिल में मुख्य हैं। मैं नहीं समझता कि इनमें कोई ऐसी बात है जिसको अनुचित कहा जा सके। यह सब संविधान के भीतर है। संविधान उनको सुभीता देता है............

Shri Kanavade Patil (Ahmednagar North) : There is no need for conversion now-a-days in India.

[**श्री कनवाडे पाटिल (अहमदनगर उत्तरी)** : आजकल भारतवर्ष में धर्म-परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है।]

श्री टंडन : आप कहते हैं कि धर्म परिवर्तन करने की अब कोई आवश्यकता नहीं है। यह प्रश्न तो किसी व्यक्ति के धर्म का है, जिसका हम और आप फ़ैसला नहीं कर सकते। अगर किसी को ऐसा लगता है कि उसे ईसाई बनना चाहिए, तो आपका यह कहना पर्याप्त नहीं होगा कि इसकी आवश्यकता नहीं है। मैं आशा करता हूँ कि आप मेरी हिन्दी समझते हैं। मैं तो आपकी अंग्रेज़ी समझ गया। आपने मुझे अंग्रेज़ी भाषा में यह समझाया है कि अब धर्म परिवर्तन की कोई आवश्यकता नहीं है। लेकिन इससे कोई प्रश्न हल नहीं होगा। हमने इस विषय में अपने संविधान में छूट दे दी है। अगर आप हिन्दू से

ईसाई होना चाहें तो हो सकते हैं, लेकिन हम इस बात की रोक कर सकते हैं कि आपको कोई छल कपट से, धोखा देकर ईसाई न बनाये।

यह नियम सबके लिए लागू है, केवल ईसाइयों के ही लिए नहीं है। अगर कोई हिन्दू किसी ईसाई को हिन्दू बनाना चाहेगा तो उस पर भी यह नियम लागू होगा। अगर हमारा कोई हिन्दू धर्म का प्रचार करने वाला जायगा तो उस पर भी यह नियम लागू होगा। यह कोई ईसाइयों के लिए ही नहीं है। कोई धोखाधड़ी नहीं होने दी जायगी। जिसको हिन्दू होना है वह डंके की चोट हिन्दू होगा, वह कहेगा कि मुझे हिन्दू धर्म स्वीकार है इसलिए मैं हिन्दू होना चाहता हूँ। इसी प्रकार जो ईसाई होना चाहेगा वह डंके की चोट ईसाई हो सकेगा। यह आवश्यकता का प्रश्न नहीं है। यह तो अपने अपने मत की बात है। हमारे देश में सदा मत की स्वतंत्रता रही है, लेकिन हम छल कपट नहीं होने देंगे। छल कपट से छोटे छोटे बच्चों तक को यहाँ ईसाई बनाया जाता रहा है। मुझे आशा है कि हमारे उपमंत्री जी इस पर ध्यान देंगे और गवर्नमेंट इस पर ध्यान देगी।

बस मुझे इतना ही कहना है।

●

३२

खाद्य स्थिति--ग्राम निर्माण

१ अक्टूबर १९५५ को भारतीय लोक सभा में खाद्यमंत्री के भाषण पर बोलते हुए

सभापति जी ! जो बातें अपने भाषण में मंत्री जी ने बताई उनका मैं बहुत स्वागत करता हूँ।

गुलाबी तस्वीर

उन्होंने हमें संख्याओं द्वारा यह बताया कि हमारे देश में अन्न पहले से बहुत अधिक हो रहा है और अन्न की समस्या जो पहले हमें डराती थी वह अब लगभग नहीं है तथा इस वर्ष बहुत ही थोड़ा सा अन्न बाहर से मंगाना है; साथ ही यह कि हमारे पास इतना अन्न होता है कि हम उसमें से एक हिस्सा बाहर भी भेज सकते हैं। यह एक अच्छी तथा गुलाबी तस्वीर है, देखने में सुहावनी मालूम होती है। इसी प्रकार चीनी की पैदावार, उन्होंने कहा, इस वर्ष १९५४-५५ में १६ लाख टन हुई है। इससे पहले कभी इतनी पैदावार नहीं हुई। चार पांच वर्ष पहले ८ लाख टन, ९ लाख टन या १० लाख टन होती थी। एक साल १२ लाख टन हुई तब बधाई दी गयी थी। अब १६ लाख टन होती है। चीनी की पैदावार बहुत बढ़ी। अन्न भी बढ़ा और चीनी भी बढ़ी। गवर्नमेंट ने यह भी प्रबन्ध किया, जिसकी मंत्री जी ने बहुत ब्योरे के साथ चर्चा की, कि किसानों के उधार लेने देने की सुविधा का बहुत सुन्दर प्रबन्ध हो रहा है। यह सब देखने में अच्छी बातें हैं।

गाँवों की दरिद्रता जैसी की तैसी

परन्तु मेरे हृदय में एक कसक और एक पुकार उठती है। जो हो रहा है उसका प्रतिबिम्ब, उसका अक्स देहात के जीवन पर क्या पड़ा है ? जब हम देहातों में जाते हैं, ग्रामों को देखते हैं तब वहाँ हमें आँख से यह नहीं दिखाई पड़ता कि वहाँ के लोगों की दरिद्रता में कुछ अन्तर हुआ हो। वह वैसे ही दरिद्र बने हुए हैं, कपड़े लत्ते नहीं, खाने के विषय में बुरी दशा, किसी भी बात में परिवर्तन नहीं हुआ है। हमारे प्रदेश में चीनी बनाने का सबसे बड़ा सामान गोरखपुर और देवरिया में है। यह दो जिले हमारे देश के चीनी बनाने में प्रसिद्ध हैं। जब चीनी की पैदावार बढ़ी तो स्वभावतः हम

यह समझते हैं कि वहाँ के जो चीनी के कारखाने हैं उनमें वृद्धि हुई। परन्तु वहाँ की जनता की क्या दशा है। हमारे राज्य भर में, उत्तर प्रदेश भर में, सब से दरिद्र यही दो ज़िले हैं, गोरखपुर और देवरिया, जहाँ पर सब से अधिक चीनी बनती है। हमारे राज्य में यह दो ज़िले सब से अधिक चीनी बनाने वाले हैं, तो अनुमान किया जा सकता है कि इन दोनों ज़िलों की हालत कुछ अच्छी होगी, लेकिन बात उल्टी है। जहाँ सब से अधिक चीनी बन रही है, वही ज़िले सब से अधिक दरिद्र हैं। हमको याद है गोरखपुर और देवरिया के मान्य नेता बाबा राघव दास जी जिनको हमारे मंत्री जी भी बहुत अच्छी तरह जानते हैं, उन्होंने कई बार मेरे सामने कथा कही है, अपने भाषणों में उन्होंने बताया है कि वहाँ की दरिद्रता का क्या हाल है। मैंने इतनी दरिद्रता का अनुमान भी नहीं किया था। वहाँ के देहात के हरिजन कई महीने तक वहाँ के गाय बैलों की जो गोबरी होती है उसमें से अनाज निकालते हैं और धो धो कर उस से अपना गुज़ारा करते हैं। लगभग दो ढाई महीने तक उनको ऐसा करना पड़ता है। बहुत से गाँवों का यह हाल है। इस खाने को गोबरी कहते ही हैं। कितनी दर्दनाक और बुरी दशा उन देहातों की है?

क्या संख्याएं सही हैं?

ऐसी दशा में यह सन्देह होता है कि जो संख्यायें हमें बताई गई हैं क्या वह सब सही हैं। मेरे लिये कहना कठिन है। हमारे मंत्री जी तो जानते होंगे, हमारे पुराने दोस्त श्री रफी अहमद किदवई इन संख्याओं की क्या इज्ज़त करते थे। कई बार उन्होंने कहा था, शायद यहाँ भी कहा था, कि इन सरकारी संख्याओं के ऊपर भरोसा नहीं किया जा सकता। विशेषकर उन्होंने उस समय यह कहा था जब राशन लगा हुआ था और बराबर यह बात आती थी कि यहाँ कितना अनाज हो रहा है। वह राशन के विरुद्ध थे। वह कहते थे कि उपज की दी हुई संख्यायें ग़लत हैं।

सवाल उठता है कि यह संख्यायें सही हैं या गलत हैं। जिस तरह की भी हों, मैं नहीं कह सकता। लेकिन इतना मैं जानता हूँ कि जो गाँवों की हालत है वह मुझे कहीं पर भी सुधरती हुई नहीं दिखाई देती। जहाँ भी मैं गाँवों में जाता हूँ, दरिद्रता छाई हुई दिखाई देती है। अभी बाढ़ आई। उस बाढ़ ने तो और मुसीबत कर दी, लेकिन बाढ़ के पहले भी इतनी बुरी हालत थी कि थोड़ी सी बाढ़ आई और उस बाढ़ के आते ही किसी के पास कोई सरो सामान नहीं रहा कि उसमें थोड़ा बहुत भी ठहर सके। बहते चले जाते हैं।

सभापति महोदय : आपका समय समाप्त हो गया।

श्री टंडन : मैंने समझा था कि आप मुझे १५ मिनट देंगे। मेरा ऐसा अनुमान था।

मेरा कहना है कि इसमें कहीं न कहीं कोई गहरा अन्तर है, भीतर से यह स्थिति है, बुरी हालत है, बाहर पैदावार की बढ़ी हुई संख्याएँ हैं। मैं अनुमान करता हूँ कि आपने इन बातों की ओर ध्यान दिया होगा।

गाँवों का रहन सहन

मुझे लगता है कि दो एक और प्रश्न बहुत बड़े हैं जिनकी ओर ध्यान देने की आवश्यकता है। मैं उनको मौलिक प्रश्न मानता हूँ। एक तो यह है कि देहात में जो लोग रहते हैं वे कैसे रहते हैं, उनका रहन सहन क्या है और कैसे हम उनके रहन सहन को सुधार सकते हैं। आप अरबों रुपया बड़ी बड़ी योजनाओं में खर्च करते हैं। मैं निवेदन करता हूँ कि इन योजनाओं को चाहे हम उस हद तक, जिस हद तक हम चाहते हैं, पूरा करें या न करें, परन्तु हमारा रुपया मुख्य करके आज इसमें लगना चाहिये कि हम देहातों की सूरत बनायें। आप पाँच दस देहातों को बना कर तो दिखायें। आज तक मेरी यह शिकायत रही है लेकिन इसे दूर नहीं किया गया है। आपने बहुत से **कम्यूनिटी प्रोजेक्ट** चला रखे हैं लेकिन जब मैंने इनको देखा तो इनका मेरे ऊपर तो कोई असर नहीं पड़ा। मुझे तो ऐसा नहीं लगा कि इनका देहाती जनता पर कोई मौलिक तौर पर बहुत अच्छा असर पड़ा हो। आप बहुत ऊपरी चीज़ बना रहे हैं। आप उनके रहन सहन की तरफ़ देखें, उनके घरों की तरफ़ देखें, उनकी दरिद्रता की तरफ़ देखें। मैंने कई बार निवेदन किया है कि नये ढंग से आप ग्राम बसायें लेकिन अभी तक आपने कुछ भी तो नहीं किया है। मुझे मालूम है कि हमारे भाई मोहनलाल सक्सेना जी ने भी यह बात सामने रखी थी, एक "निर्माण" पत्र भी उन्होंने निकाला है, उसमें भी चर्चा आई। लेकिन गवर्नमेंट ने कोई ध्यान नहीं दिया।

नमूने के गाँव

मेरा सुझाव है कि दो चार गाँव हर जिले में आप नमूने के तौर पर बना कर सामने लायें जिनमें हर घर दूसरे घर से अलग हो, हर घर के साथ कुछ भूमि अलग हो जिस में बाटिका बन सके ताकि रहने का कुछ सुन्दर ढंग हो। आज गंदगी से भरे हुए गाँव हैं और यही हालत घरों की भी है। मैंने आध आध एकड़ जमीन की बात की थी लेकिन अगर आप आध एकड़ भूमि एक घर के साथ अलग नहीं रख सकते तो चौथाई एकड़ ही रखें। मैं जानता हूँ यह एक दिन की बात नहीं है लेकिन कुछ नमूने तो आप दे ही सकते हैं, यह बात तो आपके लिये मुश्किल नहीं है।

ग्राम-निर्माण बोर्ड

ग्रामोद्योगों के लिये आपने एक बोर्ड बनाया, मैं गवर्नमेंट को उसके लिए बधाई देता हूँ। मैं यह मानता हूँ कि गवर्नमेंट ने आज तक जितने

अच्छे काम किए हैं उनमें लगभग सब से अच्छा काम यह किया है जो खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड बनाया है। इसको बहुत ऊंचा स्थान दिया गया है और देना भी चाहिये था। मैं मंत्री महोदय को सुझाव देता हूँ कि जिस तरह से आपने यह बोर्ड बनाया है उसी तरह से आप एक और बोर्ड बनायें जिसको आप कुछ रुपया दें, उसको आप अधिकार दें कि वह नये ढंग के गाँव आपको बना कर दे, हर जगह नमूने बनवा दे। आप इतना रुपया ख़र्च कर रहे हैं, तो क्या आप दो चार गाँव भी बनवा कर नहीं दिखा सकते। चाहे आप छोटा सा कच्चा घर ही बनवा दें लेकिन उस घर के साथ थोड़ी सी ज़मीन आध एकड़ या चौथाई एकड़ होनी चाहिये जिसमें वाटिका हो। इस तरह जो यह ज़मीन हर मकान के साथ रखेंगे उसमें वह लोग खेती कर सकेंगे और अपनी आमदनी भी बढ़ा सकेंगे। साथ ही साथ मुल्क की पैदावार भी बढ़ेगी और पैदावार बढ़ाने का यह कितना सुन्दर रास्ता है। अगर आप इस तरह घर बनवायेंगे तो मेरा निवेदन है जो आपका रुपया खर्च होगा वह एक उपयोगी चीज़ पर खर्च होगा, वह व्यर्थ नहीं जायगा। इसके लिए यह आवश्यक है कि आप एक बोर्ड बनायें जो यह सब काम करे।

क्योंकि समय बहुत कम है, संक्षेप में मेरी प्रार्थना यही है कि इस तरह से आप गाँवों की जनता को उठाने की बात सोचें। इस प्रकार से पशुधन की भी, जिसकी चर्चा भार्गव जी ने की, उन्नति होगी। आज गाँवों में जो लोग रहते हैं उनके पास जगह नहीं होती है पशुओं को रखने की। अगर आप आध एकड़ भूमि देंगे तो उसमें से ग्रामवासी कुछ तो वाटिका के लिये रख लेंगे और थोड़ी सी पशुओं के लिए रख लेंगे। तब उनको एक उत्तेजना होगी, एक सहारा होगा, और वह गाय को पाल सकेंगे। हम गोरक्षा की बात करते हैं, लेकिन गौ रखने के स्थान की एक कठिन समस्या है। इस तरह से अगर आप मकान बनायें तो पशुधन की भी उन्नति हो सकती है और हमारा ग्रामीण जीवन भी ऊंचा उठ सकता है। इससे गाँवों में सफ़ाई अच्छी होगी, स्वास्थ्य अच्छा होगा और हर तरह से उस मकान में रहने वाले को सुविधायें होंगी। उनको अपने जीवन में अधिक सुन्दरता दिखाई पड़ेगी।

३३

राज्यों का पुनःसंघटन

२२ दिसम्बर १९५५ को राज्यों के
पुनःसंघटन की समस्या पर बोलते हुए

एक भारतीय संस्कृति

सभापति महोदय ! इस विषय पर मैंने भी कुछ विचार किया है कि हमारे राज्यों का पुनःसंघटन किस प्रकार हो। विचार करने में कठिनाई यह होती है कि जो वात दलील और तर्क की दृष्टि से उचित दिखाई पड़ती है वह वहुत से भाइयों को अच्छी नहीं लगती। जैसा कि कल हमारे प्रधान मंत्री ने कहा, ऐसी स्थिति में वड़ी वात यह है कि केवल हम तर्क का ही नहीं वल्कि पारस्परिक मेल और प्रेम का सहारा लें। लेकिन इस पर भी कहीं कुछ दवाव आवश्यक सा हो जाता है।

हम सवों की ही इच्छा है कि यह सारा प्रश्न प्रेम के साथ हल हो और आपस में कम से कम खींचातानी हो, न हो तो वहुत ही सुन्दर है। हम सव एक देश के वासी हैं। हमने वार वार यह घोषणा की है कि हमारी एक संस्कृति है, भारतीय संस्कृति। यह सच है कि इस एक संस्कृति में कई अलग अलग रंग हैं, परन्तु सव मिला कर हमारे देश की एक सुन्दर संस्कृति है। हमारा देश भारत प्राचीन काल से चला आ रहा है। इसलिये इसमें भाषा के आधार पर जितनी कम खींचातानी हम करें उतना ही अच्छा है।

एक राज्य एक भाषा

यह तो हम सव मानते हैं कि भाषा स्थानीय संस्कृति का एक अंग होती है। इससे हमारे काम में और दैनिक व्यवहार में सुविधा होती है। यही कारण है कि पुरानी कांग्रेस ने भाषावार प्रदेशों की वात कही थी। हमें भूलना नहीं चाहिये कि उस समय हमारे सामने अंग्रेजों से संघर्ष करने का मुख्य प्रश्न था। किस रीति से हम उस संघर्ष को तीव्र कर सकते हैं, आगे वढ़ा सकते हैं, यह हमारा ध्येय था। उस समय हमारे पास अधिकार नहीं था। इसलिये मोटी रीति से हमने प्रदेशीय कांग्रेस कमेटियों को भाषा के आधार पर वनाया। लेकिन साथ ही मेरा यह निवेदन है कि यह आवश्यक नहीं है कि अधिकार का प्रयोग करने में भी हम उसी प्रकार से उन प्रदेशों को पकड़े रहें। इसमें वहुत सी कठिनाइयाँ होती हैं। वैसे मैं स्वयं भाषावार

प्रदेशों के वनाने का हामी रहा हूँ। हमारे कर्नाटक के भाई जानते हैं कि जव मैंने वहाँ, कांग्रेस का अध्यक्ष होने के नाते, दौरा किया तो मैंने उनकी इस मांग का पक्ष किया था कि कर्नाटक एक राज्य वने। मैं अपने भाई आन्ध्रों की भी इस मांग का पक्षपाती था कि एक राज्य ऐसा हो जहाँ पर तेलगू भाषा-भाषी हों—इसलिये नहीं कि मैं मद्रास का विच्छेद देखना चाहता था या वह विच्छेद मुझको अच्छा लगता था। सुन्दर तो यही था कि कुल मद्रास एक वड़ा प्रदेश रहता, परन्तु मैं अपने वर्षों के अनुभव से यह देख सकता था कि वहाँ एकता चल नहीं रही है। तेलगू और तामिलों के आपसी सम्वन्धों को देख कर यही उचित लगा कि तेलगूभाषियों के लिये एक प्रदेश अलग कर दिया जाय। लाचारी कभी कभी हमको वाधित करती रही है, मजबूर करती रही है कि हम भाषावार प्रदेश वनायें परन्तु, जैसा कल प्रधान मंत्री जी ने कहा, एक राज्य एक भाषा का सिद्धान्त सदा स्वीकार्य नहीं हो सकता। उसके कुछ अपवाद भी होते हैं। जहाँ ऐतिहासिक क्रम इस प्रकार का वना है कि प्रदेशों में कई भाषायें साथ साथ चली हैं, उनको सहसा अलग नहीं किया जा सकता।

कल हमारे प्रधान मंत्री ने दो तीन वातें कहीं जिन पर मेरा विशेष ध्यान गया। एक तो उन्होंने यह कहा कि एक राज्य एक भाषा का सिद्धान्त सदा नहीं चल सकता। दूसरी वात उन्होंने यह कही कि वह स्वयं इसे पसन्द करते हैं कि एक राज्य में कई भाषायें हों, उन्होंने **बाईलिंगुवल और ट्राईलिंगुवल** की वात की अर्थात् यह कि अगर एक राज्य में कई भाषायें हों तो उनको पसन्द होगा। मैं इतना ही कहूँगा कि इसमें कोई वहुत पसन्द करने की वात तो नहीं है, परन्तु यदि ऐसा हो तो उसे प्रेम के साथ स्वीकार करना चाहिये। सुविधा तो इसी में है कि जहाँ तक हो सके एक भाषा का राज्य वने, लेकिन अगर दो या तीन भाषाओं का वनता है तो इसमें कोई ऐसी वड़ी कठिनाई नहीं है। उनकी इस वात से मैं विलकुल सहमत हूँ कि हम दो या तीन भाषायें सीखें। जब अंग्रेजी हमारे सिर से हट रही है, यह वहुत आसान वात है। हमारे देश की भाषायें तो इतनी समीप हैं, इतनी मिली हुई हैं कि उनको सीखने में कोई कठिनाई नहीं होगी। मैं तो इसे कोई कठिन समस्या नहीं मानता हूँ।

उर्दू—हिन्दी का ही रूपान्तर

उन्होंने कल उर्दू भाषा की चर्चा की थी। मैं उनसे विलकुल सहमत हूँ कि उर्दू भाषा भी हमारे देश की ही भाषा है और यह किसी दूसरे देश में नहीं वनी है। मैंने सदा हिन्दी के एक कार्यकर्ता के नाते यह निवेदन किया है कि उर्दू हिन्दी का ही एक रूपान्तर है। एक समय आया, एक ऐतिहासिक

समय, जब हिन्दी भाषा में ही फारसी और अरबी के शब्द मिलाये गए और एक नये रूप की भाषा बनी, प्रायः वह दिल्ली के बाजारों में बनी, पर वह फैल गई। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यह हमारे देश की ही एक भाषा है। परन्तु उसकी जो लिपि है, साधारण रीति से लिखने की, उसको हम यह नहीं कह सकते कि हमारे देश की है। इस लिपि की कठिनाई कहीं कहीं पर आ जाती है। मैंने तो उस लिपि को पढ़ा है और मैं मानता हूँ कि उस लिपि में कुछ सुविधा है। परन्तु उस लिपि को प्रयोग में लाने से पहले हमें यह देखना पड़ेगा कि जो दूसरे लोग हैं उनको इससे क्या सुविधायें होंगी और क्या असुविधायें होंगी। अस्तु यह प्रश्न इस समय हमारे सामने व्यावहारिक रीति से नहीं है। काश्मीर में उर्दू लिपि है, बहुत अच्छी तरह से यह वहाँ पर चल रही है, वहाँ पर किसी को आपत्ति नहीं है, वहाँ के हमारे भाई इसे चाहते हैं, इसमें किसी को एतराज नहीं है। हमारे यहाँ उत्तर प्रदेश में या दिल्ली में जो भी इस लिपि को पढ़ना चाहते हैं और इस लिपि को पढ़ने लिखने में प्रयोग करना चाहते हैं, उनको अवश्य ही सुविधायें दी जानी चाहियें, मैं इसका पक्षपाती हूँ। हाँ! अगर काम करने में, अदालतों में और कचहरियों में और व्यवहार में इस लिपि के प्रयोग करने का प्रश्न आता है तब तो हमें दूसरों की सुविधाओं की ओर, जनता की सुविधाओं की ओर भी देखना पड़ेगा और इस पर भी विचार करना पड़ेगा कि उनको कहाँ तक कठिनाई पड़ती है। मैं इसका पक्षपाती हूँ कि उर्दू में अगर कोई भाई अपनी दरख्वास्त देता है तो वह ले ली जाय परन्तु जब कार्यालयों और दफ्तरों में उर्दू चलाने की बात आयेगी तो अवश्य ही कठिनाई पड़ेगी। जो देखने की बात है वह यह कि इसको व्यवहार में लाने से क्या क्या सुविधायें होंगी और क्या क्या असुविधायें होंगी। इस वास्ते हमें उसी बात को स्वीकार करना पड़ेगा जिसमें अधिक से अधिक सुविधा हो।

उत्तर प्रदेश की समस्या

हमारे उत्तर प्रदेश के प्रश्न को भी यहाँ पर दो एक भाइयों ने उठाया है। श्री लंका सुन्दरम् जी ने जब भाषण दिया, उस समय मैं यहाँ पर मौजूद था। उन्होंने कहा कि उत्तर प्रदेश को इसी तरह बनाये रखने से जो दक्षिण का संतुलन है जिसको उन्होंने अंग्रेजी में 'बैलेंस' कहा, वह बिगड़ जायगा। हमारे एक बने रहने के विरुद्ध उन्होंने जो दलील दी उसको मैंने समझने का यत्न किया लेकिन मैं बिलकुल भी समझ नहीं पाया। हमारे उत्तर प्रदेश के दो या तीन टुकड़े हो जाने से दक्षिण वालों के तौल में क्या अन्तर पड़ेगा यह बात स्पष्ट नहीं हुई। मैं तो यह समझता हूँ कि सिवाय इसके कि वह यह कहें कि चूंकि हमारा एक छोटा सा प्रदेश है इस वास्ते आपका भी एक छोटा

सा प्रदेश हो जाय, और कोई बात नहीं है। यह तो कुछ दलील की बात नहीं हुई और न कोई सहृदयता की बात हुई। इसका तो मतलब यही हुआ कि आपको यह पसन्द है कि उत्तर वालों के प्रदेश को भी आप उतना ही छोटा प्रदेश देखें जितना कि आपका अपना है या आप अपने पड़ोसियों का देखते हैं। मैं तो इस बात का पक्षपाती हूँ कि प्रदेश, जहाँ तक हो सके, बड़े बनें।

कल प्रधान मंत्री जी ने पाँच या छः ज़ोन की बात कही थी। उन्होंने कुछ स्पष्ट नहीं कहा कि इसका अर्थ क्या है। मैं आज इस समय इसके बारे में कुछ नहीं कह सकता हूँ। उन्होंने आर्थिक पहलू की बात भी की कि वह समान होनी चाहिये। क्या इन ज़ोनों का रूप आयेगा, यह मैं नहीं कह सकता। साथ ही साथ उन्होंने यह भी कहा कि राज्य ज्यों के त्यों रहेंगे। राज्य ज्यों के त्यों रहेंगे और ज़ोन भी उनके साथ बनें, यह कैसे होगा, क्या क्या इसमें संघर्ष होंगे, इसकी सारी तस्वीर मेरे सामने नहीं है। मेरा अपना अनुमान है कि यह बात अभी व्यावहारिक नहीं है। परन्तु जो उन्होंने कहा कि कई भाषा भाषियों को मिला कर भी प्रान्त बनें, मैं इसके पक्ष में हूँ। उन्होंने जो यह कहा कि देश भर के पाँच छः टुकड़े हो सकते हैं, यह मुझे व्यावहारिक दिखाई नहीं पड़ता। यदि ऐसा उनका मत था तो यह जो पुनःसंघटन आयोग बना, इसको बनाने की ही आवश्यकता नहीं थी। भाषावार प्रदेश बनाने की संभावनाओं को देखना इस कमीशन का एक मुख्य उद्देश्य था। इसके साथ ही साथ उन्होंने जो दूसरी बातों का ध्यान रखा वह भी आवश्यक ही था। अपनी रिपोर्ट में उन्होंने कहा है कि उन्होंने केवल भाषा पर ही बल नहीं दिया बल्कि और बातों पर भी बल दिया है। इसको मैं उचित मानता हूँ।

अब यह कहना कि उत्तर प्रदेश का विभाजन हो और इस बात की इच्छा रखना मैं तो इसको न्याय-युक्त नहीं समझता। यदि हमारे यहाँ के भाई स्वयं उत्तर प्रदेश से अलग रहना चाहें, उसके टुकड़े करना चाहें, तो ठीक है, इसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं है। अगर हमारे पश्चिम के भाई चाहते हैं कि आगरा, मेरठ इत्यादि को मिलाकर उनका भी एक राज्य बना दिया जाए, तो वह बना लें मैं आपत्ति नहीं करता। लेकिन यदि उत्तर प्रदेश में से कोई माँग न हो और दूसरे लोग यह इच्छा करें, यह सोचें कि उत्तर प्रदेश का विभाजन हो, तो यह तो मुझे एक अजीब सी बात लगती है। भाषावार राज्यों के हमारे भाई डा० लंका सुन्दरम् बड़े पक्षपाती थे और चाहते थे कि एक विशाल आन्ध्र बने, इसलिए कि तेलगू भाषी प्रदेश सब एक हो जायँ। अर्थात् वह भाषा के ऊपर सब से अधिक बल देते हैं। यदि हम भी इसी बात को कहें कि हिन्दी बोलने वालों का भी एक विशाल प्रदेश बना दिया जाय तो यह तो एक बहुत बड़ा क्षेत्र बन जायगा। कोई तेलगू का प्रदेश

बनाते हैं, कोई तामिल का प्रदेश बनाते हैं, कोई बंगाली का प्रदेश बनाते हैं, कोई मराठी का प्रदेश बनाते हैं, तो क्या कारण है कि हिन्दी वालों का भी एक प्रदेश न बने।

श्री जी० एच० देशपांडे (नासिक-मध्य) : ज़रूर, ज़रूर।

श्री टंडन : इसका परिणाम यह होगा कि बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, मध्य भारत, विन्ध्य प्रदेश, राजस्थान आदि को मिलाकर एक प्रदेश बन जायगा। यदि ऐसा होता है तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु हमारे भाई डा० लंका सुन्दरम् साहब कहते हैं कि उत्तर प्रदेश के इसी तरह बने रहने से दक्षिण की तोल बिगड़ जायगी, तो जब हिन्दी वालों का एक ही प्रदेश बन गया तो फिर तोल कहाँ जायगी। अगर बिहार के भाई यह कहें कि हम उत्तर प्रदेश के साथ मिलकर रहना चाहते हैं या कोई और टुकड़ा हमारे साथ मिलना चाहे तो दूसरों को इसमें क्यों आपत्ति हो, यह मेरी समझ में नहीं आता। उनका यही कहना है कि तोल बिगड़ेगी। उन्होंने कुछ दूसरे देशों की मिसालें दीं। शायद उन्होंने या किसी दूसरे भाई ने अमरीका का हवाला दिया और कहा कि अमरीका में जो प्रदेश हैं वह प्रायः बराबर बराबर हैं। मेरा अनुमान है कि बराबरी के हिसाब से वहाँ प्रदेश नहीं हैं। रूस में भी बराबरी का हिसाब नहीं है। वहाँ भी अलग अलग प्रदेश हैं। जहाँ जहाँ इस प्रकार से प्रदेश मिलते हैं वहाँ वहाँ कुछ ऐतिहासिक कारण होते हैं। आप रूस को देखिये, वहाँ जो मुख्य रूस है, जो बड़ा प्रदेश है, जिसकी भाषा वहाँ चलती है, वह तो बहुत बड़ा प्रदेश है और वह समस्त रूससंघ के आधे से कहीं अधिक है—करीब दो तिहाई है, अपने क्षेत्र में और जनसंख्या में भी आधे से अधिक है। यह तो कोई दलील नहीं है कि **बैलेंस** बिगड़ जायगा। हमारे यहाँ छोटे और बड़े दोनों प्रकार के प्रदेश बने हुए हैं। इस विषय पर मैं अधिक नहीं कहूँगा। मेरा निवेदन केवल यही है कि अगर उत्तर प्रदेश स्वयं अपना क्रम रखना चाहता है और उसमें सब मिल कर काम कर रहे हैं, तो दूसरों को कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। आप इस से और बड़ा प्रदेश बनाइये। इससे भी बड़े प्रदेश पहले थे। मेरे मस्तिष्क में तो यह बात कभी नहीं आई कि कोई प्रदेश हमसे बड़ा है तो इस कारण हम छोटे हो गए। बंगाल हमारे प्रदेश से बड़ा था। हमारे देश का विभाजन हुआ। उसमें उसके टुकड़े हुए। वह एक अकस्मात् बात थी। मैं उसे अच्छा नहीं समझता हूँ। परन्तु यह तथ्य है कि बंगाल हमसे भी बहुत बड़ा प्रदेश था, अपनी जन-संख्या में और अपने घेरे में भी। इस कमीशन ने जो सुझाव दिया है, उसमें भी उत्तर प्रदेश अपने घेरे के हिसाब से—क्षेत्र के हिसाब से—चौथा है। तीन प्रदेश उससे बड़े हैं। जो सिफ़ारिशें उसने की हैं, उनके अनुसार बम्बई बहुत बड़ा है और बम्बई से भी बड़ा मध्य प्रदेश है। बम्बई दूसरे नम्बर पर

है और फिर राजस्थान आता है। उत्तर प्रदेश तो चौथे नम्बर पर आता है। परन्तु जनसंख्या में वह सब से बड़ा है, आज ऐसा रूप बन गया है। लेकिन जहाँ पर भूमि है, वहाँ आज न सही, कुछ समय के बाद जनसंख्या बढ़ेगी ही। भूमि ख़ाली रहने वाली नहीं है। वहाँ पर जनसंख्या धीरे धीरे बढ़ेगी। इस कारण उत्तर प्रदेश के प्रति ईर्ष्या द्वेष करना उचित नहीं है।

बघेलखण्ड का प्रश्न

यहाँ पर बघेलखंड के जो भाई बोले थे, उन्होंने कहा था कि हम उत्तर प्रदेश में आना चाहते हैं। मेरे सामने कुछ कागज हैं, जिनसे प्रकट होता है कि विन्ध्य प्रदेश के लोग उत्तर प्रदेश में आना पसन्द करते हैं दूसरे प्रदेश के साथ मिलने की अपेक्षा। मुझे बताया गया है कि कई भाइयों ने—हमारी विधान सभा के सदस्यों ने—दस्तख़त करके एक आवेदन पत्र भेजा है। उसका जो कुछ भी परिणाम हो। मुझको एक बात अवश्य लगती है कि आर्थिक दृष्टि से उत्तर प्रदेश में कुछ कमियाँ हैं। मैं कह सकता हूँ कि उत्तर प्रदेश आपेक्षिक दृष्टि से बहुत दीन प्रदेश है। हमारे यहाँ जितनी गरीबी है, उतनी आपको बहुत कम स्थानों में मिलेगी।

एक माननीय सदस्य : बिहार भी गरीब है।

श्री टंडन : मैं मानता हूँ कि बिहार भी गरीब है, परन्तु मेरा अनुमान है कि उत्तर प्रदेश के कुछ हिस्से बिहार से भी अधिक गरीब हैं। हम ने अनुभव किया है कि हमारे यहाँ आवश्यकता यह है कि कुछ खनिज पदार्थों वाला भू-भाग हमारे साथ जुड़े। बघेलखंड में खनिज पदार्थ हैं, खाने हैं। अगर वे तीन चार ज़िले—या दो ज़िले—जो हमारे दक्षिण में हैं, हमारे साथ आयें, तो उससे मध्य प्रदेश का कोई नुकसान नहीं होगा इसलिए कि मध्य प्रदेश में खनिज पदार्थ हैं और उसका कार्य चल रहा है और उन दो तीन ज़िलों के आने से उत्तर प्रदेश का बहुत लाभ हो जाता है। आबादी में कोई बहुत बड़ा अन्तर नहीं हो जायगा। अगर वे लोग आना चाहें और उत्तर प्रदेश उनको लेने के लिए तैयार है—यह ठीक है कि इस तरह उसकी आबादी पंद्रह बीस लाख बढ़ जायगी—तो कोई कारण नहीं है कि उनको रोका जाय।

अब मैं कुछ शब्द पंजाब के सम्बन्ध में भी निवेदन करना चाहता हूँ।

श्री बी० डी० शास्त्री (शहडोल-सीधी) : मैं एक बात पूछना चाहता हूँ। अगर विन्ध्य प्रदेश अलग रहे, तो क्या दिक्कत हो सकती है? उसकी जनता चाहती है कि उसकी अलग इकाई बनी रहे। इसमें आपको क्या आपत्ति है?

श्री टंडन : मुझे कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु प्रश्न यह है कि विन्ध्य प्रदेश छोटा पड़ता है। आज समय बड़ी इकाइयों का है। मैं छोटी छोटी इकाइयों को स्वयं पसन्द नहीं करता हूँ।

बाबू रामनारायण सिंह (हजारीबाग-पश्चिम) : विन्ध्य प्रदेश बम्बई शहर से तो अधिक ही होगा।

श्री टंडन : मैं तो आपकी ही बात कह रहा हूँ। विन्ध्य प्रदेश ने स्वयं फ़ैसला किया है कि यदि हम अलग नहीं रह सकते तो हम उत्तर प्रदेश के साथ जाना चाहेंगे। मैं विशेषकर बघेलखंड की बात कर रहा हूँ। आर्थिक दृष्टि से बघेलखंड का उत्तर प्रदेश में आना दोनों के लिए लाभदायक होगा।

पंजाब की समस्या

मैं कुछ शब्द पंजाब के ऊपर कहना चाहता हूँ। मैं आज पंजाबी तो नहीं हूँ, लेकिन किसी समय मेरी भी भूमि पंजाब ही थी। हम लोग पंजाब से ही उतरे हुए हैं। यों भी पंजाब से मेरा गहरा सम्बन्ध रहा है। प्रयाग के बाद लाहौर को ही मैं अपना घर समझा करता था।

श्री नंदलाल शर्मा (सीकर) : अब तो वह पाकिस्तान में गया।

श्री टंडन : वह पाकिस्तान में गया, यह हमारे कुकर्मों का फल है। हम अपनी राजनीतिक बुद्धि में कुछ क्षीण रहे हैं, हममें राजनीतिक बुद्धिमत्ता की कमी थी, इसीलिए पाकिस्तान बना। आज आपने हमको उसकी याद दिलाई।

मुझको यही खेद है कि आज भी पंजाब में कुछ ऐसी प्रवृत्तियाँ दिखाई पड़ती हैं, जो दुखित करती हैं और ऐसा मालूम होता है कि वे लोग राजनीतिक दूर-अंदेशी से अलग हैं। पंजाब बहादुर प्रदेश है। वह किनारे पर है, इसलिए बड़ी आवश्यकता यह है कि वहाँ के लोग वीरता और एकता के साथ मिल कर भविष्य की बात सोचें। वहाँ पर आज जिस तरह से छोटे क्रम से विचार हो रहा है, वह मेरे हृदय में खेद उत्पन्न करता है। कभी कभी जब मैं सुनता हूँ कि इस या उस बात से धर्म कुछ खतरे में पड़ जायगा, या कोई विशेष संस्कृति खतरे में पड़ जायगी, तब मैं सोचने लगता हूँ कि क्या किसी धर्म का बड़प्पन उसके अनुयायियों की संख्या पर निर्भर करता है। पंजाब में जब गुरु नानक ने प्रचार किया था और अपने धर्म की शिक्षा दी थी, तब उनके साथ कितने आदमी हुए थे? बहुत थोड़े। परन्तु उनका धर्म आज है। वह संख्या पर निर्भर नहीं करता है—वह अपने सिद्धांतों पर निर्भर करता है, उन बड़े लोगों की जीवनियों पर निर्भर करता है, जिनको गुरु नानक ने प्रेरणा दी। जब तक भारतवर्ष है, तब तक गुरु नानक का शिक्षण और उनकी वाणी पढ़ी जायगी। जब तक भारवासियों को अपने पूर्वजों

का गर्व है, तब तक गुरुओं का त्याग और बलिदान हमारे इतिहास का स्वर्ण प्रतीक है—गुरुओं का जीवन, उनकी वाणी, देश भर की सम्पत्ति है। किसी विशेष सम्प्रदाय की बात नहीं है। मेरा निवेदन है कि जो सम्प्रदाय विशेष रूप से गुरुओं को अपनाता है उसका तो यह विशेष कर्तव्य हो जाता है कि वह उनकी वाणी पर चले और इस प्रकार दूसरों को अपनी ओर खींचे। केवल संख्याओं के आधार पर बात करना, यह तो कोई धर्म को चलाने की कसौटी नहीं है। मैं हृदय से निवेदन करता हूँ। इसमें आक्षेप हो ही नहीं सकता। गुरुओं के प्रति मेरी जो श्रद्धा है उसका अनुमान भी हमारे पंजाब के भाई सम्भवतः नहीं कर पायेंगे। उस बात को बहुत कहने की आवश्यकता नहीं है। मुझे एक वाणी याद आती है जो जीवन को चलाने की वस्तु है। वह इस प्रकार है—

"जो प्राणी ममता तजे, लोभ, मोह, अहंकार।
कह नानक आपै तरै औरन लेइ उबार।"

यह वाणी गुरुओं की है। इस वाणी पर जिन लोगों का जीवन ढला है वे सचमुच धर्म के रक्षक हैं, वे ही सच्चे धर्म के रक्षक हैं। केवल संख्याओं से धर्म की रक्षा नहीं होती। मेरा निवेदन है कि राजनीति में धर्म के प्रश्न को जोड़ कर संख्याओं की बातें करना कुछ लाभदायक नहीं है। यही कारण था जिसने मुसलमानों के लिए पाकिस्तान की रचना करवाई। इसलिए धर्म और संख्या को मिला कर हम बात करें, यह उचित नहीं है।

पंजाबी भाषा मुझे बहुत प्रिय लगती है, अच्छी सुन्दर भाषा है। परन्तु उस भाषा के आधार पर ही बार बार सूबा बनाने की बात आती है। कल हमारे प्रधान मंत्री जी ने कहा था कि चाहे हम किसी तरह से देखें, हम ऐसा सूबा बना ही नहीं सकते जहाँ पंजाबी के साथ साथ हिन्दी न चले। जब ऐसा है तो मैं यही कहूँगा कि हिन्दी और पंजाबी दोनों प्रेम के साथ क्यों न चलें। दोनों में कोई इतना बड़ा अन्तर तो नहीं है। मैं अपने प्रदेश की बात आपके सामने रखता हूँ और आप इस दृष्टि से उसके ऊपर विचार करें। भाषा के आधार पर हम भी अपने यहाँ तीन चार भाषावार सूबे बना सकते हैं।

हिन्दी और पंजाबी

जो अन्तर हिन्दी और पंजाबी का है, लगभग वही अन्तर हिन्दी का और बृजभाषा का है, वही अन्तर हिन्दी का और अवधी का है, और वही अन्तर हिन्दी और भोजपुरी का है। कम से कम ये तीन तो ऊंची भाषायें हैं। इनके अलावा हमारे यहाँ बुंदेलखंडी भी है। हमारे यहाँ बृजभाषा वाले खड़े हो सकते थे कि हमारा सूबा अलग करो, अवधी वाले भी यह कह सकते थे। मेरी मातृभाषा यह नहीं है जो मैं यहाँ बोल रहा हूँ। मेरी मातृभाषा

अवधी है। हम लोग घर पर अवधी बोलते हैं, मेल जोल में हम अवधी बोलते हैं। परन्तु यदि हम अवधी के आधार पर एक अलग प्रदेश की रचना करना चाहें तो हम अपने प्रदेश को निर्बल बनायेंगे। इससे देश के ऊपर अच्छा असर नहीं पड़ेगा। इसीलिए हमारे यहाँ कुछ ऐतिहासिक समझौता सा आपस में हो गया है कि हम राजनीति में भाषा का यह टंटा नहीं उठायेंगे कि हमारा बृजभाषा का क्षेत्र अलग है, हमारा अवधी का क्षेत्र अलग है और हमारा भोजपुरी का क्षेत्र अलग है। मैं स्वयं हिन्दी का काम करता हूँ, और मैंने कभी यह भाषा का टंटा नहीं उठाया। अगर हमने यह टंटा नहीं उठने दिया तो मैं समझता हूँ कि यह हमारे प्रदेश की बुद्धिमत्ता है। क्या हम पंजाब से इस बुद्धिमत्ता की आशा नहीं कर सकते? हमारे यहाँ ये तीनों भाषायें चल रही हैं और हिन्दी भी चल रही है, और हमने मान लिया है कि हिन्दी चले। इसी तरह से मैं समझता हूँ कि पंजाब में पंजाबी भी चले और हिन्दी भी चले। इसमें क्या आपत्ति हो सकती है कि जिसका जी चाहे वह हिन्दी में काम करे और जिसका जी चाहे वह पंजाबी में काम करे। इन दो भाषाओं के आधार पर जो पंजाब में दो ज़ोन बनाये गये मैं समझता हूँ कि वह एक ग़लत बात है। मैं इस समय उस ब्योरे में नहीं जाना चाहता। लेकिन मेरा निवेदन है कि अगर अम्बाले में कोई बच्चा पंजाबी पढ़ना चाहता है, तो उसे वहाँ पंजाबी पढ़ाने का प्रबन्ध होना चाहिए, और अगर जालंधर में कोई बच्चा हिन्दी पढ़ना चाहता है तो वहाँ पर उसे हिन्दी पढ़ाने का प्रबन्ध होना चाहिए। हाँ! अध्यापकों के लिए जरूर दोनों भाषाओं को जानना अनिवार्य होगा। मैं समझता हूँ कि ऐसा आसानी से किया जा सकता है क्योंकि दोनों भाषाओं में कोई बड़ा अन्तर नहीं है। जो उन भाषाओं के पारिभाषिक शब्द होंगे वे एक ही होंगे। इसलिए पंजाबी और हिन्दी में कोई बड़ा अन्तर होने वाला नहीं है। मैं समझता हूँ कि इसमें कोई कठिनता का प्रश्न नहीं है। थोड़ी सी हममें सहनशीलता और प्रेम की आवश्यकता है।

हमारे भाई श्री टेक चन्द ने बताया था कि हिन्दू और सिखों में बराबर विवाह होते रहे हैं। शायद आज इसमें कुछ कमी हो गयी हो। पर सिखों का जो प्रादुर्भाव हुआ और जो उनको गुरुओं से बल मिला वह इसीलिए कि वे समाज की रक्षा करें। समाज की रक्षा करने के लिए वे अगुआ होकर आये थे। किस समाज के लिए? उस समय जो हिन्दू समाज था उसकी रक्षा के लिए। अगर आज वे अलग अलग खींचतान करें तो यह तो कोई हमको मजबूत करने वाली बात नहीं है। मेरा निवेदन है कि यह प्रश्न पंजाब में इस प्रकार हल होना चाहिए कि सब मिलकर रहें।

पेप्सू और पंजाब एक हैं। हिमाचल प्रदेश उनके साथ आयेगा या नहीं मैं नहीं कह सकता। अगर हिमाचल प्रदेश के लोग नहीं आना चाहते तो

में जबरदस्ती उनको लाने के पक्ष में नहीं हूँ। मैं समझता हूँ कि अगर वह भी आ जाता तो अच्छा था। लेकिन पेप्सू और पंजाब तो एक ही हैं। वे तो एक ही प्रकार के प्रदेश हैं। मैं समझता हूँ कि उनको आपस में रहने में कोई कठिनता नहीं होनी चाहिए और इस प्रदेश में हिन्दी और पंजाबी दोनों भाषायें मिल कर के चलें इसमें भी मैं कोई कठिनाई नहीं देखता।

कहा जाता है कि नागरी अक्षरों में पंजाबी नहीं लिखी जा सकती। यह मांग पहले नहीं थी। यह मांग हाल की है। लेकिन और जगह तो आज यह मांग है कि अन्य भाषायें भी नागरी लिपि में लिखी जायं। बंगाल के श्री शारदा चरन मित्र ने कहा था कि बंगाली को नागरी लिपि में लिखा जाय। उन्होंने 'एक लिपि परिषद्' बनायी थी और बंगालियों से कहा था कि तुम अपनी लिपि बन्द करो, नागरी लिपि में अपना काम करो। सन् १९१० में श्री वी० कृष्णस्वामी अय्यर ने तामिल और तेलुगू भाषियों से कहा था कि अपनी लिपि को बन्द करो, देश की यह मांग है कि नागरी लिपि को अपनाओ। बंगाल में जो बड़े बड़े मनीषी हुए उन्होंने भविष्य-वाणी की थी कि आगे आने वाली भाषा हिन्दी है। श्री बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय ने और श्री केशव चन्द्र सेन ने बहुत पहले ही कहा था हिन्दी भविष्य में आने वाली भाषा है। शारदा बाबू ने नागरी लिपि पर इतना बल दिया था। मेरा निवेदन है कि आज से बहुत पहले दूसरे प्रदेश वालों ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार किया था। स्वामी दयानन्द गुजराती थे, लेकिन उन्होंने अपना सारा काम हिन्दी भाषा में ही किया। महात्मा गांधी गुजराती थे, लेकिन उन्होंने हिन्दी को कितना बल दिया। पंजाब में हिन्दी चलेगी ही। पंजाबी और हिन्दी दोनों को मिलकर चलना चाहिए। मेरा निवेदन है कि इससे पंजाबी युवकों को लाभ होगा क्योंकि इस प्रकार उनको हिन्दी का अच्छा ज्ञान हो जायगा।

लुहारूवालों की शिकायत

मैं पंजाब के सम्बन्ध में बोलते हुए एक बात और कहना चाहता हूँ। जिसकी ओर कल मेरे भाई श्री अचिन्त राम जी ने ध्यान दिलाया था। मेरे पास भी लुहारू के कई भाई आये और उन्होंने इस बात पर बल दिया कि लुहारू को पंजाब के साथ रहना चाहिए। मैं स्वयं इस बात की गवाही दे सकता हूँ कि श्री अचिन्त राम जी के पास लुहारू वालों की भीड़ आती रही है। वे स्वयं वहाँ गये थे, जैसा कि उन्होंने कल बतलाया था। वहाँ उन्होंने पता लगाया। वहाँ पर एक एक पंचायत की यही राय है कि वे पंजाब के साथ रहें।

सभापति महोदय : आप कितना समय और लेंगे ?

श्री टंडन : लगभग दस मिनट और।

लुहारू वालों की यह मांग है कि हमको ढकेलो मत। मैं कुछ समझ नहीं पाया कि क्यों कमीशन ने लुहारू को अलग करने की सिफ़ारिश की है। मालूम होता है इस विषय में उन्होंने लुहारू वालों से बात नहीं की, किन्हीं दूसरों से इसके बारे में बात की थी। जयपुर में किसी ने शायद ऐसी बात कह दी कि राजस्थान के भाई लुहारू को अपने में रक्खेंगे। लुहारू के लोगों से इस बारे में नहीं पूछा गया। लुहारू की जो ३० हज़ार की आबादी है उसमें से मैं समझता हूँ २९ हज़ार और साढ़े २९ हज़ार ऐसे मिलेंगे जो कहेंगे कि हमको पंजाब से मत अलग करो और इसको सिद्ध करने के लिए सारे वोटरों के दस्तख़त लाकर रख देंगे . . .

पंडित ठाकुरदास भार्गव (गुड़गांव) : जी हाँ, दस्तख़त आ सकते हैं और वह पेश कर दिये जायँगे।

श्री टंडन : मालूम पड़ता है कि उन्होंने लुहारू के लोगों से इस बारे में नहीं पूछा, हालाँकि आयोग के सदस्यों ने स्वयं यह सिद्धान्त रक्खा है कि जहाँ तक सम्भव होगा, हम जनता की इच्छाओं का आदर करेंगे। इसके अतिरिक्त एक और बड़ा सिद्धान्त है जिसके ऊपर मैं सदन का ध्यान दिलाना चाहता हूँ और वह यह है कि उन्होंने अपनी रिपोर्ट में कहा है कि हमने, जहाँ तक सम्भव हुआ है, ज़िलों के स्तर पर बंटवारा किया है। **"डिस्ट्रिक्टवाइज़"** यह शब्द उसमें आया है। उससे उतर कर साधारणतः हमने बंटवारा नहीं किया है। बहुत लाचार हुए हैं तब किया है। अब आप देखिये कि लुहारू आख़िर है क्या! लुहारू हिसार ज़िले का एक अंग है, वह तहसील भी नहीं है। लुहारू भिवानी तहसील का एक टुकड़ा है। आप ज़िला हिसार को राजस्थान में नहीं ले जा रहे हैं। मेरा तो ऐसा विश्वास है कि यदि हिसार ज़िले को आप राजस्थान में ले जायँ तो यह जो लुहारू के भाई हैं इनको कुछ सन्तोष होगा। सब पुराने अपने साथियों को अपने साथ पाकर सन्तोष होगा। हमारे भार्गव जी को सन्तोष नहीं होगा, लुहारू वालों को सन्तोष होगा। लुहारू वालों ने मुझसे कहा कि अगर हमें उधर जाना भी हो तो भिवानी को भी साथ में ले चलिये। उन्होंने कहा कि भिवानी उनकी तहसील है। वे बेचारे यह समझते हैं कि हम अपनी तहसील से कट कटा कर कहाँ जायँगे। अगर भिवानी तहसील भी पूरी की पूरी उधर जाती तो भी उनको कुछ सन्तोष होता। लेकिन आपने जो सिद्धान्त रिपोर्ट में दिया है कि हम ज़िले के स्तर पर काम करेंगे, उस सिद्धान्त को लुहारू के सम्बन्ध में छोड़ दिया . . .

पंडित डी० एन० तिवारी (सारन-दक्षिण) : बहुत जगह छोड़ दिया है।

श्री टंडन : एक छोटे से टुकड़े लुहारू को पकड़ना मेरी समझ में नहीं

आता। अलवत्ता अगर उसके पीछे बड़ा आर्थिक कारण होता, जनता की मांग होती तो वह समझ में आ सकता था। इसके पीछे कोई आर्थिक कारण तो है नहीं। एक छोटी सी ३० हज़ार ग़रीब लोगों की बस्ती है, भिवानी तहसील का एक टुकड़ा है, उसको इस प्रकार से अलग करना जब उसकी अधिकांश जनसंख्या पंजाब में बने रहने के पक्ष में है, उचित कार्य नहीं जान पड़ता। अब मैं इस प्रश्न को यहीं छोड़ता हूँ।

बम्बई की समस्या

कुछ शब्द मुझे बम्बई के सम्बन्ध में एक सार्वजनिक कार्यकर्त्ता के नाते निवेदन करने हैं। पंजाब और बम्बई यह दो मुख्य विषय हमारे यहाँ शास्त्रार्थ के हो गये हैं और यहाँ पर जो शास्त्रार्थ हुआ है उसमें भी विशेष तौर पर इन दोनों प्रान्तों की चर्चा आयी है। मैं इस विषय में प्रधान मंत्री जी से सहमत हूँ कि, जहाँ तक सम्भव हो, वह रिपोर्ट जो आयी है उसको हम मान लें। बहुत ठीक बात है। मैं इतना और जोड़ना चाहता हूँ कि यदि हमारे महाराष्ट्री भाई यह चाहते हैं कि मराठी भाषी लोग सब एक जगह हो जायँ, अर्थात् विदर्भ को भी अपने साथ में रखना चाहते हैं तो मैं अपने गुजराती भाइयों से यह सोचने के लिए कहूँगा कि क्या ऐसी दशा में यह सम्भव नहीं है कि वे उसके साथ रहें? मराठी भाइयों ने कहा है कि वे यह स्वीकार करेंगे कि विदर्भ भी साथ रहे और समस्त गुजरात भी साथ रहे और बम्बई उसका मुख्य स्थान हो। वह द्विभाषी प्रदेश होगा। पुनःसंघटन आयोग ने जो सुझाव दिया है उसके अनुसार भी वह द्विभाषी प्रदेश होगा। हमारे मराठी भाषी भाई विदर्भ को साथ लेना चाहते हैं। यह स्पष्ट है कि वह अपनी संख्या को बढ़ाना चाहते हैं और यह स्पष्ट है कि उसमें गुजराती भाइयों की संख्या घट जायगी। उनका जो अनुपात है वह कम हो जायगा। परन्तु फिर भी मैं यही कहूँगा कि यह विचार की बात है कि क्या इस प्रकार से, इस भरोसे पर कि आगे सब ठीक रहेगा, मिल जाना असम्भव है। आखिर गुजराती में और मराठी में भाषा का बहुत अधिक अन्तर नहीं है। वह मिल कर रहें क्या यह असम्भव बात है? यह चेतना कि हम मराठी हैं, हम गुजराती हैं—मैं ऐसा मानता हूँ कि कुछ दिनों यह अधिक चलती है, फिर जब बहुत आपस में हिल मिल जाते हैं तो वह बात समाप्त हो जाती है। एक रास्ता मुझे और इस सम्बन्ध में सुझाई देता है, कहाँ तक व्यावहारिक होगा यह मैं नहीं कह सकता, लेकिन वह असम्भव नहीं है। वह यह है कि गुजराती भाइयों और मराठी भाइयों को एक करने के लिए यह हो सकता है कि कुछ भाग बड़े मध्यभारत का उधर मिला दिया जाय, जैसे इंदौर की ओर का भाग इसी प्रदेश में आ जाय।

श्री सी० सी० शाह (गोहिलवाड सोरठ) : मालवा का कुछ भाग इधर आ जाय।

श्री टंडन : ठीक है, अगर यह भाग उसमें आ जाय तो कोई हर्ज की बात नहीं है। मैं समझता हूँ कि इसको हमारे मराठी भाई भी स्वीकार करेंगे और गुजराती भाई भी पसन्द करेंगे, अनुपात वाली बला बली की दृष्टि से। वह **बैलेंस** और वह बला वली वन जाय तो ठीक वात होगी। सम्भवतः इंदौर के भाई बम्बई के साथ मिलना पसन्द करेंगे।

अगर मध्य प्रदेश में कुछ कमी पड़े तो कुछ भाग मैं अपने सूबे में से देने के लिए तैयार हूँ। मुझे आपत्ति नहीं यदि ललितपुर का टुकड़ा ले लिया जाय, अगर उससे आपका झगड़ा तय होता है। ललितपुर के देने से हमारा सूबा थोड़ा कम हो जायगा। उधर बघेलखंड का कुछ टुकड़ा आप दे दीजिये। उसको मांगने का कारण दूसरा है, वह अनुपात के लिए नहीं है।

अगर आर्थिक दृष्टि से बघेलखंड वाले लोग उत्तर प्रदेश में आना चाहते हैं तो उनको इधर आने दीजिये और हमसे ललितपुर का कुछ भाग ले लीलिये।

एक माननीय सदस्य : वह भी बला बली हो गई।

श्री टंडन : वह उनके लिए है। मेरे सामने यह बला बली का प्रश्न नहीं है। वह आना चाहते हैं, इसलिए मैंने कहा कि बघेलखंड यदि इधर आना चाहता है और वह अधिक बलवान होता है तो मैं कहूँगा कि उनको आने दो। मैं इस बात को उचित समझता हूँ कि यह बम्बई का प्रश्न प्रेम के साथ और मेल के साथ तय हो और अगर हमारे प्रदेश का कुछ हिस्सा देने से वह प्रश्न तय हो जाय तो मैं उसके लिए तैयार हूँ। मैं तो इस बात के लिए भी तैयार हूँ कि अगर हमारे पश्चिमी प्रदेश का कुछ हिस्सा उधर पंजाब में चले जाने से पंजाब का प्रश्न हल हो तो ले लो, मुझे उसमें कोई आपत्ति नहीं है। हरियाना, पंजाब, पेप्सू को मिलाकर अगर एक सूबा बनाने के लिए आपको मेरठ चाहिए तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है।

कुछ माननीय सदस्य : मुझे आपत्ति है।

श्री टंडन : मगर मुझको आपत्ति नहीं है, किन्तु अगर हमारे भाई उधर नहीं जाना चाहते तो इसके लिए उनको कोई मजबूर नहीं कर सकता।

और अधिक नहीं कहूँगा। मेरा मुख्य कहना यही है कि भारतवर्ष की एकता को बनाये रखने को मैं बहुत महत्व देता हूँ। कल हमारे प्रधान मंत्री जी ने ४-५ ज़ोन की बात कही और कहा कि हम केन्द्रीय सरकार को दृढ़ करना चाहते हैं। मैं उनसे इस बात में सहमत हूँ। राजा जी ने इस सम्बन्ध में जो सुझाव दिया था वह मुझे बुरा नहीं लगा। राजा जी ने कहा कि हमारे यहाँ ज़िलेवार प्रबन्ध हो और कमिश्नरियाँ हों और कुछ कमिश्नरों

के जरिए से हमारे देश का प्रबन्ध हो, मुझे तो उनका यह सुझाव बुरा नहीं लगा और मैं समझता हूँ कि उस पर विचार किया जाना चाहिए। राज्य सभा में भी एक सदस्य ने कहा कि देश के केवल ४० भाग होने चाहियें। वहाँ पर यह बात शायद मेरे मित्र काका कालेलकर ने कही जो बड़े विचार-वान व्यक्ति हैं। अवश्य ही यह बात उन्होंने सोच विचार के बाद कही होगी। परन्तु मेरा निवेदन है कि यह मुख्य बात हमें ध्यान में रखनी है कि हमारा केन्द्र दृढ़ रहे और वह कमजोर न होने पाये। पुराने समय में हमारा केन्द्र निर्बल रहा है और यह बड़ी कमी हमारी व्यवस्था में थी। किसी समय बहुत से हमारे प्रदेश थे परन्तु केन्द्र अच्छा नहीं रहा। अब हम केन्द्र को दृढ़ रक्खें और अपने छोटे छोटे स्थानों की रक्षा करने में केन्द्र को निर्बल न होने दें, इनकी मुख्य आवश्यकता है।

३४

राष्ट्रपति का अभिभाषण

२३ फ़रवरी १९५६ को राष्ट्रपति
के अभिभाषण पर बोलते हुए

महाराष्ट्र–गुजरात–बम्बई

सभापति महोदय ! मैं भी उस प्रस्ताव का समर्थन करता हूं जो राष्ट्रपति जी को धन्यवाद देने के लिए रक्खा गया है। उन्होंने, राज्यों के पुनःसंघटन के कारण जो कठिनाइयाँ उपस्थित हुई हैं, उन पर खेद प्रकट किया है। इस लोकसभा में बराबर हमारे सदस्यों ने भी पुनःसंघटन समिति की रिपोर्ट की चर्चा की है। हमारे इन चार दिनों के विवाद में उस प्रतिवेदन का बड़ा स्थान रहा है। वह विषय हमारी वर्तमान समस्याओं से सम्बन्ध रखता है और यह स्वाभाविक ही था कि हम उस पर समय दें। मैं भी दो एक बातें इस विषय में सबसे पहले कहना चाहता हूं।

एक तो यह कि पुनःसंघटन के विषय को हमें इस समय निराशा में छोड़ नहीं देना है। हमारे एक मित्र ने सुझाव दिया है कि आज यह समय है कि जो टंटा हमें दिखाई दे रहा है उसको शान्त करने के लिये इस सारे मामले को ही समाप्त कर दिया जाय। न रहेगा बांस, न बजेगी बांसुरी ! बांसुरी जो बेसुरी बज रही है उसको बन्द करने के लिये बांस को ही समाप्त कर दो ! मेरी राय है कि यह निराशा की सम्मति है। मैं इससे बिल्कुल ही सहमत नहीं हूं। मैं तो अपनी सरकार को यही सलाह दूंगा कि अब जो कुछ सामने आया है, जो समस्या उपस्थित है उसके लिये हमें उचित कार्य करना है। जो विषय उठा लिया उससे हमें हटना नहीं है। अब उस पुनःसंघटन की रिपोर्ट पर विचार करना ही है। जितने भी प्रश्न हैं उनमें सबसे बड़ा प्रश्न महाराष्ट्र, गुजरात और बम्बई का है। उसका हल निकालना है। आज उसको इस तरह से छोड़ देने में हमारा लाभ नहीं है और साथ ही यह गवर्नमेंट की मर्यादा के भी विरुद्ध है। इसलिये इस विषय को जो उठा है हल करना ही है।

हमारे भाई श्री अशोक मेहता जी ने कहा कि गुजरातियों और महाराष्ट्र निवासियों को साथ रहना है और उन्हें मिलकर के ही इस विषय को हल करना है तथा यह उचित है कि यह राज्य द्विभाषी राज्य हो। उन्होंने इस मत पर

वल दिया। कुछ समय हुआ जब पुनःसंघटन के प्रतिवेदन पर विचार हो रहा था, मैंने निवेदन किया था कि इस राज्य को द्विभाषी बनना चाहिये। इसको गुजराती स्वीकार करें और मराठी बोलने वाले भी स्वीकार करें। मैंने नम्रता के साथ दोनों से निवेदन किया था कि जब मिल कर साथ रहना है तब संख्याओं का प्रश्न नहीं उठना चाहिये। अभाग्य से संख्याओं के इस प्रश्न का आरम्भ हमारे मराठीभाषी भाइयों ने इस हिसाब से किया था कि वह कुल मराठीभाषी जनता को एक में रखना चाहते थे; नहीं तो जो रिपोर्ट समिति ने दी थी उसके ऊपर गुजराती तो राजी थे ही, उन्होंने स्वीकार किया था कि यह राज्य द्विभाषी हो। मराठीभाषियों ने भी यह बात मानी थी कि द्विभाषी प्रदेश हो, किन्तु वे चाहते थे कि विदर्भ भी साथ मिलाया जाय। विदर्भ के आ जाने से मराठीभाषियों की एकता हो जाती है, उनकी संख्या बढ़ जाती है, पर द्विभाषी प्रदेश वह फिर भी रहता है। आज श्री अशोक मेहता जी ने जो कहा कि द्विभाषी राज्य हो, वह प्रतिवेदन में भी था। यह बात गुजरातियों को भी स्वीकार थी और मराठीभाषियों को भी स्वीकार थी। इस विदर्भ ने आकर कुछ अन्तर किया। विदर्भ के मिलाने से आज कठिनाई उपस्थित हो गयी, परन्तु इस कठिनाई को हल करना है। अब तो यह एक प्रकार से निश्चित हो गया है कि विदर्भ मराठी प्रदेश के साथ रहेगा। अब बम्बई प्रदेश पहले की अपेक्षा बहुत बड़ा बन गया। मैंने एक सुझाव दिया था। आज फिर मैं उसकी ओर ध्यान दिलाता हूँ। द्विभाषी राज्य हो इसमें न मराठीभाषियों को आपत्ति है और न गुजरातियों को। ऐसा जान पड़ता है कि कुछ संख्याओं की बलाबली है जिसके कारण इतना उधम मचा। यह समस्या कोई इतनी कठिन नहीं है। जो आज सामने है उसको दोनों मान लें तो विवाद समाप्त हो जाता है। यदि न मानें तो मैं सरकार से निवेदन करूंगा कि वह इसमें थोड़ा अन्तर कर दे। इन दोनों प्रदेशों को मिलाने के बाद उनमें कुछ भाग मालवे का मिला दे। मैंने पहले भी यह सुझाव दिया था कि इसमें इंदौर के आस पास का भाग मिला दिया जाय।

एक माननीय सदस्य : वह मिलना नहीं चाहते हैं।

श्री वी० जी० देशपांडे (गुना) : नहीं, वह चाहते हैं।

श्री टंडन : मेरा निश्चय है कि इंदौर के आस पास के भाई बम्बई के साथ रहना बहुत अच्छा समझेंगे। अगर इंदौर के आस पास जो मालवा का प्रदेश है उसको इसमें मिलाया जाय तो इसमें कोई कठिनाई नहीं होगी। हां ! यह सम्भव है कि वह द्विभाषी की जगह त्रिभाषी प्रदेश हो जाय, क्योंकि कुछ हिन्दी का भाग भी आ जायगा। परन्तु जो तीसरी भाषा हिन्दी है उससे तो दोनों को ही प्रेम है। मैं जानता हूं कि मराठी भाई और गुजराती भाई दोनों ही हिन्दी के पक्षपाती हैं और राष्ट्रभाषा के रूप में दोनों ही हिन्दी को

मानते रहे हैं। साधारण रूप से यदि यह प्रदेश द्विभाषी होगा तो भी कुछ तो हिन्दी चलेगी ही। इसलिए मेरा यह निवेदन है कि यदि इस तरह से यह प्रदेश वनाया जाय तो वहां के लोगों में विल्कुल मेल रहेगा। जव साथ रहना है तो मिल कर काम भी करना है। मैं इस वात को मानने वाला हूं कि दुनिया में देश को मुख्यता और छोटे छोटे राज्यों को गौणता दी जाती है। मैं समझता हूं कि देश मुख्य है और छोटे राज्य इधर से उधर गये या उधर से इधर आये, वम्वई इधर आये या उधर जाये, यह एक गौण प्रश्न है। मेरे कहने का यह मतलव नहीं है कि इधर से उधर हटाने में किसी को कष्ट नहीं होता, अवश्य कष्ट होता है, कई स्थानों में मैंने देखा कि अगर आप एक छोटे से टुकड़े को इधर से उधर कर दें तो टुकड़े वालों को कठिनाई आ जाती है, किन्तु हमारे सामने जो देश की एकता का प्रश्न है उसकी तुलना में यह सब प्रश्न छोटे हैं। महाराष्ट्र के संवंध में मेरा यह सुझाव है।

पंजाब में हिन्दुओं और सिखों की एकता

पंजाव के संवंध में भी मैंने उस समय कुछ कहा था। अव मुझे आशा हो रही है कि उसका रूप कुछ अच्छा वन रहा है। अभी अमृतसर में सिखों का एक समारोह हुआ था। उसमें मास्टर तारासिंह ने एक भाषण दिया था। उस भाषण में उन्होंने हिन्दुओं से अपील की थी। मुझको उनका भाषण वहुत अच्छा लगा। उन्होंने वड़े मार्मिक ढंग से अपील की थी और पुरानी वातों का स्मरण दिलाया था कि सिखों को किस लिए वनाया गया था। यह एक ऐतिहासिक बात है कि समाज को उठाने के लिये ही सिख पैदा किये गये थे। इस प्रकार से उन्होंने एकता की अपील की। मैं उनकी अपील के एक एक अक्षर का समर्थन करता हूं। साथ ही आज मैं हिन्दुओं और सिखों दोनों से निवेदन करता हूं कि वे इस प्रश्न पर वड़ी उदारता से विचार करें तथा जो देश के हित में हो उसको अधिक आगे रक्खें।

हमारे भाई सरदार हुकुमसिंह जी ने यह कहा कि छोटे राज्यों के वनने से वड़े राज्य वनने की अपेक्षा ज़्यादा लाभ होगा, अर्थात् छोटे राज्यों से अधिक एकता स्थापित होगी। यह ऐसी वात है जो किसी ओर भी मुड़ सकती है। उनका कहना है कि वड़े राज्यों की प्रवृत्ति लड़ने की, उखड़ने की और केन्द्र से अलग होने की अधिक होगी। आखिर ऐसा क्यों माना जाय कि जो वड़े टुकड़े होंगे उनमें अलग होने की प्रवृत्ति अधिक होगी? साथ ही हम देख रहे हैं कि छोटे छोटे राज्यों के वनाने में कितनी असुविधा है। स्वयम् पंजाव के छोटे छोटे टुकड़े वनाने में हम विशेष असुविधा देख रहे हैं। फिर विदेशों के पड़ोस के कारण वहां हमें वड़ी शक्ति और दृढ़ता का प्रवेश चाहिये।

बड़े राज्यों द्वारा अधिक लाभ

छोटे राज्यों के होने से केन्द्र को अधिक मदद मिलेगी, यह दलील तो मुझे नहीं जंचती। मैं तो यह समझता हूं कि यदि देश में बड़े बड़े टुकड़े रहें तो एकता अधिक होगी। कुछ हमारे उत्तर प्रदेश की भी उन्होंने चर्चा की। उन्होंने कहा कि यू० पी० को इसी तरह से बना देने रहने के पक्ष में हमारी केन्द्रीय गवर्नमेंट है और शायद हमारे प्रधान मंत्री भी बड़े प्रदेश खड़े करने की कोशिश कर रहे हैं। कुछ इस प्रकार की दलील उन्होंने ढूंढी है। यह मुझे कुछ ठीक बात नहीं लगी। मैं समझता हूं कि यदि इस प्रकार का मत किसी का है, तो वह ठीक नहीं है। उसके साथ यह कहना कि वह उलझन से भाग रहे हैं जिसको कि उन्होंने अंग्रेज़ी में **इस्केपिज्म** कहा, यह बात भी मुझे दिखलाई नहीं देती है। यह जो कहा गया है कि बंगाल और बिहार इसलिए एक हो रहे हैं कि उनकी भावना है कि चूंकि यू० पी० बड़ा है इसलिए हमें भी चाहिये कि हम बड़े बनें यह भी मुझे कोई सही बात नहीं दिखलाई देती।

बंगाल और बिहार की समस्या

पंजाब के बारे में बात करते हुए जो उन्होंने बंगाल और बिहार की चर्चा की, उसके विषय में मैं उनसे तथा दूसरे भाइयों से यह निवेदन करना चाहता हूं कि यह प्रश्न एक अलग रूप से आया है। इन दोनों प्रदेशों की अपनी कठिनाइयां हैं। बंगाल की अपनी कठिनाइयां हैं और बिहार की अपनी कठिनाइयां हैं। बंगाल की कठिनाई तो यह है कि बहुत भारी संख्या में लोग पूर्वी बंगाल से आ रहे हैं जिनके लिए स्थान की बहुत कमी है। डा० राय के दिल में यह बात आई हो कि हम यू० पी० के बराबर हो जायें यह बहुत दूर की कौड़ी है। उनके सामने तो समस्या यह थी कि उनको भूमि कहां मिले। बिहार के साथ उनका पुराना सम्बन्ध रहा है और यदि अब बिहार और बंगाल मिलते हैं तो इसमें कोई अस्वाभाविक बात नहीं है।

हमारे जो प्रजा समाजवादी भाई हैं उन्होंने इस विषय में अपने दल का कुछ रास्ता निकाल लिया है और उन्होंने सोचा है कि जब बिहार और बंगाल का सवाल आए तो वह इसका विरोध करें। उन्होंने इसका विरोध किया भी है। श्री अशोक मेहता से मैं यह आशा करता था कि वह कुछ कहेंगे। उन्होंने अपने भाषण में इस विषय पर कुछ नहीं कहा। उन्होंने जो दलील गुजरात और महाराष्ट्र को एक करने की दी वह मुझे अच्छी लगी। मैं बंगाल और बिहार को भी मिलाने में कोई बुराई नहीं देखता हूं। इसमें मुझे हर तरह से भलाई नजर आती है। यह बात होगी ही, यह मैं नहीं कह सकता हूं,

क्योंकि मैं मानता हूं कि अगर गहरा विरोध हो और जनता न माने तो जनता की खोपड़ी पर यह लादना नहीं चाहिये। परन्तु यदि यह हो सके तो मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह एक बहुत सुन्दर बात होगी और आगे के लिए हमारा मार्ग प्रदर्शित करने वाली सिद्ध होगी।

शिक्षा विभाग द्वारा हिन्दी की अवहेलना

इतना कहने के पश्चात अब मुझे कुछ बातें ऐसे प्रश्नों पर कहनी हैं जिनके बारे में राष्ट्रपति जी ने अपने अभिभाषण में कुछ नहीं कहा। इनमें से सबसे पहले मैं हिन्दी के प्रश्न को लेता हूं। इस विषय में उन्होंने कुछ नहीं कहा है। मैं समझता हूं कि सम्भवतः उन्होंने यह आवश्यक नहीं समझा कि वे कुछ कहें। मैंने कई बार पहले कहा है कि हमारा जो शिक्षा विभाग है उसका कार्य बहुत असन्तोपजनक है। पिछले पांच वर्षों में जो कुछ भी शिक्षा विभाग को कर लेना था उसका सवां भाग भी उसने नहीं किया है। मैं बिल्कुल नापतोल करके यह बात कह रहा हूं। परन्तु जो कुछ भी हो चुका है उसपर हमें अब रोना नहीं है, हमें चाहिये कि हम आगे के लिए चेतें।

हिन्दी टाइपराइटर का वर्ण-पट्ट

इधर शिक्षा विभाग की ओर से एक बात ऐसी की गई है जो सहायता देने वाली नहीं बल्कि बिगाड़ पैदा करने वाली है। मैं इस समय हिन्दी **टाइपराइटर** का हवाला दे रहा हूं। इसके बारे में अभी गवर्नमेंट ने अपना अन्तिम मत प्रकट नहीं किया है और मैं आशा करता हूं कि अगर इस विषय पर विचार करके इसको सम्हालने की चेष्टा की गई तो भूल ठीक हो जायगी। शिक्षा विभाग द्वारा हिन्दी **टाइपराइटर** का जो **कीबोर्ड** (वर्ण-पट्ट) तैयार किया गया है उसमें अक्षर तो हिन्दी के रखे गए हैं, परन्तु अंक अंग्रेजी के रखे गये हैं। यह चीज़ मुझे कुछ अजीब सी लगी है कि...

श्री रक्षा संगठन मंत्री (श्री त्यागी) : यह **कांस्टीटयूशन** में है।

श्री टंडन : मैं इसके बारे में निवेदन करता हूं। आपने तो वही बात दुहरा दी है जो शिक्षा विभाग दुहराता आया है। मैं आपसे कहता हूं कि **कांस्टीटयूशन**, संविधान, में ऐसा नहीं है। **कांस्टीटयूशन** में जिन शब्दों का प्रयोग किया गया है वह आपके सामने हैं। उनको कुछ ध्यान से देखलें तो अच्छा हो। मैं इसको एक महत्वपूर्ण प्रश्न मानता हूं, इसलिए मुझे इसपर पांच सात मिनट लेने पड़ेंगे। **टाइपराइटर** जो बनता है वह देश भर के लिए बनता है। यदि उसे देश भर के लिए बनाना है तो हमें चाहिये कि हम यह भी देखें कि क्या लिखावट देश में चल रही है, हमारे देश में हिन्दी बोलने वाले कितने हैं और इन नागरी अंकों को काम में लाने वाले कितने हैं। मेरा

निवेदन है कि जो लोग हिन्दी बोलने वाले हैं, उनकी संख्या लगभग १५ करोड़ है। यह संख्या उन प्रदेशों की है जहां आज हिन्दी चल रही है। परन्तु यही अंक गुजरातियों के हैं जिनकी संख्या लगभग ढाई करोड़ है। यही अंक मराठीभाषियों के हैं जिनकी संख्या लगभग तीन करोड़ की होगी। यही अंक हमारे भाई सरदार हुक्मसिंह और उनके सहयोगी भी काम में लाते हैं; पंजाबी भाषा में, गुरुमुखी में, यही अंक हैं। इनकी संख्या भी लगभग डेढ़ करोड़ तो है ही। इस तरह से इन अंकों का प्रयोग करने वाले लगभग २२ करोड़ आपको मिलेंगे। लगभग ६-७ करोड़ लोग आप ऐसे पायेंगे जो बिल्कुल यही अंक तो नहीं किन्तु इससे मिलते जुलते अंकों का प्रयोग करते हैं जैसे बंगाल, आसाम और उड़ीसा में। इनके अंकों का जो क्रम है यह कुछ भिन्न है इसलिए मैं उनको छोड़े देता हूं। प्रश्न यह है कि आप जो **टाइपराइटर** बना रहे हैं. यह किसके लिए बना रहे हैं। जनता के लिये ही तो यह बनेंगे।

यहां पर **कांस्टीटयूशन** का हवाला दिया गया है। अगर **कांस्टीटयूशन** में होता कि आगे के लिए नागरी अंकों का प्रयोग बन्द कर दिया जाता है और उनके स्थान पर अंग्रेज़ी अंकों का प्रयोग होगा, जिनको **इन्टरनैशनल फार्म आफ इंडियन न्यूमरल्स** कहा गया है तब वह ठीक होता जो शिक्षा विभाग चाहता है। लेकिन ऐसा नहीं है। **कांस्टीटयूशन** में इस सम्बन्ध में ये शब्द हैं—

'The official language of the Union shall be Hindi in Devanagari script.'

'संघ की राजभाषा देवनागरी लिपि में लिखी हुई हिन्दी होगी।' उसमें देवनागरी लिपि रखी गई है और लिपि में अक्षर और अंक दोनों सम्मिलित होते हैं। लिपि के दो अंग होते हैं और आपको ऐसा कहीं नहीं मिलेगा कि उनमें अन्तर किया जाय। स्क्रिप्ट के भीतर दोनों हैं। आपने देवनागरी लिपि को माना—उसकी लिखावट को माना।

फिर लिखा है—

The form of numerals to be used for the official purposes of the Union shall be the international form of Indian numerals.

संघ के राज-कार्य में प्रयुक्त होने वाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का अन्तर्राष्ट्रीय रूप होगा।

इसके तुरन्त बाद लिखा है—एक पैरा मैंने छोड़ दिया है।

Provided that the President may, during the said

period, by order authorise the use of the Hindi language in addition to the English language and of the Devanagari form of numerals in addition to the international form of Indian numerals for any of the official purposes of the Union.

'निर्धारित अवधि के भीतर संघ के राज-कार्य के लिए राष्ट्रपति अपनी आज्ञा से अंग्रेज़ी भाषा के अतिरिक्त हिन्दी भाषा और भारतीय अंकों के अन्तर्राष्ट्रीय रूप के अतिरिक्त देवनागरी अंकों का रूप चालू कर सकते हैं।' यानी हिन्दी लिखने में अंग्रेज़ी अंकों का भी प्रयोग हो सकता है और देवनागरी अंकों का भी—दोनों का प्रयोग हो सकता है। आज वस्तुस्थिति क्या है? मैंने अभी कहा है कि इतने करोड़ों आदमियों के लिए आप **टाइपराइटर** बना रहे हैं। कैसा **टाइपराइटर** आप हमको देंगे? उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, विहार, राजस्थान, ये सव राज्य किस **टाइपराइटर** पर काम करेंगे? जिस **टाइपराइटर** पर इनको काम करना है, उसका **की-बोर्ड**, वर्ण-पट्ट, आपको देना चाहिए। अगर आपको अपने कामों में हिन्दी के साथ अंग्रेज़ी अंकों का इस्तेमाल करना है—मैं इस प्रश्न में नहीं जाता कि वह कहां होगा—तो उसके लिए आपको वहुत थोड़े **टाइपराइटर** चाहिए। अगर आप यह तय करते हैं कि **आफ़िशियल परपज़ेज आफ दि यूनियन** के लिए आपको झख मार कर अंग्रेज़ी अंकों का ही प्रयोग करना है—अगर गवर्नमेंट की नीति यह हो जायगी, तो आप देखिए कि कितने **टाइपराइटर** आपको चाहिए। लेकन वास्तविकता यह है कि गवर्नमेंट की यह नीति नहीं है और इस पर मैं उसको वधाई देता हूं। इस विषय में उन्होंने वरावर वुद्धिमानी से काम किया है। जहां जहां उन्होंने हिन्दी का प्रयोग किया है, वहां वहां उन्होंने नागरी अंकों का प्रयोग किया है।

श्री त्यागी : अभी **टाइपराइटर** ऐसे ही हैं।

श्री टंडन : यह केवल **टाइपराइटर** का ही प्रश्न नहीं है। आप रेल विभाग की समय-सारणी को देखिए। वह तो केवल **टाइपराइटर** की वदौलत नहीं वनी होगी। उसमें नागरी अंकों का प्रयोग वरावर होता है। अगर आप नया **टाइपराइटर** वना कर इन नागरी अंकों को वदलना चाहें, अगर आप चाहें कि **गवर्नमेंट आफ इंडिया** जनता से जितना भी सम्पर्क करे, उसमें अंग्रेज़ी अंकों का प्रयोग हो, तो वह कदापि उचित नहीं है। मगर मैं समझता हूं कि गवर्नमेंट की यह मंशा नहीं है।

कांस्टीटयूशन के वाद, नई **मिनिस्ट्री** वनने के वाद जव **गवर्नमेंट आफ इंडिया** ने रेलवे का **टाइम टेवल** वनाया था, तव पहले उसमें नागरी अक्षरों के साथ अंग्रेज़ी अंकों का प्रयोग किया गया था। उसका नाम रखा गया था

समय-सूचक या समय-दर्शक। वह टाइम-टेबल किसके काम का था? जो अंग्रेज़ी पढ़े लिखे लोग थे, वह प्रायः अंग्रेज़ी का **टाइम-टेबल** ख़रीदते थे और जो आदमी हिन्दी का **टाइम-टेबल** चाहते थे—देहात के आदमी, साधारण आदमी—उनको हिन्दी अंक चाहिए था। इस कारण वह कदाचित् विका भी कम। **रेलवे मिनिस्ट्री** से कहा भी गया कि आपने यह क्या निकाला है, यह हमारे किस काम का है। परिणाम यह हुआ कि जो समय-सारणी कई वरसों से निकल रही है, उसमें नागरी अंकों का प्रयोग किया गया है। उसके लिए मैं गवर्नमेंट को वधाई देता हूं। इसलिए वह दलील सही नहीं है, जिसकी त्यागी जी कल्पना कर रहे हैं। पहले उसमें अंग्रेज़ी अंकों का प्रयोग किया गया था, लेकिन वह वन्द कर दिया गया। समय-सारणी को नागरी अंकों के साथ निकालना पड़ा।

हमारे सामने जितने भी **गवर्नमेंट आफ इंडिया** के हिन्दी **पब्लिकेशन्स** हैं—**पब्लिकेशन्स डिविज़न** के और **इन्फ़ार्मेशन ऐंड ब्राडकास्टिंग मिनिस्ट्री** के—उन सव में नागरी अंकों का ही प्रयोग किया गया है। वे वहुत बुद्धिमानी की वात कर रहे हैं। वे देख रहे हैं कि उन्हें उन **पब्लिकेशन्स**, प्रकाशनों, को २१-२२ करोड़ आदमियों के सामने भेजना है। यह क्रम सही है और इसी को जारी रखना है। जहां कहीं कोई ऐसी विशेप ज़रूरत पड़ती है, वहां आप इस नीति में परिवर्तन कर सकते हैं। आप भूलिए नहीं—मुझे याद है कि अंग्रेज़ी अंकों की व्यवस्था इसलिए की गई थी कि ख्याल था कि शायद एकाउंटिंग में, आडिटिंग में, एकाउटेंट जेनरल के कार्यालय में शीघ्र हिन्दी भाषा आ जाने से कुछ कठिनाई होगी। लेकिन जन-सम्पर्क के कार्यों में आप को इन्हीं नागरी अंकों का प्रयोग करना पड़ेगा। **टाइपराइटर** के **की-बोर्ड**, वर्ण-पट्ट में आप उन अंकों को न रखें यह मुझे वहुत ग़लत लगता है। इतना ही मेरा निवेदन है। **कांस्टीटयूशन** के हिसाव से आप मजवूर नहीं हैं कि आप अंग्रेज़ी अंकों का प्रयोग करें। उसमें दोनों वातें हैं। आप जो चाहें कर सकते हैं। अगर आपने—मिनिस्टरों ने—नागरी को चुना, तो सही किया, वुद्धिमानी की।

अधिक समय तक अंग्रेजी का रखना हानिकर

एक आध वात और मैं आप से कुछ समय ले कर कहना चाहता हूं। मेरे सामने यह वहुत वड़ा प्रश्न है। अंग्रेज़ी को अधिक समय तक चलाने की वात की गयी है और इस विपय में हमारे मान्य नेता श्री राजाजी ने विशेषकर अपना मत प्रकट किया है। मुझे हाल में एक पुस्तक मिली है—श्री प्यारेलाल की 'महात्मा गांधी—दि लास्ट फ़ेज़'। इस पुस्तक में राजाजी और गांधीजी के हिन्दी सम्वन्धी कुछ विचार हैं। मुहव्वत के साथ उन्होंने

आपस में बात की है। वह बड़ी रुचिकर है और उसको मैं आपके सामने रख देना चाहता हूं।

उसका उल्लेख १६५ पन्ने पर है, आप उसको पढ़ लीजिए। उसमें किसी फंकशन का जिक्र है और जहाँ तक मालूम होता है, वह सन् १९४५ की बात है।

"The function itself which had taken Gandhiji to Madras occupied only a small part of his time. But its follow-up took some of his colleagues by surprise. He wrote letters to Srinivas Sastry, and Drs. Jayakar and Sapru, asking whether in future he might not correspond with them in the national language. Their cry of independence for the masses would be an insincere and hollow cry, he told all concerned, if they failed to cultivate the habit of speaking and thinking in the language of the people. It had to be now or never. Rajaji with his incorrigible love of paradox unwittingly made a *faux pas* when on receiving a scrawl in Devanagari in the Master's own hand, he let the following escape from his pen : "Your Nagari is so illegible that I have only with great difficulty gathered what you wished to tell me....It won't do to discard what we both know well and handle as medium and adopt deliberately a difficult medium except occasionally as a joke ! I shall begin replying in Tamil if you write to me in illegible Nagari !"

This brought the following from the Master : "If we discover a mistake, must we continue it ? We began making love in English....a mistake. Must it express itself only by repeating the initial mistake ? You have the cake and eat it also. Love is love under a variety of garb—even when the lovers are dumb. Probably it is fullest when it is speechless. I had thought under its gentle, unfelt compulsion, you would easily glide into Hindustani and thus put the necessary finishing touch to

your service of Hindustani. But let it be as you will, not I."

Wrote the repentant sinner: "Regarding Hindustani I plead guilty and ask for mitigation. Old age (not youth) being the excuse. But don't argue further. Your very sweetness makes me feel so guilty."

"उस कृत्य में जिसके लिए गांधीजी मद्रास गये थे उनका बहुत थोड़ा समय लगा। किन्तु उसके पिछले भाग में जो हुआ उससे उनके बहुत से साथी आश्चर्यचकित हो गये। उन्होंने श्रीनिवास शास्त्री, डा० सप्रू एवं जयकर को पत्र लिखकर पूछा कि क्या भविष्य में वह उनके साथ राष्ट्र भाषा में पत्र-व्यवहार कर सकते हैं? उन्होंने सब साथियों से कहा कि यदि वे जनता की भाषा में बोलने और सोचने का अभ्यास नहीं डालेंगे तो जनता की आज़ादी का उनका नारा असत्य और खोखला सिद्ध होगा। करना है तो यह कार्य अभी करना चाहिए अन्यथा यह कभी नहीं हो सकता।" राजा जी, जो सदा से पहेलियों में बातें करने के आदी हैं, अनजान में एक ग़लती कर गए। गांधीजी का देवनागरी घसीट में पत्र पाने पर उन्होंने लिखा "आपकी नागरी इतनी अस्पष्ट है कि बड़ी कठिनाई के बाद ही मैं आपकी बात समझने में समर्थ हो सका हूं। जिसे हम दोनों भलीभांति जानते हैं, उसे छोड़ कर एक कठिन माध्यम अपनाना उचित नहीं होगा, सिवाय कभी कभी हंसी के लिये। यदि आप मुझे अस्पष्ट नागरी में लिखेंगे तो मैं तामिल में जवाब देना शुरू कर दूंगा।" इसके उत्तर में गांधी जी ने लिखा "अपनी ग़लती समझ लेने के बाद भी क्या उसका जारी रखना आवश्यक है? हम लोगों ने प्रेमालाप अंग्रेज़ी में आरम्भ किया यह हमारी भूल थी। क्या हमारा प्रेम अपनी प्रथम भूल को दुहरा कर ही सम्पन्न हो सकता है? आप दो विरोधी कार्य कर रहे हैं। प्रेम प्रेम है चाहे उसका वस्त्र भिन्न हो। प्रणयी गूंगे भी हों तो भी प्रेम प्रेम ही है। पूर्णता पाकर तो प्रेम मूक हो जाता है। मैंने इसके मृदु और स्वाभाविक प्रभाव में सोचा था कि आप सरलता से हिन्दुस्तानी को ग्रहण कर लेंगे। तथा हिन्दुस्तानी के प्रति अपनी सेवा को पूर्ण करेंगे। परन्तु आपको अपनी इच्छा के अनुकूल काम करना है, मेरी इच्छा के नहीं।"

अपनी ग़लती पर पश्चात्ताप करते हुए राजाजी ने लिखा "हिन्दुस्तानी के सम्बन्ध में मैंने जो शब्द लिखे थे उस भूल का अनुभव करता हूं और उसके लिए क्षमा प्रार्थी हूँ। मेरी भूल का कारण वृद्धावस्था (जवानी नहीं) थी। अब इस पर आगे तर्क न करें। आपकी मधुरता और सज्जनता से ही मैं अपने को ऐसा अपराधी अनुभव करता हूँ।"

राजा जी ने अपने बुढ़ापे की बात कही थी। लेकिन जब उन्होंने यह बात कही थी तब से वे और अधिक बूढ़े हो गये हैं। यह हमारा सौभाग्य है कि हमारे देश में राजा जी जैसे महापुरुष हैं। मैं कह सकता हूं कि मैं हृदय से राजा जी का पुजारी हूं। परन्तु उनकी कई बातें ऐसी होती हैं जिनमें वे गहरी भूल कर जाते हैं और मुझको ऐसा लगता है कि आज जो वह कह रहे हैं उसमें वे गहरी भूल कर रहे हैं। मेरा निवेदन यह है कि हिन्दी के विषय में विचार करते समय हमें इस प्रकार की बातों से चौकन्ने रहना है।

मुझे एक बात और कहनी है, और मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि हमारे प्रधान मंत्री जी भी इस समय यहां मौजूद हैं। इस बात का थोड़ा सा सम्बन्ध पर-राष्ट्र नीति से है।

नागरी लिपि की वैज्ञानिकता

संसार में जितनी लिपियां हैं उनको जानने वाले बड़े बड़े लोगों का यह मत है कि नागरी लिपि सबसे अधिक सुन्दर, पूर्ण और वैज्ञानिक है।

रक्षा संगठन मंत्री (श्री त्यागी) : यह पेचीदा है।

श्री टंडन : मैं समझा नहीं कि इस पेचीदापन पर आप नाक भौं क्यों सिकोड़ते हैं। अगर पेचीदा है तो उसे समझिये, वह आपकी अक्ल के बाहर नहीं होनी चाहिए। देखिये इसमें क्या पेच आता है। अभी मैंने कहा कि इसका कुछ परराष्ट्र नीति से सम्बन्ध है। आप उस पेच को समझने की कोशिश कीजिये। मैं कहता हूं कि यह सारे संसार का प्रश्न है, केवल भारत का ही नहीं है। संसार में जो लिपियों के जानने वाले हुए हैं उनमें से कुछ की राय मैं आपके सामने रखना चाहता हूं। सर आइज़क पिटमैन, जिन्होंने **फ़ोनोग्राफी**, अर्थात **शार्टहैंड** शीघ्रलिपि निकाली, उन्होंने देवनागरी लिपि को देखकर ही उसके आधार पर उसको निकाला था। लेकिन मैं आज उस विषय में नहीं जाना चाहता। मैं केवल आपके सामने वह रखना चाहता हूं जो उन्होंने देवनागरी लिपि के बारे में कहा है। वे कहते हैं—

"If in the world we have any alphabets the most perfect, it is those Hindi ones."

"संसार में यदि कोई सबसे पूर्ण लिपि है तो वह हिन्दी की है।" यह सर आइज़क पिटमैन के शब्द हैं।

मैं एक राय और आपके सामने रखता हूं। फिर मैं परराष्ट्र नीति वाली बात पर आता हूं। प्रोफेसर मोनियर विलियम्स संस्कृत के प्रसिद्ध विद्वान थे और अंग्रेज़ी और हिन्दी के भी पंडित थे। उन्होंने पुराने समय में एक पत्र "टाइम्स" में लिखा था जिसमें नागरी लिपि के बारे में उन्होंने कहा है—

"This, although deficient in two important symbols

(represented in the Roman by z and f), is on the whole, the most perfect and symmetrical of all known alphabets. ....The Hindus hold that it came directly from the gods (whence its name), and truly its wonderful adaptation to the symmetry of the sacred Sanskrit seems almost to raise it above the level of human inventions."

"यद्यपि इस लिपि में दो महत्वपूर्ण ध्वनियों की कमी है जो रोमन लिपि में Z और F द्वारा व्यक्त होती हैं किन्तु अपने सम्पूर्ण रूप में संसार भर की सभी ज्ञात लिपियों में यह सबसे अधिक पूर्ण और संतुलित है। हिन्दुओं का यह विश्वास है कि यह सीधे देवताओं से आई है और इसीलिए इसका नाम देवनागरी है। और सत्यता तो यह है कि जिस आश्चर्यजनक संतुलन के साथ यह पवित्र संस्कृत भाषा को पूर्ण रूप से व्यक्त कर सकी है उसने इसे साधारण मानव के आविष्कार के ऊपर उठा दिया है।" यह उनकी राय है नागरी लिपि के बारे में। इस लिपि में अक्षर और अंक दोनों ही सम्मिलित हैं।

परराष्ट्र नीति में हिन्दी और नागरी

अब मैं आपसे परराष्ट्र नीति के बारे में कुछ कहना चाहता हूं। कभी कभी हमारे सामने अंकों को बदलने की बात आती है। मेरा इस सम्बन्ध में यह कहना है कि यदि हमने यह परिवर्तन किया तो परराष्ट्र के क्षेत्र में हम अपने को कुछ छोटा कर देंगे। इस विचार से मेरे हृदय में दर्द होता है। मैं कहना चाहता हूं कि हमारी हजारों वर्ष पुरानी संस्कृत भाषा ने हमको संसार के सामने ऊंचा किया है। यह ठीक है कि आज हम और आप संस्कृत भाषा बोलते नहीं और बहुत थोड़े पढ़ते हैं। लेकिन यह वास्तविकता है कि उस समय जब दूसरी जगहों पर बहुत कम ज्ञान और विज्ञान का विकास हुआ था संस्कृत साहित्य बहुत विकसित हो चुका था, और उसी संस्कृत साहित्य ने यूरोप में हमारा सिर ऊंचा किया जब हम और आप राजनीतिक दृष्टि से दास थे। मुझे इस विषय में अधिक नहीं कहना है। जो विद्वान हैं वे संस्कृत साहित्य की और देवनागरी लिपि की श्रेष्ठता को स्वीकार करते हैं। यह सर्व विदित है कि श्री मैक्समूलर तो संस्कृत पर आशिक थे। वे अनेक भाषाओं के ज्ञाता थे। मेरा कहना यह है कि संस्कृत भाषा के साहित्य के कारण हमारा चारो ओर नाम हुआ है। लेकिन आज जब हम अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी को ला रहे हैं तब अक्षर तो हम देवनागरी के रखते हैं पर अंक अंग्रेज़ी के लें यह मेरा निवेदन है, सही नहीं है। मुझे इस विषय में कोई ज़िद नहीं है। मैं तो बहुत चीज़ों को बदल देने के पक्ष में हूं। लेकिन

मेरा नम्र निवेदन यह है कि जब हम संस्कृत के अक्षर लिखेंगे परन्तु अंक अंग्रेज़ी के लिखेंगे तब हमारी ऊंचाई में कुछ कमी आ जायगी।

चीन को नागरी लिपि अपनाने की सलाह

आज मैंने पढ़ा है कि चीनी लोग अपनी लिपि को, जो चित्रों द्वारा लिखी जाती है, बदलना चाहते हैं और अपनी भाषा के लिए कोई लिपि चाहते हैं। अंग्रेज़ी में इस प्रकार कहा गया है—

"They desire to alphabetise their language."

(वे अपनी भाषा को लिपि में बांधना चाहते हैं।)

मैं अपने प्रधान मंत्री जी से कहना चाहता हूं कि यह उनके लिए एक अवसर है। इस समय अपनी **एमबेसी** द्वारा इस लिपि को वे चीनी लोगों के सामने रखें। इसमें कोई दबाव की तो बात नहीं है, उनका ध्यान इस ओर दिलाया जा सकता है कि हमारी संस्कृत भाषा और उसकी लिपि कितनी ऊंची है और हमारा उनका कितने प्राचीन समय से सम्बन्ध रहा है। केवल संस्कृत ही नहीं हमारे देश की प्राचीन भाषाओं प्राकृत और पाली द्वारा भी हमारे दोनों देशों में ज्ञान का आदान प्रदान हुआ है। हम उनके सामने पाली लिपि रखें। हम अपनी हिन्दी लिपि उनके सामने रखें। जब वे लोग अपने वर्तमान क्रम को छोड़ कर किसी दूसरी लिपि को अपनाना चाहते हैं तो उनका इस ओर ध्यान दिलाइये कि हमारे देश की लिपि पूर्ण है और इसको स्वीकार किया जा सकता है। सम्भव है कि उनको यह लिपि अंगीकार हो। आज स्याम में यही वर्णमाला चल रही है यह आप भूलियेगा नहीं। बर्मा में यही वर्णमाला है, लिखने में थोड़ा अन्तर है। तिब्बत में भी यही वर्णमाला है। अभी तिब्बत का बहुत सा साहित्य हिन्दुस्तान में आया है और हम उस लिपि को देख सकते हैं। यदि ये सब बातें उनके सामने रखी जायँ तो सम्भव है कि चीनी लोग इस लिपि को स्वीकार करें। मैं यह कहता हूं कि अपनी संस्कृति को आगे पहुंचाने का यह एक रास्ता है।

हम अपने यहाँ ज़रा सचेत हों। यह जो हज़ारों वर्ष पुरानी और इतनी पूर्ण लिपि हमारे देश में है यह हमारे लिए एक गौरव की बात है। अक्षर के रूप बदलते रहे हैं और उनको आप फिर भी आवश्यकता देख कर बदल सकते हैं। नागरी लिपि को बदलने के मैं कुछ रास्ते बतला सकता हूं। लेकिन आज मेरा कहना यही है कि यदि आप अक्षर रखते हैं तो अंक भी रखें। ऐसा करने में हमारा गौरव है। आप अपने शिक्षा विभाग की सारंगी की खूंटी को ज़रा कसिये, ज़रा सम्हालिये, खूंटी को सम्हालकर स्वर मिलाइये ताकि सब तारों के स्वर आपस में मिलें। आज तमाशा यह है कि अन्य सब केन्द्रीय विभाग तो नागरी अंकों का प्रयोग कर रहे हैं परन्तु हमारा शिक्षा-विभाग जब हिन्दी अक्षर

लिखता है तब अंक अंग्रेज़ी के प्रयोग करता है। मैं अभी वर्धा गया तो मालूम हुआ कि वहां इस विभाग ने यह लिख कर भेजा है कि तुम अंग्रेज़ी अंकों का प्रयोग करो। यह कोई **कांस्टीटच्यूशन** की बात नहीं है। यदि केन्द्र चाहे तो अपने **आफ़िशियल परपज़ेज़** के लिए अंग्रेज़ी अंकों का प्रयोग कर सकता है। मेरा विश्वास है कि इस विभाग को इस विषय में एक दुराग्रह सा हो गया है। इतना दुराग्रह इस बात में करके वे हिन्दी की सहायता नहीं कर रहे हैं। मेरा निवेदन है कि हम अपने घर को सम्हालें, अपने शिक्षा-विभाग को सम्हालें।

हमारा यह यत्न हो कि यह जो हमारी प्राचीन लिपि और अंक हैं, उनको हम दूसरों के सामने रखें। चीन में आज इसका अवसर है और मैं इसपर ज़ोर देना चाहता हूं। मैंने सोचा था कि इसके सम्बन्ध में मैं कभी प्रधान मंत्री से अलग बात करूंगा, मगर आज अवसर मिल गया और प्रधान मंत्री जी यहां इस समय मौजूद हैं, तो मैंने मुनासिब समझा कि यहीं पर उनसे अपनी बात कह दूं। अगर और अधिक विस्तार में इस विषय में वे जानकारी प्राप्त करना आवश्यक समझें तो मैं फिर उनसे इस सम्बन्ध में विस्तार से निवेदन कर सकता हूं।

संयुक्तराष्ट्र संघ में हिन्दी

मैं चाहता हूं कि आज परराष्ट्रों में जो हमारे दूत मौजूद हैं, उनके सामने अपनी राष्ट्रभाषा और लिपि के गौरव की बात रखी जाय, मेरा तो विश्वास है कि भले ही आज यह चीज़ सम्भव न हो लेकिन कुछ वर्षों बाद संयुक्तराष्ट्र संघ में हिन्दी को एक भाषा के रूप में मान्यता प्राप्त होगी। आज वहां पर ५ भाषाओं को मान्यता दी गई है लेकिन वह दिन दूर नहीं है जब हिन्दी को वहां पर माना जायगा और वह दिन हमारे लिए गौरव का दिन होगा। हिन्दी को वहां पर मनवाना होगा। अगर आज हम अपनी लिपि चीन को भेंट करें और इस भेंट को वे स्वीकार कर उसपर अमल करें तो मैं समझता हूं कि एशिया भर के लिए यह अच्छा मार्गप्रदर्शन का काम होगा।

३५

पैसे की उपयोगिता--काश्मीर का प्रश्न

१६ मार्च १९५६ को भारतीय लोकसभा में सामान्य वित्त आयव्ययक पर बोलते हुए

हिन्दी के लिए वित्त मंत्री को बधाई

सभापति जी ! सबसे पहले मैं अपने वित्त मंत्री जी को बधाई देता हूं। उस रीति की बधाई नहीं जैसी हमारे बहुत से सहयोगियों ने दी है, परन्तु एक विशेष बात के लिये, और वह यह है कि उन्होंने पिछले वर्ष जो आश्वासन दिया था कि बजट के कुछ अंगों को वह हिन्दी में रक्खेंगे उसको उन्होंने अंशतः पूरा किया। परन्तु फिर भी कसर है। उनकी अपेक्षा रेलवे मंत्री ने *हिन्दी के अंक और हिन्दी के बजट में अधिक स्फूर्ति दिखाई। मैं* जानता हूं कि हमारे वित्त मंत्री जी के सामने कठिनाई है, उनके पास बहुत बड़ी बड़ी पुस्तकें हैं अंगरेज़ी में, जिनको हिन्दी में करने की मेरी मांग थी। वह सब तो नहीं कर सके, परन्तु उन्होंने अंशतः किया, इसके लिये उनको मैं बधाई देता हूं। मेरा सुझाव यही है कि अगले वर्ष जब वे आयें अपना बजट लेकर, तब उनका पूरा बजट हिन्दी में होना उचित है। यह कोई कठिन समस्या नहीं है। उत्तर प्रदेश का तो मुझे अनुभव है। वहां पूरा बजट अर्थात् बड़ी-बड़ी पुस्तकें भी जो अंगरेज़ी में पहले होती थीं अब हिन्दी में ही आती हैं। वहां हिन्दी में उनका होना आवश्यक है, बाद में उनका अनुवाद अंगरेज़ी में आता है। हमारे वित्त मंत्री जी भी वही क्रम यहां रक्खें, यह मेरा सुझाव है।

देहातों की उपेक्षा

बजट के सम्बन्ध में मैं बहुत आनन्द और उल्लास के साथ कुछ नहीं कह सकता। यदि मैं यह कहूं कि वह बहुत उन्नतिशील है, तो वह मेरे हृदय की बात नहीं होगी। कारण यह है कि उन्नति की दिशाओं के देखने में भेद है। व्यय तो बहुत है, उन्होंने देश के लिये बहुत सी नई-नई संस्थाओं के बनाने के लिये ३१६ करोड़ रु० का पूंजीगत व्यय दिखाया है। परन्तु मेरे हृदय में तो टीस यह उठती है कि यह जो व्यय है, जिसके लाने में हमारे देश के ऊपर के स्तर के आदमियों से तो रुपया लिया ही जाता है, दीनों का भी इस भार में बहुत बड़ा हिस्सा है, उसमें हमारे दीन लोगों के लिये, देहातों के लिये क्या

व्यय निकाला गया है। मेरे हृदय में यह प्रश्न उठता है। व्यय तो है, परन्तु उसे किस दृष्टिकोण से देखा जाय, इसका सवाल है। आंख वही है पर चितवन में भेद है।

इस बजट में व्यय बहुत करने की बात है परन्तु इसकी चितवन शहरी है, देहात की ओर नहीं है। देहातों में मकान बनाने के लिये थोड़ा बहुत रुपया दिखाया गया है। जहां इतने करोड़ों की चर्चा हो वहां कुछ थोड़ी सी रकम—

सरदार इकबाल सिंह (फ़ाजिल्का-सिरसा) : सिर्फ़ पांच करोड़ दो सौ रुपया है।

श्री टंडन : जी हां! मुझे मालूम है। यह पांच करोड़ रुपया सिन्धु में बिन्दु के समान है। इस बिन्दु से इतने बड़े और इतने अधिक देहातों का क्या भला होने वाला है, यह आप ही अंदाज़ा लगा सकते हैं। मैं बार बार कह चुका हूं, मैं बार बार निवेदन कर चुका हूं कि आप देहातों की ओर ध्यान दीजिये। आप देखिये कि क्या रहन सहन उनका है। यहां बहुत सी नई-नई योजनाओं की चर्चा हुई। **कम्यूनिटी प्रोजेक्ट्स** की बात भी आई। उसके सम्बन्ध में, उसके लाभ की गाथा भी हमारे भाई ने सुनाई है। मुझको तो वह बहुत प्रिय लगी। कहानी और गाथा सदा प्रिय लगती हैं। परन्तु मुझे वह केवल कहानी ही लगी। इसका कारण यह है कि जब मैं देहातों में स्वयं जाता हूं तब मुझको नहीं दिखाई पड़ता कि उनका स्तर कुछ ऊंचा हो गया है। जो पत्रिकायें हमारी गवर्नमेंट के विभागों की ओर से बांटी गई हैं उनसे भी पता लगता है कि हमारे देश में, इसके बहुत से भागों में लाखों परिवार ऐसे हैं जिनकी आय १५ रुपये से लेकर ५० रुपये मासिक तक है। याद रखिये यह परिवार की आय है। ऐसे लाखों करोड़ों परिवार हैं जिनकी इतनी आय है। आप खुद ही अनुमान कर सकते हैं कि उनकी दशा कैसी हो सकती है। जिस परिवार में चार या पांच प्राणी हों और उसकी १५ रुपये मासिक आय हो तो कैसे वह परिवार रह सकता है इसका अंदाजा आसानी से लगाया जा सकता है। मैं जानता हूं कि हमारे प्रदेश के कुछ भागों में तो ऐसे दरिद्र लोग हैं जो गोबर के भीतर से अनाज निकाल कर और उसको धोकर खाते हैं। यह कहानी नहीं है, यह सही बात है। गोरखपुर और देवरिया के ज़िले में इस खाने का नाम गोबरी है। जहां इतनी दरिद्रता है वहां पर यह आशा की जाती है कि उनके पास पहुंच-कर हम उन्हें उठाने का कुछ यत्न करें। वह यत्न तो मैं इस बजट में कहीं भी नहीं देखता हूं। उसका नितांत अभाव है।

आचार्य कृपलानी (भागलपुर व पूर्निया) : फाइव इयर प्लान में है।

श्री टंडन : उसी की चर्चा मैं कर रहा हूं। उसके अनुसार ही तो पूंजी-व्यय इस वर्ष ३१६.७ दिखाया गया है। यह तो उसी व्यवस्था के भीतर

है। हां! एक बहुत बड़ी रक़म कारख़ानों के ऊपर खर्च करने के लिए रखी गई है। यह औद्योगिक कारखानों के लिए रखी गई रक़म हमारी इस दरिद्रता को, जिसकी मैंने अभी चर्चा की है, हटाने वाली नहीं है। मैं यह निवेदन करना चाहता हूं इस गवर्नमेंट से कि आप समाजवादी रूप की बात करते हैं। अच्छे सामाजिक रूप की कुंजी यह है कि अधिक से अधिक सुख हम पहुंचायें।

तट-उपयोगिता

मैं इधर ध्यान दिलाता हूं कि जब व्यय हम करें तब हमें चाहिये कि हम यह देखें कि एक एक रुपये से अधिक से अधिक सुख प्राप्त हो, यह अच्छे सामाजिक क्रम की कुंजी है। मैं अर्थशास्त्र के शब्दों में कहता हूं, क्योंकि यहां पर अर्थशास्त्र के पंडित तो बहुत हैं,—'पंडितमानिनः', पांडित्य उनका अंकों में ही न रहे, कि यहां इतना हुआ, वहां उतना हुआ, वहां से यह निकलता है और यहां से यह निकलता है। उसी अर्थशास्त्र का एक बड़ा सिद्धान्त यह है कि हर एक पैसे की तट-उपयोगिता, जिसको अंग्रेज़ी में आप **मार्जिनल यूटिलिटी,** (Marginal Utility) कहते हैं, घटती जाती है, जैसे जैसे किसी के पास अधिक पैसा होता जाता है। यह स्पष्ट नियम है अर्थशास्त्र का। एक रुपये की उपयोगिता हमारे देहात के गोबरी खाने वाले के लिए क्या है और आप अनुमान कीजिये कि हमारे यहां जो एक लक्ष्मीपति है उसके लिए क्या है? आकाश पाताल का अन्तर आप पायेंगे। अगर १०–२० हज़ार रुपया किसी लक्ष्मीपति के पास बढ़ गया तो उसकी क्या उपयोगिता है और यदि वह रुपया कुछ देहाती जनों को मिल जाय तो उसकी क्या उपयोगिता है। मैं इसीलिए कह रहा हूं कि समाज का सुख बढ़ाने की कुंजी यह है कि जितना हमारे बजट का व्यय है, उसकी तट-उपयोगिता, **मार्जिनल यूटिलिटी,** अधिक से अधिक हो। क्या मैं आज यह कह सकता हूं कि जितने का आपने बजट बनाया है इसमें **मार्जिनल यूटिलिटी** अधिक से अधिक है? यह मैं कहने में असमर्थ हूं। यदि **मार्जिनल यूटिलिटी** आपके पैसे की उचित होती तो सुख और समृद्धि देश में फैल जाती। परन्तु वह नहीं है। यहां दिल्ली में मेरे सामने एक बात आई है। शिक्षण विभाग मकान बनवा रहा है जिसमें कुछ नट-नागर नाच करेंगे। नट-नागरों के लिए १०–१० लाख तक रुपया खर्च करना तो मामूली बात है, इनके लिए बजट आप देखिये। इतने रुपयों की लागत के कितने मकान बनाये जा रहे हैं। मुझे पता चला है कि यहां एक भूमि के ऊपर एक करोड़ रुपया एक कला-भवन के बनाने में ख़र्च होने वाला है जिसमें से लगभग ५० लाख रुपया तो इमारत बनाने में ख़र्च होगा और बाकी ५० लाख रुपया

सामग्री के जुटाने में। जो गोबरी खाने वाले लोग इस देश में हैं उनकी दृष्टि से इस पैसे की तट-उपयोगिता, मार्जिनल यूटिलिटी कितनी है, इस बात का अन्दाज़ा आप लगाइये यह मेरा आप से कहना है। मुझको कभी कभी लगता है कि यह समाज को उठाने की बात जो हम करते हैं बात ही रह जाती है। क्या यह सब काम इस समय करने का है ?

श्री अलगूराय शास्त्री (जिला आजमगढ़ पूर्व व जिला बलिया पश्चिम) : नहीं।

श्री टंडन : इस समय तो कौड़ी कौड़ी इस काम में लगनी चाहिए कि किसी तरह से जितनी जल्दी हो सके हम गांव के भाइयों को सम्हालें, उनके लिए घर और भोजन का इन्तिज़ाम करें। पांच करोड़ आपने मकानों के लिए दिया है। इससे क्या बनने वाला है। क्या इससे देहातों का उत्थान होने वाला है ? मैंने यहां कितनी बार निवेदन किया है कि आप देहातों में हर परिवार के लिए घर बनाने को आध एकड़ भूमि दें। हमारे वित्त मंत्री ने मुझे आश्वासन दिया था कि "आप जो बात कह रहे हैं वह मैं ऊपर पहुंचा दूंगा।"

गाँवों के लिए आदर्श गृह योजना

मैंने यहां आदर्श घरों की योजना कई बार रखी है। मैंने निवेदन किया है कि एक एक घर को आध आध एकड़ भूमि देनी चाहिए, चाहे वह किसी दरिद्र का घर हो या किसी धन्नासेठ का। उस भूमि में वह अपना वाटिका गृह बनाये। मैं तो कहता हूं कि आप कम से कम दो एक आदर्श ग्राम बनाकर दें। वित्त मंत्री यहां मौजूद नहीं हैं। परन्तु मैं पूछता हूं कि क्या उन्होंने देश में एक भी आदर्श ग्राम बनाया ? मैं आशा करता था कि हर ज़िले में अधिक नहीं तो एक एक दो दो आदर्श ग्राम तो बन जायेंगे। इसके लिए बराबर यत्न होना चाहिए। भूदान यज्ञ में भी इसके लिए यत्न हो रहा है। मैं स्वयं उसमें लगा हूं। परन्तु हमको तो बहुत कम भूमि मिलती है और कठिनाई से मिलती है जो हम इन बेचारे ग्रामवासियों को घर बनाने के लिए दे सकें। लेकिन इधर हमारी गवर्नमेंट नृत्यकला के लिए करोड़ों रुपये ख़र्च कर रही है। अगर आप देश में दस बीस करोड़ रुपया आदर्श घरों को बनाने में लगा देते तो कुछ सूरत दिखायी देती। लेकिन यह नहीं हुआ।

मेरा यह निवेदन है कि हमारा जो यह बजट है वह बहुत त्रुटिपूर्ण है। मेरे हृदय में पीड़ा है कि हमारे देश का रुपया बरबाद हो रहा है। मैं अपनी गवर्नमेंट से, अपने सहयोगियों से, अपने साथियों से कहता हूं कि आज आपके यहां रुपये की **मार्जिनल यूटिलिटी** (Marginal Utility) खोई सी

है। आप अपने अर्थशास्त्रियों से पूछें कि आज रुपये की **मार्जिनल यूटिलिटी** क्या है और क्या हो सकती है। जो आपके पैसों की **मार्जिनल यूटिलिटी** हो सकती है वह उससे आज बहुत ही नीचे है। यदि आपके पैसों में पूरी **मार्जिनल यूटिलिटी** होती तो आज देश सुखी और समृद्ध होता।

शिक्षा विभाग से निवेदन

मुझे कुछ शब्द शिक्षण विभाग से कहने हैं। हमारे भाई डिप्टी मिनिस्टर, डा० श्रीमाली ने इस सम्बन्ध में यह इच्छा प्रकट की थी कि शिक्षा विभाग को अधिक अधिकार दिया जाय, आज उस विभाग के पास इतना अधिकार नहीं है कि वह उन कामों को करा सके जिनको वह कराना चाहता है क्योंकि शिक्षा का विषय हमारे राज्यों के अधिकार में अधिक है। यदि वे यहां हों तो मैं उनसे पूछना चाहता हूं कि जो अधिकार उनके पास हैं क्या उनका ठीक उपयोग हुआ है। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे जितने विभाग हैं उन सब में इस शिक्षा-विभाग का काम सबसे रद्दी है।

एक माननीय सदस्य : बिल्कुल रद्दी। इस विभाग को खत्म किया जाय।

श्री टंडन : किसी ने कहा कि इस विभाग को समाप्त करो। मेरा निवेदन यह है कि वह अधिक अधिकार प्राप्त करने का अधिकारी नहीं है। उसकी तो अजीब बुद्धि है। अजीब तरह से वह प्रश्नों को देखता है। उस विभाग ने हिन्दी **टाइपराइटर**—टंकणयंत्र के लिए एक **की-बोर्ड**, वर्णपट्ट, बनाया है जिसमें अक्षर तो हिन्दी के हैं परन्तु अंक अंग्रेज़ी के हैं। यह **की-बोर्ड**, वर्णपट्ट, वह देश भर में पहुंचाना चाहते हैं। यह क्या अक्ल की बात है? इसको कौन हिन्दी भाषी राज्य स्वीकार करेगा? और इसके लिए हवाला दिया जाता है **कांस्टीटच्यूशन** का। क्या इस विभाग में कोई ऐसा आदमी नहीं है जो संविधान समझ सके? **कांस्टीटच्यूशन** में यह स्पष्ट लिखा है कि केन्द्रीय कार्यों के लिये हिन्दी में अंक नागरी का भी हो सकता है और अंग्रेज़ी का भी। **कांस्टीटच्यूशन** में यह बात नहीं है कि हमारे देश भर में जितने हिन्दी **टाइपराइटर** बरते जायं उनमें अक्षर तो हिन्दी के हों और अंक अंग्रेज़ी के। क्या उन्होंने यह **टाइपराइटर** केवल अपने शिक्षा विभाग के लिए ही बनाया है? नहीं। वह **टाइपराइटर** का वर्णपट्ट या **की-बोर्ड** सारे देश के लिए बनाना चाहते हैं। मैंने उस रोज कहा था कि इस देश में लगभग २२ करोड़ आदमी ऐसे हैं जिनकी भाषा में नागरी अंकों का प्रयोग होता है····

एक माननीय सदस्य : श्रीमाली जी आ गये।

श्री टंडन : मैं आपकी ही चर्चा कर रहा था। डा० श्रीमाली ने शिक्षा

विभाग के अधिकार बढ़ाने की बात कही थी। मैं निवेदन कर रहा था कि शिक्षा विभाग के पास जो अधिकार हैं उनका वह दुरुपयोग कर रहा है। शिक्षा विभाग के काम से रद्दी काम करनेवाला हमारे यहां कोई दूसरा विभाग नहीं है। मुझे यह कहते हुए लज्जा होती है। अभी डा० श्रीमाली का इस विभाग से सम्बन्ध थोड़े दिनों का ही है। मैं आशा करता हूं कि आप यत्न करेंगे कि यह विभाग अपने अधिकारों का सदुपयोग करे, यदि ऐसा करना आपके अधिकार में हो। मैं जो चर्चा कर रहा था उसे आपके कानों के लिए दुहराये देता हूं। आपके विभाग ने यह अजीब काम किया है कि **टाइपराइटर** का जो वर्ण पट्ट बनाया है उसमें अक्षर तो हिन्दी के रखे हैं पर अंक अंग्रेज़ी के। यह क्या बात है? ऐसा मालूम होता है कि यह विभाग दुराग्रह से भरा हुआ है। इस विभाग से राज्यों के मंत्रियों को पत्र भेजे जाते हैं कि तुम लोग जहां हिन्दी का प्रयोग करो वहां उसके साथ अंग्रेज़ी के अंकों का प्रयोग करो। मैं यह बात अपने मन से नहीं कह रहा हूं। मुझे यह बात एक राज्य के मुख्य मंत्री से मालूम हुई है। यह क्या है? आप अपने अधिकार का यह सदुपयोग कर रहे हैं या दुरुपयोग कर रहे हैं? मैं कहता हूं कि आपके विभाग का अच्छा काम नहीं है और उसका कोई अधिकार नहीं बढ़ना चाहिए। यह मेरा निवेदन है शिक्षण विभाग के लिए।

मैं आशा करता था कि हमारा शिक्षण विभाग शिक्षण को कोई नया रूप देगा। राष्ट्रपति ने और जो हमारे देश के शिक्षण से सम्बन्ध रखने वाले अनुभवी लोग हैं उन्होंने बार-बार यह कहा है कि हमारा शिक्षण का क्रम बदलना चाहिए। हमारे शिक्षण में दो बातों की मुख्य रूप से आवश्यकता है। एक तो चारित्रिक निर्माण की और दूसरी शिक्षित लोगों में आत्म निर्भरता की, अर्थात् उनको इस प्रकार से पढ़ाया जाय कि वे आत्म निर्भर हो सकें। यहां यह दोनों बातें नहीं हैं। जहां एक ओर हमारे देश में शिक्षण क्रम को बदलने की इतनी आवश्यकता है वहां ऐसा मालूम होता है कि हमारे शिक्षण विभाग में कल्पना का अभाव है। आज मैं और अधिक नहीं कहना चाहता। लेकिन मैं यह तो कहना ही चाहता हूं कि शिक्षण विभाग ने जो अकादमियां बनायी हैं उन पर वह लाखों रुपया बरबाद कर रहा है। अब मैं उस बात को दुहराता नहीं।

काश्मीर का प्रश्न

एक और विषय है जिस पर मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं। वह विषय है काश्मीर का। काश्मीर के सम्बन्ध में हमारे भाई फ़ोतेदार जी ने कुछ चर्चा की थी। मेरा भी यह निवेदन है कि काश्मीर का प्रश्न बहुत लटका हुआ है। आये दिन उसके सम्बन्ध में कहीं न कहीं से कुछ बात हो जाती है।

यह विषय कि वहां का जनमत लिया जाय, किसी जमात में सिक्योरिटी काउंसिल गया था परन्तु इतने दिन उसको लटकते हुए हो गये। मुझे तो ऐसा लगता है कि एक निश्चित वात हमारी गवर्नमेंट को काश्मीर के सम्वन्ध में अव कर देनी चाहिए। यह वात तो स्पष्ट रूप से कही जा चुकी है, और जहां तक मुझे स्मरण है हमारे प्रधान मंत्री जी ने भी माना है कि काश्मीर हमारे देश का अंग है इसमें कोई सन्देह नहीं है। उसके ऊपर पाकिस्तान ने कुछ आपत्ति भी उठायी थी। परन्तु वह तो कई वातों पर अनुचित आपत्ति उठाया करता है।

उसकी आपत्ति पर ध्यान न देकर मेरा निवेदन है कि आज हमको अपना चलन इस प्रकार का वनाना चाहिए कि काश्मीर हमारा एक अंग है, अर्थात् जव हम यहां कोई अधिनियम, **ऐक्ट** वनायें तो वारवार हम यह न कहें कि काश्मीर में यह लागू नहीं होगा। आपके यहां जितने अधिनियम वनते हैं उनमें साधारण रीति से दिखलाई पड़ता है कि काश्मीर को आप अपवाद करते चले जा रहे हैं। इस तरह के अपवाद करने की आवश्यकता नहीं है। काश्मीर को अव, जैसा हमारे फ़ोतेदार जी की मांग थी, हम अपना एक निश्चित अंग मानें। कई वातों के लिए अंग वन भी गया है और मैं चाहता हूं कि जितने क़ानून आप यहां वनायें, उनमें काश्मीर भारत का पूरी तरह एक अंग समझा जाय।

काश्मीर की वात करते हुए मुझको एक टीस सी उठती है उन भाइयों के वारे में जो हाल ही में मुझसे मिलने आये और जिनकी दशा सुन करके मेरा हृदय रो पड़ा। काश्मीर के उस भाग से जिस भाग को काश्मीर से छीन कर पाकिस्तान में मिला लिया गया है, जैसे मीरपुर और पूंछ, उन इलाक़ों के वहुत से हमारे भाई भाग कर इधर हमारी शरण में आये हैं। मैं तो आज तक समझ नहीं पाया कि जब हमारी फ़ौजें वहां तक पहुंच गई थीं तव मीरपुर और पूंछ के इलाकों पर उन्होंने क़ब्ज़ा क्यों नहीं किया और उसके पहले ही युद्धविराम रेखा वना दी गई....

श्री कामत (होशंगाबाद) : उनको हटा दिया था।

श्री टंडन : मैं आपकी वात नहीं समझा। आप मेरी वात सुनने की कोशिश कीजिये। मैं यह कह रहा हूं कि पूंछ और मीरपुर के क़रीव हमारी फ़ौजें पहुंच गई थीं, वहां की पाकिस्तानी फौजें भाग चुकी थीं, या वहां से भाग निकली थीं परन्तु फिर भी हमारी ओर से उन इलाकों पर क़ब्ज़ा नहीं किया गया....

श्री कामत : मैं भी यही कह रहा था कि हमने उनको हटा दिया था।

श्री टंडन : मैं आपकी वात नहीं समझा था। खैर, 'गतं न शोचामि',

मैं उसको छोड़ता हूं। जो कुछ भी हुआ उसमें बुद्धिमानी हुई या भूल हुई, मैं तो उसको भूल ही मानता हूं....

श्री अलगूराय शास्त्री (जिला आजमगढ़ पूर्व व जिला बलिया पश्चिम): भूल होती जा रही है।

श्री टंडन : वे हमारे मुसीबतज़दा भाई जब मीरपुर और पूंछ से भाग भाग कर काश्मीर में आते हैं वहां पर उनको जगह नहीं मिलती है और वे यहां हमारे पास आते हैं। उन्हीं भाइयों के मुंह से उनकी कथा मैंने सुनी। किसी ने कहा कि मेरा बाप मारा गया, किसी ने कहा कि मेरा भाई वहां पर मारा गया और किसी भाई ने मुझे बतलाया कि मेरी स्त्री ने कुएं में छलांग लगा कर अपनी जान दे दी और उन्होंने यह बतलाया कि कुएं के कुएं लाशों से भर गये थे क्योंकि हमारी मां बहनों ने सोचा कि पाकिस्तानी फ़ौज के आते ही हमारी दुर्गति होगी और उन्होंने कुंओं के अन्दर छलांग लगा कर अपनी जानें दे दीं। मुझे तो यहां तक उन भाइयों ने बतलाया कि हमारी स्त्रियों ने हमसे कहा कि हमको तुम खुद अपने हाथ से मार डालो और हमको उनके लिए मत छोड़ो और उन्होंने बतलाया कि अपने घर की स्त्रियों को अपने हाथों से मार कर हममें कुछ आये हैं। आप अंदाज़ लगा सकते हैं कि यह भाई अपना सब कुछ लुटा कर यहां पर आये हैं और उनको बड़ी मुश्किल से यहां रहने को घर मिले हैं और हमारा पुनर्वास मंत्रालय उन दुःखी और मुसीबतज़दा भाइयों से यह मांग करता है कि या तो उन घरों का मूल्य हमें दे दो और या उनका किराया दो। चूंकि उनकी आर्थिक दशा शोचनीय है और ठीक नहीं है इसलिए मैं चाहता हूं कि पुनर्वास विभाग उन काश्मीरी भाइयों के प्रति थोड़ा करुणामय व्यवहार करे। हमारे यह काश्मीरी भाई शरणार्थियों की गिनती में नहीं आते क्योंकि आपने जो नियम बनाया है उसके अनुसार वे लोग जो जायदाद छोड़ कर पाकिस्तान से आये हैं, उनको आप शरणार्थी गिनते हैं और यह भाई पुराने पाकिस्तान के हिस्से के तो हैं नहीं, इसलिए शरणार्थियों की आपकी परिभाषा में डेफ़िनिशन में यह नहीं आते। इनका बुरा हाल है। मैं यह चाहता हूं कि जहां आपने शरणार्थियों की इतनी श्रेणियां बनाई है वहां इन भाइयों के लिए भी आप कोई एक नई श्रेणी बना लीजिये और तुरन्त उनकी दशा के ऊपर ध्यान दीजिये।

मैं आपसे यह आशा करता हूं कि जो कुछ मैंने कहा है उसके ऊपर आप ध्यान देंगे। समाप्त करते हुए फिर मैं उस विशेष बात के लिए कहना चाहता हूं, क्योंकि जब मैं उसके बारे में कह रहा था उस समय वित्त मंत्री जी उपस्थित नहीं थे, और वह बात यह थी कि मेरा बल इस बात पर है कि आपका बजट हमारे देहातों की दशा को उबारने वाला नहीं है। आपसे

पहले भी इस सम्बन्ध में मैंने निवेदन किया था और आपने वायदा किया था कि मेरी ग्राम योजना को आप अपनायेंगे। मैं जानता हूँ कि वित्त मंत्री जी ने उसके लिए योजना विभाग को कहला भी दिया था परन्तु आज तक कहीं पर इस प्रकार से ग्रामों की दशा सुधारने का कोई मार्ग, कोई प्रयत्न दिखाई नहीं देता। इस ओर सच्चा प्रयत्न हो और चरित्र उठाने के लिए प्रयत्न हो, यह इस समय आवश्यक है। इसकी आवश्यकता शिक्षण में है, इसकी आवश्यकता **हाउसिंग स्कीम्स** घर बनाने की योजनाओं में है और इसकी आवश्यकता हमारे देश को उठाने की सब कल्पनाओं में है।

३६

चिकित्सा में नयी दृष्टि

४ अप्रैल ५६ को आय व्ययक के विवाद में स्वास्थ्य विभाग पर बोलते हुए

घोंसला न जलायें

श्री टंडन (जिला इलाहाबाद, पश्चिम) : मुझे कुछ थोड़े ही से शब्द स्वास्थ्य मंत्रिणी जी से निवेदन करने हैं।

अभी मेरी बहिन दिल्ली के घरों के सम्बन्ध में जो बातें कह रही थीं उनमें मैं उनसे सहमत हूं। मैं प्रधान मंत्री जी के इस वाक्य से सहमत हूं, उसका आदर करता हूं, कि दिल्ली में जो गन्दी बस्तियां हैं वे जला देने के योग्य हैं। लेकिन जला देने के योग्य होना तो एक बात है, वास्तव में जला देना दूसरी बात है। इसके पहले कि दियासलाई लेकर प्रधान मंत्री जी या उनके आदमी वहां पहुंचें, यह तो उचित ही है कि वहां रहने वालों के लिये दूसरी जगह रहने का प्रबन्ध कर दिया जाय। इस प्रकार की भूल कुछ हमारे दूसरे विभागों ने, विशेषकर पुनर्वास विभाग ने, पहले भी की है कि लोगों को हटा दिया बिना इस बात का यत्न किये हुए कि उनके लिये अलग स्थान दिया जाय। बहुत जगहों पर उन्होंने स्थान दिया मगर कई जगह पर इसमें कमी पड़ गयी। जो चेतावनी हमारी स्वास्थ्य मंत्रिणी जी को दी गयी है वह बहुत सामयिक है। यह जलाने की बात सुन कर मेरे कान भी खड़े हुए। यह मैं जानता हूं कि प्रधान मंत्री जी ने जो जलाने की बात कही वह उन्होंने नाप तोल कर ही कही होगी। परन्तु यह दीन लोग जो वहां बसे हैं वे प्रसन्नता से अपने घर में आग न लगने देंगे। वे वैरागी नहीं हैं। यह घर जलाने की बात हमारे देश में पुराने समय से चली आती है। एक फ़क़ीर ने कहा था :

> "कबिरा खड़ा बजार में लिए लुआठी हाथ,
> जो घर जारै आपनो चलै हमारे साथ।"

मैं जानता हूं कि हमारी मंत्रिणी जी और हमारे प्रधान मंत्री जी भी कबीर जी के साथ अपने घर में आग लगाने के लिये तैयार नहीं हैं लेकिन फ़क़ीर खड़ा बुला रहा है "लिये लुआठी हाथ।" आप जानते हैं कि यह लुआठी आपकी दियासलाई की तीली से ज़्यादा मज़बूत होती है। उसमें आग जल रही है। उसको लेकर बाज़ार में खड़ा होकर वह चिल्ला रहा है। प्रधान

मंत्री जी से भी उसकी कड़ी आवाज़ है। वह बुला रहा है कि मेरे साथ वह आये जो अपना घर जलाने को तैयार हो! अपना अपना घर जलाने के बाद यदि हम औरों के घर जलाने की चिन्ता करें तो ज़्यादा अच्छा लगेगा। मैं जानता हूं कि गंदी वस्तियां जलाने की बात प्रधान मंत्री जी के हृदय से निकली है और उसमें उनका दर्द छिपा हुआ है। उसके सम्बन्ध में हमें इतना ध्यान रखना है कि हम गंदी वस्तियों को तो जलायें लेकिन किसी के रहने का जो घोंसला हो उसको न जलायें।

निहित स्वार्थ

मैं स्वास्थ्य के विषय में भी कुछ अपने विचार व्यक्त करना चाहता हूँ। मैं जानता हूं कि इस विषय में हमारी मंत्रिणीजी मुझसे पूर्णतया सहमत नहीं हो सकतीं। वह ऐसे स्थान पर हैं और गवर्नमेंट के ऐसे चक्कर में हैं कि यदि वह हमसे सहमत नहीं हैं तो मुझे कोई ताज्जुब नहीं है क्योंकि वह चक्कर सब गवर्नमेंटों का होता है। उनके पास नीचे से ऊपर तक एक विशेष वायुमंडल बना हुआ है। उनके नीचे उनके सचिव हैं और सचिव के नीचे और सचिवगण हैं फिर उनके नीचे अस्पताल हैं और डाक्टरगण हैं जिनके निहित स्वार्थ हो गये हैं, **वेस्टेड इंटरेस्ट्स** हैं।

डाक्टरी का जो पेशा है, उसके अन्दर वह शुद्ध भावना जो हमारे देश में आयुर्वेद के विषय में किसी समय समझी जाती थी, आज नहीं है। इस तरह की कोई शुद्ध भावना आज आयुर्वेद के वैद्यों में हो, ऐसी बात भी नहीं है। सब ओर पैसा ही पैसा, इसकी ही महत्ता दिखाई देती है। आज जिस **ऐलोपैथिक** क्रम को अधिकारी लोग सहारा दे रहे हैं, वह इस प्रकार से हमारे देश में सहारा देने योग्य नहीं है। कुछ भाइयों ने जो कुछ इस सम्बन्ध में कहा है मैं भी उनकी ध्वनि में अपनी ध्वनि मिलाता हूं। मैं तो बहुत पुराना इस बात का मानने वाला हूँ कि इस विषय में महात्मा गांधी के जो विचार थे वे बहुत वैज्ञानिक थे। वह केवल आकर्षक भावना के कारण नहीं थे परन्तु वे वैज्ञानिक विचार थे। मैं तो ऐसा समझता था कि हमारी मंत्रिणी जी, जिनको गांधी जी के निकट सम्पर्क में रहने का सौभाग्य मिला था, जिन्होंने गांधी जी का इतना गहरा साथ किया था, उन पर गांधी जी के विचारों की गहरी छाप पड़ी होगी....

एक माननीय सदस्य : असर नहीं पड़ा।

श्री टंडन : इस बात में वे भाग्यशालिनी थीं कि बहुत पास से गांधी जी को उन्होंने देखा और बहुत दिन तक उनका काम किया। उन्होंने देखा होगा कि गांधी जी किस प्रकार से रोगियों को अपने यहां बैठाते थे, खुद उनकी

सुश्रूषा करते थे, डाक्टरों की दवाई नहीं देना चाहते थे और स्वयं उनकी अपने ढंग पर चिकित्सा करते थे। उनकी चिकित्सा का क्रम पानी, भाप और मिट्टी होता था। यह उनकी दवाइयों का रास्ता था। गांधी जी का इन तत्वों में कितना विश्वास था, यह भी मंत्रिणी जी को पता है। मैं उन आदमियों में से नहीं हूं जो यह कहने वाले हैं कि गांधी जी ने जो भी बात कही वह सोलहों आने सही है, और चाहे वह ग़लत हो या सही हो, वह मान ही ली जाय। यदि हमारी मंत्रिणी जी ने गांधी जी के विचारों के सम्बन्ध में नाप तोल की हो और वह इस नतीजे पर पहुंची हों कि गांधी जी के विचार इस विषय में ग्राह्य नहीं है, तब मैं उनके क्रम को समझ सकता हूं मगर मेरा निवेदन है कि गांधी जी के विचार वैज्ञानिक हैं और आज के युग में भी आधुनिक विचार करने वाले बहुतेरे उनके साथ हैं।

प्राकृतिक चिकित्सा का क्रम

मैं चाहता हूं कि हमारी मंत्रिणी जी इंग्लैंड में कुछ वर्षों से जो एक **विगैन सोसाइटी** है, उसके समाचार पत्र और साहित्य मंगा कर पढ़ा करें, **विगैन सोसाइटी** की जो मुख्य पत्रिका निकलती है वह बहुत अधिक मूल्य की नहीं है, थोड़ा उसको देखें और जो बड़ा साहित्य प्राकृतिक चिकित्सा (**नैचुरोपैथी**) का है उसको भी देखें। यह **नैचुरोपैथी** महज़ एक इलाज का ही ढंग नहीं है, प्राकृतिक चिकित्सा के साथ साथ जीवन के रहने का एक क्रम है। हमारी मंत्रिणी जी के ऊपर **ऐलोपैथी** क्रम का इतना गहरा असर पड़ा है कि उस विषयुक्त असर को हटाने के लिये उन्हें थोड़ा दूसरा साहित्य भी पढ़ना चाहिये। कुछ बड़े बड़े **ऐलोपैथिक** डाक्टरों ने कहा भी है कि यह तीव्र दवाइयों का क्रम अच्छा नहीं है। मुझको याद है कि इंग्लैंड के एक **रायल फिज़िशियन** ने कहा था कि आज तक जितनी दवाइयाँ बनी हैं, जितनी दवाइयाँ आलमारियों में मौजूद हैं, अगर यह सब की सब उठा करके समुद्र में फेंक दी जायें तो मनुष्य मात्र का इसमें भला ही होगा, अलबत्ता समुद्र की मछलियों को हानि हो जायगी। यह किसी **नैचुरोपैथ** का कहा हुआ वाक्य नहीं है, आयुर्वेद वालों का नहीं है बल्कि एक बहुत अनुभवी **ऐलोपैथिक** डाक्टर ने बुढ़ापे में अपने स्वयं के अनुभव से यह बात कही है। इस तरह की यह कोई एक अकेली राय नहीं है बल्कि अगर आप कहें तो मैं आपको सैकड़ों **ऐलोपैथिक** डाक्टरों के वाक्य दिखला सकता हूं जिन्होंने अपने अनुभव के बाद यह कहा है और यह घोषणा की है कि हमारा जो क्रम है, दवाई देने का, वह ठीक नहीं है और इसमें बहुत त्रुटियाँ हैं। मैंने स्वयं भी थोड़ी बहुत किताबें पढ़ी हैं और मैंने उनमें डाक्टरों को अधिक दवा देने के इस क्रम के विरुद्ध लिखते देखा है।

कीटाणु मारने का क्रम हानिकर

कलकत्ते का जो **ट्रापिकल इंस्टीट्यूट आफ़ मेडिसिन** है, उसके एक प्रिंसिपल द्वारा लिखी हुई डाक्टरी की एक किताव मैंने पढ़ी जिसमें उन्होंने शरीर के अन्दर जो **जर्म्स** (कीटाणु) विद्यमान होते हैं उनके मारने के जो साधन चले हुए हैं, उनका विरोध किया है और उन्होंने लिखा है कि यह **जर्म्स** को मारने का वड़ा **हिरोइक**, तीव्र, तरीक़ा है और **जर्म्स** को इस तरह मारने में हमें नुकसान पहुंचने की सम्भावना वनी रहती है क्योंकि जव हम **जर्म्स** को मारते हैं तो कुछ न कुछ ज़हर तो हमारे शरीर में जाता ही है और उससे और दूसरे क़िस्म के नुक़सान भी हमें पहुंच सकते हैं। **जर्म्स** मारने के लिये **ऐलौपैथिक** क्रम में संखिया, **आर्सनिक**, का प्रयोग किया जाता है और वहुत सी दवाइयां वनती हैं जिनमें संखिया होती है। संखिया के आधार पर कितनी ही दवाइयाँ वन चुकी हैं और उनको प्रयोग में लाया जाता है। लेकिन मैंने एक **हार्ट स्पेशलिस्ट** (हृदय विशेषज्ञ) की लिखी हुई किताव पढ़ी है जिसमें लिखा हुआ है कि संखिया की दवाई न देनी चाहिये क्योंकि उससे नुक़सान हो जाने का डर है। और उन्होंने **आयोडीन** से वनी दवाइयों की सिफ़ारिश की है। इंग्लैंड के एक वड़े भारी **हार्ट स्पेशलिस्ट** (हृदय विशेषज्ञ) थे। उन्होंने अपनी पुस्तक में ऐसी राय दी थी परन्तु मैं पूछना चाहता हूं कि **आयोडीन** की दवाइयों में क्या जहर नहीं होता? मैं एक दफ़ा वीमार पड़ा तो एक डाक्टर ने संखिया **आर्सनिक** की प्रसिद्ध दवाई **कारबोरेसान** का सुझाव दिया, दूसरे डाक्टर ने जो उन हृदय विशेषज्ञ के चेले थे जिनकी मैंने अभी चर्चा की **कारबोरेसान** लेने को मना किया और **आयोडीन** से वनी दवा, जिसका नाम भूल रहा हूं, लेने के लिये कहा।

मगर मैंने सोचा कि यह दोनों विष हैं A plague on both your Houses. वाली वात ठीक है। मैं न यह दवाई लूंगा और न वह दवाई लूंगा। हृदय का मुझको कष्ट था। एक आइरिश सिविल सर्जन थे, जो वहुत भले पुरुष थे। उन्होंने मुझसे कहा कि यदि तुम सार्वजनिक भाषण देना वन्द कर दो तो तुम पाँच वरस तक जीवित रह सकते हो। यह १९३९ की वात है। इस प्रकार की चेतावनी उन्होंने मुझे दी। आज मैं उनका कृतज्ञ हूँ। मैं मानता हूं कि वहुत से ऐलोपैथिक डाक्टर वड़े सज्जन होते हैं, उनके हृदय में करुणा भाव होता है। परन्तु वे वेचारे क्या करें, उनको तो उसी एक प्रकार से पाला गया है, और उस क्रम के वे गुलाम हैं। मेरा निवेदन है कि हमारी मंत्रिणी जी देश को इस गुलामी से वचावें? आयुर्वेद के हमारे देश में कई क्रम हैं, उनको आप देखिए। हमारे देश में प्राकृतिक क्रम है उसको कुछ रास्ता दीजिये। मूल कर्त्तव्य यह है कि वीमार पड़ने से ही वचाइये। एक पुराने यूनानी डाक्टर ने कहा था कि जव किसी वीमार को देखो

तो समझ लो कि वह लुच्चा है Whenever you see a sick man put him down for a knave. असल बात यह है कि हम सब प्राकृतिक नियमों को तोड़ा करते हैं। जननेंद्रिय और जिह्वा इंद्रिय, इन दो के द्वारा हम अपने शरीर का नाश करते हैं। फिर जो कुछ हम बचाते हैं, उसको तीव्र दवाइयों से भी हम नाश करते हैं।

बी० सी० जी० का टीका हानिकर

यह जो **बी० सी० जी० वैक्सीनेशन** आपने शुरू किया है, यह भी नाश का एक कारण है। हमारे भाई श्री राजगोपालाचारी जी ने इस विषय में कुछ लिखा और आपने उनको जवाब दे दिया। आपको अधिकार प्राप्त है और आपकी बात मानी ही जायगी। आपका ठेंगा सब के सिर पर चलेगा। परन्तु मैं कहता हूं कि आपने जो दलील दी, वह मेरे हृदय को लगी नहीं। उस दलील का मेरे हृदय पर कोई असर नहीं हुआ। यह **बी० सी० जी०** का वैक्सीनेशन एक अजीब चीज़ है....

Mr. Speaker : In controversial matters like this, the hon. Member will address the chair.

श्री टंडन : हमारी मंत्रिणी जी मेरे वाक्यों को कोई कड़वाहट के वाक्य न समझें। जो मैं निवेदन कर रहा हूं यह प्रेमपूर्वक कर रहा हूं। परन्तु मैं यह जानता हूं कि उनका मत एक प्रकार का है और मेरा मत दूसरी प्रकार का है। मैं तो अपना मत ही इस सदन के सम्मुख रख रहा हूं। यह जो मेरा मत है, कोई नया मत नहीं है, यह पुराना है। मैं केवल **बी० सी० जी०** के ही विरुद्ध नहीं हूं। मैं यह भी देखता हूं कि हर बीमारी में चाहे वह छोटी हो या बड़ी सुई लगाने का क्रम चल रहा है। यह क्रम ग़लत है। इस चीज़ को मैं डाक्टरों से भी कहना चाहता हूं। जब बीमारी आती है, तो उसके **जर्म्स** को मारने के लिये जो कुछ किया जाता है, वह ग़लत है। इस सिद्धान्त को ही मैं ग़लत मानता हूं। यह सिद्धान्त जिसको **पासचूर** ने निकाला मैं ग़लत मानता हूं। **जर्म्स** रोग का कारण है, या **जर्म्स** स्वयं रोग के परिणाम हैं, यह कार्य कारण समझने का भेद है। कारण **जर्म्स** है या कारण कहीं और है, यह हमें देखना है। आज जो हम **जर्म्स** के पीछे पड़े हैं, तो हमें हर जगह **जर्म्स** ही **जर्म्स** दिखाई पड़ते हैं। वायुमंडल में **जर्म्स** हैं, शरीर के भीतर **जर्म्स** हैं और हम समझते हैं कि किसी तरह से इन हनिकर **जर्म्स** को मारना ही हमारा कर्त्तव्य है। मुझे यह लगता है कि आप ईश्वरीय नियम के विरुद्ध हैं। इसी कारण से आप ऐसी ऐसी दवाइयों का प्रयोग करते हैं जो हमारी आयु को घटाने वाली हैं। परिणाम यह हुआ है कि **मेटीरिया मेडिका** में जो दवाइयाँ लिखी हुई हैं वह बहुत बढ़ गई हैं। अगर आप देखें तो आपको पता चलेगा कि बीमारियों की गिनती बढ़ती

ही जा रही है। ५० वरस पहले जो पुस्तकें लिखी गई थीं, उनको अगर आप उठाकर दखें तो आपको जो नई नई बीमारियां अव चली हैं, वह नहीं मिलेंगी। मनुष्य की आयु बढ़ी नहीं है। आज इन वहुत सी दवाइयों के कारण हमने उसके शरीर को कमज़ोर ही किया है। जो शक्ति उसमें वरदाश्त की होनी चाहिये, वह कम होती जा रही है। मेरा सुझाव यह है कि मंत्रिणी जी दवाइयों पर व्यय करने की अपेक्षा लोगों को स्वस्थ वनाने की ओर अधिक ध्यान दें।

गाँवों में रहने का ढंग ठीक करें

मैंने पहले भी कहा था और आज भी कहता हूं कि आप गाँव की तरफ़ देखिये। उनको दवाइयां न भेजिये। उनको रहने का ढंग वताइये। आप यह देखिये कि उनकी गलियां स्वस्थ हैं उनके आसपास गंदगी तो नहीं है। मैंने कई वार उनके घरों के लिये आध आध एकड़ भूमि देने की वात कही है लेकिन उस दिशा में कुछ भी नहीं किया गया है। आप कुछ थोड़ी ही ज़मीन उनको दें ताकि एक घर दूसरे घर के साथ मिलने न पाये, **इनफ़ेक्शन** फैलने न पाये, स्वस्थ वायु हो, ईश्वर का तेज पहुंचे और ताज़ी हवा और रोशनी उनको मिले। यह सव चीज़ें विष को मारने वाली हैं, और स्वास्थ्यकर हैं। आप करोड़ों रुपया इन किसानों पर खर्च कीजिये, अभी आप करोड़ों रुपया इन दवाइयों पर खर्च कर रही हैं। मेरा सुझाव है कि आप इन दवाइयों पर रुपया ख़र्च न करें।

एक पहलू इस विषय का और है। आप जितना रुपया इन दवाइयों पर ख़र्च करती हैं उसका वड़ा हिस्सा देश के वाहर जाता है। इस कारण से भी मैं इसका विरोध करता हूं। इस प्रकार विलायत से दवाइयां मंगाना मुझे उचित दिखाई नहीं पड़ता। इस आर्थिक पहलू को भी आपको ध्यान में रखना है। लेकिन मैं इस आर्थिक पहलू को गौण मानता हूं। मुख्य पहलू स्वास्थ्य का है।

रोटी छीनना आसान, देना कठिन

आपने हाल ही में एक वयान रिक्शा वालों के वारे में दिया था। मेरा अनुमान है कि शायद श्रम विभाग का इससे सम्वन्ध है। लेकिन आपने स्वास्थ्य की दृष्टि से कहा था कि कुछ आज्ञायें गयी हैं राज्य सरकारों को। मैं आपसे इस वात में सहमत नहीं हूं। इतना कह सकता हूं कि उनके प्रति मेरी करुणा स्वाभाविक है। मैंने कुछ अन्दर घुस कर उनके जीवन को देखा है और जव श्रम विभाग की वारी आएगी, उस समय मैं कुछ कहूंगा। लेकिन आपसे मैं इतना ही कहना चाहता हूं कि किसी की रोटी छीनने से पहले

उसको रोटी देने की तैयारी आपको करनी है। हमारे देश में रोटी छीनना तो बहुत आसान है, लेकिन रोटी सुलभ करना मुश्किल है। छोटों की तो रोटी छीनी जाती है लेकिन बड़े बड़े लोगों को रोटी पहुंचाई जाती है। यह ग़रीब रिक्शावाला लोगों को ले जाता है और अपना पेट भरता है। सम्भवतः आपने यह इसलिये किया है कि वह मनुष्य को खींच कर ले जाता है, और आपकी दृष्टि में यह उचित नहीं है। मैंने एक अखबार में पढ़ा था कि लखनऊ में एक आदमी जो कि रिक्शा में जाया करता था, उसके हृदय में करुणा आई और उसने रिक्शा छोड़ दी और इक्के में बैठकर गया। रिक्शा वाले ने देखा और वह उसके पास आया और कहने लगा कि साहब, क्या मुझसे कुछ क़सूर हो गया है कि आपने रिक्शा में बैठना छोड़ दिया है। उन साहब ने कहा कि नहीं भाई यह बात नहीं है और आप लोगों का दिया हुआ कारण उसने उसे बता दिया। उस पर उस रिक्शा वाले ने कहा कि पहले हमें ज़हर देकर मार दो और फिर इक्के पर बैठो। जब श्रम विभाग की डिमांड्स यहां पर प्रस्तुत होंगी उस समय मैं उनसे बात करूंगा। आज मैं आपने जो आज्ञा स्वास्थ्य को दृष्टि में रखकर भेजी है, उसके बारे में ही कह रहा हूं। जब यह कहा जाता है कि रिक्शा खींचना स्वास्थ्यकर नहीं है तो मुझे उस मिल का ध्यान आता है जहाँ पर रुई की धुनकाई होती है और चारो तरफ रुई ही के अंश उड़ते फिरते हैं। वहां काम करना किसी हालत में स्वास्थ्यप्रद नहीं कहा जा सकता। यही हालत खानों की है। यही हालत भंगियों की है। वे लोग गंदगी उठाते फिरते हैं। मैंने तो कई भंगियों को इस काम को छोड़ देने की भी सलाह दी थी। परन्तु मैं कहता हूं कि किसी का रोज़गार छीनने से पहले, उसकी रोजी का कुछ प्रवन्ध कीजिये। अगर यह देखना है कि कोई काम स्वास्थ्यकर है या नहीं तो फिर आपको एक सूची बनानी पड़ेगी। तब स्वास्थ्य विभाग को बहुत से काम बन्द करने होंगे। लेकिन यह काम उतना अस्वास्थ्यकर नहीं है जितना कि उसका तमाशा किया गया। इस विषय पर मैं श्रम विभाग के सम्बन्ध में बोलूंगा। मंत्रिणी जी से तो मेरा निवेदन यही है कि जो आपका विषय है, अर्थात् दवाइयों और बी० सी० जी० के **इनजेक्शन** आदि का उस पर आप नये दृष्टिकोण से विचार करें।

३७

श्रमिकों का बढ़ना अवश्यंभावी

१० अप्रैल १९५६ को भारतीय लोकसभा में श्रम आयव्ययक पर बोलते हुए

अध्यक्ष महोदय! मैं कुछ थोड़े से शब्द इस श्रम विभाग के कार्य के सम्वन्ध में निवेदन करना चाहता हूं। मैं श्रम प्रश्नों के सम्वन्ध में आन्दोलक नहीं रहा हूं। मैं इन प्रश्नों को देश की दृष्टि से ही देखता हूं न कि श्रमिक संघटनों की दृष्टि से अथवा मालिकों की दृष्टि से जो श्रमिकों से काम लिया करते हैं। जैसे जैसे हमारी समाजवादी व्यवस्था बढ़ेगी वैसे वैसे इस श्रम विभाग का काम अधिक दायित्वपूर्ण होता चला जायगा क्योंकि समाजवादी रूप देने में यह आवश्यक है कि हम दिन-पर-दिन श्रमिकों का अधिक ध्यान रखें। श्रमिकों की ही देश में वहुतायत है। जैसे जैसे हम श्रमिक वढ़ायेंगे वैसे वैसे समाजवादी व्यवस्था समीप आती जायगी। अर्थात् जैसे जैसे हम वेकारी हटायेंगे, हर एक को काम दिलायेंगे वैसे वैसे हममें से वहुत अधिक लोग श्रमिक होते चले जायँगे। वही सामाजिक व्यवस्था उचित है।

श्रमिकों से धनपतियों का व्यवहार

अभी अन्तिम वक्ता ने जो वातें कही हैं, उनके सम्वन्ध में अधिक तो मैं नहीं कहना चाहता परन्तु उनसे मैं केवल एक निवेदन करना चाहता हूं। वह स्वयं सहृदय पुरुष हैं। परन्तु मेरे ऊपर कुछ असर हुआ है और कुछ मेरा यह अनुभव है कि श्रमिकों से काम लेने वाले प्रायः उतने सहृदय नहीं रहे हैं। मैंने एक वार इस भवन में अपना एक अनुभव आपके सामने रखा था। मैं वम्वई में एक मिल देखने के लिए गया तो मैंने क्या पाया कि श्रमिकों को धोखा दिया जा रहा है। श्रमिकों ने जो काम किया, जो सूत काता उसको जव तराजू में तोला जाता था तो हर वार कम तोला जाता था। यह वहुत पुरानी वात है। परन्तु मेरे हृदय को इससे भारी धक्का लगा। यह कह सकता हूं कि इस जीवन में मेरे ऊपर एक शंका चढ़ गयी कि हैं! ऐसा भी मिल मालिक करते हैं! मैंने सुना था कि उस मिल के मालिक एक धर्मात्मा पुरुष हैं। मैं उनका नाम नहीं लेना चाहता। परन्तु ऐसी मिल में मज़दूरों और मज़दूरनियों को धोखा देना और उनके काते हुये सूत में, जितना उसका पाउंडेज है या आउंसेज है, उसमें हर वार जव वे उसे लाकर तोल कराते हैं कमी करते जाना, क्या यह ठीक है। इससे मुझे वड़ा धक्का लगा था।

मुझे जमींदारों का अनुभव है कि किस प्रकार का व्यवहार वे काश्तकारों क साथ करते थे। यह बात मुझे अपनी छोटी उम्र में देखने को मिली जब मैं अपने एक रिश्तेदार के यहाँ गया हुआ था। मैंने देखा कि एक ग़रीब आदमी धूप में खड़ा है। मैं नहीं समझ पाया कि इस आदमी को क्यों धूप में खड़ा किया गया था। मैंने उनसे पूछा तो वे हंसने लगे। फिर पीछे मुझे पता लगा कि वह बेचारा एक ग़रीब काश्तकार था जो अपना लगान नहीं दे सक रहा था और इसलिये उसे यह सज़ा दी जा रही थी। ये दो बातें मेरे सामने आयीं जिन्होंने मेरी राजनीतिक भावना को बदल दिया। वह जमींदारी का नक्शा था कि किस तरह से जमींदार काश्तकारों से व्यवहार करते हैं। वे जमींदार मेरे क़रीब के रिश्तेदार थे। इस घटना ने मेरे हृदय पर बड़ा असर डाला। बाद में मैंने इस विषय का अध्ययन किया और मैं इस नतीजे पर पहुंचा कि जब तक यह जमींदारी प्रथा है किसानों का भला नहीं हो सकता और सन् १९३० में मैंने यह आन्दोलन चलाया कि ज़मींदारी प्रथा समाप्त होनी चाहिए। कांग्रेस से अलग मैंने इस आन्दोलन को उठाया कि जमींदारी प्रथा समाप्त हो। फिर वह काँग्रेस का अंग बन गया। लेकिन उसमें मेरा हाथ तो बराबर था ही।

इसी प्रकार जो मैंने मिल में धोखाधड़ी देखी थी उससे भी मेरे हृदय पर यह भावना रह गयी कि कारखानों के मालिक किस प्रकार का व्यवहार गरीब श्रमिकों के साथ करते हैं। मैं वैयक्तिक रूप से किसी के लिए नहीं कहता। मैं जानता हूं कि बहुत से जमींदार बड़े सज्जन थे। उन्होंने बड़े बड़े कामों में सहायता की थी और सचमुच वे अपने काश्तकारों के साथ अच्छा व्यवहार करते थे। मैं यह भी जानता हूं कि बहुत से मिल मालिक भी बहुत सज्जन हैं। परन्तु मैंने देखा कि ज़मींदारी एक क्रम है। उस क्रम में दो चार ज़मीदारों के अच्छे होने से किसान बच नहीं पाता था। उस क्रम में उसकी बड़ी मुसीबत थी। आज जो क्रम है उसके अनुसार श्रमिक काम करते हैं और बहुत से लोग उनको नौकर रखते हैं। इस पर कुछ विचार करने की आवश्यकता है। मैं समझता हूं कि हमें इस क्रम को बदलना होगा।

मैं यह नहीं कहता कि सरकार ही सब कामों की मालिक होती चली जाये। सरकार जैसे जैसे मालिक होती है, जैसे जैसे **नैशनलाइज़ेशन** बढ़ता है उसमें भी मुझको बड़े गहरे दोष दिखायी देते हैं। **नैशनलाइज़ेशन** को बढ़ाने के मानी हैं **ब्यूरोक्रैट्स** नौकरशाही को बढ़ाना। जितना ज़्यादा सरकार का अधिकार बढ़ता है उतने ही ज्यादा वे लोग बढ़ते हैं जो जनता से बरताव करने में सरकारी क्रम से काम लेते हैं, और उस सरकारी क्रम के बारे में हम जानते हैं कि ऊपर के स्तर को छोड़कर नीचे का स्तर कितना गिरा हुआ है—और कितना उसमें भ्रष्टाचार है। मैं इसका अनुभव करता हूं कि जैसे जैसे सरकारी क्रम बढ़ता है वैसे ही वैसे भ्रष्टाचार भी बढ़ता है। इसी तरह से और प्रश्न

भी आ जाते हैं। दूसरी ओर मिल मालिकों का जो क्रम है उसका मैंने एक उदाहरण दिया है। वहां भी वैयक्तिक लाभ का अधिक ध्यान है और मज़दूरों के सुखदुख की ओर बहुत कम ध्यान है। मेरा तो आज यह निवेदन है कि हमारे जो श्रमिकों को मज़दूरी पर रखने वाले लोग हैं वे दिन पर दिन एक बात की ओर ध्यान करें। मैं यहां केवल उनके हृदय से एक आकर्षक अपील नहीं कर रहा हूं। किन्तु मैं उनके मस्तिष्क की ओर भी जाना चाहता हूं। मैं चाहता हूं कि वे लोग सोचें कि आज संसार और हमारा देश भी बदल रहा है। यह पुराना ढंग था कि कुछ थोड़े से बड़े बड़े ज़मींदारों और पैसे वालों के हाथ में समाज की बागडोर थी और बाकी नीचे के लोग थे जिनको दबा दबा कर उनसे काम लिया जाता था।

घोड़े और घास की यारी

जब मैं किसानों के लिए काम करता था तब किसी ज़मींदार की एक बात मेरे कान तक पहुंचायी गयी कि घोड़े की और घास की यारी नहीं हुआ करती। अर्थात् घोड़े तो थे ज़मींदार और घास था किसान। आज मुझे कुछ ऐसा लगता है कि हमारे मिलमालिक भी अपने को उसी ढंग का घोड़ा बनाये हुए हैं और ये श्रमिक घास बने हुए हैं।

श्री फ़ीरोज गांधी (जिला प्रतापगढ़ पश्चिम व जिला रायबरेली पूर्व): आधुनिक घोड़े हैं।

श्री टंडन : मेरे हृदय में तो कोई हंसी की बात नहीं है और न है व्यंग की बात। मेरा तो यह निवेदन है कि अब समाज की स्थिति को देखकर हमारे भाइयों को अपना क्रम बदलना चाहिये। हमारे बहुत से बुद्धिमान भाई हैं जिनमें से प्रमाणस्वरूप एक तो हमारे सामने बैठे हैं जिन्होंने अभी अन्तिम भाषण दिया है। उनमें हृदय है। परन्तु ऐसा लगता है कि जो क्रम चला आता है उसके हम सभी दास बन जाते हैं। कोई मैं अपने को इसका अपवाद नहीं मानता। जो हमारा पुराना ढंग चला आता है उसमें हम सब ही दोषी बन जाते हैं।

अधिक धन रखना बुद्धिमानी नहीं

हम देखते हैं कि एक ग़रीब परिवार १५ या २० रुपये महीने में अपनी गुज़र करता है। आप सोचें कि किस प्रकार एक कुटुम्ब १५ या २० रुपये में रह सकता है। आपके पास अंक रखे हुए हैं कि कितने कुटुम्ब की आमदनी १५ या २० रुपये हैं। लेकिन क्या हम और आप १५, २० रुपये में गुज़र करने वाले हैं। हमको तो पचास, सौ और दो सौ रुपये भी कम दिखायी पड़ते हैं। और हमारे भाई मिल मालिकों को तो लाख रुपये भी कम दिखायी पड़ते हैं।

एक तो मेरा यह निवेदन है कि इस प्रश्न पर विचार करने में हम भविष्य की ओर भी देखें, कुछ अपने को भी बनायें, अपना उदाहरण ठीक करें। यदि हमको कम पैसा भी मिले तो हम संतोष करें। हमारे यहां तो इस विषय में धर्म की भावना सब के सामने बहुत स्पष्ट रखी गयी है। आप सोचें कि यह जो हमारा वैभव है यह तो बहुत ठहराऊ नहीं है। तो क्यों न हम अपने जीवन में ही इस वैभव को थोड़ा अलग करके, अपने ठाटबाट को कम करके, इससे कुछ मानसिक अलहदगी पाये? यदि हमारे मिलमालिक यह आदत डाल लें तो मेरा विश्वास है कि श्रमिकों के साथ उनका बरताव दूसरा ही होगा। श्रमिक उनके साथी हो जायँगे, उनके भाई हो जायंगे। क्या यह वैभव कभी एक कुटुम्ब में रहा है? बहुत से लोग सोचते हैं कि हम अपने बच्चों के लिए लाखों करोड़ों रुपया छोड़ जायें। मुझे इससे बड़ी मूर्खता दिखायी नहीं देती। कुछ कमाना तो आदमी को अच्छा लगता है। लेकिन जो यह सोचते हैं कि हमें अपने बच्चों के लिए भी बहुत धन छोड़ जाना चाहिए वह मैं समझता हूं कि कुछ बुद्धिमानी की बात नही है। लड़के कैसे निकलेंगे? लायक़ होंगे या नालायक़ निकलेंगे? शायद आपका पैसा ही इनको नालायक़ बना देगा। पैसे में लोगों को भोग-विलास की ओर खींचने की प्रवृत्ति रहती है और स्पष्ट है कि जहां वह भोग-विलास की ओर गया, वह नालायक़ बना। अपने मरने के बाद पैसा छोड़ कर जाना अपनी संतति के साथ बहुत मित्रता नहीं है, इसलिए हमारे जो बड़े बड़े धनिक लोग है उनको अपने जीवन में ही उसको बांट देना उचित है। मैं समझता हूं कि क्या ही आनन्द आये अगर अपने जीवन में वे उसको बांटें और ऐसे संगठित ढंग से बांटें कि श्रमिकों की वह चीज हो जाय, मिल एक धनिक व्यक्ति की चीज़ न होकर उन हज़ारों श्रमिकों की बन जाय जो उसमें काम करते हैं। इसी तरह जो धन उस धनी व्यक्ति के पास पड़ा है अगर वह उन हजारों श्रमिकों में बंट जाय तो आप देखेंगे कि आपके समाज का रूप ही बदल जायगा।

सहयोगी व्यवस्था

यह जो हमारे भाई ने कहा कि कोई योजना ऐसी बनी है जिसमें मिलमालिक और श्रमिक मिल करके उद्योग धंधों को चलायेंगे उनकी वह बात मुझे बहुत अच्छी लगी और मैं उनको उस योजना का स्वागत करता हूं। मैं तो यह भी कहने वाला था कि मिलमालिकों को छोड़ कर गवर्नमेंट स्वयं इस विषय में यत्न करे और श्रमिकों को आधार बनाकर कुछ काम शुरू करे जिस पर श्रमिकों का अधिकार हो और जो केवल श्रमिकों की वस्तु हो। मैं नहीं जानता कि गवर्नमेंट ने ऐसा प्रयोग कहीं पर किया है या नहीं लेकिन मैं समझता हूं कि गवर्नमेंट को ऐसा प्रयोग अवश्य करना चाहिए।

श्री फ़ीरोज गांधी (जिला प्रतापगढ़ पश्चिम व जिला रायबरेली पूर्व): शुगर इंडस्ट्री में २० कोआपरेटिव मिलें वनी हैं।

श्री टंडन : मैं उनका स्वागत करूंगा मगर अभी महज़ काग़ज़ पर ही होंगी। जो समाजवादी क्रम हम चाहते हैं उसमें मुख्य वात यह है कि हम अधिक से अधिक धन हर एक पुरुष को पहुंचा सकें। जिसको मैं पैसे की तट-उपयोगिता (**मार्जिनल यूटिलिटी**) कहता हूं जब वह हमारे देश में वढ़ेगी तव अधिक सुख होगा। अर्थशास्त्र के एक विद्यार्थी के नाते मैं कह रहा हूं कि जिस देश में पैसे की तट-उपयोगिता अधिक होती है, वही देश सुखी होता है। मैं पूछता हूं कि हमारे भाई श्री सोमानी के पास १००रुपये की तट उपयोगिता क्या है ? वहुत कम है और २, ४ रुपये की तो उनके लिए कुछ है ही नहीं, लेकिन उतने ही रुपये की एक ग़रीव देहाती आदमी के लिये वहुत अधिक उपयोगिता है। जव हम इस प्रकार से अपनी समृद्धि का वंटवारा करें कि अधिक से अधिक उसकी **मार्जिनल यूटिलिटी** हो तो मेरा निवेदन है कि हमारा समाज वहुत सुखी होगा। हम अपने देश की सामाजिक व्यवस्था इसी **मार्जिनल यूटिलिटी** के आधार पर करना चाहते हैं और जो धनिक लोग हैं, उनके हृदयों को हम इस वात के लिये तैयार करना चाहते हैं कि वे उसी ओर वढ़ने का प्रयत्न करें, अर्थात् अपने पैसे को अपने पास ही न रक्खें वल्कि उन लोगों को दें जहां उसकी सचमुच **मार्जिनल यूटिलिटी** उपयोगिता वढ़ सके।

सुखी बनाना उद्देश्य

यह जो हमारे भाई ने माल पैदा करने के सम्वन्ध में मूल्य की चर्चा की और वताया कि कितने मूल्य पर माल पैदा होता है,उसके बारे में मेरा निवेदन है कि वह वास्तव में वहुत विचारणीय वात नहीं है। मैं जानता हूं कि आपकी निगाह में दूसरे देशों के साथ प्रतियोगिता है, परन्तु वह वास्तव में वहुत वड़ी वात नहीं है। मैं तो अपने देश के सुख की ओर जा रहा हूं। मूल्य उतनी महत्व-पूर्ण वस्तु नहीं है जितना ग़रीवों को सहारा देने और ग़रीवों की जीविका चलाने का प्रश्न महत्वपूर्ण है और आज यही मुख्य प्रश्न हमारे सामने है।

अध्यक्ष महोदय ! और आगे कहने से पहले मैं यह जानना चाहता हूं कि कितने मिनट आप मुझे वोलने के लिए और देंगे ?

Mr. Speaker : As long as he wants.

(**श्री अध्यक्ष :** जितनी देर आप चाहें।)

श्री टंडन : मैं वहुत ज़्यादा समय नहीं लूंगा, थोड़ा ही लूंगा। मैं यह निवेदन कर रहा था कि जव हम कोई प्रश्न उठायें तो हम यह देखें कि हम इसमें सुख कहां तक वढ़ा सकते हैं, किसी चीज़ का मूल्य क्या हो, महंगी पड़े या सस्ती पड़े, इसको हमें विशेष नहीं देखना है। गांधी जी ने कितनी ही वार हम लोगों को यह वात समझाई कि मूल्य किसी चीज़ का रुपये पैसे में क्या है यह

कोई महत्व की वात नहीं है। आप जानते होंगे एक वस्तु जो हमारे देश में वहुत सस्ती मिलती है, वही वस्तु दूसरे देश में महंगी मिलती है। उदाहरणार्थ, रूस देश में एक जोड़ी जूता ७०, ८० रुपये का मिलता है, इसी तरह खीरा जिसको यहां आम लोग खाते हैं और जो मुझे वहुत प्रिय है और जो यहां पर केवल दो या तीन पैसे में मिल जाता है वही खीरा रूस में छै आने और सात आने में मिलता है लेकिन इस पर भी रूस हमारे देश की अपेक्षा अधिक सुखी और समृद्धिशाली है। हमारे सामने न तो मूल्य का प्रश्न होना चाहिए और न ही महंगे सस्ते का प्रश्न। हमें तो यह देखना चाहिए कि ग़रीवों को हम किस रीति से सहायता पहुंचाते हैं। हर एक काम में हमारा दृष्टिकोण यह हो कि अधिक से अधिक लोग काम में लगें और ग़रीवी हटे।

ग्रामों के मज़दूर—वेकारी

इतना निवेदन करने के वाद अव मैं श्रम विभाग की जो रिपोर्ट है, उसकी एक मद की ओर तुरन्त आ जाता हूं। जैसा पहले मैंने कहा मैं यह समझता हूं कि हमारे श्रम विभाग का महत्व दिन प्रतिदिन वढ़ेगा। वहुत से प्रश्न हैं जिनकी तरफ़ आपका ध्यान भी नहीं है, उन प्रश्नों को आपको लेना पड़ेगा। आज आपका श्रम विभाग अधिकतर इंडस्ट्रियल लेवर औद्योगिक श्रमिकों की ओर ध्यान दे रहा है। अभी हमारे भाई श्री विद्यालंकार ने खेतिहर मज़दूरों की दशा सुधारने की ओर आपका ध्यान दिलाया था और वतलाया था कि आज उनकी कैसी ख़राव हालत हो रही है। मैं उनसे पूरी तरह सहमत हूं। हमारी सरकार का ध्यान देहाती श्रमिकों की ओर नहीं गया है। उनकी वड़ी दयनीय दशा है। आपने उनकी दशा सुधारने के लिए क्या किया है?

मैं पूछना चाहता हूं कि जो लाखों और करोड़ों आदमी देहातों में वेकार वैठे हुए हैं उनको मज़दूरी और काम दिलाने के लिए आप क्या कर रहे हैं? वेकारी के सम्वन्ध में रिपोर्ट में दिए हुए, **एम्प्लायमेंट एक्सचेंज** के अक्तूवर सन् १९५५ के अंकों को मैंने देखा। क़रीव ७ लाख व्यक्ति नौकरियों के लिए प्रार्थी थे लेकिन इनके अलावा कितने ही लाखों और करोड़ों व्यक्ति देहातों में वेकार वैठे हुए हैं और कितने ही अर्ध-वेकारी की अवस्था में हैं और श्रम विभाग उन वेकारों और अर्ध-वेकारों की संख्या का पता लगाने में असमर्थ है, उनकी संख्या हमको कहीं नहीं मिलती है। मेरा निवेदन यह है कि हमारे देश में वेकारी वहुत अधिक है। जितना अधिक हम वेकारी को दूर कर सकें उतना ही अधिक हम अपने देश और समाज को सुखी वनायेंगे। इस कार्य में आपका और आपके विभाग का दायित्व वहुत अधिक है। जहां भी हम सोचते हैं कि हम नये काम आरम्भ करें वहीं श्रम विभाग का लगाव हो जाता है। जहां कहीं कुछ काम हो रहा है और जहां कुछ लोगों ने कोई काम उठाया है, उनसे

आपका यह लगाव रहता है कि उनमें कितने श्रमिक लगे हुए हैं और उन कामों से कितने लोगों को जीविका मिल रही है। आपने बेकारों की संख्या करीब ७ लाख के **एम्प्लायमेंट एक्सचेंज** में दी है मगर वह पर्याप्त नहीं है।

आपको तो यह सोचना है कि यह जो बेकारों की जनसंख्या पड़ी है उनको कैसे आप जीविका देंगे कैसे आप उनको ऐसा श्रमदान देंगे कि वह सब लोग काम में लग जायँ।

रिक्शा बन्द करने की बात

इधर यह प्रश्न तो है ही। इतने कम समय में उस योजना की तस्वीर तो मैं नहीं खींच सकता जो मेरे मस्तिष्क में है कि किस प्रकार से उनको श्रम दिया जाय, परन्तु आपकी रिपोर्ट में मुझे एक बात खटकी। मैंने उसमें देखा कि रिक्शा की चर्चा है और आपने जो रिक्शा वाले आज हैं उनके ख़िलाफ़ एक जिहाद उठाया है। मैं घबरा गया। जब शुरू शुरू में अंग्रेज़ यहां आये थे तो उन्होंने रेलगाड़ी यहां चलाई और इस तरह से उन्होंने लाखों आदमियों की रोज़ी छीनी थी, लाखों आदमियों की रोज़ी छीन कर रेलगाड़ियां चलीं। हां! यह अवश्य है कि अब तो वह आधुनिक क्रम है। मुझको वह कथा याद है कि जैसे जैसे मिलें यहां खड़ी हुई, कितने ही जुलाहों की रोज़ी छीनी गई। उनकी रोज़ी छीन कर मिलें यहां खड़ी हुई। एक समय था जब हमारे यहां हाथ से काम करने वाले बहुत लोग थे। मैंने रेल के आरम्भ की चर्चा की, उस समय भी आना जाना होता था। लाखों आदमी लगे थे इस काम में। दिल्ली से कलकत्ते तक घोड़े गाड़ियां दौड़ती थीं। लाखों आदमी गाड़ियां बनाने में लगे हुए थे, घोड़ों की देखरेख में लाखों आदमी लगे हुए थे। बहुत से ग़रीब लोग चिट्ठियां लेकर दौड़ते थे, डाक इधर उधर जाया करती थी। सरकार ने इन सब चीजों के लिये दूसरे रास्ते बनाये। आज आप कहेंगे कि गरीबों को बहुत दूर तक दौड़ना पड़ता था। यह हमारी करुणा के विरुद्ध था। लेकिन उसका नतीजा क्या हुआ। आप उस आदमी के मित्र बने जो कि मेहनत करता है, लेकिन आपने क्या किया? अगर आप उसका काम ले लें और उसकी जगह पर **मिकैनिकल** यांत्रिक क्रम पर काम करने लगें तो मैं कहता हूं कि आपने अपने हृदय की करुणा को उसकी मित्रता में नहीं लगाया। देखने में तो वह बात करुणा से प्रेरित मालूम होती है परन्तु मैं इस विभाग से निवेदन करता हूं कि यह गहरे विचार की बात है। हर चीज़ में जहां मनुष्यों का परिश्रम लगता है अगर उसमें आप ऐसी तरकीब लगा दें जिससे वह काम जल्दी और आसानी से हो जाय तो आदमी बेरोज़गार हो जायंगे। बचपन में मैं देखता था कि जब पानी का नल नहीं लगा था, उस समय लाखों आदमी कुएं से पानी खींचने में लगे हुए थे। यह एक रोज़गार था और

लाखों करोड़ों आदमियों के घरों में पानी कुओं से खींच कर आता था। यह सोचकर कि जो पानी खींचता है उसको मेहनत पड़ती है, अंग्रेज़ों ने नल लगवा दिये। उस समय इसके विरुद्ध वलवे भी हुए, वहुत आदमी वेरोज़गार हो गये। जव हम कोई सामाजिक व्यवस्था करते हैं तव हमें सोचना पड़ेगा कि हम किसी मनुष्य से उसका काम क्या छीन रहे हैं। यह आवश्यक है कि ऐसे प्रश्न को हम प्लैण्ड दृष्टि से देखें। क्या आपके विभाग ने सोचा कि आप किसको कौन सा काम करने देंगे और किसको कौन सा नहीं करने देंगे ?

मैं स्वयम् सोचा करता हूं कि जो गंदा काम है उसको हम वन्द करें। परन्तु क्या कभी आपने इस दृष्टि से इस प्रश्न को देखा कि कौन सा गन्दा काम है और कौन सा ऐसा काम है जो हमें रोकना नहीं चाहिये ? मेरा निवेदन है कि सवसे गन्दा काम जो आज आप और हम मनुष्य से ले रहे हैं वह मलमूत्र उठवाना है। हम मलमूत्र की सफाई के लिये लाखों आदमियों को लगाये हुए हैं। यह गन्दा से गन्दा काम है और यह भी सही है कि वहुत से आदमी इसमें लगे हुए हैं। मैं तो समझाया करता हूं भंगियों को कि वन्द करो यह काम। आपको समाज की व्यवस्था ऐसे क्रम के अनुसार वनानी होगी कि यह काम मनुष्यों द्वारा न हो। मैंने आज इस प्रश्न को इसलिये लिया कि आपका ध्यान खींचूं कि अगर आप देखते हैं कि कौन काम हम लें और कौन न लें तो आपको दूसरी ओर जाना पड़ेगा।

आपने रिक्शा खींचने के काम को समझा है कि यह इतना वुरा काम है कि इसको रोकना चाहिये। मनुष्य को मनुष्य पर सवारी न करनी चाहिये। एक मनुष्य गाड़ी पर बैठता है और दूसरा खींचता है इसको आपने वुरा समझा है। यह आपेक्षिक दृष्टि का सवाल है। मेरा निवेदन यह है कि इस काम में लाखों आदमी लगे हुए हैं। मैं अपने सूवे की वात जानता हूं। हमारे सूवे में इस काम में लगभग ३ लाख आदमी लगे हुए होंगे। कितने ही आदमी रिक्शा के वनाने में लगे हुए हैं, मिस्त्री लगे हुए हैं। जो आपने रिक्शा के लिये लिखा कि लाइसेन्स वन्द किया जाय उसका अर्थ देखिए......

Mr. Speaker : I have already given half an hour to the hon. Member. I have to distribute the five hours. I cannot ask the hon. Member....

[**श्री अध्यक्ष :** मैं माननीय सदस्य को आध घंटा दे चुका हूं। मुझे पांच घंटों का विभाजन करना है। मैं माननीय सदस्य से अनुरोध नहीं कर सकता कि......]

Shri Tandon : I shall just bring my remarks to a close and finish in two minutes.

श्री टंडन : मैं अभी दो मिनट में अपना कथन समाप्त कर रहा हूँ। जब आपने इस रिक्शा की व्यवस्था को हाथ में लिया तो मुझे थोड़ा ताज्जुब हुआ। अगर आप यह देखते हैं कि कौन सा गन्दा काम है तो दूसरे काम को उठाना था, रिक्शा इतना गन्दा काम नहीं है, और अगर आप यह समझते हैं कि रिक्शा खींचने वाले के ऊपर कोई बड़ा जुल्म होता है तो यह भी सही नहीं है। मैं जानता हूं कि **एंट्रेंस** पास कालेज के विद्यार्थी कुछ जगहों पर रात को रिक्शा चला कर अपना गुज़ारा चलाते हैं। मैं इलाहाबाद को जानता हूं। वहां कितने ही विद्यार्थी हैं जिनको कालेज में पढ़ने के लिए सुविधाएँ नहीं हैं, रात को रिक्शा चलाते हैं और उससे अपनी पढ़ाई और गुज़ारा चलाते हैं। यह कोई ऐसी बड़ी बात नहीं है। अरे ! पालकी में तो भूषण कवि को बिठला कर हमारे एक बड़े प्रसिद्ध राजा ने हाथ लगाया था और अपने कन्धे पर पालकी को रक्खा था। अगर एक एक आदमी को चार चार और पांच-पांच आदमी ले जाते रहे तो यह कोई बड़ी भारी बुरी बात नहीं थी। आज जो हमारा **बाइसिकिल** का रिक्शा है अगर उस पर एक या दो आदमी हों तो हर्ज नहीं है। हां इस प्रकार से न चलायें कि तीन तीन और चार चार आदमी उस पर बैठायें। मेरे विचार से अगर बाइसिकिल रिक्शा पर एक आदमी बैठे और साथ में कोई बच्चा बैठ जाता है तो उसके खींचने में कोई बड़ी कठिनता नहीं है।

यह जो उद्योग है जिसमें देश के लाखों आदमी लगे हुए हैं, अगर हम इस उद्योग को बन्द करते हैं तो उनको बेकार करते हैं। जब उस दिन स्वास्थ्य विवाद में मैंने इसकी चर्चा की थी तो हमारी मंत्रिणी जी ने कहा था, कि हां, हमने यह लिख दिया है कि उनके रोज़गार का इन्तज़ाम किया जाय तभी रिक्शा को बन्द किया जाय। मैं आपसे पूछता हूं कि आपके पास रोज़गार कहाँ है। आप कहते हैं कि सात लाख आदमी आपके यहाँ भर्ती के लिये बैठे हैं, तो यह सोचिये कि इतने अधिक आदमियों को बेकार करने से लाभ क्या होगा? जो आपके पास बेरोजगार लोग बैठे हुए हैं पहले उनको आप काम तो दीजिये। सबसे पहले आपका कर्त्तव्य उनके प्रति है। ग़रीब सब जगह हैं। उनके प्रति जिस तरह से आप करुणा दिखला रहे हैं कि हम धीरे धीरे उनके रोज़गार छीन लें, अपने ग़रीब भाइयों को रोज़गार से वंचित कर दें यह उचित नहीं है। मेरा तो यह निवेदन है कि अगर आप देश में मोटरकार का आना बन्द कर देते तो ज़्यादा अच्छा होता। मैं तो इस बात का पक्षपाती हूं कि हमारे देश में मोटरकार का आना बन्द हो जाय और हम एक एक आदमी को किसी न किसी तरह के काम में लगा लें, एक एक को रोज़गार दे दें, तब हम **मिकं-**

निकल डिवाइसेज यंत्रों की वात. सोचें। सरकारी ओर से जो यह लिखा गया है कि रिक्शा को वन्द कर दिया जाय, ग़रीब का रोज़गार हम छीनें, इसके सम्बन्ध में तो मुझे वही अंग्रेज़ी की कहावत याद आती है कि भगवान हमें हमारे मित्रों से बचायें। आपका विभाग उनका मित्र वन कर आ रहा है लेकिन वास्तव में वह उनका रास्ता वन्द कर रहा है, उससे उनके रोज़गार की हानि हो रही है। आप इस प्रश्न को हर विस्तृत दृष्टिकोण से देखिये कि कौन से ऐसे रोज़गार हैं जिनको वन्द करना है परन्तु साथ ही साथ आपका यह कर्तव्य है कि आप दिन पर दिन सबको रोज़गार देने के रास्ते बनायें, रोज़गार मिलने के जो मार्ग हैं उनको वन्द न करें।

वस, अध्यक्ष महोदय, मैं और अधिक नहीं कहना चाहता। आपको धन्यवाद।

३८

हिन्दी की बाधाएं

१६ अप्रैल १९५६ को शिक्षा मन्त्रालय के अनुदान पर बोलते हुए

नयी शिक्षा प्रणाली अपनायी जाय

उपाध्यक्ष महोदय ! सबसे पहले मेरा निवेदन शिक्षा विभाग से यह है कि उनको हमारे देश में एक नई शिक्षा प्रणाली स्थापित करने के लिए कुछ पग बढ़ाने थे। उसमें बहुत देर हो चुकी है और अब भी अगर वह पग बढ़ायें तो उचित होगा। यह बहुत ही आवश्यक कार्य है। यह बात बार बार और बड़े बड़े विचारकों की ओर से और राष्ट्रपति जी की ओर से भी कही गई है कि हमारे यहां जो शिक्षा प्रणाली प्रचलित है, क्या स्कूलों में और क्या विश्वविद्यालयों में, इसमें बहुत दोष हैं। हमारे देश की आवश्यकतायें उसी प्रकार की नहीं हैं जैसी यूरोप के देशों की हो सकती हैं या हैं। हमारे यहां की वर्तमान शिक्षा प्रणाली अंग्रेजों की बनाई हुई है और मैं इस बात को मानता हूं कि किसी प्रणाली को बदलने में समय लगता है। परन्तु मेरे विचार में बहुत ही अधिक समय शिक्षा विभाग ने लिया है। अब तक तो नए विचारों के आधार पर इस प्रणाली में परिवर्तन हो जाना चाहिए था। बड़ी आवश्यकता तो इस बात की है कि बच्चों में चारित्रिक प्रौढ़ता, बल, पुरुषार्थ और नियंत्रण उत्पन्न किया जाय। यह मुख्य बात है और इस ओर जाने का जो मार्ग है, हमें उस पर चलना चाहिए। जो आज की प्रणाली है वह उस ओर ले जाने वाली तो बिल्कुल भी नहीं है। मेरे पास बहुत थोड़ा समय है और मैं इस अकेले विषय पर बहुत अधिक बोलना नहीं चाहता, नहीं तो ब्यौरेवार मैं इस विषय में जा सकता था।

दूसरी बात यह है कि हमारे विद्यार्थी जो अपनी शिक्षा पूरी करके निकलें उन्हें आज की तरह से जीविका के लिए मारे मारे नहीं फिरना चाहिए। उनको इस प्रकार की शिक्षा दी जानी चाहिए कि वे शिक्षा प्राप्त करने के बाद तुरन्त ही किसी न किसी काम में लगाये जा सकें। जीविका के योग्य बनाना और उनके चरित्र का निर्माण करना, शिक्षा के यह दो मुख्य तथा आवश्यक अंग हैं लेकिन खेद है कि इन दोनों अंगों की ओर से हमारी आज की शिक्षा प्रणाली उदासीन है। बस और अधिक इस बारे में मैं नहीं कहूंगा।

हिन्दी टाइपराइटर की योजना

अव मुझे कुछ थोड़े से शव्द इस विभाग के प्रतिवेदन अर्थात् रिपोर्ट के विषय में निवेदन करने हैं। विभाग ने एक टंकण यंत्र यानी **टाइपराइटर** की योजना अपने सामने रखी है। अपनी रिपोर्ट में उसने लिखा है कि सन् १९५६ के आरम्भ तक उसको आशा है कि वह अपनी योजना पूरी कर देगा। सन् १९५६ के कुछ महीने तो वीत चुके हैं। सम्भव है कि एक दो महीनों में वह अपना काम पूरा कर ले। मैं आशा लगाये वैठा हूं कि कव टंकण यंत्र का वर्णपट्ट अर्थात् **की-बोर्ड** हमारे सामने लाया जाता है। उन्होंने जो नमूना प्रकाशित किया था पिछले साल, उस नमूने के विरुद्ध वहुत सी शिकायतें उनके सामने आ चुकी होंगी। एक तो वनावट के वारे में जो उन्होंने उस यंत्र के रूप की रखी थी यंत्र वनाने वालों ही की आपत्ति है। सम्भवतः हमारे जो उपमंत्री जी हैं, उनके सामने वह आई होगी। रिमिंगटन के प्रतिनिधियों ने मुझसे कहा कि जो क्रम शिक्षा विभाग ने यंत्र प्रणाली का रखा है वह उचित नहीं है, उसमें परिवर्तन की आवश्यकता है। उसमें आपने जो इधर उधर खिसकाने की विधि वनायी है वह त्रुटिपूर्ण है। परन्तु मुझे उसके विषय में अधिक नहीं कहना है। मुझे तो उस सिद्धान्त के ऊपर कहना है जिसे आपने वर्णपट्ट वनाने के लिए माना है। आपके विभाग ने यह कहा है कि लखनऊ में जो निश्चय हुए थे आपने उनका ही अनुसरण किया है। यह वात शिक्षा विभाग की ओर से घोषित की गई है। मैं आपको याद दिलाना चाहता हूं कि अक्षर और अंक इन दोनों के विषय में यह निश्चय हुआ था कि अक्षरों में कुछ परिवर्तन किया जाय और अंक जो नागरी लिपि के हैं वे ही रखे जायं।

आपके विभाग के प्रतिनिधि, श्री हुमायूं कवीर, ने लखनऊ की सभा में यह प्रश्न उठाया था कि जो नये टंकण यंत्र वनें उनमें अंक अंग्रेज़ी के दिये जायं। मैं नहीं जानता क्यों शिक्षा विभाग को अंग्रेज़ी के अंकों से विशेष प्रेम है। श्री हुमायूं कवीर साहव ने वहां पर यह प्रश्न उठाया था, मगर वह स्वीकार नहीं हुआ और उनका प्रस्ताव गिरा दिया गया। लखनऊ की सभा ने जो अपने निश्चय प्रकाशित किये हैं उनमें अपने अक्षरों के साथ नागरी अंकों को माना है। आपने जो वात कही उसमें यह कहा है कि लखनऊ की नीति के अनुसार आप काम कर रहे हैं, परन्तु यह वात अर्ध सत्य है, अर्थात् अक्षर तो आपने अवश्य उनके लिये परन्तु उनकी निर्धारित नीति जो अंकों के विषय में थी आपने उसकी अवहेलना की, उसे विल्कुल छोड़ दिया, और आपने अंग्रेज़ी के अंकों को हमारे सामने रखा है। आपने जो वर्णपट्ट **की-बोर्ड** वनाया है उसमें अंग्रेज़ी के अंक दिये हैं। इसको देखकर मुझे आश्चर्य तो होता ही है, साथ ही इससे हमारा मस्तक भी नीचा हो जाता है कि हमारे यहां का शिक्षा विभाग, जिसके सुपुर्द हमारे देश भर के लिए मार्ग प्रदर्शन का

कार्य है, वह हमारे नागरी अंकों को अंग्रेजी अंकों से बदलना चाहे और यह यत्न करे कि हमारी प्राचीन लिपि में से नागरी अंक निकल जायं। मैं कुछ समझ नहीं पाया। मुझे आशा है कि आज शिक्षा विभाग की ओर से मुझे यह बात समझायी जायगी कि ऐसा क्यों किया गया।

कुछ हवाला संविधान का भी दिया गया है। संविधान मेरे सामने रखा हुआ है। उसके बनाने में मेरा भी कुछ हाथ था। संविधान यह तो नहीं कहता कि हमारे देश में जो नागरी लिखने की प्रणाली है उसमें अन्तर किया जाना है। उसमें यह अवश्य है कि केन्द्रीय सरकार के कामों के लिए हिन्दी लिखने में अंग्रेज़ी अंकों का भी प्रयोग हो सकता है और नागरी अंकों का भी प्रयोग हो सकता है। दोनों को छूट है। जब **'आफ़िशियल परपज़ेज़ आफ दी यूनियन'** के लिए हिन्दी लिखी जाय तब इस सीमित काम के लिए आप हिन्दी की लिखावट में अंग्रेज़ी अंकों का प्रयोग कर सकते हैं और हिन्दी के अंकों का भी प्रयोग कर सकते हैं। धारा ३४३ की जो उपधारायें हैं उन सबको मिलाकर वह अर्थ है जो मैंने बतलाया है। उन सबका यही निचोड़ है। लेकिन जो आप टंकणयंत्र में अंग्रेजी के अंक रखते हैं इसका तो यह अर्थ होगा कि आप देश भर में अंग्रेज़ी के अंकों का प्रचलन करना चाहते हैं। यह कहां तक ठीक है? आप अधिक से अधिक यह कर सकते हैं कि अपने काम के लिए दस, बीस, पचास, सौ टंकणयंत्र विशेष प्रकार के बनवा लें, यदि आप चाहते हैं कि आपके सरकारी काग़ज़ों में हिन्दी अक्षरों के साथ अंग्रेज़ी अंक लिखे जायें। परन्तु आप उत्तर प्रदेश के लिए या राजस्थान के लिये या दूसरे राज्यों के लिये ऐसा टंकण यंत्र बनायें जिसमें अंग्रेज़ी के अंक हों, यह तो कहीं नहीं लिखा है। अंकों के बारे में मेरा यह निवेदन है, पहले भी मैंने कहा था, कि जहां जहां हिन्दी प्रचलित है वहां यही नागरी अंक चल रहे हैं, जहां मराठी प्रचलित है वहां यही अंक चल रहे हैं। स्मरण रखिये कि मराठी भाषा में यही अक्षर हैं और यही अंक हैं। और भी भाषायें हैं, जैसे पंजाबी, उसमें भी यही अंक हैं। पंजाबी भाषा गुरुमुखी लिपि में लिखी जाय या देवनागरी लिपि में, अंक यही लिखे जाते हैं। गुरुमुखी लिपि में नागरी अक्षरों से कुछ थोड़ा सा भेद है परन्तु अंक वहीं हैं। गुजराती में यही अंक हैं। अगर आप हिसाब लगायेंगे तो देखेंगे कि लगभग २२, २३ करोड़ भिन्न भाषा-भाषियों की जनसंख्या में इन पुराने नागरी अंकों का ही प्रचलन है। यह मराठी वाले, हिन्दी वाले, गुजराती वाले, पंजाबी वाले जब **टाइपराइटर** का प्रयोग करेंगे तब इनके लिए नागरी अंक लिखना ही आवश्यक होगा। वही अंक वह समझते हैं।

अंग्रेजी अंकों का मोह क्यों ?

आखिर हमारे शिक्षा विभाग को अंग्रेजी अंकों से इतना मोह क्यों है? इस विषय में शिक्षा विभाग का मोह यहां तक है कि उसने प्रदेशीय सरकारों

को लिखा है कि वे हिन्दी लिखने में अंग्रेज़ी अंकों का प्रयोग करें। जब मैं मध्य प्रदेश में भाषण कर रहा था तब उस समय यह बात मुझे वहां के मुख्य मंत्री ने बतलायी। उन्होंने मुझ से कहा कि हमारे पास केन्द्र से हिदायत आयी है कि हिन्दी लिखने में अंग्रेज़ी अंकों का प्रयोग किया जाय। उन्होंने उस हिदायत को माना नहीं और न कोई और राज्य मानेगा। यदि आप उत्तर प्रदेश को यह हिदायत भेजेंगे तो यह हिदायत वहां भी ठुकरा दी जायगी। यह जो यत्न किया जाता है कि हिन्दी लिखने में हिन्दी अंकों का प्रयोग नहीं किया जाय इससे मैं चकित हो जाता हूं। आप सारे देश के लिये यह निश्चय कर रहे हैं। मैंने उस दिन भी कहा था कि मुझे शिक्षा विभाग का यह काम अच्छा नहीं लगता। आज भी मुझे यह कहने में संकोच होता है। हृदय नहीं चाहता कि अपने सहयोगियों की किसी बात की इतनी कटु टिप्पणी की जाय। परन्तु क्या कहूं ?

देश एक ओर, शिक्षा विभाग दूसरी ओर

देश एक ओर है और आपका विभाग एक ओर है। मुझे ऐसा लगता है कि आपका विभाग देश की इच्छा के विरुद्ध जा रहा है। या तो इस विभाग में ऐसे आदमी रखे गये हैं जो देश की भावना को नहीं जानते या उनकी मनोवृत्ति ऐसी है कि वे देश की भावना को जानते हुए भी उसके विरुद्ध जाना चाहते हैं। अच्छा होता कि एक हिन्दी मंत्रालय अलग बनाया जाता। मैं यह बात बार बार कह चुका हूं क्योंकि आज जो शिक्षा विभाग है वह हिन्दी के काम को ठीक नहीं कर रहा है। इसलिए या तो इस काम के लिए एक अलग विभाग बनाया जाय या इस विभाग में ऊपर से लेकर नीचे तक परिवर्तन किया जाय। इस विभाग के संचालन में एक श्रीमाली जी हिन्दी के ज्ञाता हैं जिनका मैं स्वागत करता हूं। यह ऐसा विभाग से जिसमें अफ़सर हिन्दी जानने वाले होने चाहिए, लेकिन मेरा निवेदन है कि वहां ऊपर से नीचे तक यह हाल है कि **"ईं खानः तमाम आफ़ताब अस्त"** यह हालत है वहां की। जहां तक हिन्दी का विषय है उसमें सब के सब नगण्य हैं। यह क्या ढंग है शिक्षा विभाग चलाने का।

आप रिपोर्ट में कहते हैं कि आप हिन्दी के ग्रन्थ लिखवा रहे हैं। लेकिन लेखकों का मार्ग प्रदर्शन करने की योग्यता तो विभाग में होनी चाहिए ताकि विभाग की तरफ़ से लेखकों को सुझाव दिये जा सकें कि इस प्रकार के ग्रन्थ लिखें।

अभी एक भाई ने कहा कि इस विभाग को नाच गाने पर अधिक खर्च नहीं करना चाहिए। मेरा भी यही कहना है। मैं चाहता हूं कि इस पर जो रुपया खर्च किया जाता है उससे आप ग्रन्थ लिखवाते। कम से कम आप

पांच साल में ५० ग्रन्थ तो लिखवाते। यदि आप इस ओर १५ या २० लाख रुपया खर्च करते और एक एक लेखक को १५ या २० हज़ार रुपया देते तो दो साल में हिन्दी के ऐसे अनेक ग्रन्थ तैयार हो सकते थे जो बी० ए०, एम० ए० और **पोस्ट ग्रेजुएट** अध्ययन के योग्य होते।

हिन्दी चलाने में समय निर्धारण

हमारे भाई श्री अविनाशलिंगम चेट्टियार ने जो कहा है उसके बारे में अब मैं कुछ कहना चाहता हूं। वह यहां इस समय नहीं हैं। होते तो मैं उनके लिए कुछ अंग्रेज़ी में भी कह देता। लेकिन चूंकि वह यहां नहीं हैं मैं अनावश्यक रूप से अंग्रेज़ी में नहीं बोलना चाहता।

वह चाहते हैं कि हिन्दी के चलाने में कितने दिन लगें, इसका निश्चय वह करें। क्या मतलब इसका ? वह तो संविधान **कांस्टीटयूशन** ने निश्चय कर दिया है। उन्होंने यह कहा कि मैंने कभी यह कहा है कि स्थानीय भाषाओं के लिए अधिक पैसा नहीं देना चाहिए। मैंने उसी समय टोक दिया था कि यह अशुद्ध बात है। मैं जानता हूं कि हिन्दी के अतिरिक्त हमारे देश में ऊंची स्थानीय भाषाएं हैं, और दक्षिण की तामिल और तेलगू भाषाओं का बड़ा ऊंचा साहित्य है। तामिल भाषा के जो प्राचीन भक्त कवि हैं उनको मैं सदा सिर नवाता हूं। संत साहित्य हमारे देश का ऊंचा साहित्य है वह हिन्दी में भरा पड़ा है और मराठी में भी है और तामिल में भी वह ऊंचा साहित्य है। मैं तो उस साहित्य का सदा स्वागत करता हूं। हिन्दी चलाने के सम्बन्ध में समय निश्चय करने की बात वह चाहते हैं कि उन पर छोड़ दी जाय। यह अजीब बात है और समझ में न आने वाली बात है क्योंकि हिन्दी को देश में चलाने की अवधि तो पहले से ही संविधान में तय हो चुकी है।

अंग्रेज़ी भाषण लज्जाजनक

उपाध्यक्ष महोदय, मैं आपसे कहता हूं कि मुझे तो लज्जा आती है जब यहां पर बैठ करके लोगों को अंग्रेज़ी में भाषण करते सुनता हूं। क्या ५, ६ वर्ष के अन्दर हम इस योग्य अपने को नहीं बना सके कि हम यहां पर टूटी फूटी हिन्दी में अपनी बात कह लें। मैं तो समझता हूं कि अगर यहां पर मेरे मित्र लोग हिन्दी में बोलें तो शायद वह उस अंग्रेज़ी से बुरी नहीं होगी जिसमें अधिकतर लोग यहां पर बोलते हैं....

डा० एस० एन० सिंह (सारन पूर्व) : अच्छी होगी।

श्री टंडन : यहां लोग अंग्रेज़ी के ऊपर बड़ा अभिमान करते हैं लेकिन मैं निवेदन करना चाहता हूं कि मैं भी और जो मेरे यहां और मित्र लोग बैठे हुए हैं, वे जब अंग्रेज़ी बोलते हैं तब थोड़े से गिने चुने लोगों को छोड़ कर हम

सब अधिकतर टूटी फूटी अंग्रेज़ी बोलते हैं और मैं समझता हूं कि शायद कोई अंग्रेज़ यहां आये तो वह जल्द समझ भी नहीं पायेगा कि हम अंग्रेज़ी बोल रहे हैं या दूसरी भाषा बोल रहे हैं। हमें अंग्रेज़ी पर अभिमान करना उचित नहीं है। मैं तो चाहता हूं कि यहां पर लोग हिन्दी में बोलें और अंग्रेज़ी का मोह त्यागें, अगर अभी हिन्दी में न बोल सकें तो मैं तो कहूंगा कि बजाय अंग्रेज़ी में बोलने के वे अपनी प्रादेशिक भाषा जैसे बंगला या तामिल आदि में बोलें, अपनी भाषा में बोलना अधिक अच्छा है इसकी अपेक्षा कि हम यहां बैठ करके अंग्रेज़ी में बोलें और संसार के सामने अपनी हंसी उड़वायें।

मैं बस और अधिक नहीं कहना चाहता। अन्त में शिक्षा उपमंत्री अपने भाई से यही निवेदन करना चाहता हूं कि वह इस अंक के विषय पर विशेष ध्यान दें और जो हिन्दी **टाइपराइटर** बहुत शीघ्र बनने वाला है उसमें नागरी अक्षरों के साथ नागरी अंकों का प्रवेश करा के उसको जनता के सामने लायें।

●

३९

बेकारी हटे तब उत्पादन बढ़े

२० अप्रैल १९५६ को वित्त
विधेयक पर बोलते हुए :

गाँवों की ओर ध्यान देने की आवश्यकता

उपाध्यक्ष महोदय ! मैं इस बंधे हुए समय में कुछ गिनी हुई बातें ही निवेदन करूंगा।

सबसे पहले मुझे यह कहना है कि हमारा जितना आर्थिक क्रम चल रहा है जिसके लिए यह विधेयक यहां उपस्थित किया गया है उस सब में जो समाज सामने रखा गया है वह अधिकतर शहर का है। हम जितनी बातें करते हैं सम्पत्ति बनाने की और प्रबन्ध की और शिक्षा की, पठन पाठन की, उद्योग सम्बन्धी शिक्षा की, अर्थात् जिस पर भी हम विचार करते हैं, उसमें मुझे ऐसा लगता है कि हमारे देहात के लोगों की ओर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता है। देहात की आर्थिक समस्या हम हल करें इसकी ओर, मुझे ऐसा लगता है, हमारी गवर्नमेंट का ध्यान बहुत ही कम रहा है। कहने को तो कहा जाता है कि फ़लां फ़लां **प्रोजैक्टस** बनाये गए हैं और इन सबका सम्बन्ध गाँवों से है। लेकिन मैं आपसे कहता हूं कि आप गाँव में जाकर घूमिये, गाँव में जाइये और देखिए, आपको चारो ओर दरिद्रता और बेकारी ही नज़र आयेगी जो बढ़ गई है और बढ़ती जा रही है। मैं पहले भी निवेदन कर चुका हूं कि हमारा ध्यान उधर होना चाहिए, हमारे रुपये का एक अच्छा भाग, उस रुपये का जो हम व्यय कर रहे हैं, गाँवों की दशा सुधारने में लगना चाहिए। गाँवों में जो कुटुम्ब हैं, उनको हम भूमि दें, यह बहुत आवश्यक है। हमें चाहिये कि उनके स्वास्थ्य को अच्छा रखने के लिए तथा उनकी उन्नति करने के लिए हम प्रत्येक परिवार के लिए कुछ न कुछ भूमि अलग रखें और उनको घर बनाने में मदद दें। आपने कुछ करोड़ रुपये घर बनाने के लिए रखे हैं लेकिन मैं समझता हूं कि वह बहुत थोड़े हैं। आपको चाहिये था कि आप बहुत अधिक रुपया इस काम के लिये रखते। आपको यह भी चाहिये था कि आप देहातियों को घर बनाने में सुविधा देते।

अम्बर चर्खे का महत्त्व

अभी हमारे एक भाई ने चर्खे की चर्चा की। उन्होंने अम्बर चर्खे की चर्चा भी इस सम्बन्ध में की और कुछ उसका मखौल भी उड़ाया। मुझको उनकी

यह बात सुन करके बहुत आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा कि कौन पढ़ा लिखा आदमी चर्खा चला कर अपनी जीविका कमायेगा। मुझे ऐसा लगता है कि उनको पढ़े लिखे आदमियों की अधिक चिन्ता है और जो बेपढ़ा आदमी देहात में रहता है वह किस तरह से अपनी जीविका चलाता है, इसकी ओर उनका ध्यान नहीं गया। उन्होंने कहा कि मैं भी खद्दर पहने हुए हूं। उन्होंने इस तरह की बात भी कही कि चर्खे से क्या लाभ होगा और क्या पैसा उनको मिलेगा। मैं तो समझता हूं कि उनके खद्दर पहनने से क्या लाभ हुआ....

श्री वी० जी० देशपांडे (गुना) : डिसिप्लिन में रहकर पहनते हैं।

श्री टंडन : उससे तो ऐसा मालूम होता है कि उनका खद्दर में कोई विश्वास नहीं है, खद्दर के आर्थिक शास्त्र में विश्वास नहीं है। हम लोगों को उसके शास्त्र में विश्वास है, गांधी जी को भी उस शास्त्र में बहुत विश्वास था। मैं यह कभी नहीं कहता कि जिसमें गांधी जी का विश्वास था उसमें हमारा विश्वास भी होना चाहिए। मैं इस विषय में अधिक नहीं कहना चाहता क्योंकि समय बहुत कम है। लेकिन यह मैं निश्चय के साथ कहता हूं कि **एजुकेटिड अनएम्प्लायड** की समस्या जो आपने लाकर धरी और आप जिसे अपने ढंग से हल करना चाहते हैं वह उस तरह नहीं हल होगी। मेरा विश्वास है कि चर्खे के द्वारा चर्खे के प्रबन्ध के द्वारा और अम्बर चर्खे के द्वारा यह समस्या बहुत हद तक हल हो जायगी। यदि आपका मतलब **एजुकेटिड अनएम्प्लायड** से यह है कि सौ सौ, डेढ़ डेढ़ सौ, तीन तीन सौ और चार चार सौ की नौकरियां उनको देना है तो मैं समझता हूं चर्खा उसको हल नहीं कर सकता। परन्तु करोड़ों की संख्या में हमारे यहां जो लोग हैं, उनका ध्यान करके ही गांधी जी ने ठीक बात कही थी, मैं इसे उनकी प्रतिभा कहता हूं, उनकी बड़ी अच्छी सूझ कहता हूं। जो हमारे यहां गिरी अवस्था में थे, उनके लिए उन्होंने चर्खा लाकर रख दिया और आज उसमें जो उन्नति हो रही है, उस उन्नति को देखते हुए हम लोगों को आशा है कि इस चर्खे द्वारा हम गाँवों की समस्यायें बहुत कुछ हल कर लेंगे। जो एक बोर्ड है उसने यह दावा किया है कि वह ७०-८० लाख आदमियों को इसके द्वारा जीविका दे सकेगा। मैं इसे कोई छोटी सी बात नहीं मानता हूं। मेरा अनुमान है कि जैसे जैसे हम प्रयोग करेंगे वैसे वैसे इससे भी अधिक आदमियों को इसके द्वारा जीविका देने में हम सफल हो सकेंगे।

बेकारी पहले हटे—उत्पादन पीछे बढ़े

अब मैं एक दूसरी चीज की ओर बढ़ता हूं। कुछ दिन हुए मैंने यहां पर रिक्शाचालकों के बारे में चर्चा की थी। मेरा निवेदन यह है कि हमें ऐसी बातों को देखना चाहिए कि कहां कहां हम लोगों को काम पर लगा सकते

हैं। कहां कहां से अलग किया जा सकता है, इसे तो अंग्रेजों ने बहुत किया। अलग करना आज भी आसान है। आप जितना भी यांत्रिक क्रम बढ़ायेंगे, जहां जहां बढ़ायेंगे वहां वहां यंत्र मनुष्य को अलग कर देगा। अगर आप अमरीका और यूरोप की नक़ल करना चाहते हैं तो ठीक है, आप कर सकते हैं। परन्तु हमारे यहां प्रश्न यह है कि हम किस प्रकार से आदमियों को काम पर लगायें, तथा किस प्रकार से बेकारी को दूर करें। मेरा निवेदन है कि उत्पादन बढ़ाने की अपेक्षा यह ज़्यादा बड़ी समस्या है। अगर बेकारी दूर होगी तो उत्पादन आप से आप बढ़ेगा। परन्तु हमारे भाई उत्पादन पर ज़्यादा ज़ोर देते हैं। **प्रोडकशन प्रोडकशन** चिल्लाते हैं और जब वे इस तरह से चिल्लाते हैं तो मिलें उनके सामने होती हैं क्योंकि वे तेज़ी से **प्रोडकशन** कर सकती हैं। यह बहुत छोटी बात है, एक गौण बात है। **प्रोडकशन** हो या न हो, लेकिन बेकारी अवश्य दूर होनी चाहिये। हर एक आदमी को खाना तथा कपड़ा मिले यह मुख्य बात है। आपने कहा है कि आप २० गज़ हर आदमी को देना चाहते हैं। लेकिन जब आप २० गज की बात करते हैं तब आपका ध्यान गाँवों की तरफ़ नहीं होता है जहां लोग बेकार हैं। आप अपने लिए चाहते हैं। आप यह चाहते हैं कि आपको ५०, १००, २०० और ४०० गज़ मिले और फिर औसत जाकर २० गज़ का पड़े। आप यह चाहते हैं कि आपके पास तह की तह कपड़ों की हो, आपकी बीवियों के पास बहुत सी साड़ियां हों। गाँव वाला फिर भी नंगा ही रहेगा। मैं इसे ग़लत, अशुद्ध और असत्य बात मानता हूं। हमारे सामने अर्थशास्त्र रखा जाता है। लेकिन प्रश्न यह है कि **प्रोडकशन बढ़े या न बढ़े**, लेकिन बेकारी दूर हो। जब बेकारी दूर होगी तब **प्रोडकशन** आप से आप पीछे पीछे चलेगा। **प्रोडकशन** पीछे चले, यह मुख्य बात है। उत्पत्ति पीछे हो, बेकारी की समस्या पहले हल हो।

रिक्शाचालक वृत्ति

इसी तरह से उस रोज यहां रिक्शा का प्रश्न छिड़ा तो मैं चकित हो गया। मेरे उस विषय पर भाषण के बाद श्रम मंत्रालय ने मेरे पास कुछ काग़ज़ भेजे हैं और मैं देखता हूं कि उन कागज़ों में एक खास दलील दी गयी है। वह इस प्रकार है :

"The Fundamental fact should not be overlooked that this type of labour is a degradation of human pursonality."

बस यह दलील है, और उसके अन्त में सुझाया गया है :

"The rickshaw-puller of today may be enabled to become a motor rickshaw driver of to-morrow."

उस रिपोर्ट में यह सुझाव दिया गया है कि हाथ से चलाने वाला रिक्शा समाप्त किया जाय ताकि मोटर रिक्शा का प्रयोग हो सके। मुझे यह बिल्कुल उल्टी अक्ल दिखायी देती है। मैं इसको बिगड़ी हुई अक्ल कहता हूं। मैं कहता हूं कि बन्द करो मोटर को और अरबों रुपया जो मोटर पर व्यय होता है उसके आदमी को दो ताकि उनको ज़्यादा रोजगार मिल सके। मेरा विश्वास है कि जिस तरह से चरखा ८० या ९० लाख आदमियों को रोज़गार दे सकता है उसी तरह यह हाथ से चलने वाला रिक्शा ५० या ६० लाख आदमियों को रोज़गार दे सकता है।

Shri R. Volayudhan

There is no need of rickshaw then. why cannot you walk ? Let us remove all our vehicles.

श्री टंडन : कुछ लोग चल सकते हैं लेकिन बहुत से ऐसे हैं, जैसे कि बच्चे हैं, स्त्रियां हैं, वृद्ध हैं, जिनको सवारी की आवश्यकता पड़ती है। आज जापान में कितने रिक्शा चल रहे हैं? मतलब यह कि यह **'डिग्रेडेशन आफ ह्यूमन परसोनैलिटी'** की दलील बिल्कुल वाहियात है। हम देखते हैं ऊंची दृष्टि से, शहरों की दृष्टि से, बड़े कड़े लोगों की दृष्टि से, यह ध्यान नहीं है कि यदि यह काम नहीं होगा तो वह आदमी क्या करेगा। मैंने उस रोज़ बतलाया था कि जब एक आदमी ने **'डिग्रेडेशन आफ ह्यूमन परसोनैलिटी'** की दलील देकर रिक्शा पर बैठने से इन्कार किया तो उससे रिक्शा वाले ने कहा कि पहले आप हमको जहर दे दीजिये। वे ऐसी बात करते हैं जो व्यावहारिक नहीं है।

हिन्दी में अंग्रेजी अंक नहीं—नागरी अंक रहें

अभी तक हमारे डा० श्रीमाली यहां बैठे थे। अब मुझे दिखलायी नहीं देते।

श्री रघुनाथ सिंह (जिला बनारस, मध्य) : आपको देखकर भाग गये।

श्री टंडन : मैं उनसे कुछ निवेदन करना चाहता था। उन्होंने उस रोज़ अंकों के बारे में कुछ दलील दी थी। उनकी दलील इस प्रकार थी कि जो आज का संविधान है उसमें यह है कि जब तक प्रेसीडेंट आज्ञा नहीं देते तब तक हिन्दी लिखने में हमें अंग्रेज़ी न्यूमरल्स का इस्तैमाल करना चाहिए। यह उन्होंने इस प्रश्न का वैधानिक क्रम दिखलाया। मेरे सामने उनका भाषण है। उनकी दलील इस प्रकार है:

Keeping in view the clear provisions of the Constitution and the interpretation given by the Law ministry in 1952, the use of the Devanagari form of numerals for

any official purpose either in the Centre or in the States is unconstitutional so long as the President does not issue a special order to this effect."

बहुत अजीब सी बात है। उत्तर प्रदेश में जितना स्टेट का काम होता है सब नागरी अंकों में होता है। वहां कोई अंग्रेज़ी अंकों को छूता तक नहीं। इस दलील के अनुसार उत्तर प्रदेश सरकार का सारा काम **अनकांस्टीटय्चूशनल** है क्योंकि वहां हिन्दी नागरी अंकों के साथ लिखी जाती है।

अभी हमारे वित्त मंत्री जी ने पोथे के पोथे हमारे सामने रखे जो हिन्दी में हैं और उनमें अंक नागरी के हैं। यह भूलना नहीं चाहिए। रेलवे मंत्री ने भी पहले बड़े बड़े पोथे हमारे सामने रखे जो हिन्दी में थे और उनमें अंक भी नागरी के थे। अभी हाल में रेलवे मंत्री ने एक हज़ार डेढ़ हज़ार पन्नों की पुस्तक हमारे सामने रखी है। उसमें भी नागरी अंक हैं। श्रीमाली जी की दलील के अनुसार और सन् १९५२ में ला मिनिस्ट्री ने जो राय दी थी उसके अनुसार यह सब का सब **अनकांस्टीटय्चूशनल** है। **फाइनेन्स मिनिस्ट्री, रेलवे मिनिस्ट्री** और **एक्सटर्नलएफेअर्स मिनिस्ट्री** की रिपोर्टों में नागरी अंकों का प्रयोग होता है। सिवाय **ऐजूकेशन मिनिस्ट्री** और **होम मिनिस्ट्री** के और मिनिस्ट्रियों की रिपोर्टों में नागरी अंकों का प्रयोग होता है। तो ये सब के सब या तो मूर्ख हैं या जानबूझ कर कांस्टीट्यूशन की अवहेलना कर रहे हैं।

श्री आर० एन० सिंह (जिला गाजीपुर, पूर्व व जिला बलिया, दक्षिण, पश्चिम) : पहली ही बात सही है।

श्री टंडन : यह दोनों बातें गलत हैं। वे सब बुद्धिमान हैं और समझ वाले हैं। कोई कांस्टीट्यूशन की अवहेलना नहीं कर रहा है। लेकिन अगर हमारे डा० श्रीमाली यह कहते हैं कि इन्होंने संविधान की अवहेलना की है तो वे प्रेसीडेंट से लिख कर पूछ लें कि यह उनकी इजाजत से काम किया गया है या उनकी इजाजत के बिना किया गया है। ऐसा करना बहुत आसान है। मैं तो समझता हूं कि **मिनिस्ट्री** प्रेसीडेंट और गवर्नर के नाम पर काम करती है। लेकिन अगर डा० श्रीमाली समझते हैं कि इस काम के लिए प्रेसीडेंट को खुद कहना चाहिए था तो वह उनसे लिख कर पूछ सकते हैं। केन्द्रीय सरकार में जो इस प्रकार का काम हो रहा है मैं उसको ठीक मानता हूं। ला मिनिस्ट्री ने सन् १९५२ में एक राय दी थी, लेकिन जैसा उन्होंने बतलाया वह अब अपनी राय बदल रही है, और कैबीनेट ने इस मामले में यह तय कर दिया है कि दोनों में से चाहे कोई अंक इस्तैमाल किये जा सकते हैं। परन्तु यदि प्रेसीडेंट की आज्ञा की आवश्यकता है तो मेरा सुझाव है कि तत्परता के साथ उस आज्ञा

को मंगवा लिया जाय क्योंकि **टाइपराइटर** का प्रश्न हमारे सामने है। उनको चाहिए वे पूछ लें कि **टाइपराइटरों** में उनको कौनसे अंक प्रयोग में लाने चाहिए। मेरा कहना है कि नागरी अंक होने चाहिए। लेकिन अगर उनको इसमें सन्देह है तो वे प्रेसीडेंट को इस बात का हवाला भेज कर निश्चय कर लें।

४०

पुनः संघटन—बम्बई, उत्तर प्रदेश, पंजाब

२७ अप्रैल १९५६ को भारतीय लोक सभा
में राज्य पुनः संघटन विधेयक पर बोलते हुए :

श्री टंडन (जिला इलाहाबाद-पश्चिम) : उपाध्याक्ष महोदय! यह जानकर कि हम लोगों का समय बहुत सीमित है, मैं इस विधेयक के सम्बन्ध में तीन राज्यों के संगठन के बारे में ही कुछ निवेदन करूंगा, एक महाराष्ट्र, दूसरा पंजाब और तीसरा उत्तर प्रदेश जिसकी चर्चा अभी तक नहीं के बराबर हुई है।

बम्बई द्विभाषी प्रदेश हो

महाराष्ट्र के सम्बन्ध में मुझे अपने मराठी और गुजराती भाइयों से यह कहना है कि जो दृश्य मैंने यहां लोक सभा में उनकी भावनाओं का देखा उससे मुझे पीड़ा हुई। आवश्यकता इस बात की है कि हम देश को दृढ़ता, मेल और सहयोगिता से चलायें। उसको इस तरह चलाने के लिए ऊंची भावनाओं की आवश्यकता है। बम्बई के प्रश्न ने इन दोनों में खटपट पैदा कर दी है। मैंने एक सुझाव दिया था और उसको मैं फिर दोहराता हूं कि कुछ ऐसा रास्ता निकालना चाहिए जिससे जहां तक सम्भव हो ये मिलकर रहें।

हमारे मराठी भाषी-भाइयों ने एक समय माना भी था कि विदर्भ के मिलाने के बाद इसमें सौराष्ट्र रहे, गुजराती भाई भी रहें और सबका मिल करके एक द्विभाषी प्रदेश बने। मेरा सुझाव है कि आज भी यह आवश्यकता है कि हम उस ओर ध्यान दें। मैंने सुना है कि मराठी भाई अभी प्रधान मंत्री जी से मिलने वाले हैं। मेरा तो सुझाव है कि अब भी देर नहीं है। फिर हम उस तरह से विचार करें, और जहां तक सम्भव हो हम इस प्रदेश को द्विभाषी या अधिक भाषा भाषी बनाने में न हिचकें। मैं जानता हूं कि इस पर दो मत हैं। हमारे भाई जो इधर विरोध में बैठते हैं वे एक भाषा राज्य पर बहुत बल देते हैं। कल भी हमारे भाई, श्री साधन गुप्त, ने कहा कि हमें इसी बात पर अड़े रहना चाहिए कि एक भाषी प्रदेश हों। बिहार और बंगाल के मिलाने का भी उन्होंने विरोध किया। वह भी एक मत है। मैं मानता हूं कि इसमें कई दृष्टियां हैं। पर यह भी तो हमें देखना चाहिए कि और दृष्टिकोण भी हो सकते हैं और सब को एक ही लाठी से हांकने की आवश्यकता नहीं। सब

धान बाईस पसेरी नहीं होते। सब प्रदेशों को एक ही लाठी से नहीं हांका जा सकता। गुजराती और मराठी भाइयों का इतने समय से मेल चला आता है। यह कोई नया प्रयोग नहीं है। बिहार और बंगाल भी किसी समय एक थे लेकिन इधर बहुत दिनों से नहीं हैं। इसलिए यह जो बंगाल और बिहार को मिलाने का सुझाव आया है यह एक प्रकार से नया प्रयोग है। मगर गुजराती और मराठी भाइयों के लिए यह कोई नया प्रयोग नहीं है। मेरा तो यही सुझाव है कि वे फिर यह सोचें कि मिल कर रह सकते हैं। यह क्यों असम्भव है? हम थोड़ा हिस्सा इन्दौर के पास का इसमें और मिला कर इसको एक अधिक बड़ा प्रदेश बना सकते हैं। मैं तो इसके पक्ष में हूं कि हम इस प्रदेश को कुछ और बड़ा बना दें और इन्दौर के पास का कुछ हिस्सा इसमें मिला दें। फिर इसका नाम चाहे बम्बई रहे या महाराष्ट्र रहे, जिन जिन प्रदेशों के लोग इसमें आयें उन सबको मिल कर काम करने का अवसर मिले, और जैसा कि पाटिल भाई ने कहा इस प्रकार संसार के आगे बम्बई एक वृहद् राजधानी के रूप में रहे और उसकी स्थिति अधिक ऊंची हो।

बघेलखंड उत्तर प्रदेश में हो

दूसरी बात मैं उत्तर प्रदेश के सम्बन्ध में निवेदन करना चाहता हूं। पहले जो बहुत बड़ी घबराहट थी कि बड़े बड़े राज्य न रहें वह घबराहट तो अब नहीं रही है। कम से कम केन्द्रीय गवर्नमेंट के मस्तिष्क में अब यह घबराहट नहीं है। अब तो उन्होंने बड़े बड़े जोन बनाने की बात सोची है और हमारे भाई गिरी जी ने भी यहां से एक आवाज उठायी है कि वह तो यह देख रहे हैं कि बड़े बड़े प्रदेश बनेंगे। जितने प्रदेश एक ज़ोन में रखे गये हैं वे सब एक राज्य बन जायँगे, इसकी चर्चा उन्होंने यहां की। यह जान पड़ता है कि अब यह घबराहट नहीं है कि कोई प्रदेश बहुत बड़ा न हो जाय। मैं तो बम्बई को और बड़ा बना देना चाहता हूं। मध्य प्रदेश आज आबादी में नहीं परन्तु अपने डील डौल में उत्तर प्रदेश से बड़ा है। मैं पूछता हूं कि आज जो बघेलखंड के लोग या विन्ध्य प्रदेश के लोग हमारे प्रदेश में आना चाहते हैं उनको आप रोकते क्यों हैं? बघेलखंड के लिए यह बात बार बार कही गयी है। एक भाई बघेलखंड के यहां है। उन्होंने जोरों के साथ कहा है कि हम उत्तर प्रदेश के साथ जाना चाहते हैं। बघेलखंड की विधान सभा में भी इस पर बहस हुई थी। वहां उस समय २० सदस्य उपस्थित थे। उनमें से अधिकतर ने कहा कि हम उत्तर प्रदेश के साथ जाना चाहते हैं। केवल दो सदस्य थे जिन्होंने कहा कि हम मध्य प्रदेश के साथ जाना चाहते हैं। इस विषय पर उत्तर प्रदेश की विधान सभा में भी चर्चा हुई और वहां पर लगभग सबों ने मिल कर कहा कि पूरा विन्ध्य प्रदेश उत्तर प्रदेश के साथ मिलया जाय, अगर ऐसा करने में

कोई कठिनाइयां हैं तो कम से कम बघेलखंड को तो अवश्य उत्तर प्रदेश में मिला दिया जाय। वहां के जो मुख्य मंत्री हैं, डा० सम्पूर्णानन्द, उन्होंने भी उस दिन भाषण दिया था। मैं चाहता हूं कि हमारी गवर्नमेंट और हमारे गृह विभाग के मंत्री जी उधर ध्यान दें। मेरा विश्वास है कि वह प्रवर समिति में रहेंगे। यह सच है कि वह उत्तर प्रदेश के रहने वाले हैं। लेकिन मैं इसको उत्तर प्रदेश के साथ अन्याय समझता हूं कि आपने जो **सिलेक्ट कमेटी** वनायी है उसमें प्रदेश उत्तर का केवल एक मेम्बर इस भवन से रखा। उस मेम्बर ने भी नाराजगी से उसमें काम करने से इन्कार कर दिया क्योंकि आपने इतने बड़े सूबे का केवल एक ही सदस्य रखा । उस मेम्बर की जगह आपने दूसरा मेम्बर रखा है, मैं नहीं जानता कि वह काम करेंगे या नहीं। मुझे मालूम है कि उनसे पूछा नहीं गया है। क्या आप दो सदस्य नहीं रख सकते थे, श्री वेंकटेश नारायण तिवारी और श्री अलगूराय शास्त्री ? अगर ये दो आदमी वने रहते तो क्या बिगड़ जाता ? मुझको ऐसा लगा है कि हमारे गृह मंत्री जी और हमारे प्रधान मंत्री जी उत्तर प्रदेश के हैं—इसलिए वे ऐसा करने में संकोच कर रहे हैं और इस संकोचवश जो अन्याय उत्तर प्रदेश के साथ हो रहा है उसको वे सहन कर रहे हैं। मैं कहना चाहता हूं कि यह ठीक नहीं है। उनको समझना चाहिए कि उत्तर प्रदेश के रहने वाले क्या चाहते हैं। यहां बघेलखंड के लोग हैं। अगर आप उनको प्रवर समिति में आने का अवसर देते तो वे अपनी राय आपके सामने रखते। पर आप उनको नहीं रख रहे हैं। न आप वघेलखंड के आदमी रख रहे हैं और न उत्तर प्रदेश को उचित अवसर दे रहे हैं। फिर कौन आपसे कहने आयेगा ? इसीलिए मैं आज खड़ा हुआ हूं कि स्पष्ट रूप से कह सकूं कि इस प्रकार आप विन्ध्य प्रदेश के साथ, वघेलखंड के साथ और उत्तर प्रदेश के साथ अन्याय न होने दें। उत्तर प्रदेश और वघेलखंड का चोली दामन का साथ वहुत पुराना है। हम लोग इस वात को जानते हैं कि वे हमारे कितने समीप हैं। मैं याद दिलाना चाहता हूं, और मैं समझता हूं कि जो मंत्रिगण इधर वैठे हैं शायद उनको याद भी होगा क्योंकि वे कांग्रेसी हैं, कि एक समय वघेल-खंड की कांग्रेस कमेटी उत्तर प्रदेश की कांग्रेस कमेटी की एक अंग थी। यह कुछ वरस पहले की वात है। किसी काल में वे मध्य प्रदेश के साथ थे लेकिन उनसे वे नाराज होकर उत्तर प्रदेश के साथ आ मिले। हमारी उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी का एक जिला था वघेलखंड। मेरा उत्तर प्रदेश की कांग्रेस कमेटी के संचालन में हाथ था, इसलिए मुझको यह वात याद है। मेरा यह कहना है कि वे हमारे बहुत पास हैं। अगर वे आना नहीं चाहते तो हम कुछ नहीं कहते, लेकिन जव वह आना चाहते हैं और उत्तर प्रदेश वाले उनको लेना चाहते हैं तो क्यों रुकावट डाली जाय। अभी हाल में उत्तर प्रदेश के मुख्य मंत्री

ने अपनी विधान सभा में कहा है कि उत्तर प्रदेश कृपि में वड़ा है लेकिन खनिज पदार्थों में छोटा है। उसके पास खनिज पदार्थ नहीं हैं। मध्य प्रदेश के पास खनिज पदार्थ वहुत हैं। ऐसी स्थिति में विन्ध्य प्रदेश का टुकड़ा, जो खनिज पदार्थों की दृष्टि से महत्वपूर्ण है, उत्तर प्रदेश में मिला दिया जाय तो दोनों का लाभ है। बुंदेलखंड के अधिकतर लोगों की भी यह इच्छा जान पड़ती है कि वह उत्तर प्रदेश में आयें।

श्री रायचन्द भाई शाह (छिंदवाड़ा) : यह गलत है।

श्री एम० एल० द्विवेदी (जिला हमीरपुर) : मैं कहता हूं कि यह सही है।

उपाध्यक्ष महोदय ! आप इसी तक रहने दें। हमने समझ लिया कि कुछ कि राय है कि आ जायें और कुछ की राय है कि न आयें। माननीय सदस्य अपनी तक़रीर जारी रखें।

श्री टंडन : मैं तो समझता हूं कि बुंदेलखंड के लोग भी आना चाहते हैं। लेकिन अगर सारा विन्ध्य प्रदेश नहीं आना चाहता तो कम से कम वघेल-खंड को तो आने दीजिये। मुझे आशा है कि हमारे मध्य प्रदेश के भाई इसके औचित्य को समझेंगे।

पंजाव की समस्या

अव मैं थोड़े से मिनटों में पंजाव के वारे में निवेदन करना चाहता हूं।

श्री टंडन : उस दिन यहां पर सरदार हुक्म सिंह ने जो भापण किया, उसका मैंने अपने मन में स्वागत किया। उस दिन मुझे उस सम्वन्ध में बोलने का अवसर नहीं मिला था, सो आज कुछ निवेदन करना चाहता हूं। मैंने स्वागत उसका इसलिए किया कि उनके भाषण में और मास्टर तारासिंह के भाषण में भी मुझको एक नया दृष्टिकोण दिखाई दिया, अर्थात् यह कि आज जो जालंधर **डिवीजन** के विगड़े हुए लोग हैं और जो सहमत नहीं हो रहे हैं, उनके साथ वातचीत करके उनको मिलाने का यत्न किया जाय। सरदार हुकमसिंह के भाषण में वह वात मुझे विशेष अच्छी लगी जो उन्होंने यह कहा कि हम वैठ कर आपस में समझौता करें। यही वात लाला अचिंत राम ने भी अपने भापण में कही थी। इसमें तो कोई सन्देह नहीं और हम सब देख रहे हैं कि यह कहना कि पंजाव में सब लोग संतुष्ट हैं, यह अर्ध सत्य है, यह विलकुल सच नहीं है और जो प्रवन्ध किया गया है उससे जालंधर के लोग असन्तुष्ट हैं।

सरदार इक़वाल सिंह (फ़ाजिल्का सिरसा) : अक्सरियत तो संतुष्ट है।

श्री टंडन : हरियाना के लोग मैं मानता हूं संतुष्ट हैं, लेकिन जालंधर **डिवीजन** के तमाम हिन्दू इस प्रवन्ध के खिलाफ़ हैं। साथ ही मैं इसको स्वीकार करता हूं कि आपस में मेल पैदा किया जाय और सरदार हुक्मसिंह का वह

सुझाव स्वागत के योग्य है जिसमें उन्होंने कहा है कि उनको वैठ कर कोई रास्ता निकालने का यत्न करना चाहिए।

यह जो क्षेत्रीय परिषदों की स्थापना करने की बात है, यह एक नया प्रयोग है जो हम करने जा रहे हैं और इसके सम्वन्ध में मैं यही सुझाव दे सकता हूं कि वहुत समझ बूझकर हमें इसको चलाना है। एक तरफ़ **रीजनल** (प्रादेशिक) **कमेटी** का सिद्धान्त, अर्थात् यह कि जो एक सूवा है उसको वांट दिया जाय, दूसरी तरफ़ **जोनल कौंसिल** (क्षैत्रिय परिषद्) का सिद्धान्त जो उससे भिन्न है, एक तरफ़ वढ़ाने की बात और दूसरी ओर छोटे स्थानों में कमेटी वनाने की बात, देखने में ऐसा लगता है कि उनमें दो अलग अलग सिद्धान्त काम कर रहे हैं और उन दोनों को ही पंजाब में स्थान दिया गया है। अभी जैसा पंडित ठाकुर दास भार्गव कह रहे थे यह स्थिति स्पष्ट नहीं है, मुझको भी यही लगा कि अभी गवर्नमेंट का दिमाग कुछ इसके वारे में स्पष्ट नहीं है और वह कुछ टटोल रही है। मैं इस टटोलने को बुरा नहीं कहता, टटोलना कुछ वुरी वात नहीं है, समझ बूझकर आगे वढ़ने की बात है। हम **रीजनल कमेटी** को क्या अधिकार दें, किस तरह से उसको चलायें, इस सम्वन्ध में वहुत समझ वूझकर के और अनुभव करके आगे काम करना है। अव चूंकि आपने घंटी वजा दी है, इसलिए मैं अधिक न कह कर अपनी वात समाप्त करता हूं।

४१

हिन्दू उत्तराधिकार विधेयक बदलिये

१ मई १९५६ को हिन्दू उत्तराधिकार विधेयक पर प्रवर समिति के प्रतिवेदन के सम्बन्ध में बोलते हुए

श्री अध्यक्ष महोदय ! इस विषय पर मुझे वहुत नयी वातें नहीं कहनी हैं परन्तु मैं आज इसलिए खड़ा हुआ हूं कि कुछ शब्द कह कर अपना कर्तव्य निभा दूं।

क्रान्ति का क्रम पुराना

आज सरकार इतने क्रान्तिकारी प्रस्ताव को लेकर खड़ी हुई है। जव प्रवर समिति में इस विधान को भेजने का प्रस्ताव पहले आया था उस समय भी मैंने अपना मत सामने रखा था। मुझको आशा थी कि हमारे मंत्री महोदय श्री पाटस्कर जी, जिन्होंने अपने पूर्व भाषण में भारतीय संस्कृति का आधार लिया था, वे उस संस्कृति को विसारेंगे नहीं। मैं उनसे इस वात में सहमत था कि भारत में परिवर्तन होते चले आये हैं। भारत ने अपने को किसी तालाब में वांध दिया हो ऐसा कभी नहीं रहा है। पिछले अवसर पर भी मैंने यही वताने का यत्न किया था कि हमारा देश परिवर्तनशील रहा है। क्रान्ति से वह घबराया नहीं है। क्रान्ति हमारे यहां का ही शब्द है। इसके लिए हमारे यहां स्मृतियों में स्पष्ट वाक्य हैं। हमने अपने को शास्त्रों के शब्दों से भी बांधा नहीं है, यह भी मैंने आपसे उस समय कहा था।

केवलं शास्त्रमाश्रित्य न कर्तव्यो विनिर्णयः।

केवल शास्त्र का सहारा लेकर कर्त्तव्य का निर्णय नहीं होता। यह वृहस्पति स्मृति का वाक्य है। यहां तक हमारी स्मृतियां गयी हैं। भारतीय समाज ने कभी अपने को कूप मंडूक नहीं वनाया। परन्तु उसकी कुछ मौलिक धारणायें रही हैं।

पश्चिम का अनुकरण हानिकर

आज मैं देखता हूं कि हमारे पाटस्कर जी भी पश्चिमी क्रम को इतना ऊंचा समझते हैं कि वे भारतीय क्रम को छोड़ कर उधर जाने की चिन्ता कर रहे हैं। हमारे एक भाई ने यह भी कहा कि हमारा देश वहुत पिछड़ा हुआ है और पिछड़े हुए देश में रहना उचित नहीं, इसलिये उसे आगे वढ़ाना चाहिए और आगे वढ़ाने का अर्थ है पश्चिमी क्रम पर चलना। मैं उनसे वहुत अधिक नहीं कहना चाहता। पर मैं समझता हूं कि पश्चिमी क्रम पर चलना तो वहुत

उन्नति का लक्षण नहीं है। यह मैं बहुत स्पष्ट कहना चाहता हूं। हर बात में पश्चिमीयता, विशेषकर जहां चारित्रिक और सामाजिक क्रम का सम्बन्ध है वहां उनके पीछे चलना, हमारे लिए हानिकर ही होगा। जो हमारा भारतीय क्रम है उसको हमें सदा अपनी आंख के सामने रखना चाहिए, उसे कभी आंख से ओझल नहीं होने देना चाहिए। मैं पाटस्कर जी से यह पूछता हूं कि हमारे देश में लड़कियों का सम्मान और आदर किसी देश से क्या उन्होंने कम देखा है? हमारे यहां अपनी बच्चियों से क्या किसी दूसरे देश की अपेक्षा प्रेम कम है? हमारे यहां के पिता अपनी लड़कियों के लिए, हमारे यहां के भाई अपनी बहनों के लिए, हमारे यहां के चाचा अपनी भतीजियों के लिए जितना करते रहे हैं और आज भी कर रहे हैं क्या संसार में कोई और देश है जहां उससे अधिक किया जाता हो? लड़कियों के आदर का प्रश्न इस प्रकार का है जिसके सम्बन्ध में ऐसी आवाज़ लगाना, जैसी हमारी एक बहिन ने पीछे से आवाज़ लगायी थी कि यहां उनका आदर नहीं है, नितान्त अशुद्ध है। कहीं अपवाद हो सकता है, भूलें भी होती हैं। उन्होंने उदाहरण दे दिया कि घरों में लड़कियों को दूध भी नहीं मिलता और लड़कों को मिलता है। भला यह क्या बात है? हमारे यहां मातायें अपने लड़कों और लड़कियों के लिए क्या करने को तैयार नहीं होतीं?

लड़कियों और लड़कों में अन्तर

लेकिन यह छिपाने की बात नहीं है कि लड़कियों और लड़कों में एक अन्तर है। प्रेम खींचने वाले वे दोनों हैं, पर वे सब दृष्टि से बराबर हैं यह कौन कह सकता है। यह क्या सही है? क्या यह प्रकृति का क्रम है कि दोनों बराबर हैं? मैं पूछता हूं कि आप बारबार यह जो **इक्वैलिटी** शब्द इस्तेमाल करते हैं, उससे आपका तात्पर्य क्या है? बे समझे हुए **इक्वैलिटी** शब्द यहां पर प्रयुक्त किया जाता है। किस बात में **इक्वैलिटी**? बिलकुल दोनों का ढंग दूसरा है, और रहन सहन दोनों का अलग अलग है, प्रकृति ने दोनों को जुदा जुदा कामों के लिए बनाया है और यह स्पष्ट है कि एक ही काम दोनों नहीं कर सकते, दोनों के मुख्य कर्त्तव्य अलग हैं। हमारे भारतीय समाज ने उस कर्त्तव्य को समझने का यत्न किया है और उसके अनुसार दोनों को अलग अलग स्थान दिया है। मैं पूछता हूं कि गृहस्थी का भार क्या कहीं किसी ने लड़की के ऊपर डाला है। कोई व्यक्ति यह आशा नहीं करता कि बुढ़ापे में मुझको मेरी लड़की खिलायेगी या गृहस्थी का भार बुरे दिनों में सम्हालेगी। यह तो कोई आशा नहीं करता और इस कारण से जायदाद के बंटवारे के क्रम में अन्तर रहा है। यदि उसमें हमको कुछ दोष लगें तो हम सम्हालने का यत्न करें, उसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं है परन्तु आज जो आप लड़के और लड़की को बराबर करने

का क्रम कर रहे हैं, उससे तो यह स्पष्ट मालूम होता है कि हमारे समाज का जो क्रम है, उसकी ओर से आपने अपनी आंखों में पट्टी वांध ली है। हमारे समाज का क्रम विलकुल दूसरा है। आप प्राचीन काल के उस सिद्धान्त को न मानें जो पुराने लोग मानते थे कि हमको पुत्र नरक से वचायेगा, उसको छोड़ दीजिये, जिस कारण से पुत्र का समाज में एक विशेप स्थान था, आप उस सिद्धान्त को न मानें और उसको छोड़ दीजिये परन्तु यह तो आपके सामने है ही कि गृहस्थी का भार पुत्र उठाता है लड़की नहीं उठाती। आपको पिंड-दान में या तर्पणों में विश्वास हो या न हो परन्तु यह क्रियायें लड़का करता है, लड़कियों से यह काम नहीं लिया जाता......

संसद् कार्यमंत्री : श्री सत्यनारायण सिंह : लोग आजकल तर्पण ही नहीं करते।

तर्पण आज भी जारी

श्री टंडन : संभव है कि कैनाट प्लेस से तर्पण उठ गया हो और शायद पार्लियामेंटरी जगहों से भी तर्पण उठ गया हो परन्तु हमारे देश से अभी तक तर्पण उठ नहीं गया है और आज भी वह जारी है। हमारे समाज में तर्पण का अधिकार पुरुषों को दिया गया है लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि पिता लड़की से प्रेम नहीं करता है, वह लड़की से भी लड़के के समान ही प्रेम करता है लेकिन यह जानता है कि लड़की दूसरे घर में जाने वाली है, उसका जो अधिकार है वह दूसरे ढंग का है और उसको दूसरे घर में अधिकार प्राप्त है। इसमें कोई लड़की या लड़के में अन्तर का प्रश्न नहीं है। एक नर है और एक मादा है, इसका प्रश्न नहीं है।

पिता की सम्पत्ति में लड़कियों को अधिकार देना अनुचित

मैंने उस समय भी कहा था और आज भी दुहराता हूं कि आप लड़कियों को जो पिता की सम्पत्ति में अधिकार देते हैं, यह अनुचित है, ऐसा नहीं होना चाहिए। जहां तक पिता की सम्पत्ति में लड़िकयों के अधिकार का सम्वन्ध है, इसमें कोई सन्देह नहीं है कि जव तक वह घर में रहती है और विवाहित नहीं हो जाती, उसको अधिकार प्राप्त होना चाहिए और किसी ने यह सुझाया भी था कि अविवाहिता लड़कियों को पिता की सम्पत्ति में अधिकार मिलना चाहिए, आप उसको उस अवस्था में अधिकार दे सकते हैं लेकिन अगर न भी दें तो भी कुछ विगड़ता नहीं है। अधिकार न भी हो तो भी हम जानते हैं कि माता, पिता, भाई सम्पत्ति को वेचकर भी पुत्री और वहिन का व्याह करते हैं। अभी अभी जव मैं घर से इधर आ रहा था तव मैंने एक मित्र के सम्वन्ध में जो लोकसभा के सदस्य हैं अपने घर में सुना कि उनकी लड़की का व्याह होने वाला है और तीन हज़ार रुपये उन्होंने

कहीं से बटोर करके हाल में तिलक में दिये हैं। मैं उनकी स्थिति जानता हूं। उनके घर में तीन हज़ार रुपये नहीं रहे होंगे। वे भाई कनौजिया ब्राह्मण हैं और बेचारे प्रथा के चक्कर में दावे गये हैं। यह एक साधारण बात है कि हमारे यहां लोग लड़की के व्याह के लिए बहुत मुसीबतें उठाते हैं। अब आप इस विधेयक के द्वारा पिता के चले जाने के बाद उसके परिवार में झगड़ा मचाना चाहते हैं। लड़की तो स्वयं झगड़ा नहीं करेगी लेकिन जिस घर में लड़की जायगी वहां वालों का और उसके पति का उस पर दबाव पड़ेगा कि वह अपने भाइयों से झगड़ेबाज़ी करे। मेरी तो समझ में नहीं आता कि आप इस तरह का क़ानून बना कर करने क्या जा रहे हैं। मैं बुद्धिवादी हूं, मैं रूढ़िवादी नहीं हूं। मैं बुद्धि के कांटे पर शास्त्रों को तोलता हूं, वेदों को भी तोलता हूं परन्तु आपको भी तो तोलता हूं। जब मैं वेदों को तोलने को तैयार हूं तो आपको और आपके मंत्रिमंडल को और जो ऊपर के नेतागण हैं उनको भी तो अपनी बुद्धि पर तोलता हूं।

पाश्चात्य ढंग के विचार

आपके नेतागण और वे सब लोग जिनके भरोसे पर आप यह विधेयक लाये हैं बिलकुल पाश्चात्य ढंग से सोच रहे हैं। आज आवश्यकता यह है कि आप भारतीय संस्कृति की रक्षा करें और इस समस्या पर भारतीय ढंग से सोचें और कुम्टुबों का नाश न होने दें। मैं तो युक्ति की बात कहता हूं। क्या आपकी बात युक्तिसंगत है ? मैं युक्ति के विरुद्ध नहीं जाता।

युक्ति युक्तं वचो ग्राह्यम।
युक्ति हीनं वचः त्याज्यम्॥

मैं तो इसका मानने वाला हूं। मैं इस सम्बन्ध में आपको एक पुराना श्लोक सुनाता हूं जो इस प्रकार है :

युक्ति युक्तं वचो ग्राह्यम् बालादपि शुकादपि।
युक्ति हीनं वचस्त्याज्यम् वृद्धादपि शुकादपि॥

यदि कोई वृद्ध भी और यदि कोई मिनिस्टर भी बैठ करके कोई युक्तिहीन बात कहता है तो वह बात त्याज्य है। हमारे देश की यह परम्परा रही है कि कोई वृद्ध या स्वयं सुखदेव जी भी अगर आपसे कोई युक्तिहीन बात कहें तो वह त्याज्य है लेकिन अगर युक्तिसंगत वाणी कोई बच्चा या तोता भी कहे—'शुक' शब्द में श्लेष है—बच्चा या तोता भी अगर युक्तिसंगत बात कहे तो ग्राह्य होनी चाहिए। हमारे देश की यह परम्परा रही है।

श्री पाटस्कर : शास्त्र हम भी जानते हैं और मानते हैं।

श्री टंडन : मैं शास्त्र की बात नहीं कह रहा हूं, मैं तो इस समय बुद्धि की बात कह रहा हूं और युक्तिसंगत और युक्तिहीन बात के बारे में बतला रहा हूँ। मैं आपको यह बतला रहा हूं कि लड़की को आप धन देकर गृहस्थी का

विघटन करा दें, यह युक्ति नहीं है। हर कोई जानता है कि लड़की शादी के बाद दूसरे घर की हो जाती है और कहां से कहां पहुंचती है। वह लड़की अपने मायके के स्थान में आकर वहां की भूमि अथवा सम्पत्ति में हिस्सा वंटाये, इसमें क्या बुद्धि की बात है?

माता का उत्तराधिकारिणी होना उचित

प्रवर समिति ने माता को प्रथम उत्तराधिकारियों में स्थान देने का निश्चय किया था, मैं उसका स्वागत करता हूं लेकिन न मालूम क्यों राज्य सभा ने उसे हटा दिया! मैं स्वयं इसका स्वागत करता हूं कि माता भी हो, पिता भी हो....

श्री गिडवानी (थाना) : राज्य सभा वाले ज़्यादा अक़लमंद हैं।

मैं इसके पक्ष में हूं कि आप इसमें विधवा स्त्री को रक्खें, माता को रक्खें और पिता को रक्खें। अगर इसमें आप लड़की को रखते हैं तो इसी तरह से रखना चाहिये कि जो कुमारी है उसका अधिकार है लेकिन विवाह के समय वह अपने साथ उस अधिकार को ले कर नहीं जा सकेगी। जो मुख्य वात मेरे मन में है वह यह है कि हमारे समाज का, हमारी गृहस्थी का इस तरह से विघटन न किया जाय। हमारे भाई श्री ठाकुरदास जी ने जो कहा उससे मैं सहमत हूं। इस तरह से आप समाज में बुराई पैदा कर देंगे।

पुराने आदर्शों का मजाक

यहां पर रामायण की कुछ चर्चा आ गई। रामायण की चर्चा तो आदर्शों की वात है। वह आदर्श आपके इस विल में देखने को नहीं मिलते। इसका आदर्श सीता जी थीं। वह अब नहीं हैं परन्तु वह आदर्श उड़ नहीं गया। आज भी वह हमारे देश के गांवों में मौजूद है। आप हमारे पुराने आदर्शों की हंसी न उड़ायें। पश्चिमी क्रम में जो अच्छी वातें हैं मैं उनको लेने के विरुद्ध नहीं हूं। परन्तु जो हमारे यहां समाज को ऊंचा उठाने वाले आदर्श हैं, मनुष्य मात्र को ऊंचा उठाने वाले आदर्श हैं, वह पूजनीय हैं और सदा हमारी आंखों के सामने रखने के योग्य हैं। हमारे यहां स्त्री का स्थान वहुत ऊंचा रहा है। जैसा ऊंचा स्थान माता का, और वड़ी भावज का होता है उसकी चर्चा रामायण में आती है। यह भी आता है कि पति और पत्नी का क्या कर्त्तव्य है। जव सीता जी ने रामचन्द्र जी से वन चलने के लिये इच्छा प्रकट की तव रामचन्द्र जी ने कहा कि वे उनके साथ वन में न जायें। परन्तु सीता जी की आकांक्षा थी कि मैं चलूं।

"मोंहि मग चलत न होइहि हारी। छिन छिन चरन सरोज निहारी।"

यह आदर्श था कि क्षण क्षण आपके चरणों को देखने का मुझे अवसर मिलेगा,

उनको देख कर मुझे थकावट आने वाली ही नहीं है। हो सकता है कि आज की आधुनिक स्त्रियां इसमें विश्वास न करती हों, परन्तु हमें यह भूलना नहीं चाहिये कि यह आज भी हमारे देश की करोड़ों स्त्रियों की परम्परा है। इसी कारण मैं अपनी भाभी उमा जी से सहमत हूं कि हमारे देश की स्त्रियों ने हमारे देश की रक्षा की है। रक्षा की है धर्म के प्रति अपने दृढ़ नियम से। जहां तक मुझे पता है, और यह बात अंग्रेजों की कही हुई बताता हूं, भारत की अपेक्षा पातिव्रत धर्म को निभाने वाली स्त्रियां संसार में और कहीं भी देखने में नहीं आतीं।

बूढ़ी स्त्रियों से सलाह लें

मैं पाटस्कर जी से एक कुंजी की बात कहता हूं। वह मर्दों से सलाह न लें, घरों में जो बड़ी बूढ़ी स्त्रियां हैं उनसे पूछें कि क्या वह लड़कियों को अपना धन देंगी। मैं कहता हूं कि स्त्रियां, शिक्षित स्त्रियां भी, इस बात की विरोधिनी हैं कि लड़कियों को उनके घर की जायदाद में हिस्सा दिया जाय क्योंकि उनके सामने प्रश्न यह है कि हमारा घर कैसे चलेगा। जो कुछ उन्हें मरने से पहले देना होता है, लड़कों को देती हैं, बहुओं को देती हैं, पुत्रियों को देती हैं परन्तु आपने यह कभी नहीं देखा होगा कि जो घर की सम्पत्ति है, उसके बारे में उनकी इच्छा हो कि पुरुषों के मरने पर जब जायदाद का बंटवारा हो तब वह लड़कियों को दी जाय। इसलिये आप यह देखेंगे कि जैसा हमारी भाभी जी ने कहा. . . .

Shri B. S. Murthy: I do not think she is a free agent.
(**श्री बी० एस० मूर्ती :** मैं नहीं समझता कि वह स्वतंत्र कर्त्री हैं।)

Shri Tandon: You may not think so. At the time of death, she is not in the custody of any particular individual, her husband or her son.

(**श्री टंडन :** आप ऐसा न समझें। मृत्यु के समय वह किसी विशेष व्यक्ति, अपने पति या पुत्र के अधिकार में नहीं होती।)

आप यह कह सकते हैं कि उसका कुल दृष्टिकोण एक प्रकार का है, परन्तु जो दृष्टिकोण अर्थात् **आउटलुक** है, वह समाज का बनाया हुआ है। जिस समाज से उसका मन उसका विचार बना हुआ है, वह समाज हमारे सामने है। मैं आज आप से कहता हूं कि आप राय ले लीजिये स्त्रियों से, हमारी कनाट सर्कस की तितलियों से नहीं, हमारे घर की स्त्रियों से। हमारी भाभी, उमाजी को अनुभव है, उन्होंने समाज को देखा है और उन्होंने दबे शब्दों में आपसे अपनी राय भी बता दी कि आज हमारे कुटुम्बों के लिये जो क्रम आप बनाने जा रहे हैं वह हमारे अनुकूल नहीं

है। यह दृष्टिकोण पुरुष और स्त्री में भेद करने के लिये नहीं है, बल्कि यह एक स्वाभाविक और प्राकृतिक बात है कि गृहस्थी बनती है लड़कों के द्वारा, लड़कियों के द्वारा नहीं। पत्नियों के द्वारा बनती है, उनको अधिकार दिया जाय। माता को अधिकार दिया जाय। परन्तु लड़की जहां जायगी वहां वह पत्नी होगी, बड़ी बूढ़ी होगी, उसको वहां पर अधिकार मिलेगा।

मैं और अधिक समय आपका नहीं लेना चाहता। मैं अन्त में यही कहना चाहता हूं कि जो यह बिल विधि मंत्रालय ने बनाया है, उसको बदलिये। इसमें देश का हित नहीं है। इसमें तो उसकी बहुत हानि ही होगी और कांग्रेस बदनाम होगी। इस तरह से कांग्रेस चौपट होगी और इस चट्टान पर टूट जायगी।

४२

उत्तराधिकार में माता, पत्नी, पुत्री

४ मई १९५६ को हिन्दू उत्तराधिकार विधेयक की धाराओं पर विचार के बीच बोलते हुए

माता और पिता उत्तराधिकारियों की पहली श्रेणी में रखे जायँ

श्री उपाध्यक्ष जी ! अभी जो दलीलें इस सम्बन्ध में दी गई हैं, उनको सुनकर, और पहले भी जो कुछ बातें कही गई, उनका ध्यान कर मैंने उचित समझा कि मैं अपना मत निवेदन कर दूं। आज मैं इसलिये भी खड़ा हो गया हूँ कि सम्भव है कि जिस दिन शेड्यूल (अनुसूची) पर विचार हो, उस दिन मैं इस भवन में न रह सकूं। इस कारण से मैं अभी अपना मत प्रकट कर देना चाहता हूं।

हमारे इधर एक भाई ने इस बात पर आपत्ति उठाई कि माता और पिता की चर्चा शेड्यूल की पहली श्रेणी के उत्तराधिकारियों में नहीं आनी चाहिये। मैं उन लोगों से सहमत हूं जिनका मत है कि माता और पिता को इसमें रखा जाय। मैं इसके पक्ष में हूं। जो प्रवर समिति बनी थी, उसने माता का भाग रखा भी था, परन्तु राज्य सभा में वह हटा दिया गया। मैं तो इसका कोई कारण नहीं देखता। आप कर्तव्य की चर्चा करते हैं क्या पुत्र का कर्तव्य माता-पिता की ओर अपने लड़के की अपेक्षा कम है? अवश्य, लड़के के प्रति पिता का कर्तव्य हैं ही, परन्तु हमारे समाज में कभी कभी यह होता है—कम होता है, बहुत नहीं होता है—कि बूढ़े माता-पिता रह जाते हैं। तो मेरा यह निवेदन है कि माता को भी रखना चाहिये और पिता को भी रखना चाहिये। प्रवर समिति के निर्णय में माता को रखा गया था और पिता को छोड़ दिया गया था। हमारे यहां प्राचीन वाक्य है—मातृदेवो भव और उसके बाद आता है—पितृदेवो भव। यह तैत्तिरीय उपनिषद् का वाक्य है। स्मृति में माता को पहला स्थान दिया गया है। माता को देवता के समान माना गया है। कहा गया है कि देवता के समान माता का पूजन करो। माता का ऊंचा स्थान माना गया है पिता की अपेक्षा। यह स्पष्ट है। माता का रखना ठीक ही था, परन्तु पिता को भी इस श्रेणी में स्थान मिले, ऐसा मेरा कहना है।

अविवाहिता कन्याओं को हिस्सा मिले

मैं इस प्रस्ताव से भी सहमत हूं, जो अभी मेरे भाई ने रखा, कि इसमें जहां लड़की की चर्चा है, वहां "अविवाहिता" शब्द जोड़ दिया जाय—'अन-

मैरिड' शब्द जोड़ दिया जाय। मैं इसको बिल्कुल उचित समझता हूं। यह मै पहले भी निवेदन कर चुका हूं। इधर से हमारे एक भाई ने कहा कि यदि विवाहिता लड़की को आप अपने कुटुम्ब में से देते हैं, तो यह भी तो सम्भव है कि जो वहू आपके घर में आये वह दूसरे कुटुम्ब से ले आये। यह दलील दी गयी कि आर्थिक दृष्टि से कुटुम्ब में बराबरी हो जायगी। यह क्या दलील है? मेरे सामने पैसा आने जाने का प्रश्न नहीं है। लड़की को आदमी प्रेम से पैसा देगा। यहां पैसे का प्रश्न नहीं है, प्रश्न है कुटुम्ब के विच्छेदन का। यह कौन सी दलील है कि अगर हमारे कुटुम्ब का पैसा जायगा तो दूसरे कुटुम्ब का पैसा हमारे यहां आ जायगा। बात यह है कि जहां से यह पैसा आयेगा वहां विघटन होगा और हमारे कुटुम्ब से जाने में भी विघटन होगा। लड़की तो प्रेम की वस्तु है, विवाहिता हो या अविवाहिता। मैं तो एक क्रम की बात कर रहा हूं। विवाहिता पुत्री जब दूसरे के घर में जाती है, तब यह एक स्पष्ट सत्य है, वह अपने पति के साथ अकेले रहे, ऐसी बात नहीं होती। कुछ आधुनिक क्रम की लड़कियां ऐसी हैं जिनके विषय में यह पुराना क्रम लागू नहीं होता; नहीं तो साधारणतया इस देश में जो लड़की विवाहित होकर जाती है वह पति के कुटुम्ब का अंग होती है और वहां बहुत वर्षों तक, जब तक उसकी उम्र बहुत नहीं हो जाती, उसे बहुत दबाव में रहना पड़ता है, पति के दबाव में, सास ससुर के दबाव में। अगर ऐसी लड़की को पिता की सम्पत्ति में अधिकार होगा तो उसके कारण पिता के कुटुम्ब में विच्छेद होगा। इससे दूसरे कुटुम्ब को अवसर मिलता है कि वह लड़की के पिता के कुटुम्ब में आकर हस्तक्षेप करे। यह उस प्रश्न का व्यावहारिक पहलू है। यहां कई दफ़ा यह दलील दुहरायी गयी है कि ऐसा करने से देहातों में भूमिखंडों के बटवारे में कठिनाई पड़ेगी, घरों में कठिनाई पड़ेगी; अगर लड़की के पिता और भाई व्यापार कर रहे हैं तो उसमें कठिनाई पड़ेगी। उस व्यापार में लड़की के घरवाले लड़की के नाम पर आकर हस्तक्षेप करेंगे, हिस्सा मांगेंगे। यह केवल पैसे के आने जाने का प्रश्न नहीं है। प्रश्न यह है कि जिस कुटुम्ब से पैसा जायगा वहां विच्छेद होगा। यह कोई उचित बात नहीं है कि हमारी बहू भी दूसरे घर से पैसा ले आयेगी। प्रश्न यह है कि इस क्रम के कारण कुटुम्बों में वैमनस्य उत्पन्न होगा। यह क्रम विच्छिन्न करता है। इसलिये यह कहा जाता है कि विवाहिता लड़की को अधिकार न दीजिये। अविवाहिता को अधिकार दिया जाय, इसलिये कि जो कुछ उसको मिलेगा उसके द्वारा उसका विवाह किया जा सकेगा और भरणपोषण होगा। अगर ऐसी जायदाद हो जो रुपये पैसे के रूप में हो या साथ जा सके तो उसको लड़की ले जा सकती है। लेकिन जो जायदाद खिसकाई नहीं जा सकती, उसके बटवारे को मैं उचित नहीं मानता।

शिक्षित बहनों पर आक्षेप नहीं

कुछ अजीब तरह की बातें कही गयीं। इधर से दो एक बहिनों ने कहा कि जो अधिक उम्र के लोग भाषण देते हैं उनका दृष्टिकोण समाज सुधार का नहीं है, वे समाज सुधार के विरोधी से हैं। मुझको तो यह सुनकर आश्चर्य हुआ। मैंने कुछ कनाट प्लेस की तितलियों की चर्चा की थी। हमारे भाई मोरे ने इसका यह अर्थ निकाला मानो मैं शिक्षित स्त्रियों का अनादर कर रहा हूं। मुझे लगा कि क्या बुद्धि की बात है कि जिनकी उम्र बीती इस बात में कि देश आगे बढ़े, समाज आगे बढ़े, स्त्री शिक्षा आगे बढ़े, उनके विषय में यह कहा जाय। मेरी उम्र का कुछ अंश बीता है इस बात में कि मैं उन लोगों का विरोध करूं जो स्त्री शिक्षा के विरोधी रहे हैं। बहुत बार मुझको ऐसे लोगों से लड़ना पड़ा है। एक कालिज के बनाने में जो केवल लड़कियों के लिये है, मेरा हाथ रहा है और इस समय मैं उसका अध्यक्ष हूं। जब मैं जवान था उस समय से मैंने उस संस्था के बनाने में हाथ दिया था। शिक्षित बहनों का तो मैं आदर स्वभावतः करता हूं। मेरी कई पुत्र-वधुएं साधारण नहीं ऊंचे दर्जे की शिक्षिता हैं। परन्तु जो मैंने "तितलियों" का शब्द इस्तैमाल किया तो मेरा तात्पर्य उन स्त्रियों से था जो जीवन पर गम्भीरता से विचार नहीं करतीं, जिनके जीवन में भोग विलास मुख्य स्थान रखता है और जो अपने श्रृंगार को अधिक महत्व देती हैं। मेरा अनुभव है कि जो ऊंचे दर्जे की शिक्षित स्त्रियां हैं वे प्रायः इस तरह की हलकी बातों में नहीं पड़तीं, उनका राजनीतिक विचार चाहे कोई भी हो। चाहे वे समाजवादी हों, चाहे कम्यूनिस्ट हों, पर वे हलकी बातों में नहीं पड़तीं। हमारी जो हलकी तरह की स्त्रियां हैं मेरा तात्पर्य उनसे था। मेरा आक्षेप शिक्षिता बहनों पर तो हो ही नहीं सकता।

मैं यह निवेदन कर रहा था कि अभी कुछ लोगों ने इस तरह की बातें कहीं कि जो लोग उनसे भिन्न मत रखते हैं वे मानों समाज सुधार के विरोधी हैं। यह नितान्त अशुद्ध धारणा है। मैं कुछ समय पहले कन्नड़ देश में गया था, वहां मैंने अपने कुछ भाइयों से एक कहावत सुनी थी जो मुझे अच्छी लगी। वह कहावत कन्नड़ भाषा में इस प्रकार है—

आरु हड़े दवळु मुन्दे ओन्दु हड़े दवळु हेळिदळु

इसका भावार्थ यह है कि वह स्त्री जिसके अभी एक बच्चा हुआ है उस स्त्री को प्रसव की पीड़ा के बारे में व्याख्यान दे रही है जिसके ६ बच्चे हो चुके हैं। आज ६ बच्चे वाली स्त्री को एक बच्चा पैदा करने वाली स्त्री व्याख्यान देती है प्रसव पीड़ा पर। जिन लोगों की उम्र बीती देश को आगे करने में, आज उनको हमारे वे लोग व्याख्यान देने आये हैं जिन्होंने इस दिशा में कुछ

थोड़ा बहुत काम किया है और जो उस सीढ़ी पर अभी चढ़े ही हैं। ये दलीलें छोटी दलीलें हैं। इसका यह अर्थ नहीं है कि जो पुराने लोग हैं या जिन्होंने देश के लिये काम किया है जो वह कहें उसको आप मान लीजिये।

कुटुम्ब विच्छेद न करें

मैं तो कहता हूं कि जो कुछ वह कहते हैं उस पर आप विचार कीजिए। मैंने यह बार बार कहा है कि मैं पुराने शास्त्रों के ऊपर अपनी बात नहीं कह रहा हूं। हमारी बहन श्रीमती रेणु चक्रवर्ती ने उस दिन कहा कि मैं मिताक्षरा में धर्म का बहुत विशेष गुण देखता हूं। वे कुछ भूल गयीं। मेरा भाषण तो उनके सामने है। जहां तक मुझे याद है मैंने मिताक्षरा की चर्चा भी नहीं की थी। मिताक्षरा, दायभाग या दक्षिणी क्रम इनसे मेरा प्रयोजन नहीं। मेरे सामने प्रश्न दायभाग और मिताक्षरा का नहीं था। मेरा तो कहना है कि ऐसा न कीजिये जिससे कुटुम्ब में विच्छेद हो, झगड़ा हो। मैं तो समाज में झगड़े को बचाना चाहता हूं। मेरे विचार में लड़कियों को इस प्रकार पिता की सम्पत्ति में अधिकार देना स्त्रियों का आदर करने का रास्ता नहीं है। मैं इसका पक्षपाती हूं कि आप अकेली विधवा पत्नी को सम्पत्ति पर अधिकार दीजिए, चाहे लड़कों को हटा दीजिए। हम इसको स्वीकार करेंगे कि विधवा को आप आधा दीजिए और आधे में आप संतान को रखिये। माता पिता को कम दीजिये, यह मुझे स्वीकार है। मैं माता पिता दोनों को रखने के पक्ष में हूं, अगर आप अकेले माता को ही रक्खें तब भी मैं उसे अच्छा समझूंगा। इसमें कोई स्त्री और पुरुष की होड़ नहीं है, प्रश्न यह है कि समाज का क्रम कैसे बंधे। प्रस्तावित क्रम के द्वारा आप एक नई बात यह करने जा रहे हैं कि एक दूसरे कुटुम्ब को एक चलते हुए कुटम्ब में हस्तक्षेप करने का अवसर दे रहे हैं। मैं पूछना चाहता हूं कि यह कौन सी बुद्धिमानी की बात आप करने जा रहे हैं। मुझको तो यह दिखाई पड़ता है कि कुछ थोड़े से पुरुषों और स्त्रियों के दिल में एक इतने पुराने जमे हुए समाज की उन्नति के नाम पर उसको नष्ट करने की बात घर कर गई है और ऐसा करते समय उनके दिल में यह भाव रहता है कि इस तरह वह समाज की अधिक दूरदर्शी उन्नति करने वाले हैं परन्तु मुझे तो इसमें कोई युक्ति अथवा बुद्धि की बात दिखलाई नहीं देती। मेरा तो यह दावा है, जैसा कि मैंने पहले भी कहा था, कि अगर आपको साहस हो तो किसी प्रकार से इसके विषय में राय ले लीजिये। इसके लिये हमारे पाटस्कर साहब ने, मेरे उस सुझाव के बारे में जो मैंने किया था कि आप इसके बारे में बूढ़ी औरतों से सलाह लीजिये, यह दलील दी कि जब सती की प्रथा इस देश से हटाई गई थी तो उस समय अगर स्त्रियों से पूछा जाता तो वे कभी स्वीकार नहीं करतीं कि सती की प्रथा को हटा दिया जाय। मैं पाटस्कर साहब से

पूछना चाहता हूं कि यह आपने कैसे जाना। मैं तो समझता हूं कि स्त्रियों से सती प्रथा की बाबत अगर उस समय पूछा जाता तो वे भी यही कहतीं कि स्त्रियों को पुरुषों के शव के साथ जलना उचित नहीं है। याद रखिये कि जिस समय सती प्रथा बंद की गई थी उस समय और उसके बहुत पहले से ही शव के साथ विधवा स्त्री नहीं जलाई जाती थी। कभी विरली कोई एक सती हो जाती थी लेकिन ऐसा तो नहीं था कि सती रास्ते में मारी मारी फिरती थीं। इतिहास आपके सामने है कि जिस समय वह सती का कानून बना उसके १००-२०० वर्ष पहले से साधारणतया स्त्रियां सती प्रथा को पसन्द नहीं करती थीं। मैं पाटस्कर जी से पूछना चाहता हूं कि क्या उनको पता है कि कितनी स्त्रियां कितनी विधवायें अपने पति के शव के साथ जल गईं? उस समय भी सती प्रथा का साधारण रीति से प्रचलन नहीं था। हां! किसी का सती हो जाना असम्भव नहीं था और कभी कभी कोई विशेष भावना युक्त देवी सती हो जाती थीं। अब भी नगरों में और बड़े बड़े शहरों में सती के चौरे प्रसिद्ध हैं। अब भी कई वर्षों में सती का कोई दृश्य सामने आ जाता है। उसको कानून से बंद कर दिया तो आपने कहा कि हमने एक बड़ी भारी कुप्रथा जो समाज के अन्दर विद्यमान थी, उसको मिटा दिया लेकिन जैसा मैंने अभी बतलाया वह बुराई बहुत कुछ पहले ही बन्द हो चुकी थी। साधारण रीति से लोग अपने यहां की स्त्रियों को जलाने के विरुद्ध थे और इसको पसन्द नहीं करते थे और न स्त्रियां ही पसन्द करती थीं। कभी कोई स्त्री अपवाद हो जाया करती थी जो धर्म और प्रेम के उन्मादवश पति के शव के साथ सती हो जाती थी। मुझे तो श्री पाटस्कर जी के मुख से सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि यदि स्त्रियों के ऊपर इस सवाल को छोड़ दिया जाता तो वे सती प्रथा के बंद किये जाने का विरोध करतीं। मेरा कहना यह है कि आपका ऐसी कल्पना करना बिल्कुल अशुद्ध है। मैं ऐसा मानता हूं कि हमारे यहां की स्त्रियों को बुद्धि है और वे साधारण रीति से ठीक काम करती हैं।

मूढ़ग्राह हटाइए, स्वतंत्र विचार कीजिए

आप अगर स्त्रियों के सामने पर्दे का सवाल रखिये तो वे कहेंगी कि स्त्रियों के लिये पर्दा हटना चाहिये। आज कुछ स्त्रियों में पर्दे की प्रथा विद्यमान है लेकिन मैं समझता हूं कि बड़ी संख्या आपको ऐसी स्त्रियों की मिलेगी जो यह कहेंगी कि पर्दा नहीं रखना चाहिए। आप ऐसा क्यों मान लेते हैं कि स्त्रियां बुद्धि के विरुद्ध बात कहेंगी। जहां तक मूढ़ग्राह अथवा अन्ध प्रचलन की बात है तो वह अकेले हमारे देश में ही नहीं बल्कि संसार के अन्य देशों में और पश्चिमी देशों में भी मिलता है। लोग नाना प्रकार के मूढ़ग्राहों से बंधे हुए हैं, बहुत से ऐसे बुद्धि रहित क्रम हैं जिनके अंदर वे जकड़े हुए हैं। मूढ़-

ग्राह को अंग्रेजी में **सुपरस्टिशन** कहते हैं। वह पश्चिमी देशों में भी है। कुछ ऐसे चलन और क्रम होते हैं जो आज की परिस्थितियों में व्यर्थ हैं लेकिन वे चले आते हैं। हमारे पाटस्कर जी को शायद मालूम होगा कि ब्रिटिश **हाउस आफ कामन्स** में आज भी यह प्रथा है कि जब नयी लोक सभा इकट्ठी होती है तब **स्पीकर** पहले पहल नियुक्त होकर भवन के नीचे के भाग में जाता है उसके साथ लालटेन जाती है जो आज बिलकुल आवश्यक नहीं है। यह उस समय की चाल है और उस समय का रास्ता है जब गाई फाक्स ने **गन पाउडर प्लाट** से **हाउस आफ कामन्स** को उड़ा देने का प्रयत्न किया था और वह पकड़ा गया था। उसके बाद यह होने लगा कि **हाउस आफ कामन्स** की बैठक होने पर **स्पीकर** स्वयं नीचे जाकर देखता था और चूंकि उस समय (सेलर्स) नीचे के भाग में अंधेरा रहता था इसलिये साथ में उसके लालटेन चलती थी जो अब आवश्यक नहीं है, परन्तु उस पुराने क्रम को वह आज तक निबाहते चले जा रहे हैं। इसी तरह हम देखते हैं कि आज के दिन भी **स्पीकर** के सामने वह **मेस** (गदा) रक्खा जाता है, जो पुराने समय का अवशेष चला आ रहा है। संसार में अन्यत्र भी हम देखते हैं कुछ पुराने रास्तों पर लोग जकड़े रहते हैं और उन पर चलते रहते हैं। वही बात हिन्दुओं में भी पाई जाती है परन्तु यदि कहीं उनके सामने एक बौद्धिक प्रश्न आयेगा तो आप ऐसा क्यों समझते हैं कि सारी स्त्रियां और पुरुष ग़लत रास्ते पर चलने के लिये अपनी राय देंगे? इस तरह की दलील देकर आप यह स्वीकार करते हैं कि आप जो काम कर रहे हैं वह जन मत के विरुद्ध है परन्तु चूंकि आप उस रास्ते को ठीक समझते हैं इसलिये आप उनको सुधारने की बात कर रहे हैं। प्रजातंत्र में यह रास्ता सुधारने का होता भी नहीं है, आप उनसे सलाह लीजिये और अगर आपका यह विश्वास है कि स्त्री और पुरुष सब आपकी यह बात मानेंगे कि लड़की को अधिकार दिया जाय तो उनकी राय लेने के बाद आप ईमानदारी से इसको ला सकते हैं लेकिन आपको तो इसमें संदेह है कि स्त्री और पुरुष अगर आप उनके सामने इस बात को लेकर जायेंगे तो वह इसको नहीं मानेंगे। ऐसी अवस्था में इस तरह का कानून बना कर प्रजातन्त्र के सिद्धान्त के प्रतिकूल आप अन्याय कर रहे हैं।

मुझे विशेष नहीं कहना है। इस विषय में मेरी वाणी में जितना बल है उसके द्वारा मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि लड़की को हिस्सा न देकर स्त्री को हिस्सा दीजिये, माता को हिस्सा दीजिये। लड़की को उस सम्पत्ति में हिस्सा दिलवा कर आप विघटन कर रहे हैं और ऐसा करके आप देश में एक अशुद्ध मार्ग स्थापित कर रहे हैं। यह कोई उन्नति का मार्ग नहीं है। आपका जो रास्ता है वह आगे बढ़ने का नहीं है, यह समाज के विघटन करने का रास्ता है। मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि इस विषय पर पूर्ण स्वतं-

न्त्रता से विचार करने की आवश्यकता है। मैं अपनी बहनों और भाइयों से यह कहना चाहता हूं कि वह इस विषय में किसी के पिछलग्गू होकर न दौड़ें।

स्वतन्त्र विचार कीजिये। स्त्री के मान अपमान का प्रश्न सामने अवश्य रखिये। जहां तक स्त्री के मान अपमान का प्रश्न है, उसके मान को हमें ऊंचा उठाना है, परन्तु समाज को भी ठीक रखना है। समाज को स्थायी रूप देना है। इस प्रकार से इस प्रश्न को देखिये। इसमें केवल हिस्सा देने का ही सवाल नहीं आता है अन्य प्रश्न आते हैं। मुख्य प्रश्न आता है एक कुटुम्ब के दूसरे कुटुम्ब में हस्तक्षेप करने का : इस दृष्टि से जो अभी कहा गया कि 'पुत्री' शब्द के पहले इसमें 'अविवाहिता' (unmarried) शब्द रख दिया जाय, उसका मैं समर्थन करता हूं।

४३

हिन्दू उत्तराधिकार विधेयक का विरोध

८ मई १९५६ को भारतीय लोक सभा में हिन्दू उत्तराधिकार विधेयक के पारण के प्रस्ताव पर बोलते हुए

अशुद्ध बात स्वीकार्य नहीं हो सकती

अध्यक्ष महोदय! इस विधेयक के सम्बन्ध में पहले भी मैंने अपने कुछ विचार निवेदन किये हैं। अब इसके ऊपर अन्तिम बात कहनी है। जिस रूप में यह अब स्वीकार हुआ है मुझे वह ठीक नहीं लगता। मैं न श्री पाटस्करजी को बधाई दे सकता हूँ और न उनका साथ दे सकता हूँ। जिस रूप में यह बिल है उसका विरोध करता हूँ। मुझको यह काम बहुत अशुद्ध लगता है। अशुद्ध बात कहीं से आये, किसी अपने सहयोगी की ओर से आये, अपने दल की ओर से आये, तो भी वह स्वीकार्य नहीं हो सकती। मैंने पहले भी अपने भाइयों से कहा था कि कुछ स्वतंत्र रूप से इस विधेयक पर विचार करने की आवश्यकता है।

उन्नति की सीढ़ी कैसे?

कुछ बहनों, विशेषकर हमारी बहन श्रीमती रेणु चक्रवर्ती जी, ने इसके सम्बन्ध में कहा है कि यह आगे बढ़ने की, उन्नति की, एक सीढ़ी है। मैं नहीं जानता कि कैसे यह उन्नति की सीढ़ी उनको दिखलाई पड़ी। हमारी देवियां चर्चा करती हैं औरतों और पुरुषों की बराबरी की। उनको यह अच्छा लगा कि इसमें कोई बराबरी की निशानी आई। क्या बराबरी की निशानी आई? उन्होंने नहीं देखा कि हमारे समाज में बराबरी की निशानी पहले से क्या है, स्त्रियों का क्या क्या अधिकार है। जिस बराबरी के अधिकार की उन्होंने पश्चिम से कुछ चर्चा सीखी उसमें जनमत में वोट देने का अधिकार है। उस अधिकार के लिये पश्चिम में स्त्रियों को कितना लड़ना पड़ा है? और आज भी मुझको सन्देह है कि किसी किसी देश में यह अधिकार नहीं है।

पंडित ठाकुरदास भार्गव : स्विटजरलैंड में भी नहीं है।

श्री टंडन : क्या किसी ने भी उसका विरोध यहाँ पर किया? जब हमारे देश में उसकी पहले पहल चर्चा हुई, किसी के कान पर जूँ नहीं रेंगी, सब पुरुषों ने उसको एक स्वर से स्वीकार किया। पुरुष और स्त्री के अन्तर की जितनी चेतना आज कुछ विशेष स्त्रियों में है, हर समय एक एक बात में यह कहना

कि पुरुष और स्त्री बराबर बराबर हैं, यह चेतना हमारे यहां नहीं रही है परन्तु हमारे यहां स्त्रियों का सम्मान बहुत ऊँचे स्तर पर आधारित रहा है।

श्रीमती बहिन जी ने कहा कि मैं भी अपने देश की जो प्राचीन मर्यादा है, जो प्राचीन क्रम है, उसको मानने वाली हूँ। परन्तु इस बात को स्वीकार करते हुए भी उन्होंने यह बड़ी आवश्यक बात मानी कि लड़की को मृत पिता की जायदाद में अधिकार हो। इसको उन्होंने एक आगे की सीढ़ी बतलाई। क्या वह सब अधिकार इससे ऊंची सीढ़ी नहीं है जो हमने स्त्रियों के लिये अपने तंत्र में माना है? क्या कभी आपने देखा कि हमारे यहां उनको तंत्र में क्या अधिकार है? वे कितने ऊंचे से ऊंचे पद लेती हैं, कितने प्रेम के साथ हम उनको बराबरी में रखते हैं। लड़कियों का जो प्रश्न है, उसके सम्बन्ध में लड़की को पिता की जायदाद में क्या मिलता है, इसको कुंजी या कसौटी बता देना इस बात की कि स्त्रियों का क्या आदर है, क्या अनादर है, यह मुझको उचित नहीं लगता।

विधवा पत्नी की उपेक्षा

यह एक छोटी सी बात थी। उसका जो विरोध हुआ उसमें कोई आदर और अनादर का प्रश्न नहीं, फिर आपने उसमें जीता क्या? विधवा पत्नी भी तो स्त्री थी। उसकी जायदाद में से छीन कर एक हिस्सा लड़की को दिया। विधवा पत्नी को सब से अधिक रक्षा की आवश्यकता होती है। पति के मरने के पश्चात् पहली आवश्यकता होती है विधवा पत्नी की। आज हिन्दुओं में सब बिरादरियों में यह क्रम है कि जो नारी विधवा हो जाती है उसके चरणों पर कुछ भेंट रक्खी जाती है, इसीलिये कि सब को उसकी रक्षा का ध्यान रहता है। हिन्दू मात्र के यहां यह प्रथा है। उद्देश्य इसका यही होता है कि विधवा के पास कुछ धन इकट्ठा हो जाय। पति की जायदाद में जितना उसका अंश था वह रखने के योग्य था, बल्कि और बढ़ाने के योग्य था। मैंने पहले भी निवेदन किया था कि आप उसको अधिकार दीजिये, रक्षा की आवश्यकता लड़की को नहीं है, स्त्रियों में से अधिक आवश्यकता विधवा को होती है। मैं पूछता हूं कि आपने उस विधवा की क्या रक्षा की? विधवा को जितना भाग अपने पति की सम्पत्ति में मिलना था उसको भी आपने घटा दिया। वह बहुत घट गया, फिर उसमें से कुछ आपने लड़की को दे दिया।

कुटुम्बों का विच्छेद

मैं इस बात को स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि जो विरोध है वह इस बारे में है कि इस प्रकार से कुटुम्ब का विच्छेदन होगा। एक कुटुम्ब का अधिकार दूसरे कुटुम्ब में आकर ठहरता है। लड़कियां प्यार की वस्तु हैं। परन्तु साथ ही साथ यह भी है कि जब उनकी शादी हो जाती है तो कभी कभी दो दो तीन

तीन और चार चार वर्ष तक भेंट नहीं होती है, अपने माइके नहीं आ सकती हैं, यह एक साधारण सी बात है। शादी हो जाने के बाद वे उस कुटुम्ब का अंग नहीं रह जाती हैं।

मैंने पहले भी कहा था कि इस विधि का परिणाम यह होगा कि गांव गांव में तथा छोटी से छोटी ज़मीन के लिए झगड़े बढ़ेंगे और जिन कुटुम्बों में व्यापार चलता है उन कुटुम्बों में भी कठिनाइयां उत्पन्न हो जायँगी। इन सब बातों को देखकर मेरे ऊपर यह असर होता है कि स्त्रियों का जो मान है इससे न तो उसमें वृद्धि होती है और न जो उनके अधिकार हैं उनमें कोई वृद्धि होती है और न ही उनकी आत्मनिर्भरता की चेतना में कोई अन्तर पड़ता है। जो आपने माता को ऊंचा दर्जा दे दिया है, इसका मैं स्वागत करता हूँ और यह बात मुझे बहुत अच्छी लगी है। परन्तु विधवा स्त्री के अधिकारों में कमी कर लड़कियों को अधिकार दिया गया इसमें स्त्रियों को कोई जीत प्राप्त हुई है, यह मैं नहीं मानता हूं। लड़की को देना लेना आज भी होता है और आगे भी होता रहेगा। परन्तु दूसरे कुटुम्ब का हस्तक्षेप जहां पर कि लड़की की शादी हुई है यह मुझे अच्छा नहीं लगता है। इस वास्ते मैं इस बिल का स्वागत नहीं करता हूं। जैसा मैंने पहले कहा, मुझ पर इसका कोई अच्छा असर नहीं हुआ है। मैं नहीं समझता कि श्री पाटसकर जी ने हमारे समाज के लिए कोई अच्छा काम किया है और इस वास्ते मैं मंत्री महोदय को तनिक भी बधाई नहीं देता हूँ। इसके विपरीत मेरी यह निश्चित धारणा है कि उन्होंने एक ऐसा काम किया है जिससे हमारे समाज को हानि होने वाली है, समाज की अवनति होने वाली है। इस कारण मैं इस बिल का निश्चित रीति पर तथा बलपूर्वक विरोध करता हूँ।

गुजरात-महाराष्ट्र का एक राज्य

२ अगस्त १९५६ को महाराष्ट्र से वम्बई को पृथक् कर महाराष्ट्र प्रदेश वनाने के सम्वन्ध में श्री गाडगील की अपील पर वोलते हुए

श्री गाडगील से निवेदन

श्री टंडन (जिला इलाहाबाद पश्चिम) : उपाध्यक्ष महोदय ! मुझे थोड़े से शव्दों में अपने पुराने प्रकट किये हुए विचार फिर उपस्थित करने हैं।

अभी गाडगील जी ने जो अपील की उसने मेरे हृदय को छुआ। श्री गाडगील जी हमारे देश के एक पुराने मान्य जन सेवक हैं तथा मेरे वैयक्तिक मित्र हैं। इसलिए उनकी अपील का प्रभाव मेरे हृदय पर पड़ना ही था। यह वहुत ही स्पष्ट है कि उनके हृदय के ऊपर वम्वई को महाराष्ट्र से अलग रखने का गहरा प्रभाव पड़ा है। साथ ही उनके भाषण से मुझे यह पता लगा है कि उन्होंने श्री अशोक मेहता जी के भाषण की भी सराहना की है और उसको भी सामने रखा है। श्री अशोक मेहता जी का यह कहना था कि एक वड़ा राज्य बनाया जाय जिसमें गुजरात,सौराष्ट्र, कच्छ और आज जो महाराष्ट्र प्रदेश वनने को है वे मिल जायँ और उसमें वम्वई भी शामिल कर लिया जाय। यह प्रस्ताव मैंने भी पहले इस सदन के सामने रखा था। मैंने तो उस समय यहां तक कहा था कि अगर सन्देह हो इस वात का कि इसमें गुजराती और महाराष्ट्रीय तत्वों को समानता नहीं मिलती तो कुछ भाग मालवा का भी इसमें जोड़ दिया जाय। उस समय से अव हम वहुत आगे इस विषय में आ गये हैं। जो अधिनियम आज हमारे सामने उपस्थित है, उसको देखते हुए मैं मालवा के अंश मिलाने की वात को सामने नहीं रख रहा हूँ। परन्तु जो विषम अवस्था देश में उपस्थित है उसमें मुझको यह अवश्य जान पड़ता है कि जो वात श्री अशोक मेहता जी ने कही उसमें वल है। मुझको यह वताया गया है कि श्री देशमुख ने भी यह स्वीकार किया है, अपने उस भाषण में जो उन्होंने इस सदन में दिया है, कि गुजरातीभाषियों और मराठीभाषियों का एक ही राज्य वनाये जाने में उन्हें कोई आपत्ति नहीं है और वह इसके पक्षपाती हैं। जव महाराष्ट्र के एक उच्च प्रतिनिधि इस वात को स्वीकार करते हैं तो मैं यह आशा कर सकता हूं कि गाडगील जी भी और अधिक विचार करके इसके पक्ष में हो जायँगे। मैं भी ऐसे ही प्रदेश के वनाये जाने के पक्ष में हूं और उसी का समर्थन करने वाला हूं। मैं चाहता हूं कि गवर्नमेंट, मराठीभाषी तथा गुजराती-

भाषी अपने अपने आग्रह को थोड़ा कम करें और तीनों ही कुछ और अधिक निकट आयें।

मान अपमान का प्रश्न न बनायें

गाडगील जी ने कहा कि अभी बम्बई को महाराष्ट्र के साथ मिला दो और फिर जब हम साथ रहने लगेंगे तब इस प्रश्न पर विचार हो सकता है। उनका कहना है कि इस समय गहरी चोट मराठीभाषियों को लगी है और उनका मान यह सहन नहीं कर सकता कि बम्बई को महाराष्ट्र से अलग रहने दिया जाय। उन्होंने मान और अपमान का प्रश्न सामने रखा है और उनको इसमें अपमान दिखाई पड़ा है। जो विचारवान पुरुष होते हैं वे जब अपने मान अपमान को देखते हैं तो उनको इस पर भी विचार करना होता है कि मान अपमान का प्रश्न दूसरों के हृदय में भी उठ सकता है। अपने मान अपमान का तो ध्यान उनको रहा परन्तु थोड़ा सोचने पर उनको तथा आपको पता लग जायगा कि हमारे प्रधानमंत्री और गवर्नमेंट के सामने भी यह मान और अपमान का प्रश्न आ सकता है और आ जाता है। प्रधानमंत्री जी ने महाराष्ट्र के सम्बन्ध में बहुत सहानुभूतिपूर्वक अपने विचार प्रकट किये हैं। परन्तु साथ ही साथ उन्होंने यह भी दुहराया है कि यह प्रश्न कि बम्बई को महाराष्ट्र में तुरन्त मिलाया जाय, उठाया नहीं जा सकता। गवर्नमेंट भी इतने दिनों से उस विचार को मथ रही है और उसने समुद्र मंथन से औषधि निकाली है। उस औषधि को हमारे महाराष्ट्रीय भाई विष मानते हैं। समुद्र मंथन में जहां औषधि निकलती है वहां विष भी निकला करता है। इस मंथन में बहुत विष उत्पन्न हुआ है। यह हम देख सकते हैं। बहुत ही गहरा धक्का हमारे देश की एकता को लगा है। इस वास्ते मैं गाडगील जी से यह निवेदन करना चाहता हूं कि वह इस प्रकार के मान अपमान का प्रश्न न उठायें। मैं गवर्नमेंट से भी यह कहना चाहता हूं कि वह भी अपने मान अपमान का प्रश्न न उठायें और उसको अलग रख दें। प्रधान मंत्री जी ने कई बार कहा है कि बम्बई के भविष्य का फैसला संसद को ही करना है। जब उन्होंने यह बात कह दी है तो मेरा उनसे तथा उनके सहयोगियों से यह कहना है कि आप इस प्रश्न को अपने मान अपमान का प्रश्न बिल्कुल न बनायें। आप कोई चेतक न निकालें।

इस प्रश्न के फ़ैसला करने की बात को आप हर एक मेम्बर पर छोड़ दीजिये, और उनसे कह दीजिये कि हमें बताओ आपका क्या मत है और यह भी आप कह दीजिये कि वे ईमानदारी से अपनी राय दें। लेकिन अगर आपका चेतक उनके ऊपर लगा रहता है तब तो उनका मत आपको मिलेगा नहीं और जो प्रधान मंत्री जी का मत है वही मत वे दुहरा देंगे। मैं चाहता हूं कि आप

आज मान अपमान के प्रश्न को छोड़ दीजिये। जब आपने यह कह दिया है कि इस प्रश्न को आप पार्लियामेंट के ऊपर छोड़ते हैं तो सचमुच पार्लियामेंट के ऊपर ही छोड़ दीजिये और हर एक सदस्य को अवसर दीजिये कि वह अपना मत प्रकट करे। इसी तरह से मेरा गाडगील जी से कहना है कि आप इसको मान अपमान का प्रश्न न बनायें।

हमारे भाई श्री तुलसीदास कीलाचन्द जी ने कहा है कि उन्होंने बहुत से सदस्यों से बात की है और उनको ऐसा लगता है कि अधिक सदस्यगण इसके पक्ष में हैं कि गुजरातियों और महाराष्ट्रियों का मिला जुला एक बड़ा राज्य बने। यदि यह बात सही है तो गवर्नमेंट का यह कर्त्तव्य है कि वह माननीय सदस्यों को अपना अपना मत प्रकट करने का अवसर दे और यदि पार्लियामेंट के अधिक सदस्य इस बात को चाहते हैं तब तुरन्त ही आवश्यक परिवर्तन इस बिल में कर दे। मेरा विश्वास है कि वह सच्चा न्याय होगा और जो झगड़े उत्पन्न हो गये हैं उनको समाप्त कर यह मराठी और गुजराती भाइयों को प्रेम के बन्धन में बांधने वाला काम बन जायगा।

गुजराती और महाराष्ट्रीय मिलकर रहें

इसीलिए श्री अशोक मेहता ने जो सुझाव दिया है मैं उसका समर्थन करता हूं। मैं गवर्नमेंट से भी और गाडगील जी से तथा गाडगील जी का नाम लेकर अन्य महाराष्ट्रीय भाइयों से भी यह निवेदन करना चाहता हूं कि अब इसमें अधिक आग्रह न बढ़े। सबका मान इसमें रख लिया जाता है और आगे के लिए प्रेम की नींव पड़ती है। हम लोगों को यह बात अपने सामने रखनी चाहिए कि अगर आज बम्बई को महाराष्ट्र से अलग करने पर कड़आपन उत्पन्न होता है, तो महाराष्ट्र में बम्बई को मिला कर भी कड़आपन उत्पन्न होता है—दोनों तरह से कड़आपन उत्पन्न होता है। इस विवाद को तय करने का रास्ता यह है कि उन सब क्षेत्रों को मिला दिया जाय और उस नये राज्य की राजधानी बम्बई हो। तब वह पुराने प्रेम का रिश्ता, जिसकी चर्चा गाडगील जी ने बड़े प्रेम के शब्दों में की है, फिर से स्थापित हो जायगा। मैंने गाडगील जी का पूरा विश्वास किया जब उन्होंने कहा कि मैं तो अपने को बिल्कुल अयोग्य मान लूंगा अगर मेरे हृदय में गुजरातियों के प्रति घृणा होगी। मेरा विश्वास है कि गुजराती भाइयों पर इस बात का असर पड़ेगा। गाडगील जी ने सच्चे हृदय से एक मर्मभेदी वाक्य कहा है। गुजरातियों को उसे स्वीकार करना चाहिए। गुजराती और महाराष्ट्रीय मिल कर रहें यही मेरा निवेदन है। गवर्नमेंट अपने आग्रह से उतर कर इनको एक करने का यत्न करे यह भी मेरा निवेदन है। बस मुझे अधिक नहीं कहना है।

४५

दूसरी पंचवर्षीय योजना

१३ सितंबर १९५६ को द्वितीय पंचवर्षीय योजना के सम्बन्ध में बोलते हुए

प्रथम योजना के बाद भी गरीबी ज्यों की त्यों

उपाध्यक्ष महोदय ! हमारे सामने आज जो विषय है, वह बहुत रोचक है। हमारे देश के भविष्य से उसका गहरा सम्बन्ध है, इसलिए हमारे सहयोगियों ने जो अपने हृदय की भावनायें सामने रक्खी हैं, वह बहुत गहरी दृष्टि से विचार के योग्य हैं। मैंने जो बातें यहां सुनी हैं, उनमें से बहुतों में मुझे गहरा तथ्य और सत्य दिखाई देता है। जो बातें कही गई हैं, मैं उनको दुहराना नहीं चाहता, सम्भव है उनमें से एक आध पर एक विशेष दृष्टिकोण से थोड़ा ध्यान दिला दूं, परन्तु कुछ दूसरी बातों के ऊपर मंत्री जी का ध्यान खींचना चाहूंगा।

इस आयोजन में अपने देश की आय बढ़ाने पर अवश्य ही विशेष ध्यान दिया गया है। आयोजकों को यह सन्तोष है कि पहली योजना में उनको इतनी सफलता मिली कि हमारे देश की आय बढ़ गई, देश की आय में १८ प्रतिशत और प्रत्येक मनुष्य की आय में ११ प्रतिशत की औसत वृद्धि हो गई। परन्तु जैसा बहुतों ने कहा इस वृद्धि से यह परिणाम तो नहीं निकलता कि एक एक आदमी की आय में वृद्धि हुई है। स्पष्ट है कि गरीबी ज्यों की त्यों रह सकती है और कुछ लोगों की आय बढ़ सकती है।

मैं आपके कार्यक्रम में मुख्यतः यह देखता हूं कि आय की ओर तो ध्यान है, पर देश के देहातों की दरिद्रता दूर हो, यह प्रश्न बहुत गौण है, मुख्य नहीं है। सीधे देहातों की दरिद्रता के ऊपर, आपका आक्रमण नहीं है। आपका विश्वास है कि जब हम बहुत से औद्योगिक धन्धे खड़े कर देंगे, अंग्रेज़ी शब्द में जिसको आपने इंडस्ट्रियलाइजेशन कहा है, तब आप से आप गांवों की बस्तियों के लोग खिच कर के औद्योगिक धन्धों की ओर आयेंगे और इस रीति से गांवों में जो पृथ्वी पर बोझ है वह घट जायगा और कुछ हालत अच्छी होगी। आपका अधिक से अधिक ध्यान बस इस ओर है कि आय बढ़े और इंडस्ट्रियलाइजेशन हो।

सामाजिक सुधारों की ओर ध्यान नहीं

आपने नाम तो कुछ सुधारों का लिया है परन्तु योजना आयोग द्वारा निर्मित योजना से यह नहीं लगता कि आपका विशेष ध्यान सामाजिक

सुधारों के ऊपर है। समाज कुछ ऊंचा हो, समाज में जो गहरी बुराइयां व्याप्त हैं उनको हम पकड़ें और कस कर पकड़ें और उनको दूर करें, इधर मुझे लगता है आपका ध्यान नहीं के बराबर गया है। मुझे बहुत लम्बा भाषण तो नहीं करना है। मैं दो एक उदाहरण आपके सम्मुख प्रस्तुत करना चाहता हूं। आज जगह जगह हमारे देश में खुली रीति से वेश्यावृत्ति चल रही है। इस भवन में उसके सम्बन्ध में पहले भी चर्चा हो चुकी है। आपने इस सारी योजना में कहीं वेश्यावृत्ति को दूर करने के लिए कुछ नहीं सोचा है। कम से कम मुझे तो कहीं भी कोई दो चार शब्द भी इस सम्बन्ध में देखने को नहीं मिले। मैंने बहुत उत्सुकता से देखा कि आयोजकों का ध्यान इधर गया है या नहीं। **सोशल वेलफ़ेयर** का जो अध्याय है उसको भी जब मैंने पढ़ा तो भी ऐसा ही लगा कि उधर ध्यान ही नहीं गया है। आपने इस योजना में बहुत सी अच्छी अच्छी बातें लिखी हैं परन्तु मुझे तो यह देखना है कि आप क्या कर पाते हैं। कागदों के ऊपर मानचित्र खींचना, आकर्षक शब्दों में आगे का चित्र बनाना यह तो अच्छा है, परन्तु उस चित्र को व्यवहार में बदलना, यह मुख्य काम हमारे सामने है। केवल कह देने से कोई काम नहीं हो जाता है।

वेश्यावृत्ति

यह वेश्यावृत्ति जो इतनी फैली हुई है उसको खत्म करने के लिए आपने क्या किया है और क्या योजना बनाई है? जब मैं कांग्रेस का सभापति था तब उस समय अपने भाषण में मैंने इस बात पर बल दिया था कि यह वेश्यावृत्ति हमारे पुरुषत्व के ऊपर कलंक है। हर एक पुरुष जानता है और देखता है कि नारियां अपने शरीर को कुछ कौड़ियों के लिये बेचती हैं। इससे अधिक हमारे लिए क्या कालिख हो सकती है। मैं आशा करता हूं कि आपका ध्यान जल्दी से जल्दी उधर जायगा और कुछ करोड़ रुपये इस वेश्यावृत्ति को समाप्त करने में आप लगा देंगे। चीन की बात बार बार कई प्रसंगों में हमारे सामने आई है। हमारे कुछ भाई वहां गए और उन्होंने दो एक पुस्तकें भी लिखी हैं। मेरे सामने यह बात आई है कि चीन में उन्होंने उद्योग कर इस वेश्यावृत्ति को लगभग बिल्कुल उड़ा दिया है। क्या हमारे लिए ऐसा करना सम्भव नहीं है? यह ऐसा विषय है कि इसमें यदि आप सफलता प्राप्त करें तो बड़ा ठहराऊ लाभ देश को होगा। चारो ओर से हमारा नैतिक स्तर ऊंचा होगा क्योंकि उसका और बातों पर भी गहरा असर पड़ेगा।

मदिरापान

इसी तरह से मदिरापान का विषय है जिसके बारे में भी इस भवन में बार बार चर्चा हुई है। दृढ़ता के साथ इसको समाप्त करने की आवश्यकता

है। देश भर में जब हम सब जानते हैं कि इससे हानि ही हानि होती है और आज तक किसी ने नहीं कहा कि मदिरापान से किसी प्रकार का लाभ होता है, उससे पैसे की बरबादी और स्वास्थ्य की हानि होती है तो कोई कारण नहीं है कि क्यों न आप कस करके इसको बन्द करें और जो पीने वाले हैं उनकी ओर कोमलता प्रदर्शित न करें।

भिखमंगी

सामाजिक सुधारों के सम्बन्ध में एक तीसरी बात जो मेरे सामने आती है वह भिखमंगों की समस्या है। यह प्रश्न बार बार विचारकों के सामने आया है परन्तु इसको बन्द करने का अभी हमने कोई गहन प्रयत्न नहीं किया है। कहीं कहीं कुछ प्रदेशों में यह प्रश्न उठाया गया है पर करेंपन के साथ हम इसके पीछे नहीं पड़े हैं। इस ओर भी हमारा ध्यान जाना चाहिए।

भ्रष्टाचार

इनसे मिला हुआ प्रश्न समाज सुधार के विषय में भ्रष्टाचार का है। हम सब स्वीकार करते हैं कि यह रोग व्यापारियों में घुसा हुआ है, वकीलों में घुसा हुआ है, इंजीनियरों में घुसा हुआ है, ओवरसीयरों में घुसा हुआ है, पठित समाज में घुसा हुआ है, चारो ओर जिधर भी हम देखते हैं भ्रष्टाचार देखते हैं। परन्तु ऐसा जान पड़ता है कि आप कस कर अपनी शक्ति इस ओर लगा नहीं रहे हैं। मैं जानता हूं इन प्रश्नों को हल करने में समय लगता है और वे पुरुषार्थ की मांग करते हैं। काम तो तभी होगा जब आप कुछ लगन के साथ, धुन के साथ, इनके पीछे पड़ेंगे।

आयवृद्धि का लाभ नगरों को, ग्रामों को नहीं

मैं माननीय मंत्री जी से अब ग्रामों के सम्बन्ध में कुछ विशेष रीति से कहना चाहता हूं। आप और हम सब जानते हैं कि हमारा देश मुख्य करके ग्रामों में बसता है। ७० प्रतिशत से अधिक जनसंख्या ग्रामों में ही रहती है। परन्तु इस योजना में, मेरा निवेदन है, आपने उनकी ओर कितना ध्यान दिया है यह विचार की बात है। मेरा कहना है कि आंशिक रूप से ही और बहुत ही कम आपका ध्यान उधर गया है। इस योजना में जितना पुरुषार्थ है, जितना सामर्थ्य है, उसका बहुत अधिक लाभ नगरों को, नगरवासियों को और नगरों में पढ़े लिखे लोगों को ही मिलेगा। इसको देखकर आश्चर्य होता है। १८ प्रतिशत आय की जो बढ़ती दिखायी गयी है उसका बड़ा हिस्सा तो इन्हीं लोगों में रह गया है। ग्रामों की दरिद्र जनता के पास उसका जो अंश पहुंचता है वह नहीं के बराबर है।

एक माननीय सदस्य : कम्यूनिटी प्रोजेक्ट्स चल रहे हैं।

श्री टंडन : पीछे से **कम्यूनिटी प्रोजेक्ट्स** की आवाज़ आई है। उसके बारें में मेरा कहना यह है कि ग्रामवासियों की जेब में उसका पैसा नहीं के बराबर पहुँचता है। ये सब काल्पनिक बातें हैं—कागद के घोड़े दौड़ते हैं। ज़रा गांवों में जाइये और वहाँ के स्त्री-पुरुषों को देखिये।

श्रीमती शिवराजवती नेहरू (जिला लखनऊ-मध्य) : चाय पीनी बन्द होनी चाहिए।

श्री टंडन : हमारी देवीजी चाय की विरोधिनी हैं—वह चाय पीना बन्द कर देना चाहती हैं। अच्छा हो कि वह आपस में इस बात को चलायें। इस समय मैं सुधार की एक एक बात को कहां तक ले सकता हूँ ?

गाँवों में गृह-निर्माण योजना

इस समय मेरा निवेदन गांवों के बारे में है। इस योजना के अन्तर्गत आपने ४८ अरब रुपयों के व्यय करने का रास्ता बनाया है। क्या आपने कभी हिसाब लगाया है कि कितना गांवों पर व्यय किया जा रहा है और कितना नगरों पर ? इस योजना से गांव वालों को कितना लाभ होगा ? मैं कहता हूं कि बहुत थोड़ा।

चौ० रणवीरसिंह (रोहतक) : १७०० करोड़ रुपए।

श्री टंडन : मैं नहीं जानता कि माननीय सदस्य ने कहाँ से यह संख्या निकाली है। मेरे लिए तो यह असम्भव था कि मैं इसमें से इसका हिसाब कर सकूं और मेरा अनुमान है कि शायद हमारे मंत्रीगण ने भी नहीं किया है और शायद वे मुझको कुछ बता नहीं सकेंगे। लेकिन एक अध्याय मेरे सामने है—जो उदाहरण के रूप में है—और मैंने उसका थोड़ा सा अंश छांटा है। मेरे सामने अध्याय २६ है, जिसका शीर्षक है "हाउसिंग"। इसका अर्थ है गृह-निर्माण। इसमें कुल १२० करोड़ रुपया व्यय के लिये रखा गया है। माननीय मंत्री जी इसको सामने रख लें और देखें। उनको तो एक एक बात याद होगी। इसमें दस करोड़ रुपया गाँवों में मकान बनाने के लिए रखा गया है, इससे मुझे थोड़ा सा संतोष है। जब मैं पहले एक बार इस विषय में बोला था, तब केवल पांच करोड़ ही था। अब दस करोड़ रुपया रख दिया गया है।

योजना तथा सिंचाई और विद्युत् मंत्री (श्री नंदा) : चालीस करोड़।

योजना उपमंत्री (श्री श्या० नं० मिश्र) : और मिनिस्ट्रीज में है, **कम्यूनिटी प्रोजेक्ट्स** में है।

श्री टंडन : मेरे सामने १२० करोड़ रुपये का व्यय है और उसमें से दस करोड़ गांवों में घर बनाने के लिए है। नगरों से सम्बन्ध रखने वाले **सब्सीडाइज्ड इंडस्ट्रियल हाउसिंग** के लिए ४५ करोड़, **लो इनकम ग्रुप हाउसिंग** के लिए

४० करोड़, **स्लम-क्लीयरेंस** और **स्वीपर्स हाउसिंग** के लिए २० करोड़ और **मिडिल इनकम ग्रुप हाउसिंग** के लिए ३ करोड़ रखे गए हैं।

उपाध्यक्ष महोदय : माननीय सदस्य का समय समाप्त हो गया है।

श्री टंडन : आप मुझे बता दें कि आप कितने मिनट मुझे देंगे, ताकि मैं उसी हिसाब से अपनी बात कहूं।

उपाध्यक्ष महोदय : मुझे बहुत दुख है कि मुझे ऐसा कहना पड़ा है। माननीय सदस्य दो तीन मिनट और ले लें।

श्री टंडन : बहुत अच्छा।

अन्त में **प्लान्टेशन हाउसिंग** के लिए दो करोड़ रखा गया है। वे प्रायः देहात में होते हैं। मैं अनुमान कर सकता हूं कि यह व्यय देहात का होगा। इसका मतलब है कि दस करोड़ और दो करोड़—बारह करोड़ देहात के लिए है। १२० करोड़ रुपए में से १२ करोड़ रुपए अर्थात् कुल राशि का दस प्रतिशत गांवों के लिए रखा गया है। ७० प्रतिशत लोग गांवों में रहते हैं, लेकिन मकान बनाने के व्यय में आप केवल दस प्रतिशत उनको दे रहे हैं। यह मैं उदाहरण दे रहा हूं। लगभग यही हिसाब बहुत कुछ इस योजना भर में है। कई जगह शायद इससे भी कम पड़ेगा। मेरा कथन यह है कि गांवों की ओर आपका अधिक ध्यान होना चाहिए। आपको नए गांवों का निर्माण करना उचित है। वे गांव कैसे हों ? मेरे एक भाई ने मुझसे कहा कि गांव का जीवन नारकिक है। ये उनके शब्द थे। जहाँ जाइये, गन्दगी दिखाई पड़ती है। रहने के योग्य घर बहुत कम हैं। अभी एक भाई ने उस **रिपोर्ट** का हवाला दिया जो खाद्य सचिवालय के सचिव ने चीन से लौट कर दी है। उन्होंने बहुत ब्योरे के साथ अपनी **रिपोर्ट** दी है। वह रोचक लगी। उसकी बहुत सी बातों में मैं इस समय नहीं जा सकता। उन्होंने कहा है कि चीन में सबसे बड़ी बात यह है कि वहां मनुष्य के मल-मूत्र का प्रयोग बड़ी अच्छी तरह किया जाता है, जिसके कारण वहां पैदावार हमारे यहां से अधिक है। हमारे देश में एकड़ के पीछे जितनी पैदावार होती है, उससे कहीं अधिक पैदावार वहां होती है। मैंने इस सम्बन्ध में पहले भी कई बार कहा है और एक तरकीब भी प्रस्तुत की है कि गांव में हर एक घर के साथ आध आध एकड़ भूमि रखी जाय। एक घरमें चार पांच मनुष्यों का एक कुटुम्ब होता है। वह घर एक वाटिका की तरह से हो। उसका नाम मैंने वाटिका गृह योजना रखा है। अगर इस प्रकार भूमि दी जाय, तो मेरा विश्वास है कि पैदावार आज की पैदावार से बहुत बढ़ सकती है। इस बात का यत्न करना चाहिए कि सब मल-मूत्र उसी भूमि में डाला जाय। **रिपोर्ट** के लेखक ने इस बात की ओर ध्यान दिलाया है कि हमारे देश में आज जो मल-मूत्र सम्बन्धी समस्या है, उसका हल करना इसलिए जटिल है कि हमारे यहाँ लोग मल-मूत्र छूने से बहुत घबराते हैं, चीनी, जापानी और

वर्मी लोग उससे घबराते नहीं हैं, हमारे यहाँ वह सम्भव नहीं है। परन्तु अगर आप यहाँ पर हर एक घर के साथ आध आध एकड़ भूमि दें और सब मल-मूत्र वहाँ पर डाला जाय—गड्ढे के नीचे रखा जाय, वह काम में आये और वरबाद न हो, तो पैदावार बहुत बढ़ सकती है। आज वह बरबाद हो रहा है। उसकी रक्षा की जानी चाहिए।

शिक्षा में अंग्रेजी माध्यम नहीं चाहिए

अब मैं शिक्षा के सम्बन्ध में कुछ कहना चाहता हूं। इस योजना में शिक्षा की ओर ध्यान दिया गया है मगर बहुत थोड़ा। हाल में हमारे शिक्षा मंत्री ने कुछ बातों पर बहुत बल दिया है। प्रधानमंत्री जी ने भी यह कहा कि हम अंग्रेजी के माध्यम द्वारा ही वैज्ञानिक और औद्योगिक शिक्षण दे सकते हैं। यह बात मुझे बहुत खटकी। मैं उससे सहमत नहीं हूं। मैं इसे बिल्कुल ग़लत समझता हूं। प्रधानमंत्री जी ने कहा कि चीन में २० हजार इंजिनियर तैयार हो रहे हैं, रूस में ८० हजार इंजिनियर तैयार हो रहे हैं, हमारे यहां भी इंजिनियर तैयार होने चाहिएं। मैं उनसे नम्रतापूर्वक यह निवेदन करना चाहता हूं कि ये इंजिनियर बड़ी संख्या में इसलिए नहीं तैयार हो रहे हैं कि उनको अंग्रेजी द्वारा शिक्षण दिया जाता है। मुझे खेद है कि इस समय हमारे प्रधानमंत्री जी भवन से चले गये हैं। मैं कहना चाहता हूं कि उन देशों में इतनी तीव्रता से इंजिनियर इसलिए तैयार हो रहे हैं कि उनको उनकी अपनी भाषा में शिक्षण दिया जाता है। आप भी अपनी भाषा में प्रशिक्षण दीजिये फिर देखिये कि किस तीव्रता से यहां भी इंजिनियर तैयार होते हैं।

यहाँ पर जो उस रोज शिक्षा मंत्रियों का सम्मेलन या तमाशा हुआ था उसमें हमारे शिक्षामंत्री जी ने एक बड़ी अद्भुत बात कही। मैं उसे तमाशा इसलिए कहता हूं कि वहां पर कोई गहरा विचार नहीं किया गया, वहां पर कोई गहरा विचारक नहीं था। गहरा विचार किया था **यूनीवर्सिटी कमीशन** ने, गहरा विचार किया था **सेकिंडरी इजूकेशन कमीशन** ने। लेकिन उन्होंने जो विचार किया था उसको तो आज हमारा शिक्षा विभाग काम में नहीं ला रहा है, पर कुछ शिक्षा मंत्रियों को बुलाकर उन पर दबाव डालकर यह कहला लिया गया कि अंग्रेजी पढ़ाना आवश्यक है। हमारे शिक्षा मंत्री ने खुद कहा है कि हमारी **यूनीवर्सिटीज** में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी होना चाहिए। ये उनके शब्द हैं। हमारे प्रधानमन्त्री जी ने भी उस सम्मेलन में बयान दिया था लेकिन उन्होंने जो पत्र दिनकरजी को लिखा है उसमें स्पष्ट कर दिया है कि उन्होंने यह नहीं कहा था कि अंग्रेजी माध्यम हो। उन्होंने यह सफाई करके ठीक ही किया। लेकिन हमारे शिक्षा मंत्री मौलाना अबुल कलाम आजाद साहब ने शिक्षामंत्री सम्मेलन में कहा है, और यह उस रिपोर्ट में दर्ज है जो

उनके विभाग ने छपवाई है, कि विश्वविद्यालयों में माध्यम अंग्रेजी होनी चाहिए। यह क्या है? यह कोई अक़्लमन्दी की बात है? क्या उनको मालूम है कि आज महाराष्ट्र में, गुजरात में, और हिन्दी बोलने वाले, प्रदेशों में मातृभाषा शिक्षा का माध्यम है। हमारे यहां उत्तर प्रदेश में लखनऊ यूनीवर्सिटी है, इलाहाबाद यूनीवर्सिटी है, आगरा यूनीवर्सिटी है। इन तीनों को मैं जानता हूं। पूना यूनीवर्सिटी के बारे में मैं पढ़ चुका हूं, गुजरात यूनीवर्सिटी के बारे में पढ़ चुका हूं। यहां पर लोगों ने अपनी अपनी भाषा रखी है। और मैं अपने यहां इलाहाबाद और लखनऊ में बराबर देख रहा हूं कि चार पांच वर्ष से विश्वविद्यालयों में माध्यम हिन्दी है। बी० ए०, बी० एस-सी० में हिन्दी माध्यम से तड़ातड़ लड़के निकल रहे हैं। हमारे शिक्षामंत्री ने कहा कि अंग्रेज़ी को एकबारगी बदल देना तो अनुचित होगा। उनके भाषण की रिपोर्ट में शब्द '**सडन**' आया है। मुझे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ। मालूम होता है कि उन्हें मालूम नहीं कि क्या हो रहा है। यूनीवर्सिटियों में चार पांच वर्षों से हिन्दी चल रही है और वह आज '**सडन**' शब्द का प्रयोग करते हैं। यह '**सडन**' कैसे होगा। हमें नया माध्यम आज नहीं करना है, कई यूनीवर्सिटियों में तो आज माध्यम हिन्दी ही है। क्या आप हिन्दी हटाकर फिर अंग्रेजी माध्यम बनाना चाहते हैं? यह हमारे शिक्षा मंत्री जी का ध्यान है।

(इस समय प्रधानमंत्री जी भवन में आये।)

प्रधानमंत्री जी आ गये। मैं इसका स्वागत करता हूं। मैं उनकी ही बात कह रहा था। मैं आपकी आज्ञा से फिर उन शब्दों को दुहरा देना चाहता हूं ताकि वे सुन लें। हमारे प्रधानमंत्री जी ने शिक्षा मंत्रियों के सम्मेलन में एक बयान दिया था लेकिन उसके बारे में उन्होंने जो पत्र दिनकरजी को लिखा है उसमें साफ़ कर दिया है कि उन्होंने यह नहीं कहा कि माध्यम अंग्रेजी हो। मैं इसको स्वीकार करता हूं। लेकिन उस सम्मेलन में हमारे शिक्षा मंत्री जी ने यह कहा है कि माध्यम अंग्रेजी होनी चाहिए। मैं कहता हूं कि यहां अंग्रेजी को माध्यम बनाना बहुत अनुचित होगा। चार पांच वर्षों से माध्यम हिन्दी हो चुका है। इलाहाबाद यूनीवर्सिटी में, लखनऊ यूनीवर्सिटी में, आगरा यूनीवर्सिटी में बी० ए० तक के लिए हिन्दी माध्यम है। हां **पोस्ट ग्रेजुएट कक्षाओं** के लिए अवश्य अभी हिन्दी माध्यम निश्चित नहीं हुआ है। परन्तु **ग्रेजुएट** होने के लिए हिन्दी माध्यम निश्चित है। तो क्या यह जो बात चल चुकी है इसको आप पलट देंगे। मेरा कहना यह है कि हमारी अपनी भाषा के माध्यम द्वारा ही हमारा शिक्षण हो यह आवश्यक सिद्धान्त है।

ग्रामों को मुख्यता दीजिए

अब मैं अधिक समय नहीं लेना चाहता। मैं अपने मंत्री जी से यही

निवेदन करना चाहता हूं कि आज जो ग्राम और नगरों का सम्बन्ध है उसकी ओर उनका ध्यान विशेष रूप से जाना चाहिए। उनको ग्रामों की दशा सुधारने का मुख्य रूप से निश्चय करना चाहिए। मैं इसको मुख्य बात मानता हूं। ग्रामों की दशा बहुत ही बुरी है। आप नये नये कुछ ग्राम बसाइये। हर जिले में एक एक, दो दो, चार चार नमूने के गांव हों। आज आप देश में एक गाँव भी नहीं बतला सकते कि जिसको आपने नमूने के तौर पर बसाया हो। आप हर जिले में दो दो, चार चार गाँव नमूने के बसाइये। इसमें बहुत रुपयों का व्यय नहीं है। इस प्रकार आप देश में एक नई शक्ति पैदा करेंगे, एक नई रूह फूंकेंगे। आप देहातों के लिए केवल कागजी घोड़े न दौड़ाइये। यहाँ चीन का अक्सर उदाहरण दिया जाता है। मैंने चीन की रिपोर्ट पढ़ी है। चीन में कार्यकर्ताओं का देहात वालों से गहरा सम्पर्क है। यहां सम्पर्क नहीं है। हम यहां बैठकर जो **रिपोर्टें** आती हैं उनसे देहात की उन्नति का अनुमान लगाते हैं। ऐसा न करके हमको देहातों की जनता से गहरा सम्पर्क स्थापित करना चाहिए। जो अच्छे आदमी हमको मिलें उनका हम उपयोग करें ताकि वे ग्रामों की दशा सुधारें, और हम उनके साथ मिलकर स्वयं भी काम करें। मेरा यही निवेदन है।

४६

हिन्दी पर्याय समिति का प्रतिवेदन

लोक सभा के अध्यक्ष ने राज्य सभा के सभापति के परामर्श से पांच मई सन् १९५६ को एक संसदीय समिति नियुक्त की थी जिसके अधीन यह कार्य किया गया कि वह संसदीय, विधि सम्बन्धी तथा प्रशासकीय शब्दों के हिन्दी पर्याय निश्चित करे। इस समिति के अध्यक्ष श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन नियुक्त हुए थे। इस संसदीय समिति की ओर से जो कार्य हुआ उसका प्रतिवेदन लोक सभा में २८ मार्च सन् १९५७ को श्री टण्डन ने रखा। प्रतिवेदन सभा-पटल पर रखते हुए उन्होंने जो एक छोटा सा भाषण दिया वह अंग-रेजी में था। उसका हिन्दी रूपांतर नीचे दिया जाता है। लोक सभा में श्री टण्डन का यह अन्तिम भाषण था। श्री टण्डन नवम्बर सन् ५६ में बीमार हो गये थे। यह भाषण उन्होंने रोगावस्था में अपने स्थान पर बैठे हुए दिया था। प्रथम लोक सभा का कार्यकाल भी उसी दिन समाप्त हुआ।

श्री टंडन (जिला इलाहाबाद-पश्चिम) : मैं संसदीय, विधि-संबंधी, तथा प्रशासनिक शब्दावलि के हिन्दी पर्याय निर्धारित करने वाली संसदीय समिति के प्रतिवेदन की एक प्रति शब्दावलि के साथ सभा-पटल पर रखता हूं।

श्रीमन्, आपकी अनुमति से मैं सभा-पटल पर प्रतिवेदन रखते हुए, सभा को समिति के कार्य के बारे में कुछ बताना चाहता हूं। गत मई मास में राज्य सभा के सभापति के परामर्श से आपने समिति नियुक्त की थी, जिसने उसी महीने काम शुरू कर दिया था। इसकी कुल ११३ बैठकें हुईं जिसमें ३६४½ घंटे लगे।

समिति को विधान-सभाओं, उसके सचिवालयों तथा अन्य संस्थाओं के लिये जो इन शब्दों को अपनाना चाहें, संसदीय, विधि सम्बन्धी तथा प्रशासनिक शब्दावलि के हिन्दी पर्याय निर्धारित करने का काम सौंपा गया था। १९५४ में लोक-सभासचिवालय द्वारा संकलित विधि सम्बन्धी तथा प्रशासनिक शब्दावलि जो (अंग्रेजी के) 'डी' अक्षर से प्रारम्भ होकर 'जेड' तक थी, इसके कार्य का आधार थी। इसमें लगभग २१,००० शब्द थे। 'ए' से 'सी' तक की शब्दावली आपके पूर्व अध्यक्ष द्वारा नियुक्त विशेषज्ञ समिति ने निर्धारित कर दी थी।

हमारा काम दो प्रकार का था। पहले हमें हिन्दी, संस्कृत, अथवा देश की किसी अन्य भाषा में पर्याय ढूंढ़ने थे और यदि ऐसे शब्द नहीं मिलते थे तो दूसरे नये शब्द बनाने थे। समिति ने यह आवश्यक समझा कि विधि,

संसद तथा प्रशासन से संबंधित शब्द जहां तक संभव हो संविधान के आठवें अनुच्छेद में दी गई भाषाओं में से हों, इसीलिए समिति ने देश की समस्त भाषाओं में प्रचलित शब्दों को ढूंढ़ने का प्रयत्न किया। सामान्यतः समिति ने हिन्दी में प्रचलित पर्यायों को निर्धारित करने का यत्न किया है। परन्तु साथ ही साथ उसने प्रादेशिक भाषाओं से भी कुछ उपयुक्त शब्द लिये हैं। कौटिल्य के अर्थशास्त्र, गुप्तकालीन शिलालेखों तथा बौद्ध साहित्य से ऐसे शब्द लिये गये हैं जो युगों से प्रयुक्त हो रहे हैं। कुछ हिन्दी में प्रचलित अंग्रेजी शब्द भी ले लिये गये हैं। संविधान के अनुच्छेद ३५१ के निर्देशों के अनुसार हमने नये शब्दों के निर्धारण में संस्कृत का सहारा लिया है।

समिति की सिपारिश है कि यह शब्द लोक-सभा तथा राज्य-सभा और राज्य विधान सभाओं में प्रयोग में लाये जायँ।

समिति के सभापति के रूप में मैं आशा करता हूं कि जो काम हमने किया है उससे भविष्य में लाभ होगा।